सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय

४६

(अप्रैल-जून १९३१)

सत्यमेव जयते

प्रकाशन विभाग
सूचना और प्रसारण मन्त्रालय
भारत सरकार

भूमिका

इस खण्डमें १६ अप्रैलसे १७ जून, १९३१ तक की सामग्री दी जा रही है। अस्थायी समझौतेपर पहले ही हस्ताक्षर हो चुके थे। अब इस अवधिमें हम गांधीजीको बढ़ती हुई कठिनाइयोंसे जूझते हुए, उस समझौतेको पारस्परिक विश्वास और सहयोगकी उसी भावनासे क्रियान्वित करानेको प्रयत्नशील देखते है जिस भावनासे समझौतेपर हस्ताक्षर किये गये थे। लेकिन, जैसा कि सी० एफ० एन्ड्रयूजको लिखे उनके पत्रोंसे ज्ञात होता है, "अफसरोंकी काहिली, अनिच्छा और . . . विरोध" (पृष्ठ ९२)के कारण उन्हें यह "संघर्ष अत्यन्त कठिन" (पृष्ठ ५२) लग रहा था। विप्लववादियोंकी प्रवृत्तियोंके कारण उनकी कठिनाई और भी बढ़ गई थी, इसलिए गांधीजीने बड़े धैर्यके साथ उन लोगोंको भारतके सन्दर्भमें हिंसाकी निरर्थकता समझानेकी कोशिश की। लेकिन उनकी कठिनाईका अन्त यही नही होता। हिन्दुओं और मुसलमानोंके बीच आपसमें सहमति न होनेके कारण संविधान बनानेकी समस्या और भी उलझ गई थी, जिससे गांधीजीके मनमें लन्दनमे होनेवाली आगामी गोलमेज परिषद्में शामिल होनेकी उपयोगिताके बारेमें शंका उठ रही थी। उन्हें यह भी डर था कि उनके बाहर रहनेसे समझौता कहीं टूट न जाये। इससे परिषद्में शामिल होनेकी उनकी अनिच्छा और भी बढ़ गई। १९३०में सविनय अवज्ञा आन्दोलन आरम्भ करनेसे पहले भी उनका मन इसी तरह दुविधाग्रस्त हो गया था और तब उन्होंने जिस तरह अपनी अन्तरात्माकी आवाजको अपना संबल बनाया था उसी तरह अब भी उसीका सहारा लिया। जब एक मित्रने उन्हें परिषद्में शामिल होनेका निर्णय करनेके बारेमें जल्दी न करनेको आगाह किया तो उनसे गांधीजीने कहा: "मैं ऐसी अटकलबाजीमें नहीं पड़ता। ईश्वर मुझे जहाँ भी ले जायेगा, वहाँ मैं इसी विश्वासके साथ जाऊँगा कि उसके निर्देशित मार्गपर चलनेसे सब-कुछ ठीक ही होगा" (पृष्ठ ५५)।

इस खण्डका प्रारम्भ "हिंसावादिता"की तीव्र भर्त्सनाके साथ होता है। गांधीजीने इस बातपर गहरा दुःख प्रकट किया कि भगतसिंहके सम्बन्धमें कांग्रेस द्वारा पास किये गये प्रस्तावका, जैसा सोचा गया था, उससे ठीक उलटा असर हुआ और वह मानों लोगोंको राजनीतिक हत्याकी "बेखटके प्रशंसा करनेका अधिकार" देनेवाली सनद बनकर रह गया (पृष्ठ १)। उन्होंने कहा: "मैं फिरसे अपना निश्चित और भली-भाँति सोचा-समझा यह मत दोहराता हूँ कि हिन्दुस्तानमें तो राजनैतिक हत्या देशको नुकसान ही पहुँचा सकती है" (पृष्ठ १)। उनका दावा था कि "भारतमें वर्तमान असाधारण लोक-जागृति केवल अहिंसक रीतिसे ही हुई है, जिसमें स्त्रियोंकी जागृति भी शामिल है" (पृष्ठ २)। विप्लववादियों द्वारा अपनाये गये हिंसा-मार्गको उन्होंने निरर्थक, हानिकर और भारतीय परम्पराके विरुद्ध बताया, और इसकी पुष्टिके

प्रमाण-स्वरूप "ठोस तथ्य" देते हुए निष्कर्ष रूपमें कहा, ". . . पूरा-पूरा शान्त वातावरण मिला होता तो हम अब तक अपने ध्येय तक पहुँच चुके होते" (पृष्ठ ३०)। इस प्रश्नपर गांधीजीकी स्थितिका बंगालमें अकसर गलत अर्थ लगाया गया; इतना ही नहीं, विभिन्न प्रान्तोंके साथ उनके व्यवहारको पक्षपातपूर्ण तक बताया गया (३७९-८२)। किन्तु, गांधीजीका स्पष्ट उत्तर था: "मुझे जितना पंजाब प्रिय है उतना ही बंगाल भी प्रिय है। और बंगालसे युवावस्थामें मुझे जो प्रेरणा मिली है, उसके लिए तो मै उसका खास तौरपर ऋणी हूँ" (पृष्ठ ३८१) लेकिन "बंगाल पर या किसी प्रान्तके युवकोंपर मेरा प्रभुत्व कायम रहे या न रहे, मुझे तो उच्च स्वरमें अपनी धार्मिक श्रद्धाका ऐलान करना ही होगा। भारतवर्षके भूखों मरनेवाले करोड़ोंकी मुक्ति सत्य और अहिंसा द्वारा ही प्राप्त की जा सकती है" (पृष्ठ ३८२)।

भारतमें हिंसावादियोंकी संख्या सर्वथा नगण्य थी, लेकिन वातावरणमें उनका जो असर था, उसकी उनकी संख्यासे कोई तुलना ही नहीं थी। गांधीजीने स्पष्ट देखा कि सविनय अवज्ञा आन्दोलनके दौरान जनसाधारण कर्मसे तो अहिंसक बना रहा था, लेकिन साथ ही "राजनैतिक हत्याको . . . बड़े पैमानेपर, . . . अविवेकपूर्ण समर्थन" (पृष्ठ १२७) मिल रहा था और सत्याग्रही लोग भी अक्सर विचार और वाणीसे हिंसा करनेके दोषी थे। कराचीमें एक आदमीने कुछ बेरोजगार तथा अन्य श्रमिकोंको एकत्र करके वहाँके व्यापारियों और पैसेवाले लोगोंके साथ जबरदस्ती करनेकी कोशिश की थी। इस "सनकी आदमी"की करतूतोंका हवाला देते हुए गांधीजीने लोगोंको चेतावनी दी: "जो लोग अबतक अज्ञान और अनियन्त्रित सत्ताके" वशीभूत होकर "घोर नींदमें सोये पड़े थे, उन्हीं सर्वसाधारणकी जागृति आसानीसे व्यवस्था तथा सामाजिक संगठनका सर्वनाश कर सकती है।" अतः गांधीजीके विचारसे अनुशासनका पालन समयकी आकुल आवश्यकता थी। उन्होने कहा: "तूफान और बाढ़ें तो हमेशा ही आती रहेंगी। परन्तू तूफान और बाढ़की रोकके लिए जो काम बाँध वगैरासे होता है, अव्यवस्थाको रोकनेमें अनुशासनका वही उपयोग है" (पृष्ठ १४७)। इसी दृष्टिसे उन्होंने कार्यकर्त्ताओंको सलाह दी कि अगर धरना देनेमें पूरी शान्तिका पालन सम्भव न हो तो यह प्रवृत्ति बन्द कर दी जाये (पृष्ठ १००)। उन्होंने कांग्रेसियोंको पंचायती व्यवस्थाको पुनरुज्जीवित करनेमें जल्दबाजी न करनेकी सलाह दी, क्योंकि पूरी सावधानीसे काम न लेनेपर इस व्यवस्थाके भी शोषणका एक साधन बनकर रह जानेका खतरा था। गांधीजीके ही शब्दोंमें, "किसी पंचायतको जुर्माना करनेका अधिकार नहीं होना चाहिए; नैतिक अधिकार," विशुद्ध निष्पक्षता "और दोनों पक्षोंका स्वेच्छापूर्ण आज्ञापालन ही उसकी दीवानी डिग्रियोंकी स्वीकृतिका आधार होना चाहिए" (पृष्ठ २५६)। इसी प्रकार उन्होंने सामाजिक बहिष्कारके प्रति भी अपनी असहमति प्रकट की, क्योंकि "गाँवमें सिद्धान्तहीन मनुष्योंके हाथोंमें पड़कर सामाजिक बहिष्कार एक भयंकर हथियार सिद्ध हुआ है" (पृष्ठ २५७)।

किन्तु इस अवधिमें गांधीजीको सबसे अधिक चिन्ता उस समझौतेको टूटनेसे बचानेकी थी। उनके विचारसे वह समझौता "सज्जनोंका करार" था, और उन्होंने

भारत सरकारके गृहसचिव एच० डब्ल्यू० एमर्सनको आश्वस्त किया कि "मैं लॉर्ड इर्विनको वचन दे चुका हूँ कि समझौता भंग न होने देनेकी दृष्टिसे मैं ऐसा कोई भी काम, जिसे करना मेरे लिए अशोभनीय हो, नहीं करूँगा" (पृष्ठ ४९)। उदारदलीय नेता चि० य० चिन्तामणिको लिखे उनके पत्रसे ज्ञात होता है कि ऐसे कई प्रसंग आये जब वे स्थानीय अधिकारियोंसे वार्ता बन्द कर सकते थे, लेकिन गम्भीर विचार किये बिना हलके मनसे संघर्ष छेड़ देना उनके लिए अशक्य था। "उससे लॉर्ड इर्विनको जो मार्मिक दुःख पहुँचता" उसका विचार-मात्र उन्हें "वैसा कोई कदम उठानेसे पहले हजार बार सोच लेनेके लिए बाध्य" करता था (पृष्ठ २८४)। लेकिन इस आत्मसंयमके कारण उनके मनको कभी-कभी गहरी व्यथा भी भोगनी पड़ी। अधिकारी तो जनतापर मनमाने ढंगसे अपना हुक्म चलानेके अभ्यस्त हो गये थे, इसलिए उस समझौतेमें पारस्परिक विश्वास और सहयोगपर आधारित जिस सम्बन्धकी अवधारणा थी, उससे अपने मनका सामंजस्य बैठा पाना उन्हें असम्भव लग रहा था। गांधीजीने राजगोपालाचारीको लिखे पत्रमें उन्हें बताया कि स्पष्ट है, प्रान्तीय सरकारोंको समझौता अच्छा नहीं लगा है। "उनसे समझौतेपर अमल कराना अत्यन्त ही दुष्कर है, शेरकी दाढ़ निकालने-जैसा" (पृष्ठ १७१)। उदाहरणके लिए, उत्तरी-मण्डलका आयुक्त गांधीजीके इस दृष्टिकोणको स्वीकार करनेको तैयार नहीं था कि चूँकि कांग्रेस "जनताका प्रतिनिधित्व करती है," इसलिए समझौतेसे सम्बन्धित बातोंमें उसे "सरकार और जनताके बीच सम्पर्क-सम्बन्ध स्थापित करनेवाली" संस्थाके रूपमें मान्य किया जाये (पृष्ठ २०)। गांधीजीके लिए यह अत्यन्त "महत्त्वपूर्ण प्रश्न" था (पृष्ठ २०), और उन्होंने गृहसचिवको सूचित किया कि "जहाँतक गुजरातका सम्बन्ध है, समझौता लगभग टूटने-जैसी स्थितिमें आ पहुँचा है" (पृष्ठ २४)। गुजरातमें यह स्थिति यों उत्पन्न हुई कि वहाँकी सरकारने गांधीजीसे कोई बातचीत किये बिना लोगोंको यह धमकी दे दी कि उनसे लगानकी बकाया रकमें वसूल करनेके लिए, जरूरत पड़ी तो, कानूनी कार्रवाही और कुर्की-जब्ती भी की जायेगी। मगर ऐसी कोई समस्या अकेले गुजरातमें ही खड़ी हुई हो, सो बात नहीं थी। देशके अन्य हिस्सोंमें भी इस तरहके असंख्य प्रश्न उठ खड़े हुए। स्थिति विकट हो गई। निदान गांधीजीको शिमलामें गृह-सचिवसे विस्तृत बातचीतके लिए आमन्त्रित किया गया। गृह-सचिवने गांधीजीके सामने सरकारके समक्ष उपस्थित "संवैधानिक, राजनीतिक, साम्प्रदायिक, वित्तीय, कृषीय और आतंकवादी आन्दोलनसे सम्बन्धित" समस्याएँ रखीं और उनसे अनुरोध किया कि उनके समाधानके लिए सबको एक-जुट होकर काम करना चाहिए (पृष्ठ ४४५)। वार्ताके अन्तमें श्री एमर्सनने अपनी प्रतिक्रिया बताते हुए कहा कि गांधीजी "समझौतेका पूरा-पूरा पालन करानेके लिए पहलेसे अधिक चिन्तित हैं" (पृष्ठ ४४७)। लेकिन गांधीजी समझौतेके बारेमें सरकारकी सदाशयताके प्रति कुछ आश्वस्त भले ही हो गये हों, उसके भविष्यके सम्बन्धमें उनकी शंकाएँ पूरी तरहसे मिट नहीं पाई थीं। इंग्लैंड जानेमें वे अब भी झिझक रहे थे, क्योंकि "समझौतेकी कार्यान्वितिके सिलसिलेमें इतनी झंझटें होते हुए" वे "भारतसे बाहर

कदम कैसे रख" सकते थे? (पृष्ठ २०८)। समस्याएँ ज्यों-की-त्यों बनी हुई थीं, इसलिए उन्हें लाचार होकर यह सुझाव देना पड़ा कि "दोनों पक्षो द्वारा समझौतेकी शर्तोंपर 'पूरा-पूरा अमल करानेके लिए स्थायी मध्यस्थ मण्डल नियुक्त कर दिया जाये" (पृष्ठ ४०५-६)।

साम्प्रदायिक समस्याका भी कोई समाधान नहीं निकल पाया था। दोनों सम्प्रदायोंके नेता पर्देके पीछे गम्भीर वार्ता चला रहे थे और गांधीजीको इस प्रश्नपर इस बीच मौन साधे रहनेकी सलाह दी गई थी (पृष्ठ १२५-२६)। उन्होंने प्रारम्भमें ही स्पष्ट कर दिया था कि जबतक इस समस्याका समाधान नही निकलता, वे गोलमेज परिषद्में शामिल नहीं होंगे। आगे भी जब-कभी उनके सामने बात उठाई गई, उन्होंने यही कहा। डॉ० मु० अ० अन्सारीको अपनी स्थिति समझाते हुए उन्होंने लिखा, "यदि मेरे अपने ही देशमें यहाँ परस्पर फूट रहेगी तो मैं क्या माँगें रख पाऊँगा और राष्ट्रीय माँगको बहुत दृढ़ताके साथ कैसे पेश कर पाऊँगा?" (पृष्ठ २३९)। किन्तु जान पड़ता है, इस सम्बन्धमें पक्के तौरपर कुछ तय कर पाना गांधीजीको बहुत कठिन लग रहा था। चि० य० चिन्तामणिको उन्होंने लिखा: "इस मामलेमें भी मैं अभी अपना रास्ता टटोल रहा हूँ और यदि मुझसे बन पड़ा तो मैं परिषद्में अवश्य भाग लूँगा। मैंने अबतक बिलकुल ही निश्चित कोई निर्णय नही किया है" (पृष्ठ २८५)। स्थिति जैसी विकट हो गई थी, उसको देखते हुए वे लन्दन जाकर, सम्मेलनमें भाग लिये बिना, जिम्मेवार ब्रिटिश राजनयिकों और साधारण जनोंको कांग्रेसकी स्थिति समझाने और "थोड़ा-बहुत प्रचार-कार्य" (पृष्ठ २९३) करने तककी सम्भावनापर विचार करने लग गये थे। लेकिन ऐसा करनेको भी वे तभी तैयार थे जब वे देख लेते कि देशमें समझौतेका निर्वाह एक न्यूनतम सीमा तक हो रहा है। सी०एफ० एन्ड्रयूजको लिखे पत्रमें उन्होंने बताया: "मेरी इच्छा तो वहाँ जानेकी है, पर अन्दरसे आवाज आती है—'नहीं'; और बाहरी वातावरण अन्तरकी आवाजके मार्गदर्शनका ही समर्थन करता है" (पृष्ठ २९२)।

कांग्रेस और सरकारके बीच जिन बातोंपर मतभेद था, उनमें से अधिकांशके सम्बन्धमें तो उनका रुख समझौतेका था, किन्तु विदेशी वस्तुओंके बहिष्कारके सन्दर्भमें वे अपनी स्थितिसे तनिक भी डिगनेको तैयार न थे। कार्यक्रमके इस हिस्सेका ब्रिटेनके आर्थिक हितोंपर बड़ा प्रतिकूल प्रभाव पड़ा था और वहाँके सूत, कपड़े आदिके उद्योगकी स्थिति बिगड़ चली थी। इस तरह यह एक ऐसी चीज थी जिसके कारण कांग्रेसकी नीतिके गलत समझे जाने और उसे गलत रूपमें पेश किये जानेकी बहुत अधिक सम्भावना थी। समझौतेके परिणामस्वरूप कांग्रेसने ब्रिटिश मालका बहिष्कार तो बन्द कर दिया, क्योंकि उसे विशुद्ध राजनीतिक उद्देश्यसे अपनाया गया था, किन्तु "भुखमरीसे पीड़ित करोड़ों लोगोंकी आर्थिक आवश्यकता" के रूपमें ब्रिटिश वस्त्र-सहित सभी विदेशी कपड़ोंका बहिष्कार कायम रखा गया (पृष्ठ १०६)। इस आन्दोलनके विरुद्ध इंग्लैंडमें अकारण ही जो कटुतापूर्ण बवाल खड़ा कर दिया गया था, उसके सम्बन्धमें 'यंग इंडिया' में लिखते हुए गांधीजीने अंग्रेजों और खासकर

लंकाशायरके मिल-मालिकोंसे इस सीधे-साधे तथ्यको समझनेका अनुरोध किया कि "पीढ़ियोंसे चली आनेवाली कंगाली या भुखमरीसे मुक्त होनेके लिए हिन्दुस्तानको" विदेशी कपड़ेके लिए — चाहे वह "विलायती हो या जापानी" या किसी अन्य देशका — सदाके लिए अपने द्वार बन्द कर लेने हैं। "सभी विदेशवासी यह समझ लें कि यह बहिष्कार-आन्दोलन एक लोकव्यापी, लोकहितकारी आन्दोलन है। . . . इस आन्दोलनके राजनैतिक परिणाम अवश्य हैं, परन्तु वस्तुतः यह आन्दोलन शुद्ध रूपमें आर्थिक और लोकोपकारी है, इसलिए तमाम दुनियाकी इसके साथ सहानुभूति होनी चाहिए" (पृष्ठ २६)। उन्होंने यह स्वीकार किया कि संक्रमण कालमें लंकाशायरके कारीगरोंको कठिनाई झेलनी पड़ सकती है। लेकिन क्या इसीलिए भारतके करोड़ों लोग भूखों मरते रहें? — यह था उनका बहुत ही माकूल सवाल। और वास्तविकताको साहसपूर्वक उजागर करते हुए उन्होंने कहा: "लंकाशायरने भारतके कुटीर उद्योगोंका गला घोटकर एक अन्याय किया। अब . . . लंकाशायरको चाहिए कि वह अपने लिए कोई अपेक्षाकृत कम हानिकर उद्योग तलाश ले" (पृष्ठ ३४६)। फिर भी, इस प्रश्नपर ब्रिटेनकी भावनाकी तीव्रताको समझते हुए गांधीजीने गोलमेज परिषद्के सिलसिलेमें इंग्लैड जानेका संयोग आनेपर लंकाशायर जाकर वहाँके लोगोंको यह समझानेका निमन्त्रण बड़ी तत्परतासे स्वीकार किया कि "मेरे और कांग्रेसके मनमें लंकाशायरके प्रति किसी भी तरहकी कोई दुर्भावना नही है और कांग्रेस लंकाशायरकी भरसक सहायता करेगी" (पृष्ठ २२५)।

लेकिन साथ ही गांधीजी भारतीय जनताको भी "बहिष्कार आन्दोलनका सच्चा प्रयोजन और वास्तविक अर्थ" समझाकर आन्दोलनको सही दिशा देना आवश्यक मानते थे। उन्होंने राष्ट्रका आह्वान किया कि वह इस कार्यक्रमको "इस ढंगसे क्रियान्वित" करे जिससे इसका "अधिकांश लाभ गाँवोके लोगोंको पहुँचे" और इस कामको इस ढंगसे करनेका एक ही रास्ता था कि "राष्ट्र . . . देशी वस्त्रोंमें खादीको ही सबसे ऊँचा स्थान" दे (पृष्ठ ६०)।

इसलिए उन्होंने जनतासे अनुरोध किया कि वह वस्त्रोंके सम्बन्धमें अपनी रुचि बदले। इस सम्बन्धमें लोगोंके मनकी दुविधा उनसे छिपी नही थी। उन्होंने कहा: "बुद्धि विदेशी कपड़ेके त्यागको स्वीकार अवश्य करती है, परन्तु हृदय तो विदेशसे आनेवाले भाँति-भाँतिके कपड़ोंके लिए ही तरसता रहता है। देश-प्रेमकी अपेक्षा — या कहो कि करोड़ों अधभूखोंके प्रेमकी अपेक्षा — अपना सुख ही अधिक प्रबल सिद्ध होता है" (पृष्ठ १४८)। कुछ हलकोंमें इस आन्दोलनपर ऐसा आरोप लगाया जा रहा था कि इसका "एकमात्र लक्ष्य जनताको हानि पहुँचाकर मिलोंको लाभ पहुँचाना है।" इस आरोपका खण्डन करते हुए गांधीजीने कहा कि "भारतीय मिलोंका काम यही है कि वे खादीकी अनुपूरक बनें। . . . लेकिन यदि भारतीय मिलें खादीका विरोध भी करें तो बहिष्कार जारी ही रहेगा।" उनका विचार था कि एक बार जब विदेशी कपड़े रास्तेसे हट जायेंगे तो "देशी मिलें बड़ी तत्परतासे या तो अपने वस्त्रोंके मूल्य और उसके उत्पादनको खादीके अनुरूप बना लेंगी या फिर विदेशी

मिलोंकी भाँति उनको भी बहिष्कारका खतरा उठाना पड़ेगा" (पृष्ठ ३२९)। खादीके मानवीय पक्षपर जोर देते हुए उन्होंने कहा: "खादी दरिद्रनारायणकी हुण्डी है। इसे सकारनेवाले शहरके नागरिक होने चाहिए" (पृष्ठ ३६३)। उनका कहना था कि "ग्रामीण अर्थशास्त्र उद्योग-प्रधान अर्थशास्त्रसे भिन्न" है; जड़ वस्तुओंके उपयोगका अर्थशास्त्र एक चीज है, लेकिन मानवीय अर्थशास्त्र बिलकुल दूसरी।

गांधीजीके विचारसे, नैतिक दृष्टिसे तो खादी उस सार्वभौम स्वदेशी धर्मका ही एक अंग थी जो अपने अनुयायियोंसे "अपने आसपास रहनेवालोंकी सेवामें लीन हो जाने" की अपेक्षा रखता है। इससे ऐसा भ्रम होना सम्भव था कि यह तो सेवाका बहुत ही संकुचित और सृष्टिकी एकताके बोधके विपरीत दृष्टिकोण है। किन्तु गांधीजी का कहना था कि "स्वदेशीकी शुद्ध सेवा करनेसे परदेशीकी भी शुद्ध सेवा होती है। . . . दूरवालोंकी सेवा करनेका मोह करनेसे वह सधती भी नहीं और पड़ोसीकी सेवा भी नहीं हो पाती" (पृष्ठ २७२)। मगर साथ ही उन्होंने स्वदेशीको कोई विकृत रूप देनेके खिलाफ भी लोगोंको आगाह करते हुए कहा: "जो चीजें स्वदेशमें न बनती हों या बहुत कठिनाईसे ही बन सकती हों, उन्हें विदेशी वस्तुओंसे द्वेषके कारण यदि देशमें बनाने बैठ जायें तो वह स्वदेशी-धर्म नहीं है" (पृष्ठ २७४)। स्वदेशीका मर्म स्पष्ट करते हुए उन्होंने बताया, "यह संकीर्ण धर्म नहीं है। यह तो प्रेम और अहिंसासे उत्पन्न एक सुन्दर धर्म है" (पृष्ठ २७४)।

इधर गांधीजीकी लँगोटी फिरसे आलोचकोंके बीच चर्चाका विषय बन गई थी और इस बार तो इसमें चर्चिल-जैसे गण्यमान्य राजनयिक भी शामिल थे। इन आलोचकोंको उत्तर देते हुए गांधीजीने बताया कि यह चीज भी उनके लिए "करोड़ों अधनंगे लोगोंके रहन-सहनके अधिक समीप होकर उनसे अपनेको जोड़ सकने" का एक साधन थी। लेकिन उसका महत्त्व यहीं तक सीमित नहीं था। "जिस हदतक लँगोटी सादगीकी निशानी है, उस हदतक वह भारतीय संस्कृतिकी प्रतीक भी मानी जा सकती है।" उन्होंने यह तो स्वीकार किया कि यूरोपीय सभ्यतामें "जो अच्छा और ग्राह्य हो" उसे भारतको अपनाना चाहिए किन्तु "शारीरिक सुखोंकी दृष्टिसे अविरत शोध और उनकी वृद्धि" का उन्होंने विरोध किया, और कहा कि यूरोपीय लोग "जिन भोगोंके वे गुलाम बने जा रहे हैं, यदि वे उनके भारसे दबकर तबाह न होना चाहते हों, तो स्वयं उन्हें भी अपनी जीवन-दृष्टिको नया रूप देना पड़ेगा।" औरोंके लिए चाहे जो हो, लेकिन "भारतवर्षका इस सोनेके हिरनके पीछे दौड़ना निश्चय ही मौतको गले लगाना है" (पृष्ठ ५८)।

इसी दौरान गांधीजीको एक और विवादमें उलझना पड़ा था। बात यह हुई थी कि भारतमें विदेशी मिशनरियोंके कार्यकलापके सम्बन्धमें गांधीजी द्वारा व्यक्त किये गये कुछ विचारोंको एक अखबारने तोड़-मरोड़ कर प्रकाशित कर दिया था। इसपर कई अखबारों और अनेक पत्र-लेखकोंने गांधीजीकी बड़ी तीव्र आलोचना की। एक लेखमें इन आलोचनाओंका उत्तर देते हुए गांधीजीने कहा: "हरएक राष्ट्र अपने धर्मको दूसरे किसी राष्ट्रके धर्म-जितना ही अच्छा समझता है। भारतवासी जिन

महान् धर्मोंमें आस्था रखते हैं, वे निश्चय ही उनके लिए पर्याप्त हैं। भारतको एक धर्म छोड़कर दूसरा धर्म अपनानेकी कोई "आवश्यकता नहीं है" (पृष्ठ २८)। उन्होंने धर्मान्तरणकी आधुनिक पद्धतिपर आपत्ति करते हुए कहा कि आज तो इसने भी "और वस्तुओंकी भाँति एक व्यापारका रूप ग्रहण कर लिया है।" "मानव-दयाकी आड़में किया गया धर्म-परिवर्तन" उनके विचारसे "हानिकर" था और उन्होंने सच्ची स्थितिपर प्रकाश डालते हुए बताया, "धर्म पार्थिव चीजोंकी तरह नहीं दिया जाता। . . . यदि मनुष्यमें कोई जीवित धार्मिक आस्था है, तो वह गुलाबके फूलकी तरह अपनी सुगन्ध फैलाती है" (पृष्ठ २८)।

"गिरि-प्रवचनोंको श्रद्धासे पढ़नेसे" उन्हें जो लाभ हुआ था, उसे उन्होंने उदारतापूर्वक स्वीकार किया, और ईसा मसीहकी गणना "संसारके महानतम शिक्षकोंमें" की, किन्तु ईसाको "एकमात्र अवतारी पुरुष" माननेवाली कट्टरपंथी ईसाई विचारधाराको स्वीकार करना उन्होंने असम्भव पाया। जहाँ उन्होंने धर्मान्तरणके उस रूपपर दुःख प्रकट किया जिसमें आदमीको एक धर्मसे विमुख करके दूसरेमें दीक्षित किया जाता है, वहीं "आत्मशुद्धि और आत्मसाक्षात्कारके अर्थमें धर्म-परिवर्तन" को उन्होंने स्पृहणीय बताया। उनका दावा था कि भारतके धर्म भारतके लिए सभी दृष्टियोंसे पूर्ण और पर्याप्त हैं, लेकिन विभिन्न धर्मोंके अनुयायी एक-दूसरेसे काफी-कुछ सीख सकते है और उन्हें सीखना भी चाहिए। यदि विभिन्न धर्मोंके बीच "सहानुभूतिपूर्ण सम्पर्क स्थापित हो जाये और एक-दूसरेके कुचक्रोंकी कोई आशंका न हो, तो प्रत्येक धर्म शेष अन्य धर्मोंसे बहुत-कुछ सीख सकता है।" गांधीजीका विरोध किसी धर्मसे नहीं, केवल धर्मान्तरणके विचारसे था (पृष्ठ २५५)।

साबरमती आश्रमसे गांधीजीका सम्बन्ध पूर्ववत् कायम था और वे आश्रम-वासियोंको, उस अहिंसक क्रान्तिका उपयुक्त वाहन बननेके लिए तैयार कर रहे थे जो वे देशमें लाना चाहते थे। इसलिए वे जहाँ-कहीं रहते थे, वहाँसे वे पत्रों द्वारा आश्रमवासियोंसे निरन्तर सम्बन्ध बनाये रखते थे। लेकिन २६ जनवरीको रिहा होनेके बादसे वे इतने व्यस्त थे कि इस महत्त्वपूर्ण कार्यके लिए उन्हें समय नहीं मिल पाता था। इसलिए उन्होंने नारणदाससे कहा कि वे आश्रमवासियोंको 'गीता,' 'भजनावली' और 'रामायण' पर भरोसा रखनेकी सलाह दें। उन्होंने लिखा, "उनका पारायण मेरे पत्रसे या सहवाससे भी ज्यादा शक्तिप्रद है, ऐसा मेरा विश्वास है और मैं चाहता हूँ कि दूसरे सब लोग भी ऐसा ही मानें" (पृष्ठ २४७)। गांधीजीका विचार था कि जिसमें नैतिक शक्ति नहीं है वह लोक-सेवाके योग्य नहीं है। इसीलिए उनका विशेष आग्रह था कि सेवकजन खादीके नियमका पूरा-पूरा पालन करें। इस नियमके बन्धनके कारण सेवकोंकी संख्यामें कमी आ जानेकी भी उन्हें कोई परवाह नहीं थी। उनका विचार था कि ऐसा चरित्र-बल प्राप्त करनेके लिए अपने ऊपर बराबर चौकसी रखना आवश्यक है। "मनुष्य-स्वभाव कठिनाइयोंका सामना" करनेसे कतराता है। "वह आसान रास्तेकी खोजमें रहता है। आसान रास्ता नीचे ले जाता है, मुश्किल रास्ता ऊपर उठाता है। जो नियम भौतिक शास्त्रके लिए सही

है, वही अध्यात्मपर भी लागू होता है" (पृष्ठ ३९)। गांधीजीकी मानसिक शान्ति उनके मित्रोंके लिए ईर्ष्याका विषय थी। इस शान्तिका रहस्य बताते हुए उन्होंने कहा, "ऐसी मानसिक शान्ति ईश्वर और उसकी कृपापर परम आस्था रखनेसे प्रतिफलित होती है। इस आस्थासे ही मुझे परिणाम या फलकी चिन्तासे सर्वथा मुक्त रहकर अपना नियोजित कर्म विनम्रतापूर्वक करते रहनेकी सामर्थ्य मिलती है" (पृष्ठ ३११)।

इसमें सन्देह नही कि गांधीजीके राजनीतिक विचार और संघर्षके तरीके सच्चे अर्थोंमें क्रान्तिकारी थे। लेकिन उनका यह दावा भी उतना ही सच था कि वे जितने अतिवादी है उतने ही मध्यममार्गी भी। लोगोंको अक्सर उनमें वैचारिक अन्तर्विरोधका भ्रम हो जाया करता था। इस भ्रमका निवारण करते हुए उन्होंने बताया कि इसका कारण यह था कि वे सेवाको ही सेवाका एकमात्र और पूर्ण पुरस्कार मानते थे। उन्हें अपनी सेवाओंके लिए जनताकी प्रशस्तिकी आवश्यकता नहीं, अन्तरात्माके मूक अनुमोदनकी जरूरत थी। सेवा-धर्मके प्रति अपनी इसी निष्ठाके कारण उन्हें वैसे हर व्यक्ति और हर संस्थासे एकताकी अनुभूति होती थी जो इस धर्ममें निरत हो। इस तरह उन्होंने सर्वेन्ट्स ऑफ इंडिया सोसायटीके एस० जी० वझेको लिखा: "हमारे विचार चाहे एक-दूसरेसे सर्वथा भिन्न हों . . . पर मुझे हमेशा यही लगता रहा है कि हमारे दिल एक हैं, क्योंकि हम एक ही गुरु [गोपाल कृष्ण गोखले]के शिष्य हैं।" (पृष्ठ २०५)

जनताकी सराहनाकी चिन्ता न करनेका यह मतलब नहीं कि उनके मनमें अयोग्य स्वामीका योग्य सेवक होनेका कोई अभिमान था। सच तो यह है कि आम जनतामें उनकी आस्था अगाध थी। तभी तो उन्होंने वयस्क-मताधिकारका विरोध करनेवाले एक व्यक्तिको लिखा: "हर प्रकारके मताधिकारका दुरुपयोग हो सकता है, पर वयस्क मताधिकारका कमसे-कम होता है" (पृष्ठ ४७) जनसाधारणकी सामान्य प्रामाणिकताके प्रति अपनी इसी श्रद्धाके कारण वे बराबर चाहते थे कि कांग्रेसका सारा हिसाब-किताब जनताकी निगाहमें रहे। वे चाहते थे कि प्रान्तीय समिति जिला स्तरकी समितियोंके वित्तकी व्यवस्था न करें, बल्कि जिला स्तरकी समितियाँ ही प्रान्तीय समितिके वित्तकी व्यवस्था करें। वित्त-व्यवस्थाके केन्द्रीकरणको वे "पैरोंसे चलनेके बजाय नटकी तरह सिरके बल चलने" के समान मानते थे (पृष्ठ १६८)।

आभार

प्रस्तुत खण्डकी सामग्रीके लिए हम निम्नलिखित संस्थाओं, व्यक्तियों, पुस्तकोंके प्रकाशकों तथा पत्र-पत्रिकाओंके आभारी हैं:

संस्थाएँ: साबरमती आश्रम संरक्षक तथा स्मारक न्यास और संग्रहालय, नवजीवन ट्रस्ट तथा गुजरात विद्यापीठ ग्रन्थालय, अहमदाबाद; गांधी स्मारक निधि और संग्रहालय, नई दिल्ली; भारतका राष्ट्रीय अभिलेखागार (नेशनल आर्काइव्ज ऑफ इंडिया), नई दिल्ली; नेहरू स्मारक संग्रहालय, तथा पुस्तकालय, नई दिल्ली और स्वार्थमोर कालेज, फिलाडेल्फिया।

व्यक्ति: डा० ओल्डफील्ड; श्री कनुभाई मशरूवाला; श्री किशनसिंह चावड़ा; श्री घनश्यामदास बिड़ला, कलकत्ता; श्री जमनादास गांधी; श्री नारणदास गांधी, राजकोट; श्री प्रभुदास गांधी; श्री बालकृष्ण भावे; श्री रसिक देसाई, श्री वालजी देसाई, पूना; श्री हरिभाऊ उपाध्याय, अजमेर; श्रीमती गंगाबहन वैद्य, बोचासण; श्रीमती प्रेमाबहन कंटक, सासवड; श्रीमती लक्ष्मीबहन खरे, अहमदाबाद; श्रीमती वसुमती पण्डित, सूरत; श्रीमती शारदाबहन शाह, बढवान।

पुस्तकें: 'पांचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद', 'बापुना पत्रो: छगनलाल जोशीने,' 'बापुना पत्रो: नारणदास गांधीने,' 'बापुना पत्रो: प्रभावती बहनने,' 'लेटर्स ऑफ श्रीनिवास शास्त्री'।

पत्र-पत्रिकाएँ: 'नवजीवन', 'बोम्बे क्रॉनिकल', 'यंग इंडिया', 'स्टेट्समैन' और 'हिन्दुस्तान टाइम्स'।

इनके अतिरिक्त अनुसन्धान और सन्दर्भ सम्बन्धी सुविधाओंके लिए अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीका पुस्तकालय; इंडियन कौंसिल ऑफ वर्ल्ड अफेयर्स पुस्तकालय; सूचना और प्रसारण मन्त्रालयके अनुसन्धान और सन्दर्भ विभाग, नई दिल्ली; भारतका राष्ट्रीय अभिलेखागार (नेशनल आर्काइव्ज ऑफ इंडिया); श्री प्यारेलाल नैयर, नई दिल्ली हमारे धन्यवादके पात्र हैं। कागज-पत्रोंकी फोटो-नकल तैयार करनेमें सहायता देनेके लिए हम सूचना और प्रसारण मन्त्रालयके फोटो-विभाग, नई दिल्लीके भी आभारी हैं।

पाठकोंको सूचना

हिन्दीकी जो सामग्री हमें गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मिली है, उसे अविकल रूपमें दिया गया है। किन्तु दूसरों द्वारा सम्पादित उनके भाषण अथवा लेख-आदिमें हिज्जोंकी स्पष्ट भूलें सुधार दी गई हैं।

अंग्रेजी और गुजरातीसे अनुवाद करते समय उसे यथासम्भव मूलके समीप रखनेका पूरा प्रयत्न किया गया है, किन्तु साथ ही भाषाको सुपाठ्य बनानेका भी पूरा ध्यान रखा गया है। जो अनुवाद हमें प्राप्त हो सके हैं, हमने उनका मूलसे मिलान और संशोधन करनेके बाद उपयोग किया है। नामोंको सामान्य उच्चारणके अनुसार ही लिखनेकी नीतिका पालन किया गया है। जिन नामोंके उच्चारणमें संशय था, उनको वैसा ही लिखा गया है, जैसा गांधीजीने अपने गुजराती लेखोंमें लिखा है।

मूल सामग्रीके बीच चौकोर कोष्ठकोंमें दिये गये अंश सम्पादकीय हैं। गांधीजीने किसी लेख, भाषण-आदिका जो अंश मूल रूपमें उद्धृत किया है, वह हाशिया छोड़कर गहरी स्याहीमें छापा गया है। भाषणोंकी परोक्ष रिपोर्ट तथा वे शब्द जो गांधीजीके कहे हुए नहीं हैं, बिना हाशिया छोड़े गहरी स्याहीमें छापे गये हैं। भाषणों और भेंटकी रिपोर्टोंके उन अंशोंमें जो गांधीजीके नहीं है, कुछ परिवर्तन किया गया है और कहीं-कहीं कुछ छोड़ भी दिया गया है।

शीर्षककी लेखन-तिथि दायें कोनेमें ऊपर दे दी गई है; जहाँ वह उपलब्ध नहीं है, वहाँ अनुमानसे निश्चित तिथि चौकोर कोष्ठकोंमें दी गई है और आवश्यक होने पर उसका कारण स्पष्ट कर दिया गया है। जिन पत्रोंमें केवल मास या वर्षका उल्लेख है उन्हें आवश्यकतानुसार मास या वर्षके अन्तमें रखा गया है। शीर्षकके अन्तमें साधन-सूत्रके साथ दी गई तिथि प्रकाशनकी है। गांधीजीकी सम्पादकीय टिप्पणियाँ और लेख, जहाँ उनकी लेखन-तिथि उपलब्ध है अथवा जहाँ किसी दृढ़ आधार पर उसका अनुमान किया जा सका है, वहाँ लेखन-तिथिके अनुसार और जहाँ ऐसा सम्भव नहीं हुआ है, वहाँ उनकी प्रकाशन-तिथिके अनुसार दिये गये हैं।

साधन-सूत्रोंमें 'एस० एन०' संकेत साबरमती संग्रहालय, अहमदाबादमें उपलब्ध सामग्रीका, 'जी० एन०' गांधी स्मारक निधि और संग्रहालय, नई दिल्लीमें उपलब्ध कागज-पत्रोंका, और एम० एम० यू० गांधी स्मारक निधि और संग्रहालयके मोबाइल माइक्रोफिल्म यूनिटमें उपलब्ध कागज-पत्रोंका और 'सी० डब्ल्यू०' सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय (कलेक्टेड वर्क्स ऑफ महात्मा गांधी) द्वारा संगृहीत पत्रोंका सूचक है।

सामग्रीकी पृष्ठभूमिका परिचय देनेके लिए मूलसे सम्बद्ध परिशिष्ट तथा अन्तमें साधन-सूत्रोंकी सूची और इस खण्डसे सम्बन्धित कालकी तारीखवार घटनाएँ दी गई हैं।

विषय-सूची

परिशिष्ट

१. हिंसावादिता

सिख लीगकी सभामें श्री पेडीकी[१] हत्या और श्रीमती कर्टिसके[२] हत्यारेका वीरके रूपमें गुणगान किये जानेसे इस दुःखद सत्यपर बड़ी ही स्पष्ट प्रकाश पड़ता है कि आज भी हिंसावादके बहुत-से पुजारी पड़े हुए हैं। हत्यारोंकी हदसे ज्यादा प्रशंसा की जा रही है। अगर हम हर हत्यारेका गुणगान इसलिए करते हैं कि हत्या करनेमें उसका हेतु राजनैतिक था तो हम इस कामकी प्रशंसा करते-करते स्वयं भी वैसे काम करने लगेंगे। सज्जनसिंहको वीर कहकर उनकी प्रशंसा किये जानेसे मुझे यह संदेह हो रहा है कि कांग्रेसमें भगतसिंहके बारेमें मेरे द्वारा प्रस्तावका[३] रखा जाना बुद्धिमानीकी बात थी या नहीं? मेरा हेतु तो बहुत स्पष्ट था। उस कार्यकी निन्दा और उसमे निहित वीरता और त्यागकी भावनाकी प्रशंसा की गई थी। ऐसा इसलिए किया गया था कि यह प्रस्ताव हमें कार्य और उसके हेतुमे भेद कर सकनेमें मदद पहुँचायेगा। और हम आखिरकार राजनैतिक हत्या-जैसे कृत्योंसे घृणा करना सीखेंगे, फिर चाहे उसका हेतु कितना ही ऊँचा क्यों न हो। परन्तु कांग्रेसके प्रस्तावका असर शायद बिलकुल उलटा ही पड़ा। लगता है मानो उसने लोगोंको बेखटके हत्याकी ही प्रशंसा करनेका अधिकार दे दिया। मैं फिरसे अपना निश्चित और भली-भाँति सोचा-समझा यह मत दोहराता हूँ और कहता हूँ कि अन्य देशोंके बारेमें वस्तुस्थिति चाहे जो हो, कम-से-कम हिन्दुस्तानमें तो राजनैतिक हत्या देशको नुकसान ही पहुँचा सकती है। यह बात उस हालतमें और भी ठीक है, जब यहाँ शान्तिपूर्ण उपायोंसे स्वतन्त्रता प्राप्त करनेका एक ऐसा बड़ा प्रयोग किया जा रहा है जैसा अभीतक की दुनियामें अभूतपूर्व ही है। आँखोंवाले देख सकते हैं कि प्रयोग आशातीत रूपसे उपयोगी सिद्ध हुआ है और अब सफल होने ही वाला है। मैं दावेके साथ कहता हूँ कि अगर इस प्रयोगके दरम्यान राजनैतिक हत्याओं और मनमें समाई हुई तथा उससे कुछ कम भाषणोंमें तथा उससे कुछ कम असहयोगियोंके कामोंमें प्रतिबिम्बित हिंसाने खलल न डाला होता, तो अबतक भारत स्वतन्त्र हो चुका होता।

अहिंसा दुर्बलका नहीं, बलवानका शस्त्र है। अहिंसाका अर्थ है अपराधको क्षमा करना और बदला न लेना। संस्कृतमें एक वचन है "क्षमा वीरस्य भूषणम्"। इस गुणका परिचय युधिष्ठिरके उस समयके व्यवहारसे प्रकट होता है जब विराटने हदसे अधिक उत्तेजित हो उठनेका कारण दिये जानेपर भी उन्होंने विराटको क्षमा कर दिया; इतना ही नहीं अपने भाई अर्जुनके क्रोधसे उसकी रक्षाके लिए भी

१. मिदनापुरके जिला मजिस्ट्रेट जिनकी ७ अप्रैलको गोली मारकर हत्या की गई थी।

२. एक अंग्रेज अफसरकी पत्नी; इनकी हत्या १३ जनवरीको लाहौरमें की गई थी।

३. देखिए खण्ड ४५, पृष्ठ ३८५।

असाधारण प्रयत्न किया। अगर वे ऐसा न करते तो महाराज युधिष्ठिरका अर्जुनने अपमान करने और उन्हें चोट पहुँचानेके अपराधमें विराटको मार डाला होता।

अहिंसा कोई यान्त्रिक क्रिया नहीं है। यह हृदयका सर्वोत्तम गुण है और उसे प्रयत्न पूर्वक पा लेनेपर ऐसा मालूम होता है कि वह स्वाभाविक गुण है; सचमुच वह वैसा ही है; और प्राप्त हो जानेपर व्यक्तिको आश्चर्य होता है कि उसे पानेमें उसे किसी प्रकारका भी कष्ट् क्यों उठाना पड़ा। हमारे भीतरका पशु कहता है कि घूँसेके बदले घूँसेसे बढ़कर स्वाभाविक और क्या है? और हमारे अन्दर बैठा हुआ मनुष्य कहता है कि घूँसा मारनेवालेको क्षमा करनेसे बढ़कर अधिक स्वाभाविकता तथा अधिक मानवता और क्या है? आघात करनेवाला अज्ञानी था और उस समय वह अपने आपेमें नहीं था, तो आहत भी अज्ञानी क्यों बने और अपने-आपको क्यों भूले? कोई पूछ सकता है कि तब क्या वे तमाम पत्नियाँ मानवीयतासे भरपूर हैं, जो अपने पशुतुल्य पतियोंके अत्याचार सहकर भी उन्हें क्षमा कर देती हैं। अच्छा तो यह हो कि वे क्षमा तो कर दें किन्तु उन्हें खुश करनेका प्रयत्न न करें; बल्कि उन्हींके हितके विचारसे उनसे असहयोग ठान लें।

परन्तु यहाँ मैं इस विषयकी गहराईमें नही उतरना चाहता। जो अहिंसाको मानते हैं वे उसकी शक्तिको पहचाने और मन, वचन, कर्मसे अहिंसक बनें। और जिन्हें अबतक न अहिसक रीतिकी उपयोगितामें विश्वास है, और जो न हिंसाकी अचूकतामें ही विश्वास करते हैं, वे नीचे लिखी बातोंपर विचार करें:

१. भारतके करोड़ों लोग हिंसक तरीकोंके आदी नहीं हैं।

२. देशके ग्रामोंके निवासियोंने कभी संगठित होकर किसी बड़े पैमानेपर हिंसाका उपयोग नहीं किया है।

३. उनके सामने भारतको एक-राष्ट्रके रूपमें समझकर उसकी स्वतन्त्रताकी कोई निश्चित कल्पना नहीं है।

४. इसके विपरीत यूरोपमें लोगोंने हिंसक तरीकोंसे अपनी स्वतन्त्रता प्राप्त की; और यह इसलिए कि उन्हें कम या ज्यादा अंशोंमें हथियार चलानेका अभ्यास था।

५. यूरोपकी जनताने स्वतन्त्रता अन्य शासनारूढ़ सत्तासे अधिक हिंसाका प्रयोग करके प्राप्त की।

६. फिर भी इसमें तो सन्देह है कि उन्हें, जिनमें अंग्रेज भी शामिल हैं, सच्ची स्वतन्त्रता मिली है या नहीं। वहांकी आम जनता आज भी यह महसूस करती है कि धनवान वर्गके लोग उन्हें कुचल रहे हैं। क्योंकि शासनकी बागडोर उनके हाथोंमें है। उनकी अनेक और नित्य अधिकाधिक उलझनपूर्ण होती जानेवाली समस्याओंपर विचार कीजिए।

७. दूसरी ओर हम जानते हैं कि भारतमें वर्तमान असाधारण लोक-जागृति केवल अहिंसक रीतिसे ही हुई है, जिसमें स्त्रियोंकी जागृति भी शामिल है।

८. यह तो हमारे सामने साबित हो चुका है कि जहाँ लोगोंने गलती की है, और हिंसक हो उठे हैं, वहाँ उनकी हार हुई है; क्योंकि उनका नैतिक बल टूट गया और वे दबा दिये गये।

अगर मैं पिछले बारह महीनोंके बारेमें और अधिक विचार करूँ, तो इस सूचीमें और भी बातें जोड़ सकता हूँ। पर मेरा आशय स्पष्ट करनेके लिए इतना पर्याप्त है।

जिन लोगोंका हिंसक तरीकोंमें पूरा और पक्का विश्वास है, उनसे मैं कहूँगा कि देशप्रेमका जितना दावा आप अपने बारेमें करते हैं, उतना ही मुझे भी करने दें। अगर मेरा यह दावा आपको मंजूर है, तो आपको मेरी इस बातपर विश्वास कर लेना चाहिए कि अपने तरीकोंको मेरे तरीकोंके साथ मिलाकर आप देशके कष्टोंको कायम रखनेमें मदद पहुँचाते हैं। मैं जानता हूँ कि आपमें से कुछ यह मानते है कि इक्के-दुक्के किसी अफसरकी हत्या कर देना ध्येय प्राप्तिमें सहायक है। पर यह विश्वास बिलकुल निराधार है। इसके विपरीत मै तो यह जानता हूँ कि उनमें से एक-एक हत्याने मेरे मार्गमें रोड़े अटकाये हैं। मै जानता हूँ कि मेरी ही तरह आप भी, शायद आप कहेंगे, तमाम राजनैतिक कैदियोंके छुटकारेके लिए, मुझसे ज्यादा आतुर हैं। पर आपको यह मानना चाहिए कि आतंक फैलानेवाले तरीकोंसे उनकी मुक्तिका दिन दूर ही हट सकता है। इस सरकारका जैसा संगठन है—सभी सरकारोंका ऐसा ही होता है—उसे देखते हुए यह साफ है कि जबतक राजनैतिक हिंसा होती रहेगी, वे उन राजबन्दियोंको नहीं छोड़ेंगे, जिनपर हिंसाका आरोप सिद्ध हो चुका है। अतएव इन सब बातोंका विचार करके यदि आपने मेरी सलाह और प्रार्थनाको माना और मान कर अपने कार्योंको सारे राष्ट्र द्वारा मेरे प्रयोगकी परीक्षा किये जानेकी इस अवधिमें मुल्तवी रखा, तो बड़ा अच्छा होगा।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १६-४-१९३१

२. एक अंग्रेजकी परेशानी

भारतवासी उन अंग्रेज सज्जनको पहचानते हैं, जो मेरे पत्रवाहक बनकर ११ शर्तोंवाला पत्र वाइसरायको देने गये थे, और जिन्होंने गत वर्षके सत्याग्रह युद्धके दिनोंमें इंग्लैंडमें बड़ी-बड़ी कठिनाइयोंका सतत सामना किया है। अब [उन्ही] श्री रेजीनाल्ड रेनॉल्ड्सने नीचे लिखा दर्दभरा पत्र भेजा है:[1]

कौटुम्बिक और निजी बातोंके सिवा मैंने इस पत्रमें कुछ काँट-छाँट नहीं की है। श्री रेनाल्ड्सकी इच्छासे मैं यह पत्र छाप रहा हूँ, और ऐसा करते हुए मुझे आनन्द होता है; क्योंकि मैं जानता हूँ कि मुझपर आश्चर्यजनक विश्वास रखनेके

१. यहाँ नहीं दिया जा रहा है। श्री रेनॉल्ड्सने गांधीजी द्वारा गोलमेज परिषद्में भाग लिये जानेकी स्वीकृतिको असंगत कहा था और पूछा था कि तब फिर पूर्ण स्वतन्त्रता सम्बन्धी लाहौरके प्रस्तावका अर्थ ही क्या बच रहता है। उन्होंने यह भी कहा था कि शासनारूढ़ दल भारतके साथ कदापि न्याय नहीं करेगा; करेगा तो उसे अपनी सत्तासे हाथ धोने पड़ेंगे; ऐसा नहीं मानना चाहिए कि सत्ताका 'हृदय-परिवर्तन' हो गया है; इसलिए गांधीजीका परिषद्में भाग लेना अपने जन्मसिद्ध अधिकारसे समझौता करना है।

कारण कांग्रेसने समझौता[१] स्वीकार कर लिया है। तथापि कुछ ऐसे भारतीय भी हैं, जो इन्हीं बहादुर अंग्रेज सज्जन जैसे विचार रखते हैं और चाहे जितने कम क्यों न हों, कुछ अंग्रेज भी ऐसे होंगे, जो मेरी नरमी और इस असंगतिसे रेनाल्ड्सकी तरह मन ही मन खीझ रहे होंगे। इसलिए रेनाल्ड्स तथा उन लोगोंके विचारसे मुझे इन शिकायतोंका जवाब देनेकी कोशिश करनी चाहिए। क्योंकि हिन्दुस्तानको अभी कई वर्षोतक उन सबकी सक्रिय सहायता और सहानुभूतिकी जरूरत रहेगी।

नरमीका आरोप मुझे कबूल कर लेना चाहिए। मुझे जाननेवाले मित्रोंका कहना है कि मैं जितना गरम हूँ, उतना ही नरम हूँ, और जितना प्रगतिवादी हूँ उतना ही रूढ़िवादी भी। शायद इसी कारण मुझे इन दोनों ही वर्गोंमें आत्यन्तिक दृष्टिकोण रखनेवाले मित्र पानेका सौभाग्य प्राप्त है। किन्तु मै मानता हूँ कि इन दोनों तत्त्वोंको एक-साथ मित्र-रूपमें मेरे पानेका कारण अहिंसा विषयक मेरा दृष्टिकोण है।

असंगति तो आभासमात्र है। मै अपनेको संयोगोके परिवर्तनके अनुकूल बना लेता हूँ, इस कारण मित्रगण असगतिका अनुभव करते हैं; यो तो प्रकट संगति और असंगति, दोनों ही बातें निरी हठधर्मी भी हो सकती हैं।

किन्तु मुख्य बात तो यह है कि लोक-सेवकको तो नरमी या उग्रता या असंगतिके आरोपोंका कोई विचार ही नही करना चाहिए। उसे सिर्फ एक बातकी चिन्ता रखनी चाहिए, और वह है उसकी अन्तरात्माकी स्वीकृति। अपनी अन्तरात्माके अचूक आश्वासनको छोड़कर जो जनताको खुश करनेके लिए उसकी स्वीकृति प्राप्त करनेका प्रयत्न करता रहता है, उसकी दशा बिना पतवारकी नौकाके समान होती है। सेवाका एकमात्र पुरस्कार सेवा ही होना चाहिए। इसलिए मै जो दलीलें और तथ्य पेश करूँगा, वे पुरअसर हों या न हों, पाठकोंके लिए इतना जान लेना काफी होना चाहिए, और मै जानता हूँ कि रेनाल्ड्सके लिए भी इतना ही काफी होगा, कि सुलह करने और उसे मंजूर करनेकी सलाह देनेमें मैंने अपनी मतिके अनुसार उचित ही नही, जो कर्त्तव्यरूप था, वही किया है।

अब तथ्यों और दलीलोंको लीजिए। रेनाल्ड्स और उनके-जैसे विचार रखनेवालोंकी परेशानीका कारण यह है कि उन्होंने इसे ऐतिहासिक दृष्टिसे नहीं देखा। कई बार एक ही नई बातसे सारी परिस्थितिके बदल जानेकी सम्भावना हो जाती है। रेनाल्ड्सने चार बातें सामने रखी है[२] (१) १९२९ के नवम्बरकी दिल्ली वाली विज्ञप्ति,[३] (२) ग्यारह शर्ते,[४] (३) श्री० स्लोकॉम्बको दी गई शर्ते[५] और (४) गांधी-नेहरू शर्ते।[६]

१. गांधी-इर्विन-समझौता, देखिए खण्ड ४५, परिशिष्ट ६।
२. रेनाल्ड्सके अनुसार समझौता इन चारों चीजोंसे असंगत है।
३. देखिए खण्ड ४२, पृष्ठ ८६-८७।
४. देखिए खण्ड ४२, पृष्ठ ४४९।
५. देखिए खण्ड ४३, पृष्ठ ४३७-३८।
६. देखिए खण्ड ४४, पृष्ठ ८२-८४।

दिल्लीकी विज्ञप्ति लॉर्ड इर्विनकी प्रसिद्ध विज्ञप्तिका जवाब थी और इस कारण उसकी मर्यादा उस विज्ञप्तितक ही थी।

ग्यारह शर्तोवाला पत्र सविनय अवज्ञाके आरम्भसे पहले लिखा गया था, और उसमें यह बताया गया था कि किन शर्तोपर सविनय अवज्ञा टाली जा सकती है; इसलिए उसका नवम्बरकी विज्ञप्तिसे भिन्न होना आवश्यक था।

सत्याग्रहके आरम्भके बाद शीघ्र ही श्री स्लोकॉम्बको शर्तें बताई गई थी इस लिए उनमें ११ शर्तोकी अपेक्षा कुछ फर्क तो था; परन्तु कोई शर्त कम नहीं की गई थी।

गांधी-नेहरू शर्ते युद्धके मध्यकालमें उस समय सामने रखी गई थी, जब हम सब कैदमें थे, दुनियासे कटे हुए थे और असुविधापूर्ण स्थितिमें थे। इन चारों स्थितियों तक न गोलमेज परिषद्की बैठक हुई थी और न सरकारने अपनी कोई नीति ही जाहिर की थी।

मौजूदा सुलह पहली स्थितिका स्वाभाविक विकास है। भिन्न-भिन्न स्थितियोंके दरम्यान शर्तोमें जो हेरफेर हुए हैं, उनका श्रेय प्रत्येक सम्वन्धित परिस्थितिके हेरफेर-को है। पहली चार स्थितियोंमें जो नही था और अब है, वह यह है कि पाँचवी स्थितिके पहले अर्थात् समझौता होनेसे पहले गोलमेज परिषद् हो चुकी थी और सरकारकी नीति प्रकट कर दी गई थी।

दूसरे किसी भी समय गोलमेज परिषद्के साथ सहयोग करना शक्य न था, क्योंकि ब्रिटिश सरकार अपनी नीति जाहिर करना नही चाहती थी, और परिषद्के प्रतिनिधियोंके मंशाका किसीको पता न था। परन्तु गत मार्चमें दिल्लीमें परिषद्के प्रतिनिधियोंकी माँग जाहिर हो चुकी थी और सरकारी नीतिकी भी घोषणा हो चुकी थी। यह माँग औपनिवेशिक स्वराज्यकी थी और ब्रिटिश नीति प्रायः इस माँगकी स्वीकृतिके घोषणापत्र-जैसी थी।

भारतीय प्रतिनिधियोंकी औपनिवेशिक स्वराज्यकी माँग और ब्रिटिश विज्ञप्ति, इन दोमें से एक भी कांग्रेसकी आवश्यकताको पूरा करते हों, सो नही है; और इसका खास कारण यह है कि उसके इर्दगिर्द तथाकथित संरक्षणोंकी जो बाड़ लगा दी गई है, कांग्रेसके विचारमें वह ऐसी है ही नही कि उससे भारतका हित हो सके।

फिर भी इसमें सन्देह नही कि भूतकालकी अनिश्चितताके मुकाबले इस बार परिस्थिति एक कदम आगे बढ़ी है। जब इस बातका विश्वास हो गया कि कांग्रेस को अपने मतका सम्पूर्ण आग्रह रखनेकी स्वतन्त्रता रहेगी, उस समय ऐसा लगा कि अगर कांग्रेस गोलमेज परिषद्में अपनी माँगें पेश करने और उन्हें मंजूर करानेका आग्रह करनेसे इनकार करेगी, तो वह उसके लिए अनुचित होगा। ब्रिटिश सरकारने जैसी घोषणा की है, उसके बाद कांग्रेसको आगे-पीछे कभी-न-कभी तो अपने हकोंकी चर्चा उससे करनी ही पड़ती। सम्मानपूर्ण शर्तो पर समझौतेका मौका सत्याग्रही कभी हाथसे नही खोता; खो नही सकता। यह तो एक सदासे मानी हुई बात है कि समझौतेके टूट जानेपर वह लड़ाईके लिए भी हमेशा तैयार रहता है। उसे पहलेसे तैयारी कर रखनेकी जरूरत नहीं होती। उसका तो सारा खेल हमेशा खुला हुआ

होता है। उसके लिए युद्धका रुकना या जारी रहना, दोनों बराबर हैं। वह जो लड़ता है, या विश्राम करता है, सो सिर्फ एक ही ध्येयकी प्राप्तिके लिए। वह अपने विरोधियोंपर सदा अविश्वास करनेकी धृष्टता न करे; बल्कि जब और जहाँ कोई छोटा भी निमित्त मिले, तब मित्रतापूर्वक बढ़ाये गये हाथको अपने हाथमें लेना उसका कर्त्तव्य ही है। यहाँ अभूतपूर्व एकताके साथ पेश की गई भारतीय माँग, अधूरा होते हुए भी ब्रिटेनका दिया हुआ उत्तर, और लॉर्ड इर्विनके साथ हुई सारी चर्चामें ओतप्रोत हृदयकी स्वच्छता इस समझौतेके निमित्त-रूप बने।

मैंने कभी इस बातका दावा नहीं किया कि राजसत्ताका हृदय-परिवर्तन हो गया है। वह होना तो अभी बाकी है। जब वह होगा तब केवल अस्थायी ही नहीं, पूरी तरह स्थायी सन्धि हो जायेगी। उस समय सत्याग्रही सम्पूर्ण आत्मसमर्पण करेगा; क्योंकि हृदय-परिवर्तनका अर्थ है भारतीय माँगोंको सम्पूर्ण और अत्यन्त साफ दिलसे मानना।

अन्तिम बात यह है कि इन सब स्थितियोंके दरम्यान हमने झंडा एक बार भी नहीं झुकने दिया है। सन् १९२९ की २३ दिसम्बरको[1] औपनिवेशिक दर्जेका स्वराज्य (डोमिनियन स्टेटस) का त्यागकर दिया गया था और अब वह पूर्ण स्वराज्य (कम्प्लीट इंडिपेंडन्स) अर्थात् हो सके तो ब्रिटिशोंके साथ बराबरीके दर्जेका सम्बन्ध और दोनों पक्षोंको उसे स्वेच्छापूर्वक तोड़नेके अधिकारका रूप ले चुका है। अभी बिलकुल मुमकिन है कि यह सम्पूर्ण स्वतन्त्रता परिषद् द्वारा न मिले; और यह भी बहुत सम्भव है कि तथाकथित संरक्षण जैसे हैं, उस रूपमें वे बन्धनकारक हों। यदि ऐसा हुआ तो परिषद्की असफलताके लिए कांग्रेस जिम्मेदार न होगी; उलटे उसकी तो नैतिक प्रतिष्ठा बढ़ेगी ही, और वह अपनी माँगोंको पूरी तरह पेश करके यह साबित कर देगी कि वे माँगें इसी कारण सर्वथा उचित हैं। यह सच है कि सब राजनैतिक कैदी रिहा नहीं हुए हैं। यह सम्भव नहीं था कि अस्थायी समझौतेकी शर्तोंमें उनकी रिहाईकी शर्तें भी रखी जातीं। यह स्थायी समझौता हुआ तो वे रिहा हो जायेंगे। यदि समझौता नहीं हुआ, तो जो इस वक्त बाहर हैं, वे अन्दर जा बैठेंगे और राजबन्दियोंकी सेनामें वृद्धि करेंगे। सत्याग्रहीको जेल-जीवन न शक्तिहीन बनाता है न दुःख देता है। उसके लिए तो जेल मुक्तिका द्वार है।

अन्तमें मैं यह बताना चाहता हूँ कि कांग्रेसकी दृष्टिमें पूर्ण स्वराज्यका अर्थ क्या है। इस सम्बन्धमें गलतफहमी नहीं होनी चाहिए। पूर्ण स्वराज्य अर्थात् करोड़ों श्रमजीवियोंका सम्पूर्ण आर्थिक स्वातन्त्र्य। पूर्ण स्वराज्य उन्हें चूसनेके लिए किसी भी प्रकारके स्वार्थके साथ अन्यायपूर्ण साझेका नाम तो कदापि नहीं है। किसी भी साझेदारीका अर्थ उन लोगोंकी मुक्ति तो होना ही [चाहिए]।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १६-४-१९३१

१. देखिए खण्ड ४२, पृष्ठ ३५२-५५।

३. टिप्पणियाँ

मालवीयजी और कार्य-समिति

एक पाठक पूछते हैं :

> **आपने कराचीमें विषय-समितिको दक्षिण भारतके सदस्योंको कार्य-समितिमें न रखनेका कारण तो समझाया, पर यह नहीं बताया कि मालवीयजीको क्यों अलग रखा गया।**[1]

बात इतनी स्पष्ट थी कि किसीने कुछ पूछा ही नहीं। इसमें मालवीयजीके अपमानका तो कोई सवाल हो ही नहीं सकता। वे अपमानसे परे हैं। कोई भी संस्था उन्हें अपना सदस्य बनाकर उनकी स्थिति या उनके महत्वको बढ़ा नहीं सकती। हाँ, उनकी सदस्यतासे संस्थाकी प्रतिष्ठा बढ़ सकती है। कार्यसमितिने जान-बूझकर उन्हें अलग रखा है, ताकि समय पड़नेपर उनकी स्वाधीनता और कार्य-स्वतन्त्रता सुरक्षित रहे। सदस्य न होते हुए भी वे, जबसे नेता लोग छूटे हैं, बराबर कार्य-समितिकी बैठकोंमें उपस्थित रहे हैं और उसकी कार्यवाहियोंमें सक्रिय भाग लेते रहे हैं। कार्य-समितिमें उनका योग मूल्यवान रहा है; इसलिए सदस्योंने सोचा कि उन्हें समितिके अनुशासनमें रखना कहीं उनके लिए कष्टप्रद न सिद्ध हो। डाक्टर अन्सारी तो मालवीयजीको समितिमें रखनेके लिए इतने उत्सुक थे कि उनके लिए स्वयं हट जाना चाहते थे। पर जिस विचारका मैंने अभी जिक्र किया है, जमना-लालजीने उसे ऐसे प्रभावशाली ढंगसे समितिके सामने रखा कि डाक्टर अन्सारीको भी इस बातके लिए राजी होना पड़ा कि मालवीयजीको मुक्त ही रखा जाये। इस व्यवस्थासे समिति अपनी कार्यवाहियोंमें मालवीयजीकी सलाहसे लाभ उठा सकेगी और साथ ही उनकी कार्य-स्वतन्त्रतामें भी किसी प्रकारकी बाधा नहीं पड़ेगी। गोलमेज सम्मेलनमें उन्हें अलगसे निमन्त्रित करके सरकारने भी समाजमें उनकी अद्वितीय स्थिति स्वीकार की है।

खादी द्वारा बहिष्कार

पिछले साल सारे देशमें खादीके उत्पादन और उसकी बिक्रीमें आश्चर्यजनक वृद्धि हुई। इसका प्रधान कारण यह था कि संघर्षसे प्रोत्साहन पाकर इसकी जनतामें असाधारण माँग बढ़ गई और खादी एकदम संघर्षका प्रतीक बन गई। उत्पादनके मुकाबले बिक्री इतनी बढ़ गई कि एकाएक बढ़ी हुई माँगको पूरा करना कार्यकर्ताओंके लिए मुश्किल हो गया।

राष्ट्रीय जागृतिके वर्षमें इस प्रकार जो प्रगति हुई है, उसे व्यर्थ नहीं जाने देना चाहिए; बल्कि और भी अधिक प्रसारका आधार बनाना चाहिए। अगर इस

१. देखिए खण्ड ४५, पृष्ठ ४००-२।

कामके फलको खोना नहीं है तो सुलहके दौरान भी लड़ाईके वक्तकी-सी सरगर्मीके साथ काम जारी रखना चाहिए। पहले स्वदेशी मिलोंको बहिष्कार-कार्यक्रमका एक अंग माना गया था, पर खादीके सम्बन्धमें कांग्रेसका रुख पूर्ववत् ही है। इसका अर्थ खादीका ह्रास नहीं होना चाहिए। जहाँ खादी बिलकुल प्राप्त न हो सके, वहाँ मिलका कपड़ा उसकी कमी पूरी करेगा। पर अभी तो जितनी भी खादी माँगी जाये, मिल सकती है। विदेशी वस्त्र-बहिष्कार-कार्यक्रममें खादीका स्थान प्रधान है। खादी-उत्पादनकी विशाल सम्भावनाओंको कार्यमें परिणत किये बिना, विदेशी वस्त्रका प्रभावशाली बहिष्कार सम्भव नहीं है। यही नहीं, बल्कि राष्ट्रीय बहिष्कारके फलोंका लाभ यदि इने-गिने धनवानोंको न पहुँचाकर करोड़ों देहातियोंको पहुँचाना हो तो इसका केवल यही उपाय है कि जीवनदाता चरखेका अधिकसे-अधिक प्रचार किया जाये। इसी कारण कांग्रेसने कराचीमें बहिष्कार-कार्यक्रममें खादीके अद्वितीय स्थानको जोर देकर दोहराया है और तमाम "कांग्रेस-संस्थाओं और उनसे सम्बद्ध समितियोंसे प्रार्थना की है कि वे खादी-प्रचारको बढ़ाकर विदेशी वस्त्र-बहिष्कारको और तीव्र करें।" पिछले सालके अनुभवने यह बता दिया है कि माँग चाहे कितनी ही क्यों न बढ़ जाये, खादीके उत्पादनसे उसे शीघ्र पूरा किया जा सकता है। हमें मौजूदा कामको ही कायम नहीं रखना है, बल्कि कताईके कामको और बढ़ाना है। कम-से-कम हमें इतना तो करना ही चाहिए कि यदि हम पिछले सालसे आगे न बढ़ सकें, तो उसके बराबर तो अवश्य पहुँच जायें।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १६-४-१९३१

४. पत्र : प्रभावतीको

१८ अप्रैल, १९३१

चि० प्रभावती,

तेरे पत्र मिलते रहते हैं। लगता है कि तू वहाँ नाहक ही गई। तो भी दुखी होकर अपना स्वास्थ्य मत बिगाड़ना। देखता हूँ कि जब गई ही है तो शिष्टताके नाते ही सही फिलहाल तो रहना पड़ेगा। हरसूबाबूके स्वस्थ हो जानेपर आ जाना। आज बम्बईमें हूँ। कल अहमदाबाद वापस चला जाऊँगा। अभी तो थोड़े दिन वहाँ रहना होगा। घबराना नहीं। मैं ठीक हूँ।

मीराबहन आ गई है।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ३३९८) की फोटो-नकलसे।

५. भेंट : पत्र-प्रतिनिधियोंको

बम्बई
१८ अप्रैल, १९३१

हाल ही में कुछ पत्रोंमें प्रकाशित शिकायतके बारेमें, जिसका संकेत अवकाश-प्राप्त वाइसरायने भी मिल-मालिक संघसे प्राप्त मानपत्रके उत्तरमें दिया था, गांधीजी ने पत्रकारोंके प्रश्नोंका उत्तर देते हुए घोषणा की :

लडना मेरे स्वभावमें नही है। मेरी प्रवृत्ति इस समय तो शान्तिमुखी ही है। मैं यह प्रवृत्ति बनाये रखने और देशमें स्थायी शान्ति स्थापित करनेके लिए यथा सम्भव सभी प्रयत्न करूँगा। इस दिशामें मेरे सहयोगी भी कार्य कर रहे हैं।

आगे चलकर उन्होंने अपना यह विचार पुनः दुहराया कि साम्प्रदायिक समस्याका हल खोजे बगैर वे गोलमेज सम्मेलनमें शामिल नहीं होंगे। उन्होंने कहा अभी तो मैंने साम्प्रदायिक समस्याके न सुलझनेपर गोलमेज सम्मेलनमें शामिल होनेका विचार छोड़ दिया है।

अगले कार्यक्रमके बारेमें पूछे जानेपर उन्होंने कहा, मुझे अभी कुछ नहीं मालूम। जबतक मुझे साम्प्रदायिक समस्याका कोई हल नजर नहीं आता मैं कोई कार्यक्रम निश्चित नहीं कर सकता।

प्रश्न : क्या साम्प्रदायिक समस्याके बारेमें आप कुछ कहेंगे?

उत्तर : इससे अधिक मैं कुछ भी कहनेमें असमर्थ हूँ कि मै पूरी-पूरी कोशिश करूँगा और सफलताके लिए प्रार्थना करूँगा। मैं जानता हूँ कि प्रार्थनासे बड़े-बड़े काम बन जाते हैं।

क्या आप पृथक् निर्वाचक मण्डलके विरुद्ध हैं?

मैं ऐसी किसी व्यवस्थाके विरुद्ध नहीं हूँ जिससे साम्प्रदायिक समस्या सुलझाई जा सके।

क्या पृथक् निर्वाचक मण्डल बननेसे सम्प्रदायोंके बीचकी खाई और चौड़ी नहीं होगी?

यह बात मेरे सोचनेकी नहीं है।

क्या आप मुसलमानोंके प्रत्येक वर्गको सन्तुष्ट कर सकनेकी आशा रखते हैं?

मैं सभी वर्गोको सन्तुष्ट कर सकनेकी आशा रखता हूँ।

श्री शौकतअलीने अपने हालके बयानमें कहा है कि भारतीय राजनीतिके लिए आप एक खतरा हैं। इस बारेमें आपकी क्या राय है?

वे मेरे पुराने मित्र हैं, इसलिए मेरे बारेमें जो-कुछ उन्होंने कहा है, ठीक ही है।

आंग्ल-भारतीय समाचारपत्रोंमें छपी इस शिकायतके बारेमें कि कांग्रेस सन्धिकी शर्तोंका पालन नहीं कर रही है, आपको क्या कहना है?

इक्के-दुक्के मामलोंको छोड़कर, मैं इसका जोरोंके साथ प्रतिकार करता हूँ। श्री बेनका उत्तर पढ़कर मुझे आश्चर्य हुआ है। गुजरातमें इसकी प्रगति सन्तोषजनक रही है। उदाहरणार्थ, बारडोलीमें किसान, जितनी जल्दी हो सकता है, बकाया रकम चुका रहे हैं। १६ तारीख तक बारडोली और वालोडके लोगोंने १,१६,६५८ रु० जमा करा दिये थे, जब कि जलालपुरमें अस्थायी समझौतेकी घोषणाके बाद १,९६,४५३ रु० जमा कराये गये हैं। इसे मैं अच्छी रकम मानता हूँ और यह कहने पर मजबूर हूँ कि सरकारको बहुत गलत जानकारी दी गई है। तीसरे-हाथ-बिकी जमीनके सम्बन्धमें कुछ पूछे जानेपर उन्होंने कहा कि वे जमीनके खरीदारोंसे, बहुत ही विनम्रताके साथ उन जमीनोंको लौटानेकी प्रार्थना करेंगे और उन्हें विश्वास है कि प्रत्येक इंच जमीन लौटा दी जायेगी।

यह पूछे जानेपर कि क्या वे देशको दुविधाकी स्थितिमें नहीं रख रहे हैं, उन्होंने कहा, देश यह जानता है कि स्थायी शान्तिके लिए सभी सम्भव प्रयत्न किये जा रहे हैं। और यदि ऐसी शान्ति स्थापित नहीं होती है तो देशको कष्ट झेलनेके लिए तैयार रहना चाहिए।

इस प्रश्नके उत्तरमें कि क्या बातचीत द्वारा स्थायी शान्ति स्थापित करना सम्भव है, गांधीजीने कहा कि उनका यह निश्चित विश्वास है कि ऐसी बातचीत द्वारा जिसके पीछे वास्तविक शक्तिका समर्थन हो, स्थायी शान्ति स्थापित हो सकती है। विदेशी कपड़ेको बाहर भेज देनेके सम्बन्धमें उन्होंने बताया कि इस योजनाको[1] अमलमें लाया जा रहा है। श्री जाफरी कारबेटसे इस बारेमें उनकी बातचीत हुई है, इस समाचारका उन्होंने प्रतिवाद किया।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १९-४-१९३१

१. मिल-मालिकोंके साथ गांधीजी की एक भेंटमें यह तय हुआ था कि "विदेशी कपड़ेके बाहर भेजनेकी योजनापर तेजीसे अमल करनेके लिए" कार्यकारी समिति नियुक्त की जायेगी। (**बॉम्बे क्रॉनिकल**, १७-४-१९३१)।

६. भाषण: बम्बई नगर निगमके मानपत्रके उत्तरमें[1]

[१८ अप्रैल, १९३१][2]

आपके मानपत्र और उसमें व्यक्त की गई आपकी सुन्दर भावनाओंके लिए मैं आपका आभार मानता हूँ। एक बार पहले भी आप मुझे अपनी मुहब्बतसे शराबोर कर चुके हैं। मैं मानता था कि सिर्फ एक ही मानपत्र काफी होगा; पर हम देखते है कि दुनियामें प्रेमकी कहीं कोई सीमा नहीं है; यही बात आपपर लागू होती है। परन्तु मैं मोहमें पड़कर यह तो नहीं मान सकता कि यह प्रेम आपने एक मनुष्यके प्रति व्यक्त किया है; इस प्रकारकी आत्म-वंचना मेरे लिए सम्भव नही है। मैं मानता हूँ कि १९२४ की[3] ही तरह आज भी गरीबोंके प्रति मेरे प्रेमके कारण आपने मुझे मानपत्र दिया है। मैं यह दावा करता हूँ कि मैं दरिद्रनारायणके लिए जीता हूँ। स्वराज्यका अर्थ हिन्दुस्तानके नर-कंकालोंकी मुक्ति है। ये गूँगे जब बोलने लगेंगे और जब ये लँगड़े-लूले चलने लगेंगे, तभी यह कहा जा सकता है कि पूर्ण स्वराज्य मिल गया। ऐसा स्वराज्य हम किसीको डरा-धमकाकर नही ले सकते, वरन् संगठन और एकतासे ही ले सकते हैं। आपने इन बातोंको अपना लिया है, आपके दोनों मानपत्रोंका मैं यही अर्थ करता हूँ, और ऐसा करनेका मुझे हक है।

आपने हिन्दुस्तानके अस्पृश्योद्धारके बारेमें मेरे प्रयत्नोंकी तरफ इशारा किया है। हम अस्पृश्योंके सब अधिकारोंकी रक्षा करना चाहते हैं, पर स्वराज्यकी पहली शर्त यह है कि हिन्दूधर्मसे हिन्दू, अस्पृश्यताके कलंकको धो डालें।

हम यह कहते और सुनते आये हैं कि हिन्दुस्तान शहरोंमें नहीं, गाँवोंमें बसता है। परन्तु यदि शहर इस बातको साबित करना चाहते हों कि उनकी हस्ती और आबादी भारतके गरीब देहातियोंके लिए है, तो उन्हें अपने साधनोंका अधिक-से-अधिक उपयोग गरीबोंकी हालत सुधारने और उनके साथ भाईचारेका व्यवहार करनेमें करना चाहिए। अर्थात् शहरियोंके लिए यह उचित नहीं कि वे गाँववालोंके मालिक बन बैठें। हम तो यह चाहते हैं कि शहरवाले गाँववालोंके मालिक न बनकर, सेवक बनें। जब शहर यह मानेंगे कि गरीबोंकी सेवाके लिए ही उनकी हस्ती है, तब कहीं वे अपने महलों और अपने रहन-सहनके ढंगकी थोड़ी-बहुत तुलना गाँवोंके साथ करेंगे। आज दूसरी बार आपका मानपत्र लेते समय भी क्या आप मुझे यह आशा नहीं करने देंगे कि आप गरीबोंकी अधिकाधिक सहायता करते रहेंगे? आप ऐसा करें तो उसकी निशानीके तौरपर शहरके हजारों मजदूरोंको अपनायें; उन्हें यह अनुभव करने दें कि यह नगर निगम जैसा अमीरोंका है, वैसा ही उनका भी है। जो शहर

१. महादेव देसाईके "साप्ताहिक पत्र" से उद्धृत; गांधीजी गुजरातीमें बोले थे।

२. **हिन्दू**, १९-४-१९३१ से।

३. देखिए खण्ड २५, पृष्ठ ५५-५६।

सुन्दर माना जाता है, सुन्दर काम करनेमें ही उसकी शोभा है। बम्बई हिन्दुस्तान-भरमें अव्वल नम्बरका शहर है, और इसका मुख्य कारण यह है कि यहाँ वह पारसी कौम रहती है, जिसका उदारतामें पहला स्थान है, और उस कौमके सर फीरोजशाह मेहता ने इस शहरकी असाधारण सेवा की है। इसलिए यह आवश्यक है कि आप गरीबोंकी सेवाके काम करते रहें।

आपने यह इच्छा प्रकट की है कि हमारे देशमें कौमी इत्तफाक कायम हो। हम ईश्वरसे प्रार्थना करें कि हिन्दू, मुसलमान, ईसाई, पारसी, सब अपनेको हिन्दुस्तानी मानकर रहें। भले सबके धर्म भिन्न हों, परन्तु पेड़के असंख्य पत्ते जिस तरह भिन्न होते हुए भी एक ही पेड़के होते हैं, उसी तरह आपकी महत्वाकांक्षा यह मानकर चलनेकी होनी चाहिए कि हम सब हिन्दुस्तान-रूपी एक पेड़के पत्ते हैं। आपने मेरे प्रयत्नकी सफलताके लिए आशीर्वाद दिया है, इसके लिए मै आपका आभार मानता हूँ। पर वह काम मुझ अकेलेसे नही हो सकता। मैं चाहता हूँ कि आप सब भी उस दिशामें प्रयत्न करें।

मैंने जो विनती की है, यदि वह आपको मजूर हो तो बम्बईमें आप जिन ८०,००० बालक और बालिकाओको शिक्षा देते है, गाँवोसे उनका सीधा सम्बन्ध स्थापित करनेके लिए उनसे सूत कतवाना शुरू कर दीजिये। उनमें से हरएकके हाथमें एक-एक तकली दे दीजिए। तकलीके गुण आज मै आपको नहीं बताऊँगा। पर एक बात है कि तकली कम-से-कम खर्चमें शुरू की जा सकती है। और एक बार इसके दाखिल होने पर उसके साथ खादी भी दाखिल हो जायेगी। कातकर और खादी पहनकर गरीबोंको अपनाया जा सकता है, यदि बालक इस बातको समझने लगें तो इससे बढ़कर तालीम और क्या हो सकती है? ईश्वर करे, नगर निगमकी दिन-दूनी उन्नति हो, और वह आपको बुद्धि तथा शक्ति दे, जिससे आप हिन्दुस्तानके गरीबो और लाचारोंकी सेवा कर सकें।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १८-४-१९३१

७. सत्याग्रही किसानोंसे

खेड़ा, सूरत और भड़ौंच जिलोंके बहुत-से सत्याग्रही किसानोंकी जमीनें गई, फसलें बरबाद हुई, घर लुटे; वे बेघरबार हुए और कइयोंके घर जला दिये गये; समझौता इस सबकी एवजमें कुछ मिले बिना हुआ; और यह तय हुआ कि जो लोग लगान दे सकें, वे दे दें; और मानो इतना काफी नही था, इसलिए अभीतक कुछ पटेल-पटवारी तो अपना काम भी नहीं सँभाल सके हैं; — इस तरहके विचार रखने वालोंको कभी सन्तोष नही हो सकता।

पर दूसरा ढंग विचार करनेका यह है। किसानोंकी शिकायत करनेकी कोई वजह ही नही है। क्योंकि जब वे मैदानमें कूदे थे तभी उन्होंने अपने खेत-खलिहान, घरबार, ढोर-डंगर और जानमाल तक गँवानेका संकल्प कर लिया था। स्वराज्यके लिए वे सब-कुछ खोनेको तैयार बैठे थे। इसलिए आज उन्हें यदि कुछ वापस मिलता है तो यह मानना चाहिए कि उतना अनायास ही मिल रहा है। इस दृष्टिसे तो उनकी शिकायतका कोई कारण ही नही रहता। कोई उतावलीमें पूछेगा कि स्वराज्य मिले बिना नुकसानकी भरपाईसे सन्तोष कैसे हो सकता है? इसका जवाब यह है कि यह तो लड़ाईके दरम्यान हुआ समझौता है, लड़ाईकी पूर्णाहुति नहीं है। सब कुछ दाँवपर लगा देनेके बाद जो बच गया, सो बच गया। स्वराज्य पानेतक यदि सर्वस्व दाँव पर लगा देनेका सौभाग्य मिले तो उसे शुभ समझना चाहिए। इसलिए नुकसानसे किसीके निराश होनेका कोई कारण ही नही है। समझौता नुकसानकी भरपाईके लिए नही किया गया, बल्कि वह तो स्वराज्यकी दिशामें एक कदम है। समझौतेमें अनावश्यक बरबादीसे बचनेका भाव जरूर है। और वह उद्देश्य तो पूरा हो रहा है। नुकसानकी भरपाईसे जो मिल जाये, उसे ही काफी समझना चाहिए। इतनी बात समझनेवाले अधीर नही होंगे; फिर सम्भव है, जिनपर मुकदमे चल रहे हैं, वे देरसे छूटें, जब्त हुई जमीनें वापस मिलनेमें देर हो और इस्तीफा देकर अलग हो जानेवाले पटेल वगैराको फिरसे अपना काम सँभालनेमे देर लगे। हो सकता है कि इन सब मामलोंमें सरकारकी ओरसे समझौता भंग हो रहा हो; इसे भी हम सहन कर लें, और हमें जिन शर्तोंका पालन करना है, उनका पालन करते रहें। ऐसा करनेसे हर तरहसे हमारी ताकत बढ़ेगी।

फिलहाल सरकारसे हमारा असहयोग नहीं चल रहा है, इसलिए हम सरकारी अफसरोंसे मिल सकते हैं और जो शिकायत करनी हो, सो कर सकते है।

एक बहुत बड़ी शिकायत बिकी हुई जमीनोंके बारेमें रह जाती है। इस बारेमें धीरज रखनेकी जरूरत है। जमीनोंके मालिक यह विश्वास रखें कि आखिरकार उनकी जमीन उन्हें मिलने ही वाली हैं। पर वे हमें सीधे रास्तेसे प्राप्त करनी हैं, जोर-जबरदस्तीसे नही। जिन्होंने जमीनें ली हैं, उनसे प्रार्थना करने, उन्हें समझानेका हमें हक है। मैं मानता हूँ कि हम उन्हें विनम्रतासे समझा सकेंगे। परन्तु मान लीजिए

कि हम नाकामयाब हुए, तो भी क्या हुआ? इससे कोई यह न माने कि वह जमीन उसे वापस नहीं मिलेगी। हमें इस बातका आत्मविश्वास होना चाहिए कि हम थोड़े ही समयमें स्वराज्य हासिल करनेवाले हैं। स्वराज्यकी सरकारका पहला काम यही होना चाहिए कि वह ऐसे अन्यायोंको दूर करे। मैं यह बात किसी सुदूर भविष्यकी नहीं, बल्कि निकट भविष्यकी कहता हूँ। मान लें कि निकट भविष्यमें स्वराज्य न मिला। उस हालतमें हमारे सामने फिरसे घर-बार और जमीनें छोड़नेका मौका आयेगा और सरदार, मैं तथा दूसरे सब लोग जेल-महलमें मौज करते होंगे। इसलिए जिनकी जमीनें बिक चुकी हैं, वे धीरज रखें।

परन्तु मैंने खुद तो जमीन खरीदनेवालोंको समझा सकनेकी आशा छोड़ी ही नहीं है। खरीदार हमारे ही भाई हैं। जैसा कि सुना है, उनमें पारसी हैं, मुसलमान हैं और धाराला ठाकुर हैं। उन सबके हृदय है। वे जानते हैं कि उन्होंने जमीनें मिट्टीके भाव मोल ली हैं। उसके लिए वे भी शर्माते तो होंगे ही। स्वराज्यके लिए दुःख उठानेको तैयार लोगोंकी जमीनें उन्होंने ली हैं। मैं मानता हूँ कि इस बातको समझते ही वे जमीनें जरूर लौटा देंगे। धाराला ठाकुरोंके प्रति पाटीदारोंका विशेष कर्त्तव्य है। भूतकालमें उनके साथ यदि कुछ अन्याय हुआ हो तो पाटीदारोंको चाहिए कि वे उसे दूर करें और धारालाओंको अपनायें। 'वे समझेंगे ही नही', यह सोचकर निराश होना स्वराज्यवादीको शोभा नही देता। चाहे जो हो, हम उनके विरुद्ध कोई आन्दोलन न करें। उनसे झगड़ेके तमाम मौकोंसे हम बचें। इस बरसातमें खेत न जुतें, तो उतना नुकसान उठाना हमारा कर्त्तव्य है। जिसे आत्मविश्वास है वह इतना सहन कर ही लेगा।

अब दो शब्द लगान देनेके बारेमें। जो लगान दे सकते हैं, लगान देना उनका कर्त्तव्य है। कोई इसे उल्टा न्याय न माने कि एकने लगान जमा कराया है, इसलिए सबको जमा कराना ही चाहिए और न कोई यही सोचे कि एकने नहीं दिया, इसलिए कोई भी न दे। सीधा न्याय तो वही है, जो मैंने बताया है। जो दे सकें, वे जरूर दें। मैं कर्ज लेकर देनेकी बात नहीं कहता। बात तो अपनी ही गाँठसे देनेकी है। खुद तकलीफ उठाकर भी समझौतेकी शर्तोंका पालन करनेमें हमारी भलमनसाहत है और उसीमें हमारी शक्ति है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १९-४-१९३१

८. पत्र: रेजिनाल्ड रेनॉल्ड्सको

साबरमती
१९ अप्रैल, १९३१

प्रिय अंगद,[1]

जैसा कि तुम चाहते थे, मैंने 'यंग इंडिया'में[2] तुम्हारे पत्रकी चर्चा की है। इससे तुम्हें सन्तोष हुआ हो तो सूचित करना। मेरे इस कदमसे अगर तुम अभी सहमत नहीं हो तो कुछ समय बाद हो जाओगे। संघर्ष उद्देश्य-प्राप्ति तक जारी रहे, यही अभीष्ट है। इसलिए तुम इस कार्यको अथवा मुझे छोड़ना नहीं।

समझौतेकी जोशीली आलोचनाकी अपेक्षा मैं तुम्हारा अपना हाल जाननेमें अधिक रुचि रखता हूँ। आखिर सगाई फिर क्यों टूट गई? अब क्या कर रहे हो? अगर वहाँ चैन नही है तो यहाँ क्यों नही आ जाते? आश्रम तो तुम्हारा दूसरा घर ही है।

अपनी रिहाईके[3] बाद आज पहली बार मैंने अनुभव किया है कि मेरे पास थोड़ा समय है।

सस्नेह,

बापू

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ४५४०) की फोटो-नकलसे।
सौजन्य: स्वार्थमोर कालेज, फिलाडेल्फिया

१. शान्ति दूतके अर्थमें; गांधीजीका २ मार्च, १९३० का अन्तिम चेतावनीवाला पत्र लॉर्ड इर्विनके पास रेजिनाल्ड रेनॉल्ड्स ले गये थे। देखिए खण्ड ४३, पृष्ठ १९१ की पा० टि० २ भी।

२. देखिए "एक अंग्रेजकी परेशानी", १६-४-१९३१।

३. गांधीजी २६ जनवरी, १९३१ को यरवदा जेलसे रिहा हुए।

९. पत्र : साहबजी महाराजको

अहमदाबाद
१९ अप्रैल, १९३१

प्रिय मित्र,

बकाया पड़े पत्रोंके उत्तर लिखनेके लिए थोड़ा-सा अवकाश आज ही निकाल पाया हूँ। आपके पत्रके लिए धन्यवाद।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

श्री साहबजी महाराज
दयालबाग
आगरा

अंग्रेजी (जी० एन० २१५८) की फोटो-नकलसे।

१०. पत्र : डा० सैयद महमूदको

१९ अप्रैल, १९३१

प्रिय डाक्टर महमूद,

मैंने सैयद हसन इमामको पत्र लिखनेके लिए दो बार कलम उठाई और दोनों बार हिम्मत नहीं पड़ी। मुझे ऐसा लगा और अब भी लगता है कि मुझे किसी मुसलमान दोस्तको राष्ट्रवादी मुस्लिम दृष्टिकोणके पक्षमें करनेके लिए पत्र नही लिखना चाहिए। लेकिन फिर भी अगर तुम चाहो तो मैं सैयद हसन इमामको पत्र लिखनेका अपना वचन पूरा कर सकता हूँ।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

डॉ० सैयद महमूद
स्वराज्य भवन
इलाहाबाद

अंग्रेजी (जी० एन० ५०७७) की फोटो-नकलसे।

११. पत्र : गोकीबहनको

विद्यापीठ
१९ अप्रैल, १९३१

प्रिय बहन,

तुम्हें लक्ष्मीदासने लिखा तो है ही कि चि० लक्ष्मीका विवाह चि० जीवनदाससे तुरन्त कर देनेका निश्चय किया गया है। उसने शायद तिथि न लिखी हो। इस विचारसे मैं यह पत्र लिख रहा हूँ। विवाह-विधि अगले मंगलवारको शामके सवा सातसे आरम्भ होगी। मै जानता हूँ कि उस अवसरपर तुम्हारे आनेकी आशा तो नहीं करनी चाहिए। किन्तु वर-वधूको तुम्हारा आशीर्वाद तो मिलना ही चाहिए। यह पत्र तुम्हें कल अर्थात् सोमवारको मिल जाना चाहिए। यदि मिल जाये तो पत्र द्वारा भेजा आशीर्वाद मिल जायेगा। लेकिन हो सकता है कि पत्र तुम्हें मंगलवारको मिले। तब तारसे आशीर्वाद भेज देना। इतनी जल्दी शादी करें या न करें, इसके बारेमें सबके मनमें दुविधा थी। तुम्हारा दुख हम सबका दुख है, ऐसा होनेपर विवाह कर देनेके निर्णयमें कुछ अविवेक हो, तो उसका दोष और जोखिम मेरे सिर है। अपने स्वभावानुसार लक्ष्मीदासने तो अपने सिर कोई जिम्मेदारी ली नहीं। अभी तक तो लक्ष्मीदास यहाँ आया भी नही है। कल आयेगा। विवाह फौरन कर देनेके विचारके पीछे मेरे मनमें एक ही कारण था। विवाहको मैं भोगकी वस्तु नहीं मानता, उसे तो मैं केवल धार्मिक विधि मानता हूँ। और चाहे जैसा शोकका समय हो तो भी हम धार्मिक क्रियाको नही रोक सकते। लक्ष्मी और जीवनदास दोनोंकी इच्छा थी कि विवाह जल्दी हो सके तो अच्छा है। और लक्ष्मीका आग्रह था कि विवाह मेरी उपस्थितिमें ही हो। मेरा यहाँ रहना बहुत अनिश्चित है इसलिए मैंने जल्दी-से-जल्दी प्राप्त मुहूर्तको पसन्द किया। यह सब तुम्हें बता देना जरूरी था; अपनी इस इच्छाको तुम्हारा आशीर्वाद माँगते हुए पूरा कर रहा हूँ। पत्र या तार आश्रमके ही पतेसे भेजना। विवाह आश्रमके समीप स्थित डॉ० मेहताके बँगलेमें सम्पन्न होगा। मणिको मेरे आशीर्वाद कहना। उससे तो तुम्हें पूरी तरह सन्तोष मिलता होगा। उसे पत्र लिखनेके लिए भी कहना।

मोहनदासके जय श्रीकृष्ण

गुजराती (एस० एन० ९८१२) की फोटो-नकलसे।

१२. पत्र : जे० एच० गेरेटको[1]

२० अप्रैल, १९३१

मैं इसके साथ बोरसदके मामलतदारकी ओरसे एक नोटिसके रूपमें जारी किये गये पत्रका अनुवाद संलग्न कर रहा हूँ। आपकी बातचीतसे मुझे ऐसा लगा था कि जिन मामलोंके बारेमें हम दोनों चर्चा कर चुके है, आप उनकी जाँच-पड़ताल करेंगे और उसके बाद मुझे बतलायेंगे कि आप उनके सिलसिलेमें क्या करना चाहते हैं। लगता है कि नोटिसमें हमारी बातचीतकी और सरकार तथा जनताके बीच एक मध्यस्थके रूपमें कांग्रेसकी उपेक्षा की गई है। यदि सरकार आखिरकार ऐसा ही रुख अपनानेवाली हो, तो मेरी रायमें वह समझौतेका स्पष्ट उल्लंघन होगा।

सरदार वल्लभभाई और मै स्थानीय कार्यकर्त्ताओंसे सलाह-मशविरा करनेके बाद इन निष्कर्षोंपर पहुँचे हैं :

१. रास इतना विपद-ग्रस्त है कि वह अदायगी बिलकुल कर ही नहीं सकता।

२. शेष गाँव एक वर्षकी बकाया राशिकी यथाशक्ति अदायगी करनेकी पूरी कोशिश करेंगे। मै इसके सम्बन्धमें एक विस्तृत विवरण तैयार कर रहा हूँ।

३. तकावी और बकायाकी वसूली मुलतवी की जानी चाहिए। पिछले ११ मार्चके सरकारी नोटिसके जरिए सभी प्रकारकी मुलतवी की गई बकाया वसूलीको फिरसे मुलतवी किया गया है। यदि उस वसूलीको फिरसे मुलतवी करना जरूरी समझा गया है तो स्पष्ट ही है कि आन्दोलनसे प्रभावित गाँवोंको राहत पहुँचाना और भी कितना जरूरी हो जाता है? सरकार कहती है कि इन गाँवोंने खुद ही यह मुसीबत मोल ली है। लेकिन समझौतेके बाद ऐसा कोई भी तर्क सर्वथा असंगत हो जाता है।

४. समझौतेमें बिलकुल स्पष्ट व्यवस्था की गई है कि चौकीदारोके खर्च, जब्ती और नोटिस देनेकी फीसकी वसूली रद कर दी जाये। इसलिए इनकी वसूलीकी कोशिश नही की जानी चाहिए।

मै आपका उत्तर मिलनेपर ही जनतासे कहूँगा कि वह उपर्युक्त प्रस्तावके अनुसार अदायगी कर दे।

मै २१ तारीखको १० बजकर ५५ मिनटकी पैसेंजर गाड़ीसे अहमदाबादसे बारडोलीके लिए रवाना होऊँगा।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २०-८-१९३१

१. उत्तरी विभागके तत्कालीन कमिश्नर।

१३. पत्र : मणिलाल और सुशीला गांधीको

अहमदाबाद
२० अप्रैल, १९३१

चि० मणिलाल और सुशीला,

कल और आज पूरे दिन-भर तुम्हें याद करता रहा हूँ। लम्बा पत्र लिखने लायक समय कहाँसे निकालूँ? तुम तीनों पूर्वी आफ्रिकामें खूब फलो-फूलो। सब काम हर तरहसे रागरहित होकर करो। ऊब न लगे तो 'अनासक्तियोग'[1] की प्रस्तावना समय-समयपर पढ़ते रहो। तुम उसकी जितनी गहराईमें जाओगे, तुम्हें कर्त्तव्यकी उतनी ज्यादा समझ आयेगी और आत्म-सन्तोष मिलेगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ४७८३) की फोटो-नकलसे।

१४. हरि गणेश फाटकको[2] लिखे पत्रका अंश

[२० अप्रैल, १९३१के बाद][3]

कांग्रेस किसी भी सीलको तोड़नेकी अनुमति नहीं दे सकती। ब्रिटिश कपड़ेसे, मैं समझता हूँ, आपका मतलब विदेशी कपड़ेसे है। नियमके अनुसार कांग्रेस ब्रिटेन

१. देखिए खण्ड ४१।

२. स्वदेशी सभा, पूनाके सभापति।

३. हरि गणेश फाटकके दिनांक २० अप्रैल, १९३१ के पत्रके उत्तरमें, जो इस प्रकार था: "हम लोग एक बहुत ही जरूरी मामला आपके परामर्शके लिए यहाँ लिख रहे हैं। पिछले दिसम्बरमें पूनाके कपड़ा व्यापारियोंने स्वदेशी सभासे एक समझौता किया था जिसमें यह तय हुआ था कि कपड़ा-व्यापारी अपने ब्रिटिश कपड़ेको सील बन्द करके रखेंगे, विदेशी कपड़ा बाहरसे नहीं मँगायेंगे और उन मिलोंसे कपड़ा नहीं खरीदेंगे जिनका नाम कांग्रेसकी काली सूचीमें है। सभासे उन्होंने यह वायदा करा लिया था कि उनकी दुकानोंपर धरना नहीं दिया जायेगा। ये शर्तें कुछ दबावमें ही तय हुई थीं। बिना अपवाद, सभी व्यापारियोंने इस समझौतेको स्वीकार कर लिया था। गांधी-इर्विन समझौता होनेतक लगभग ८० दुकानोंमें रखा ब्रिटिश कपड़ा सील कर दिया गया। अभी ५० दुकानें शेष हैं। हमने दुकानोंमें रखे कपड़ेपर सील लगाना बन्द कर दिया, क्योंकि हमने सोचा कि यह समझौतेकी शर्तोंके विपरीत होगा। किन्तु चूँकि उक्त शर्तें गांधी-इर्विन समझौतेके पूर्व तय हुई थीं और अब उनपर अमल करना ही शेष रहता है, इसलिए हम यह नहीं मानते कि उक्त शर्तोंपर अमल करनेसे गांधी-इर्विन समझौतेपर किसी प्रकारकी आँच नहीं आयेगी। हमें मालूम है कि दिल्लीमें गांधी-इर्विन समझौतेसे पहले तय हुई शर्तोंको बरकरार रखा गया है। अगर हमारा समझौता कायम रहा

और किसी अन्य देशके बने कपड़ेमें अन्तर नहीं कर सकती और अन्य देशोंके कपड़ेको तरजीह नही दे सकती।

अंग्रेजी (एस० एन० १७००६) की माइक्रोफिल्मसे।

१५. पत्र : जे० एच० गेरेटको

गुजरात विद्यापीठ, अहमदाबाद
२१ अप्रैल, १९३१

प्रिय श्री गेरेट,

विस्तारसे लिखे आपके उत्तरके[1] लिए धन्यवाद।

अभी मुख्य विचारणीय बात समझौतेमें कांग्रेसकी स्थितिकी है। अगर आप यह मानते है कि समझौता कांग्रेस व सरकारके बीच हुआ है और जनतासे सम्बन्धित उसकी शर्तोंको अमलमें लानेका भार कांग्रेसपर है, तो इसका अर्थ यह हुआ कि कांग्रेसको सरकार और जनताके बीच सम्पर्क-सम्बन्ध स्थापित करनेवाली ऐसी संस्था स्वीकार किया जाना चाहिए, जो जनताका प्रतिनिधित्व करती है। अगर यह बात नहीं है तो मैं समझता हूँ कि समझौतेसे सम्बन्धित कई मामलोंपर मुझे आपसे मिलने, पत्र-व्यवहार करने या आपका उत्तर प्राप्त करनेका कोई अधिकार नहीं रहता। आपका पत्र इस अत्यधिक महत्त्वपूर्ण प्रश्नको उठाता है और समझौतेके सम्बन्धमें मेरी कार्यवाही इसके उत्तरपर ही निर्भर होगी। इस बीच मैं आपके पत्रमें सविस्तर उल्लिखित बातोंपर विचार स्थगित कर रहा हूँ।

हृदयसे आपका,

श्री जे० एच० गेरेट
अहमदाबाद

अ० भा० कां० क०, फाइल संख्या १६-सी, १९३१।
सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

तो सतर्कता-समिति पूनामें एक इंच भी विदेशी वस्त्र नहीं आने देगी। फिर भी हम आपसे यह जानना चाहेंगे कि हम अपना काम आगे बढ़ायें अथवा छोड़ दें, और व्यापारियोंको कपड़ेपर लगाई सील तोड़नेकी अनुमति दें या नहीं? यह सवाल बहुत जरूरी है और हमें आशा है कि आप इसपर शीघ्र ध्यान देंगे।”

१. देखिए परिशिष्ट १।

१६. पत्र : बालकृष्ण भावेको

२१ अप्रैल, १९३१

चि० बालकृष्ण,

इतने दिन तो मुझे समय ही नहीं मिला कि तुम्हें पत्र लिख सकूँ। किन्तु खबर रोज पूछ लेता था और याद करता रहता था। मेरी सलाह है कि अब शान्त होकर जो कुछ हो रहा है, होने दो। सबसे अच्छा इलाज तो निम्नलिखित है:

१. पन्द्रह-पन्द्रह मिनटके बाद जितना बने उतना गरम पानी पियो।

२. रोज एनिमा लो।

३. भूख लगे तो नारंगी, अनार, अन्नानास और हरे अंगूरोंका रस लो।

४. रामनाम सबसे बादमें लिखा है, पर उसे सर्वोत्तम औषधि मानता हूँ। पहली तीन बातें इसके जपके साथ जुड़ी हैं।

अभी कुछ समय और जीना होगा तो इतना काफी है और यदि नहीं जीना है तो चाहे जैसे सारे उपचार मिथ्या हैं। इस विषयमें मुझे शंका ही नहीं है।

तुम्हारा मन तो शान्त है ही, ऐसा मानता हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ८०४) की फोटो-नकलसे।

सौजन्य : बालकृष्ण भावे

१७. भाषण : साबरमती आश्रम, अहमदाबादमें

२१ अप्रैल, १९३१

साबरमती आश्रमके निकट डॉ० प्राणजीवनदासके बँगलेमें आयोजित, खादी कार्यकर्त्ता लक्ष्मीदास गांधीकी बेटी लक्ष्मीके विवाहमें गांधीजी सम्मिलित हुए। विवाह बहुत सादगी तथा संक्षिप्त रीतिसे सम्पन्न हुआ। गांधीजीने विवाहकी शपथ दिलाई।

इस विवाहके पूर्व गांधीजी आश्रममें गये। और उन्होंने सायंकालीन प्रार्थना-सभामें भाग लिया। दांडी-कूचके बाद वे आश्रममें पहली बार आये थे। आश्रमवासियोंकी इस छोटी-सी सभाको सम्बोधित करते हुए महात्मा गांधीने कहा कि इतनी जल्दी आश्रममें लौट सकनेकी उन्हें आशा न थी। यों वे शान्ति स्थापनाका काम पूरा करके नहीं लौटे हैं। वे तो एक विशेष कार्यवश, अर्थात् एक लड़कीके विवाहमें सम्मिलित होने आये हैं, जिसका लालन-पालन आश्रममें हुआ था। आश्रमसे सम्बन्धित

लोगोंका विवाह, वह भी तब, जब हम संघर्षरत हैं, आश्चर्यका कारण हो सकता है। परन्तु इस विवाहको उदाहरण नहीं बनाया जा सकता। जो लोग विवाह किए बिना नहीं रह सकते, उन्हें विवाह करनेकी छूट है। आश्रमवासियोंके लिए अविवाहित रहनेकी भी एक शर्त थी, किन्तु वह शर्त अनिवार्य नहीं थी। जो लोग अविवाहित जीवन नहीं बिता सकते, वे आश्रम छोड़ भी सकते हैं।

संघर्ष पुनः कब छिड़ जाये यह कहा नहीं जा सकता। किन्तु यदि छिड़ा तो भयंकर होगा। इसलिए आश्रमवासियोंको सावधान रहना है और अपनी शक्ति बढ़ानी है। जन-मानसमें साहस और पवित्रताकी भावनाका उदय पूरी तरह हो चुका है। अगर संघर्ष छिड़ा तो करोड़ों लोग उसमें भाग लेंगे। लेकिन उन सबके हिम्मत हार जाने अथवा संघर्षसे अलग रहनेकी स्थितिमें आश्रमवासियोंको ही उदाहरण प्रस्तुत करना होगा और अगुवाई करनी होगी।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २३-४-१९३१

१८. पत्र : प्रभावतीको

२२ अप्रैल, १९३१

चि० प्रभावती,

तेरे पत्र मिलते रहते हैं। तू वहाँ पहुँचते ही बीमार हो गई; ऐसा क्यों? क्या अब वहाँसे छूटकर वापस नहीं आ सकती? यदि वहाँ किसी कामके लिए तेरी जरूरत न हो तो तुझे वापस आ जाना चाहिए। यह बारडोली जाते हुए सूरतमें लिख रहा हूँ। मुझे लगता है कि बारडोलीमें आठेक-दिन तो रहना ही पड़ेगा। मैं ठीक हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ३३९९) की फोटो-नकलसे।

१९. पत्र : आर० एम० मैक्सवेलको[1]

बारडोली
२२ अप्रैल, १९३१

मैं इसके साथ अपने और उत्तरी डिवीजनके कमिश्नरके बीच हुए ताजा पत्र-व्यवहारकी प्रतियाँ संलग्न कर रहा हूँ। यदि कांग्रेसकी मध्यस्थताके बारेमें वाइसराय महोदयका भी वही दृष्टिकोण है जो श्री गेरेटने अपनाया है, तो मुझे लगता है सारे समझौतेका ही कोई अर्थ नहीं रहता। कांग्रेस और सरकारके बीच समझौता तभी हुआ था जब भारत सरकार और ब्रिटिश सरकारने मान लिया था कि कांग्रेस वास्तवमें जनताका प्रतिनिधित्व करती है। जनता और सरकारके बीच कांग्रेसको मध्यस्थके रूपमें स्वीकार करनेसे इनकार करना समझौतेको नकारना है।

इस असाधारण परिणतिने उन सभी मामलोंको सर्वथा गौण बना दिया है जिनके बारेमें मैंने १७ तारीखको शिकायत की थी। लेकिन यह दिखानेके लिए कि समझौतेको कार्यान्वित करनेमें अब तक सरकारकी ओरसे कितनी कसर रह गई है मैं कुछ खास-खास मुद्दोंको फिर लिख रहा हूँ।

१. शोलापुरके कुछ उन बन्दियों और ऐसे अनेक अन्य बन्दियोंको अबतक रिहा नहीं किया गया है, कांग्रेस मानती है कि जिनकी रिहाई समझौतेके अनुसार हो जानी चाहिए थी।

२. ऐसे कई मुकदमे अबतक चालू हैं।

३. विदेशीव्यक्ति अधिनियमके अन्तर्गत आनेवाले सविनय अवज्ञा करनेवालों पर से अबतक प्रतिबन्ध नहीं हटाया गया है।

४. सविनय अवज्ञाकारियोंके विरुद्ध दायर किये गये 'वतन और इनाम'[2] के मामले अबतक वापस नहीं लिये गये हैं।

५. सविनय अवज्ञा आन्दोलनके दौरान त्यागपत्र देनेवाले पटेलों आदि कर्मचारियों को अबतक बहाल नहीं किया गया है, हालाँकि मेरी जानकारीके मुताबिक उनके स्थानोंपर नये कर्मचारियोंकी नियुक्ति अस्थायी रूपसे या 'अगले आदेशतक' ही की गई थी और उनमेंसे कई पटेल अवांछनीय किस्मके व्यक्ति हैं।

६. जब्तशुदा चल और अचल सम्पत्तिको किसी न किसी बहाने अबतक नहीं लौटाया गया।

७. अधिकारियोंको जानकारी रहनेपर भी मद्य-विक्रेता बिना लाइसेन्सके अपना धन्धा चला रहे हैं।

१. बम्बईके कार्यवाहक गवर्नरके निजी सचिव।
२. सरकारकी ओरसे माफीमें मिली जमीनें।

८. जब्तशुदा जमीनोंके बारेमें अबतक यह जानकारी नहीं दी गई है कि वे कब, कितने मूल्यमें और किस ढंगसे बेची गई थीं।

९. सरकारने सविनय अवज्ञा आन्दोलनके दौरान 'असहयोग' के आचार पर अहमदाबाद नगरपालिकाको शिक्षा और सफाईकी मदके लिए अनुदानोंकी राशियाँ नहीं दी हैं; और एक अस्पताल तथा प्रसूतिगृहके काम आनेवाली भूमिके लगानकी बकाया राशि अबतक माफ नहीं की है। यद्यपि समझौतेमें इस मामलेका कोई स्पष्ट उल्लेख तो नहीं है, लेकिन यह मामला उसके क्षेत्राधिकारमें ही आता है।

मैं इन सभी मुद्दोंके बारेमें सरकारका अन्तिम निर्णय जानना चाहता हूँ। मैंने खण्ड १ और ४ के अन्तर्गत आनेवाले मामलोंका ब्यौरा श्री कॉलिन्सको भेजनेका वायदा किया था। ब्यौरा इकट्ठा किया जा रहा है। पर मेरा ख्याल है कि इन सभी मामलोंके बारेमें एक सामान्य आदेश जारी किया जा सकता है। लेकिन यदि कांग्रेसको बाकायदा एक मध्यस्थके रूपमें मान्यता नहीं दी जायेगी तो फिर और सभी बातोंका कोई महत्त्व नहीं रहता।[1]

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २०-८-१९३१

२०. पत्र : एच० डब्ल्यू० एमर्सनको[2]

बारडोली

२२ अप्रैल, १९३१

प्रिय श्री एमर्सन,

आपको फिर कष्ट देते हुए मुझे दुःख हो रहा है। लेकिन जहाँतक गुजरातका सम्बन्ध है, समझौता लगभग टूटने जैसी खतरनाक स्थितिमें आ पहुँचा है। बम्बई सरकार और मेरे बीच हुए पत्र-व्यवहारकी नकल साथ भेज रहा हूँ। मैं इस बातकी जी-तोड़ कोशिश कर रहा हूँ कि समझौता टूटने न पाये। समझाने-बुझानेकी जितनी भी शक्ति मुझमें है, मैं उसका पूरा-पूरा उपयोग कर रहा हूँ। लेकिन अब यह बोझ असह्य लगने लगा है।[3]

हृदयसे आपका,

मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

गृह विभाग, राजनीतिक, फाइल संख्या ३३/११ और के० डब्ल्यू० एस० १९३१।
सौजन्य : भारतीय राष्ट्रीय अभिलेखागार

१. आर० एम० मैक्सवेलके उत्तरके लिए, देखिए परिशिष्ट २।

२. भारत सरकारके तत्कालीन गृहसचिव।

३. एच० डब्ल्यू० एमर्सनके उत्तरके लिए देखिए परिशिष्ट ३।

२१. पत्र : तेजबहादुर सप्रूको

बारडोली
२२ अप्रैल, १९३१

प्रिय सर तेज,

आपके पत्रके लिए धन्यवाद। मैं अच्छा हो रहा हूँ।

साम्प्रदायिक उलझनका मैं अपने ढंगसे समाधान खोज रहा हूँ। अगर कोई समाधान नही निकला तो मैं लन्दन जानेकी हिम्मत नहीं करूँगा। यही मैने लॉर्ड इर्विनसे भी कहा है। नये वाइसरायसे[1] मैं बम्बईमें नहीं मिला। गोलमेज सम्मेलन सम्बन्धी सामग्रीकी मैं प्रतीक्षा करूँगा। मैं समझता हूँ ऐसी सामग्री थोड़ी-बहुत तो छप भी गई होगी।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

सर तेज बहादुर सप्रू
१९, अल्बर्ट रोड,
इलाहाबाद

अंग्रेजी (जी० एन० ७५९१) की फोटो-नकलसे।

२२. तार : लक्ष्मीदत्तको[2]

[२२ अप्रैल, १९३१ को अथवा उसके बाद]

उनकी कलई खोल दो।

गांधी

अंग्रेजी (एस० एन० १७०१४) की माइक्रोफिल्मसे।

१. लॉर्ड विलिंगडन।

२. इन्दौरसे भेजे गए लक्ष्मीदत्तके दिनांक २२ अप्रैल १९३१ के तारके उत्तरमें। तार इस प्रकार था: "विदेशी कपड़ा व्यापारियोंने वायदा-खिलाफी की है। कृपया बतायें क्या करें। लक्ष्मीदत्त स्वदेशी प्रचारक-मण्डल।"

२३. विदेशी कपड़ा और दूसरी विलायती चीजें

हमारी यह आन्तरिक इच्छा है कि अंग्रेज और खासकर लंकाशायरके मिल-मालिक यह अनुभव करें कि पीढ़ियोंसे चली आनेवाली कंगाली या भुखमरीसे मुक्त होनेके लिए हिन्दुस्तान विदेशी कपडेका, फिर वह विलायती हो या जापानी, सदाके लिए बहिष्कार कर सकें। यह एक ऐसी आर्थिक आवश्यकता है, जो भारत द्वाराके सम्पूर्ण स्वतन्त्रता प्राप्त कर लेनेपर भी बनी रहेगी। लोकतन्त्रका, स्वराज्यकी सरकारका यह निश्चय ही सबसे पहला काम होगा कि वह विदेशी कपड़ोंके आयातको बिलकुल बन्द कर दे।

और विदेशी कपड़ेका स्थान देशी मिलोंका कपड़ा नहीं लेगा, बल्कि हिन्दुस्तानके ७,००,००० गाँवोंमें कती और बुनी खादी उसका स्थान ग्रहण करेगी। यद्यपि यह निःसन्देह सच है कि विदेशी वस्त्र-बहिष्कारसे स्वभावतः देशी मिलोंको [भी] फायदा होता है, फिर भी कांग्रेस तो इस बहिष्कारमें अपनी मुख्य शक्ति खादीके लिए ही, करोड़ों मेहनत-मजदूरी करनेवालोंके लिए ही खर्च कर रही है। सभी विदेशवासी यह समझ लें कि यह बहिष्कार-आन्दोलन एक लोकव्यापी, लोक-हितकारी आन्दोलन है। यदि इस आन्दोलनकी व्यापकता और पवित्रताको विदेशी वस्त्र-व्यवसायी पहचानें तथा इसका अनुभवकरें तो अन्तमें उनका और उनके काममें लगे हुए अन्य लोगोंका ही हित होगा। इस आन्दोलनके राजनैतिक परिणाम अवश्य है, परन्तु वस्तुतः यह आन्दोलन शुद्ध रूपसे आर्थिक और लोकोपकारी है, इसलिए तमाम दुनियाकी इसके साथ सहानुभूति होनी चाहिए।

फिर भी विलायतमें विदेशी वस्त्र-बहिष्कारके विरोधमें बिना किसी कारणके अनावश्यक कटु आन्दोलन खड़ा कर दिया गया है। विलायती चीजोंके बहिष्कारको उठा लेनेसे इंग्लैंडको जो जबर्दस्त फायदा पहुँचा है, उसपर ध्यान ही नही दिया गया है। यह इन्साफकी बात नहीं है। इस इतने अधिक महत्वकी वस्तुस्थितिको दबानेसे भारतीय समस्याका निपटारा, जो पहलेसे ही काफी मुश्किल है, और बहुत ज्यादा मुश्किल बन जाता है। क्या अंग्रेज प्रजा यह जानती है कि विलायती वस्तुओं के बहिष्कारका आन्दोलन तीस साल पुराना है? क्या वे यह मानते हैं कि पिछले युद्धमें विदेशी वस्तुओंका बहुत अधिक बहिष्कार किया गया था और इसे विदेशी वस्त्र-बहिष्कार आन्दोलनके जितनी ही सफलता भी मिली थी? यह तय है कि यदि सदा नही तो अभी बहुत समयतक हिन्दुस्तानको विदेशोंकी कुछ चीजोंकी जरूरत रहेगी। आजका समझौता अस्थायी है। पर मान लीजिए कि कल स्थायी सुलह हो जाये और हिन्दुस्तान और इंग्लैडमें बराबरीके हिस्सेदारोंका नाता कायम हो जाये तो हिन्दुस्तान इंग्लैडसे व्यापार करते हुए अपनी जरूरतकी जो चीजें मंगवायेगा, क्या उससे इंग्लैडकी उस क्षतिकी आवश्यकतासे अधिक पूर्ति नहीं हो जायेगी, जो उसे भारतके साथ कपड़ों और सूतके व्यवसायको बन्द कर देनेसे उठानी पड़ेगी?

समझनेकी बात तो यह है कि अब हिन्दुस्तानके माथे वे सब चीजें, फिर वे इंग्लैंडकी हों या विदेशोंकी, जिनकी उसे जरूरत न हो नहीं लादी जा सकती। लूट-खसोटका जमाना बीत चुका। सम्भव है, हम कौमी एकता कायम करनेमें कामयाब न हों। नाकामयाब होनेपर मुमकिन है, हम जल्दी ही आजादी हासिल न कर सकें। पर दुनिया देखेगी कि वे सब हिन्दू-मुसलमान, सिख, ईसाई, पारसी और यहूदी, जो हिन्दुस्तानको अपना घर मानते हैं, एक होकर अपने मुल्कके साधनोंकी उस लूटका विरोध करेंगे, जो विदेशियोंके हितकी दृष्टिसे की जाती है। वे उस साल-दर-साल की जानेवाली लगातार लूटका कसकर विरोध करेंगे जो तमाम कौमों और जातियोंको समान भावसे कठोरतापूर्वक कंगाल और दाने-दानेको मुहताज बना रही है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २३-४-१९३१

२४. विदेशी मिशनरी

विदेशी मिशनरियोंके सम्बन्धमें जो बातें पत्र-प्रतिनिधियोंने मेरे मुँहसे कहलाई हैं, उनके बारेमें पत्र-लेखकोंने क्रोध या आश्चर्यमें आकर मेरे नाम अखबारोंकी कतरनें अथवा अपनी टीकाएँ भेजी हैं।[1] मेरी बात ठीक-ठीक छपी है या नहीं, इसकी पूछताछका कष्ट सिर्फ एक पत्र-लेखकने उठाया है। जॉर्ज जोजेफ तक, जो पहले मेरे साथी थे और मदुरामें मुझे प्रेमसे अपने घर ठहराते थे, अखबारोंकी रिपोर्टकी जाँच करानेकी कृपा किये बिना ही, बेहद नाराज हो गये हैं। यह चोट सबसे कठोर है।

एक पत्रकारने मेरे मुँहसे ये बातें कहलाई हैं :

> **यदि वे मानव-दयाके कार्य और गरीबोंकी भौतिक सेवातक सीमित रहनेकी बजाय, डाक्टरी सहायता, शिक्षा आदिसे धर्म-परिवर्तन करेंगे, तो मैं उन्हें जरूर यहाँसे चले जानेके लिए कहूँगा। हर राष्ट्रका अपना धर्म दूसरे किसी धर्म जितना ही अच्छा होता है। भारतके धर्म उसके लोगोंके लिए पर्याप्त हैं। हमें आध्यात्मिक परिवर्तनकी कोई आवश्यकता नहीं है।**

समाचारपत्रोंसे मेरी इतनी अधिक भेंटें हुई हैं, कि इस कथनका समय, अवसर या प्रसंग याद नहीं आ रहा है। मैं केवल यही कह सकता हूँ कि जो बात मैं हमेशा कहता और मानता आया हूँ, उसका यह विपर्यास है। विदेशी धर्म-प्रचारक मण्डलोंके सम्बन्धमें मेरे विचार किसीसे छिपे नहीं हैं। धर्म-प्रचारकोंके सामने ही मैं अनेक बार उन्हें स्पष्ट कर चुका हूँ। इसलिए मेरे विचारोंकी विकृत रिपोर्टसे भड़क उठनेवाली इस क्रोधाग्निका अर्थ मैं समझ नहीं पा रहा हूँ।

१. देखिए खण्ड ४५, पृष्ठ ३३७-९।

उक्त कथनकी भाषाको बदलकर मैं इस ढंगसे रखना चाहूँगा:

यदि वे केवल शिक्षा, गरीबोंकी डाक्टरी सेवा, और ऐसे ही मानव-दयाके कामोंतक सीमित रहनेकी बजाय, अपने इन कामोंका उपयोग धर्म-परिवर्तनके लिए करेंगे, तो मैं अवश्य ही यह चाहूँगा कि वे चले जायें। हरएक राष्ट्र अपने धर्मको दूसरे किसी राष्ट्रके धर्म जितना ही अच्छा समझता है। भारतवासी जिन महान् धर्ममें आस्था रखते हैं, वे निश्चय ही उनके लिए पर्याप्त हैं। भारतको एक धर्मसे दूसरे धर्ममें परिवर्तनकी कोई आवश्यकता नहीं है।

इस संक्षिप्त कथनको अब मैं विस्तारसे समझाऊँगा। मैं मानता हूँ कि मानव-दयाकी आड़में किया गया धर्म-परिवर्तन यदि और कुछ नहो तो हानिकर अवश्य है। यहाँके लोगोंको इससे निश्चय ही चिढ़ है। धर्म आखिर एक अत्यन्त व्यक्तिगत चीज है; वह हृदयसे सम्बन्धित है। किसी ईसाई डाक्टरने मेरे रोगका इलाज करके मुझे स्वस्थ कर दिया, सिर्फ इसीलिए मुझे अपना धर्म क्यों बदलना चाहिए? या जब मैं उस डाक्टरका इलाज करा रहा हूँ, तब खुद वह मेरे धर्म-परिवर्तन करनेकी अपेक्षा क्यों करे या वह मुझे ऐसी सलाह क्यों दे? डाक्टरी सहायता क्या अपने आपमें सार्थक नहीं है और क्या उतनेसे ही चिकित्सकको सन्तोष नहीं हो जाता? या यदि मैं किसी मिशनरी शिक्षा-संस्थामें पढ़ रहा हूँ, तो मुझपर ईसाई धर्मकी शिक्षा क्यों थोपी जाये? मेरी रायमें तो इन तरीकोंसे उन्नति नहीं होती; और यदि गुप्त विरोध नहीं, तो ये सन्देह अवश्य पैदा करते हैं। धर्म-परिवर्तनकी रीतियोंमें 'सीजरकी रानीकी तरह सन्देहकी जरा भी गुंजाइश' नहीं होनी चाहिए। धर्म पार्थिव चीजोंकी तरह नहीं दिया जाता। वह तो हृदयकी भाषा द्वारा दिया जाता है। यदि मनुष्यमें कोई जीवित धार्मिक आस्था है, तो वह गुलाबके फूलकी तरह अपनी सुगन्ध फैलाती है। अदृश्य होनेके कारण, फूलकी पंखुड़ियोंकी रंगीन छटाकी अपेक्षा उसका प्रभाव कहीं अधिक व्यापक होता है।

अतः मैं धर्म-परिवर्तनका विरोधी नहीं हूँ, परन्तु उसकी वर्तमान रीतियोंका विरोधी हूँ। धर्म-परिवर्तनने आजकल और वस्तुओंकी भाँति एक व्यापारका रूप ग्रहण कर लिया है। जहाँतक मुझे याद है, एक मिशनकी रिपोर्ट मैंने पढ़ी थी, जिसमें धर्म-परिवर्तनका प्रति व्यक्ति खर्च बताकर 'अगली फसल' के लिए बजट पेश किया गया था।

मैं बेशक यह कहता हूँ कि भारतवर्षके लिए उसके महान् धर्म पर्याप्त हैं। ईसाई और यहूदी धर्मोंके सिवा, हिन्दूधर्म और उसकी शाखाएँ, इस्लाम और पारसी धर्म, ये सब जीवित धर्म हैं। संसारका कोई भी एक धर्म सम्पूर्ण नहीं है। और सब धर्म उनके अपने-अपने अनुयायियोंको एक-से प्रिय हैं। इसलिए जरूरत आज इस बातकी नहीं है कि हर सम्प्रदाय अपने धर्मको दूसरे सब धर्मोंसे श्रेष्ठ सिद्ध करनेका निरर्थक प्रयत्न करे और इस प्रकार विरोध पैदा करे; बल्कि इस बातकी है कि जगत्के महान धर्मोंके अनुयायियोंमें सजीव और मैत्रीपूर्ण सम्पर्क पैदा किया जाये। इस प्रकारके मैत्रीपूर्ण सम्पर्कसे हम सब अपने-अपने धर्मोकी त्रुटियों और दोषोंको दूर कर सकेंगे।

ऊपर मैंने जो कहा है, उससे यह सिद्ध होता है कि भारतको ऐसे धर्म-परिवर्तनकी कोई आवश्यकता नही है। आत्मशुद्धि, आत्म-साक्षात्कारके अर्थमें धर्म-परिवर्तन इस जमानेकी सबसे बड़ी आवश्यकता है। पर यह वह चीज कदापि नहीं है, जो धर्मपरिवर्तनके नामसे जानी जाती रही है। जो भारतवर्षका धर्म-परिवर्तन करना चाहते हैं, उनसे यही कहा जा सकता है कि हकीमजी पहले अपना इलाज कीजिये न?

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २३-४-१९३१

२५. 'अनेकोंमें से एक' (?)

'अनेकोंमें से एक'का लिखा हुआ खुला पत्र स्वर्गीय सुखदेवका पत्र है। श्री सुखदेव भगतसिंहके साथी थे। यह पत्र उनकी मृत्युके बाद मुझे दिया गया था, किन्तु समयाभावके कारण मैं इसे इसके पहले प्रकाशित न कर सका। वह बिना किसी परिवर्तनके ही अन्यत्र दिया गया है।[1]

लेखक 'अनेकोंमें से एक' नही है। राजनैतिक स्वतन्त्रताके लिए फाँसीको गले लगानेवाले अनेक नही होते। राजनैतिक हत्याएँ चाहे जितनी निन्द्य क्यों न हों, तो भी जिस देश-प्रेम और साहसके कारण ऐसे भयानक काम किये जाते हैं, उनके लिए मनमें प्रशंसाका भाव आये विना नही रह सकता। इसके साथ ही हम यह आशा भी रखते हैं कि राजनैतिक हत्या करनेवालोंका सम्प्रदाय बढ़ नहीं रहा है। यदि भारतवर्षका प्रयोग सफल हुआ, और उसका सफल होना निश्चित ही है, तो राजनैतिक हत्या करनेकी बात सदाके लिए समाप्त हो जायेगी। मैं स्वयं तो इसी श्रद्धासे काम कर रहा हूँ।

लेखक यह कहकर मेरे साथ अन्याय करते हैं कि क्रान्तिकारियोंसे उनका आन्दोलन बन्द कर देनेकी भावुकतापूर्ण प्रार्थनाएँ करनेके सिवा मैंने और कुछ नही किया, जब कि मेरा दावा ही यह है कि मैंने उनके सामने ठोस तथ्य रखे हैं और यद्यपि वे इन स्तम्भोंमें भी कई बार प्रस्तुत किये जा चुके हैं, फिर भी वे दोहराये जा सकते हैं:

१. क्रान्तिकारी आन्दोलनने हमें हमारे ध्येयके समीप नहीं पहुँचाया।

२. वह देशके फौजी खर्चमें वृद्धिका कारण बना है।

३. उससे लाभ तो किसी भी प्रकारका नहीं हुआ; उसने केवल सरकारको दमनका अवसर ही दिया है।

४. जब-जब क्रान्तिकारियोंने खून किये हैं, तब-तब कुछ समयके लिए सम्बन्धित स्थानोंके लोगोंका नैतिक बल टूटा है।

५. उसने जन-जागृतिमें किसी भी तरह हाथ नहीं बँटाया।

६. लोगोंपर उसका दोहरा दुष्प्रभाव पड़ा है; एक तो यह कि उनपर आखिरकार अधिक खर्चका भार आया और उन्हें सरकारी क्रोधके अप्रत्यक्ष फल भोगने पड़े।

१ देखिए परिशिष्ट ४।

७. क्रान्तिकारी हत्याएँ भारत-भूमिमें नहीं फूल-फल सकती; क्योंकि इतिहास इस बातका साक्षी है कि भारतीय परम्परा राजनैतिक हिंसाके लिए प्रतिकूल है।

८. अगर क्रान्तिकारी लोक-समूहको, अपनी पद्धतिकी ओर आकर्षित करना चाहते हों, तो उन्हें उसके लोगोमें फैलने और उसके द्वारा स्वतन्त्रता प्राप्त करनेके लिए अनिश्चित काल तक प्रतीक्षा करनी पड़ेगी।

९. अगर हिंसाकी पद्धति कभी लोकप्रिय भी हुई तो जैसा दूसरे देशोंमें हुआ है, वह उलटकर खुद हमारा ही संहार किये बिना न रहेगी।

१०. क्रान्तिकारी इसके विपरीत दूसरी पद्धति अर्थात् अहिंसाकी शक्तिका स्पष्ट प्रदर्शन देख चुके हैं। उनकी छुट-पुट हिंसा और अहिंसाके उपासक कहलानेवाले लोगोंके द्वारा समय-असमयकी हिंसाके बावजूद अहिंसाकी पद्धति चलती रही है।

११. जब मैं क्रान्तिकारियोंसे कहता हूँ कि उनके आन्दोलनसे अहिंसाके आन्दोलनको कुछ भी लाभ नही पहुँचा, इतना ही नहीं, उसने इस आन्दोलनको नुकसान पहुँचाया है, तो उन्हें मेरी बातको मंजूर करना चाहिए। दूसरे शब्दोंमें, मैं यों कहूँगा कि अगर उसे पूरा-पूरा शान्त वातावरण मिला होता, तो हम अब तक अपने ध्येय तक पहुँच चुके होते।

मै दावेके साथ कहता हूँ कि ये ठोस तथ्य हैं, भावुकता-प्रधान मिन्नत नहीं। प्रस्तुत लेखक तो क्रान्तिकारियोंसे मेरी प्रकट प्रार्थनाओं पर एतराज करते है और कहते है कि इस तरह मै उक्त आन्दोलनको कुचल डालनेमें नौकरशाहीकी मदद करता हूँ। नौकरशाहीको उस आन्दोलनका मुकाबला करनेके लिए मेरी मददकी तो जरा भी जरूरत नही है। वह तो क्रान्तिकारियोंकी ही तरह मेरे विरुद्ध भी अपनी हस्तीके लिए लड़ रही है। वह हिंसक आन्दोलनकी अपेक्षा अहिंसक आन्दोलनसे अधिक भयभीत है। हिंसक आन्दोलनका मुकाबला करना वह जानती है। अहिंसाके सामने उसकी अक्ल गुम हो जाती है; और अहिंसाने उसकी नींव हिला दी है।

दूसरे, राजनैतिक खून करनेवाले अपनी भयानक प्रवृत्तिका आरम्भ करनेसे पहले ही उसकी कीमत कूत लेते है। मेरे किसी भी कामसे उनके भविष्यके और अधिक खराब होनेका खतरा हो ही नही सकता।

और चूँकि क्रान्तिकारी दलको गुप्त रीतिसे काम करना पड़ता है, मेरे सामने उसके अज्ञातवास करनेवाले सदस्योंके प्रति सार्वजनिक रूपसे प्रार्थना करनेके सिवा दूसरा मार्ग ही नही है। मै साथ ही यह भी कह देना चाहता हूँ कि मेरी प्रकट प्रार्थनाएँ एकदम व्यर्थ नहीं हुई हैं। जो पहले क्रान्तिकारी थे, ऐसे अनेक सज्जन आज मेरे सहयोगी बन गये है।

इस खुली चिट्ठीमें यह शिकायत भी की गई है कि सत्याग्रही कैदियोंके सिवा दूसरे कैदी नही छोड़े गये। इन दूसरे कैदियोंके छुटकारेका आग्रह करना अशक्य क्यों था, सो तो मैं इन पृष्ठोंमें समझा चुका हूँ। मै स्वयं तो चाहता हूँ कि उनमें से हरएक छूट जाये। मै उन्हें छुड़ानेकी भरसक कोशिश करूँगा। मैं जानता हूँ कि उनमें से कई तो बहुत पहले ही छूट जाने चाहिए थे। कांग्रेसका इस सम्बन्धमें प्रस्ताव भी

है। कार्यसमितिने श्री नरीमानको इस तरहके सभी कैदियोंकी नामावली तैयार करनेका काम सौंपा है। सब नामोंकी सूची तैयार होते ही उन कैदियोंको छुड़ानेके लिए कार्रवाई की जायेगी। पर जो बाहर हैं, उन्हें क्रान्तिकारी हत्याएँ बन्द करवानेमें मदद करनी चाहिए। दोनों काम साथ-साथ नही चल सकते हैं। किसी भी हालतमें जिनकी मुक्ति होनी ही चाहिए, ऐसे राजनैतिक कैदी जरूर है। मै तो उन सभीको, जिनका इन बातोंसे सम्बन्ध है, इतना ही आश्वासन दे सकता हूँ कि इस ढिलाईका कारण इच्छाका अभाव न होकर शक्तिकी कमी है। यह याद रहे कि अगर कुछ ही महीनोंमें अन्तिम सुलह न हुई, तो इस समय जो तमाम राजनैतिक कैदियोंको छुड़ानेकी कोशिश में लगे हैं, वे खुद ही जेलोंमें जा बैठेंगे।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २३-४-१९३१

२६. वडपल्ली गोलीकांड

जनताको नीचे उद्धृत विवरणकी[१] ओर ध्यान देना और इसके सिलसिलेमें कार्रवाई करनी चाहिए। मैंने जेलसे अपनी रिहाईके बादसे दक्षिण भारतमें पुलिसके अत्याचारोंकी अनेक कहानियाँ सुनी हैं। मेरे दिमागपर उनकी यह छाप पड़ी है कि अत्याचारका सबसे बीभत्स रूप दक्षिण भारतमें और दक्षिणमें भी आन्ध्रमें ही देखनेमें आया है। जाँचके बाद सच पाये गये इस उदाहरणसे शायद पहलेके साक्ष्यकी पुष्टि ही होती है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २३-४-१९३१

२७. धरनेके विरोधमें

दक्षिण भारतके एक सेवा-निवृत्त अफसर लिखते हैं:[२]

> **मद्रासके 'हिन्दू' अखबारसे मुझे पता चला है कि आपने 'यंग इंडिया'[३] में शराब और विदेशी कपड़ेकी दूकानोंपर धरना देनेके कुछ नये तरीके प्रकाशित किये है, और अपने पाठकोंसे आपने यह प्रार्थना भी की है कि अगर वे कोई नये नियम भेज सकते हों तो अवश्य भेजें। क्या मैं इस सिलसिलेमें 'पंच' अखबारकी 'मत करो'[४] नामक मशहूर सलाह सुझानेका साहस करूँ? समझौते**

१. यहाँ नहीं दिया जा रहा है। विवरणमें राजमहेन्द्रीसे १५ मील दूर स्थित वडपल्लीमें ३० मार्चको रथ-यात्राके दौरान किया गया पुलिस-गोलीकाण्डका अनौचित्य दिखाया गया था।

२. अंशतः उद्धृत।

३. देखिए खण्ड ४५, पृष्ठ ३०९।

४. 'अमुकसे विवाह करूँ या न करूँ' पूछे जाने पर एक नवयुवककी दी गई सलाह।

की शर्तोंको समझाते हुए पत्रकारोंके सामने आपने जो अत्यन्त सुन्दर वक्तव्य[1] दिया था, उसमें और बातोंके साथ आपने यह भी कहा था कि अगर स्वराज्यमें गलती करनेकी ही नहीं, बल्कि पाप तक करनेकी स्वतन्त्रता न हो, तो वह हासिल करने योग्य आजादी नहीं है; और आपने यह भी कहा था कि जब सर्वशक्तिमान परमात्माने अपने अदना-से-अदना प्राणीको पापतक करनेकी पूरी स्वतन्त्रता दी है, तब मैं नहीं सोच पाता कि आदमी अपने किसी साथीको वैसी ही पूर्ण स्वतन्त्रता देनेसे इनकार करनेका साहस कैसे कर सकता है। इसपर मैं निहायत अदबके साथ आपसे यह पूछना चाहूँगा कि तब फिर आप लोगोंको शराब पीने और विदेशी कपड़ा पहननेसे रोकनेके लिए रात-दिन इतनी मेहनत क्यों करते हैं। . . . अगर धरना देना कानून-सम्मत हो जाये, या जिस ढंगके धरनेकी आप हिमायत करते हैं, वह कानून-सम्मत मान लिया जाये, तो कई बातोंमें उसका प्रयोग किया जा सकता है; और उसके परिणाम बड़े ही परेशानी पैदा करनेवाले सिद्ध हो सकते हैं? आशा है, आप इस विषयपर पूरी गम्भीरतासे विचार करेंगे और भली-भाँति यह देख लेंगे कि कहीं किसी रूपमें धरनेको उत्तेजना देकर आप 'हवा बोकर तूफान पैदा करनेवाली'[2] बात तो नहीं कर रहे हैं।

लेखककी दलीलें आकर्षक तो हैं, पर ठोस नहीं हैं। वे भूल जाते हैं कि धरना उतना ही पुराना है, जितनी कि दुनिया। उसे कानून-सम्मत करनेकी जरूरत नहीं है। ऐसा नही है कि वह समझौतेसे पहले गैर-कानूनी था, और अब कानून-सम्मत हो गया है। धरना तो सुधारकका वह हक है, जिसे वह तभी छोड़ सकता है जब वह सुधार-कार्यको छोड़ दे।

लेखकने भ्रमवश यह सोचनेकी गलती की है कि आदमीको भूल करने या पाप करनेकी स्वतन्त्रता है, इसलिए पापके विरोधमें किसी प्रकारकी भी चेतावनी देना उसकी स्वतन्त्रतामें अक्षम्य दस्तन्दाजी होगी। हकीकत तो यह है कि व्यक्तिकी पाप करनेकी स्वतन्त्रताके साथ जनताको भी यह स्वतन्त्रता होती है कि वह उसे पापसे हटानेकी कोशिश करे और वैसा करनेके लिए कानूनतक बनाये। 'पापका परिणाम मृत्यु है।' पाप या गलती करके कोई उसके फलसे बच नहीं सकता। मैंने जिस बातका विरोध किया है और दुनिया हमेशासे जिसका विरोध करती आई है, वह है, सत्ताधारियोंका वह निरंकुश और ऊपरसे भलमनसाहत बरतनेका झूठा रुख, जिसके बलपर वे जनताको उसकी इच्छाके विरुद्ध 'सदाचारी' बनानेका दावा करते हैं, और उसके भले-बुरेके बारेमें निर्णय करनेकी अपनी शक्तिको अचूक मानते हैं। शान्तिमय धरना तो उस व्यसनके खिलाफ एक दोस्ताना चेतावनी है, जिसे सुधारक बुरा समझता है। यदि वह इस सीमाको लाँघकर हिंसापर आमादा हो जाये, तो उसपर कानून

१. देखिए खण्ड ४५, पृष्ठ २६५-७०।

२. अंग्रेजी कहावतका अभिप्राय।

लागू हो जाता है, और तब वह उसे किसी व्यक्तिकी स्वतन्त्रतामें दखल देनेसे रोकता है। लेखकने कुछ हालतोंमें धरना देनेसे होनेवाले खतरोंका जिक्र किया है, पर हमें उनकी कोई मिसालें नही मिली। मन्दिरोंपर अबसे पहले धरने दिये जा चुके हैं। इतना ही कि वह कोशिश बेकार हुई, और छोड़ दी गई। यदि मनुष्य अपने कर्तव्य को अनुशासित रहकर पालता है और लोकापवादसे नही डरता, तो इस तरहका धरना देनेसे उसे कोई रोक नहीं सकता। शराब, नशीली चीजों और विदेशी कपड़ोंकी दुकानोंपर धरना देना सम्भव और अधिकतर सफल इसलिए हुआ है कि लोकमत इनके विरुद्ध है। इसलिए कांग्रेसके सामने 'हवा बोकर तूफान' में फँसनेका कोई खतरा नहीं है। चूँकि धरना अपनी उपयोगिता साबित कर चुका है, उसका लोक-शिक्षणके एक स्थायी तत्त्वके रूपमें हमारे बीच स्थान बन चुका है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २३-४-१९३१

२८. एक चतुराईसे भरी सलाह

कौमी सवालको सुलझानेके लिए एक संवाददाताने नीचे लिखी चतुराईसे भरी सलाह भेजी है:

> **हर प्रान्तमें हिन्दू और मुस्लिम कौमोंको समान संख्यामें मतका अधिकार रहना चाहिए। कौमी मताधिकारकी समस्याको सुलझानेकी दृष्टिसे स्पष्ट ही वह व्यवस्था बहुमतवाली कौमके लिए अन्यायपूर्ण है। पर इसमें विचार कौमी मताधिकारको सुलझानेका नहीं है, बल्कि उसे व्यर्थ बनानेका है। मेरी सलाहको मंजूर कर लेनेका नतीजा यह होगा कि जब कभी किसी सवालपर दोनों कौमोंका मत एक-दूसरेसे भिन्न होगा तो निर्णयके समय उस सवालका फैसला दूसरी (अल्पमतवाली) कौमोंके मतसे होगा। यहाँ यह मान लिया गया है कि इन दूसरी कौमोंको उनकी संख्याके प्रमाणमें प्रतिनिधित्व प्राप्त होगा।**

मै इसपर कुछ भी टीका सिर्फ इसी कारण ही नहीं करता कि अगर यह बात सम्बन्धित कौमोंको भी मंजूर है, तो वह मुझे मंजूर होगी। क्या मुसलमान इस पर राजी हो जायेंगे? और सिख इसपर क्या कहेंगे?

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २३-४-१९३१

२९. पत्र : रामभाऊ खरेको

२३ अप्रैल, १९३१

चि० रामभाऊ,

तुम तो इतने आलसी बन गये दिखते हो कि मुझे पत्रतक नही लिखते, ऐसा क्यों? अब तो तुम्हें आलस्य त्याग देना चाहिए और कुछ काम करना चाहिए। नहीं तो वहाँ जाना, न जाना बराबर हो जायेगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० २८८) की फोटो-नकलसे।
सौजन्य : लक्ष्मीबहन खरे

३०. तार : डेली 'हेरॉल्ड' को

[२३ अप्रैल, १९३१के बाद][१]

सम्पादक
'डेली हेरॉल्ड'
लन्दन

विदेशी मिशनरियोंके बारेमें भेजी रिपोर्टमें मेरे विचारोंको तोड़ा-मरोड़ा गया है। अपने विचार स्पष्ट करनेके लिए मैंने 'यंग इंडिया' में एक पूरा लेख दिया है। धर्म-परिवर्तनके लिए अस्पताल, स्कूल आदि संस्थाओंके उपयोगके मैं निस्सन्देह विरुद्ध हूँ। यह स्वस्थ परम्परा नहीं है और यह निश्चय ही कटु विरोधको जन्म देती है। धर्म-परिवर्तन हृदयकी बात है और यह धर्म-प्रचारकोंके शुद्ध चरित्र और आचरणके मूक प्रभावपर ही आधारित होना चाहिए। धर्म-परिवर्तनकी सच्ची प्रेरणा तो गुलाबकी अदृश्य सुगन्धके समान मिलती है। इस प्रकार मैं धर्म-परिवर्तनके विरुद्ध नहीं हूँ, लेकिन वर्तमान तरीकोंके निश्चय ही विरुद्ध हूँ। धर्म-परिवर्तनको रुपया-पैसा कमानेके व्यापारिक तरीकोंतक नहीं गिराना चाहिए। मेरा यह भी विश्वास है कि सभी महान धर्म सम्बन्धित राष्ट्रों या अनुयायियोंके लिए समान रूपसे महत्त्वपूर्ण हैं। भारतमें इस प्रकारके धर्म-परिवर्तनकी, जिसका मैंने उल्लेख

१. "विदेशी मिशनरी" शीर्षकसे २३-४-१९३१ के **यंग इंडिया**में प्रकाशित लेखके उल्लेखके आधारपर।

किया है, कोई आवश्यकता नहीं है। स्वराज्यमें तो सभीको अपने धर्म-पालनकी छूट होगी। व्यक्तिगत रूपसे मैं चाहता हूँ कि धर्मप्रचारक अभीसे अपने मौजूदा तौर-तरीके छोड़ दें। धर्म-परिवर्तन विश्वासपर आधारित हो, विवशतापर नहीं।

गांधी

अंग्रेजी (एस० एन० १७०२७)की फोटो-नकलसे।

३१. पत्र : वसुमती पण्डितको

बारडोली
२४ अप्रैल, १९३१

चि० वसुमती,

तुम्हारा पत्र मिल गया है। स्वास्थ्यका ध्यान रखते हुए काम करना। सभी कामोंमें धीरज रखना। सेवा करके ही सन्तोष करना, चाहे उसका परिणाम कैसा ही क्यों न हो। वहाँ और कौन है?

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (एस० एन० ९३२२) की फोटो-नकलसे।

३२. पत्र : नारणदास गांधीको

बारडोली
२४ अप्रैल, १९३१

चि० नारणदास,

तुम्हारा पत्र मिला। सन्तोककी दाढ़ दिखानेके लिए रणछोड़भाई उसे रॉबिन्सनके पास ले जाये।

लीलाबहन जाना चाहती हो तो चली जाये, किन्तु उससे कह देना कि दुबारा आनेका विचार न करे।

जमनाको दवा माफिक आ गई है न? यदि कुसुमको भी माफिक आये तो राधाको बुला लेना। वह अभीतक पूरी तरह स्वस्थ नहीं हुई।

व्रतके[1] बारेमें समय मिला तो लिख डालूँगा। जो थोड़ा समय मिला है उसे पिछले पत्रोंको निपटानेमें ही लगा रहा हूँ। मेरी तबीयत ठीक चल रही है।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती एम० एम० यू० १ से।

१. स्वदेशी व्रतके बारेमें। यरवदा जेलमें और व्रतोंपर लिखनेके समय गांधीजीने इसे छोड़ दिया था। देखिए "स्वदेशी व्रत", ३१-५-१९३१।

३३. पत्र : धीरजलाल रतिलाल मेहताको

२४ अप्रैल, १९३१

चि० धीरजलाल,

तुम्हारा पत्र मिला। तुम्हारी गृहस्थी निर्मल और सुखी बने और तुम दोनों सच्ची सेवामें तन्मय रहो। कभी मुझसे मिलने आ जाना।

जीवनलालभाईकी मुझे ठीक-ठीक याद है।

मोहनदासके आशीर्वाद

चि० धीरजलाल
रतिलाल मेहता
भागाका तालाब भावनगर

गुजराती (जी० एन० १०८४९) की फोटो-नकलसे।

३४. सलाह : बारडोलीके किसानोंको

२४ अप्रैल, १९३१

आज तीसरे पहर गांधीजीने करीब एक घंटे बारडोली ताल्लुकेके उन किसानोंसे अनौपचारिक बातचीत की जिनकी जब्त जमीनें सरकारने किसी तीसरे व्यक्तिको बेच दी हैं।

ऐसा समझा जाता है कि गांधी जीने उन्हें सलाह दी है कि वे उन जमीनोंपर खरीदनेवालोंके कब्जे और उनके खेतीके काममें रुकावट न डालें। गांधी जीने कहा है कि किसानोंको यह विश्वास रखना चाहिए कि वे शीघ्र ही अपनी जमीनें पुनः प्राप्त कर सकेंगे। फिलहाल वे यही समझें कि उन्हें अपनी जमीनें आजादीकी लड़ाईमें खोनी पड़ी हैं।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २५-४-१९३१

३५. प्रतिज्ञा-भंग

एक मित्र लिखते हैं:[१]

मेरा दृढ़ विश्वास है कि आश्रम न लौटनेकी अपनी प्रतिज्ञापर मै आज भी डटा हुआ हूँ और वह बिलकुल भंग नही हुई है। आश्रममें न जानेका मतलब है, वहाँ स्थायी रूपसे न रहना। मौका पड़नेपर बीमारको देखने भी न जाना, ऐसा अर्थ न कभी था और न होना चाहिए। दूसरे, लड़ाईके ही सिलसिलेमें वहाँ जाना पड़े, तो भी न जाया जाये, ऐसा भी अर्थ नही था और न है। मै अपनी सुविधाके लिए, अपने स्वार्थके लिए अवश्य वहाँ नही जा सकता।

मेरे लिए आश्रम सब-कुछ है। वह मेरी कृति है और उसके प्रति मुझे मोह है। मेरे लिए वह अपने आदर्शोको परिपूर्ण करनेका स्थान है। वह मेरी प्रेरणा-भूमि है। मै जबसे देशमें आया हूँ, तबसे मैने जो नये-नये काम किये है, उनमें सबके लिए नही, तो बहुत-से कामोके लिए मैने वहीसे प्रेरणा प्राप्त की है। आश्रमवासियोंकी मार्फत यह आखिरी लड़ाई छेड़नेके फलस्वरूप शायद ऐसा घोर दमन हो कि सब हिम्मत हार बैठें; किन्तु तब भी मै आशा करता हूँ आश्रममें कोई ऐसा मिल जायेगा, जो आखिरतक जूझेगा। जब चारों ओर हिंसा फैली होगी, तब आश्रममें से कोई-न-कोई अहिंसाका साक्षी निकलेगा; मुझे आश्रमसे ऐसी आशा है, ऐसा मोह है। हो सकता है कि इस आशाका कोई आधार न हो। जिससे आशा हो, वह निराश करे; स्वप्नमें भी जिससे आशा न की हो, वह आशातीत काम कर जाये। कुछ भी हो, मै तो अपना मोह प्रकट करता हूँ; अपनी आशा कहाँ है, सो बताता हूँ। मेरी प्रार्थना तो यह है कि देशमें अनेक अहिंसक, सत्याचारी, बलिदानी वीर पैदा हों। पर ऐसी प्रार्थना सफल न हो तो भी मुझे इतना मोह तो है कि आश्रम कुछ-न-कुछ ऐसे नर पैदा करेगा। इसलिए आश्रमका त्याग मेरे लिए बहुत भारी बात है। पर यह त्याग मैं स्वार्थत्यागके लिए ही करूँगा; इसमें सेवा करनेके अवसरका त्याग नहीं होगा। जिस हेतुसे त्याग किया है वह त्याग उस हेतुको हानि पहुँचानेवाला न होगा।

लाल बँगलेके विरोधमें तो मुझे कोई सार नहीं दिखाई देता। लाल बॅंगलेका दोष इतना ही है कि वह आश्रमके पड़ोसमें है। वह आश्रमसे बिलकुल अलग है। आश्रमका कोई काम हो, परन्तु वहाँ रहना न हो, तो मैं लाल बंगलेमें क्यों न रहूँ? अगर विद्यापीठमें रहनेमें दोष नहीं है, अम्बालाल भाईके घर रहनेमें दोष नही है, तो लाल बंगलेमें क्यों नहीं रहा जा सकता?

सच तो यह है कि मैं अहमदाबाद आते-जाते आश्रममें ठहरूँ, तो उसे भी मै प्रतिज्ञा-भंग नहीं मानूँगा। पर इससे लोगोंमें बुद्धिभ्रम पैदा होगा, इसलिए वहाँ

१. यहाँ नहीं दिया जा रहा है। पत्र-लेखकने गांधीजीकी स्वराज्य मिलनेके पूर्व आश्रममें न लौटनेकी प्रतिज्ञाका उल्लेख किया था। देखिए खण्ड ४३, पृष्ठ ६४-६५ तथा खण्ड ४५, पृष्ठ ४४८ भी।

रहनेका विचार छोड़ दिया, और अब अनुभवसे पता चलता है कि मैंने ऐसा करके ठीक ही किया।

प्रतिज्ञाका अर्थ करनेमें हमें लकीरका फकीर नहीं बनना चाहिए। अक्षरपर जोर देनेके बजाय उसकी भावनाकी परीक्षा करनी चाहिए। प्रतिज्ञाका अर्थ करनेका स्वर्ण नियम यह है: एकसे अधिक अर्थ निकलते हों तो अपने लिए सुविधाजनक अर्थका त्याग करना और कष्टदायक अर्थ निकलता हो तो कष्ट सहकर भी उस अर्थ पर डटे रहना। इसलिए सेवाका लाभ उठानेके लिए आश्रममें रहना ठीक नहीं है; वहाँ इसलिए नही जाना चाहिए। भूख लगी हो, और आश्रम पास हो, इस कारण मैं वहाँ खाने के लिए नही जा सकता। जबतक कहीं दूसरी जगहसे खानेको न मिले उस वक्त तक भूखको सहन किया जाये।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २६-४-१९३१

३६. शारदा ऐक्ट[1]

एक पत्र-लेखक पूछते हैं:[2]

मेरी मतिके अनुसार इनका जवाब क्रमशः इस प्रकार है:

१. शिकायत लिखवाई जा सकती है।

२. सच्चे पुरोहित धमकी या दबावसे कदापि न डरें।

३. अच्छा काम करते हुए जोखिम उठानी ही पड़ती है, इसलिए जहाँ कोई काम करना स्पष्ट कर्त्तव्य मालूम पड़े, वहाँ जानमालको खतरेमें डालकर भी कर्त्तव्यका पालन करना उचित है। इस प्रकार जानमालको जोखिममें कब डाला जाये, इसका निर्णय प्रसंगानुसार सबको स्वयंकर लेना चाहिए।

४. कांग्रेस सिर्फ राजनैतिक काम ही नहीं करती। जिससे लोगोंकी उन्नति हो, ऐसे सब काम करती है। इस बातको ध्यानमें रखते हुए सब राष्ट्रसेवक या राष्ट्र-सेविकाएँ अपने कर्त्तव्यके बारेमें निर्णय कर लें। निर्णय करनेका काम हमेशा सहज नहीं होता। बहुतेरे सुधार ऐसे हैं जिन्हें देशकी व्यापक उन्नतिकी खातिर छोड़ देना पड़ता है। इसलिए सवाल हमेशा यह उठता है कि इस सुधार-कार्यमें लगकर मैं अपनी व्यापक उपयोगिताको बढ़ाता हूँ या कम करता हूँ। यदि जवाबमें कम करनेकी सम्भावना दिखे तो उस सुधार-कार्यको अपनानेसे हिचकिचाना चाहिए।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २६-४-१९३१

१. इसके अनुसार विवाहके समय लड़केकी आयु १८ और लड़कीकी १४ वर्ष होनी चाहिए।

२. यहाँ नहीं दिये जा रहे हैं।

३७. स्वयंसेविकाएँ और खादी

नड़ियादमें एक स्वयंसेविका मण्डल है; वहाँ एक सवाल पैदा हो गया है। कुछ लोग कहते हैं कि स्वयंसेविकाएँ देशी मिलकी साड़ी वगैरा पहनकर धरना दे सकती हैं, अब कांग्रेसका काम करनेवालेके लिए खादी पहननेकी आवश्यकता नहीं है। यह विचार दोषपूर्ण है और देशी मिलकी साड़ी वगैराका उपयोग अवैध है। कांग्रेसका नियम करीब आठ सालसे चला आ रहा है। उसपर कई बार आक्रमण हुए, वार्षिक अधिवेशनोंमें उसपर जी-भरकर चर्चा हुई। फिर भी कांग्रेसके प्रतिनिधियोंने खादीकी धाराको बदलनेसे इनकार किया। इसलिए अब तो खादीकी रूढ़ि पुरानी हो गई है। इस नियम और रूढ़िको तोड़नेका अधिकार कांग्रेसके किसी भी सदस्यको नहीं है। इसलिए मेरे विचारसे तो उपर्युक्त प्रश्न उठना ही नही चाहिए था।

पर मुझे यह बताया गया है कि अगर खादीकी शर्तको नरम न बनाया गया तो स्वयंसेविकाओंकी संख्या बहुत कम हो जायेगी और शायद खेड़ा जिलेमें एक भी स्थानीय स्वयंसेविका ऐसी नहीं मिलेगी जो खादी पहननेको तैयार हो। अगर यह बात सच है, तो खेदजनक है। फिर भी खादीशास्त्रके प्रणेताके नाते मैं यह दुःख सहनेको तैयार हूँ। अगर खादीमें सचमुच शक्ति होगी और उसके पीछे तपश्चर्या होगी, तो खादीपर आई हुई यह नई आपत्ति भी टल जायेगी।

दुनियामें जहाँ-जहाँ लोगोंने सत्यका मार्ग छोड़ा है, वहाँ वे ऐसी कठिनाइयोंसे मुक्त हो गये हैं। सत्यका मार्ग छोड़नेमें कुछ आनन्द नहीं है। पर मनुष्य-स्वभाव कठिनाइयोंका सामना नही करता। वह आसान रास्तेकी खोजमें रहता है। आसान रास्ता नीचे ले जाता है, मुश्किल रास्ता ऊपर उठाता है। जो नियम भौतिक-शास्त्रके लिए सही है, वही आध्यात्मपर भी लागू होता है। चीज बड़े वेगसे नीचे गिरती है जब कि उसे ऊँचे ले जानेमें दम निकल जाता है। इसलिए विदेशी वस्त्रका बहिष्कार करनेकी उतावलीमें खादीको भूलना सत्य-मार्गको छोड़नेके समान है। प्रत्येक स्वयंसेवक और स्वयंसेविकाको याद रखना चाहिए कि इस मार्गको छोड़ देनेसे बहिष्कार कभी सफल होगा ही नहीं; और यदि हो सकता हो, तो उसमें कोई रस नहीं। विदेशी कपड़ेके बहिष्कारको हम धर्म समझते हैं, क्योंकि उससे हमें कम या ज्यादा अंशोंमें करोड़ोंकी भूख बुझती दिखाई देती है; और चरखा इसका उपाय है। चरखा अर्थात् खादी। इसलिए कांग्रेसका कोई स्वयंसेवक या स्वयंसेविका खादीको छोड़कर और कोई कपड़ा न तो पहन सकता है, न इस्तेमाल कर सकता है।

तो फिर मिलके कपड़ेका क्या हो? बिना सोचे-समझे ऐसा प्रश्न पूछनेवाले पड़े हैं। बहिष्कार आन्दोलनका जन्म देशी मिलोंके लिए नहीं हुआ है। खादी रूपी महा-वृक्षकी छायामें मिलोंका भी पोषण अवश्य हो जाता है। खादीकी चाल बीरबहूटीकी चालसे भी धीमी है। खादी अभीतक व्यापक नहीं बनी है। गाँव-गाँव और मुहल्ले-मुहल्लेमें अभी खादी नहीं मिलती। ऐसी स्थितिमें देशी मिलें आसानीसे अपना माल

खपा सकती हैं। परन्तु अगर वे खादीके साथ स्पर्धा करेंगी, तो वे और खादी दोनों नहीं रहेंगी। खादीको विज्ञापनकी सहायताकी, प्रदर्शनियोंकी आवश्यकता है, देशी मिलोंको नही। खादी-आन्दोलनसे सहज ही देशी मिलोंकी रक्षा हो जाती है।

इस वस्तुस्थितिको समझनेवाली स्वयंसेविका बहिष्कारका प्रचार करते हुए खादी पहननेको ही कहेगी, मिलके कपड़ेका इस्तेमाल करनेको कभी नहीं कहेगी। जो खादी पहननेसे इनकार करे, उनके भी मिलके कपड़े इस्तेमाल करनेका समर्थन नहीं करेगी। खादी-विरोधी दलीलोंका वह धैर्य और प्रेमके साथ खंडन करेगी और अन्ततक खादी पहननेकी ही सलाह देगी। वह निधड़क और निश्चयपूर्वक यही कहेगी कि "देशी मिलका कपड़ा आपके लिए नही — बल्कि जिन्होंने कांग्रेसका सन्देश नही सुना है, उनके लिए है।"

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २६-४-१९३१

३८. जानने योग्य प्रश्नोत्तर

एक साथीने उनसे पूछे गये नीचे लिखे प्रश्न भेजे हैं:

कांग्रेसने विदेशी कपड़े और सूतके बहिष्कारकी सूचना निकाली है; परन्तु विदेशी रुई-जैसे कच्चे मालकी छूट रखी है। इस छूटके पीछे कौन-सा सिद्धान्त है? हमारे देशमें काफी रुई पैदा होती है और उससे ४० नम्बर तकके सूतका काफी महीन कपड़ा बन सकता है; ऐसी दशामें विदेशोंसे रुई मँगानेकी छूट क्यों होनी चाहिए?

मैं नहीं जानता कि विदेशी रुईकी छूट रखी गई है। वैसे मैं स्वयं यह मानता हूँ कि महीन कपड़ा तैयार करनेके लिए विदेशी रुईकी जरूरत पड़े तो उसे मँगानेमें कोई हानि नहीं है। जिस कच्चे मालका उपयोग हम कर सकते हों, उसे परदेशसे मँगानेमें मुझे कोई हानि दिखाई नही देती। हमारा अनुभव है कि अपने देशका कच्चा माल, जिसका हम उपयोग कर सकते हों, बाहर भेजनेमें बहुत नुकसान है, परन्तु जिस प्रकार जितने मालका हम उपयोग नहीं कर सकते, उतना बाहर भेजनेमें लाभ है उसी प्रकार बाहरसे आवश्यकतानुसार कच्चा माल मँगानेमें भी लाभ हो सकता है।

विदेशी रुईकी छूटमें कच्चे विदेशी रेशमकी छूट भी शामिल है न? रेशम तो हमारे देशमें काफी मात्रामें पैदा नहीं होता, और वह पुराने जमानेसे चीन-जापानसे काफी परिमाणमें आता रहा है। और फिर इस कच्चे रेशमका ताना-बाना बनानेसे पहलेकी अनेक क्रियाएँ हमारे देशमें ही होती हैं। तो क्या कच्चा विदेशी रेशम मँगानेकी भी मनाही है?

कच्ची रुईकी तरह ही अगर कच्चा रेशम भी बाहरसे आता हो तो मँगाया जा सकता है। कच्चा रेशम यानी कोया। कोये बाहरसे आते हों और कोई उन्हें

मँगाये तो आर्थिक दृष्टिसे इसमें कोई आपत्ति नहीं होगी। हाँ, अहिंसाकी दृष्टिसे मुझे यह व्यापार पसन्द नही।

बढ़िया किस्मके ऊनी कपड़ेके लिए स्वदेशी मिलें ऊनके 'टाप्स' परदेशसे मँगाती हैं। ये 'टाप्स' लगभग पूनीकी हालतमें तैयार होकर आते हैं। कांग्रेस की नीतिके अनुसार रुईकी तरह क्या ये 'टाप्स' मँगानेकी छूट हो सकती है?

ऊनके 'टाप्स' के बारेमें मैं नहीं जानता। पर उपर्युक्त नियमके अनुसार जिस प्रकार हम विदेशी सूत या रेशमी धागा नहीं मँगा सकते, उसी प्रकार ऊनी 'टाप्स' भी नही मँगाये जा सकते। परन्तु इस सम्बन्धमें कोई अपवाद माना गया हो तो मै नही जानता।

कांग्रेसने विदेशी सूतके बहिष्कारकी सलाह दी है, इस सूतका ज्यादातर उपयोग हाथ-बुनाईमें किया जाता है, इसलिए अगर विदेशी सूतका बहिष्कार किया जाये और उसके बदले स्वदेशी सूत न मिले तो हाथ-करघोंपर बुननेवाले जुलाहोंमें बहुत अधिक बेकारी फैल जानेकी सम्भावना है, और कुछ जगहोंमें इसके स्पष्ट चिह्न भी उभरने लगे हैं। विदेशी सूत ज्यादातर ४० नम्बरसे ऊपरका आता है। हमारी मिलें या चरखें इतना महीन सूत शीघ्र ही पर्याप्त मात्रामें उत्पादन कर सकनेमें असमर्थ हैं। अतएव जबतक जुलाहोंतक ऐसा स्वदेशी सूत पहुँचानेकी पूरी व्यवस्था न हो जाये, तबतक सूतके बहिष्कारको रोके रखना आवश्यक है?

गुलामीमें फंसे हुए, कँगाल देशमें, इस सबसे मुक्त होनेकी कोशिश करते हुए किसी को कुछ तकलीफ ही न उठानी पड़े, यह कैसे हो सकता है? इतिहासमें कही इस तरहका दृष्टान्त नही मिलता। जो जुलाहे आज विदेशी सूत बुनते हैं, एक जमाना था जब उनसे कही अधिक संख्यामें जुलाहे हाथ-कता सूत बुनते थे। मेरी बात मानें तो मै फिलहाल इन बेकार जुलाहोंसे हाथका सूत ही बुनवाऊँ। ऐसी कठिनाइयोंके बारेमें इतना समझ लेना काफी है कि जिन्होंने विदेशी सूतका उपयोग किया है या उसका व्यापार किया है, उन्हें आज नुकसान हो या परेशानी उठानी पड़े तो यह उनके आजतकके दोषोंका प्रायश्चित्त है।

विदेशी सूतकी अपेक्षा विदेशी रेशमी सूत (स्पनसिल्क), जिसे 'गुल' कहा जाता है, और ऊनी सूतका प्रश्न कठिन इसीलिए अधिक है कि ये दोनों प्रकारके सूत देशमें तो तैयार ही नहीं होते और विदेशोंसे ही आते हैं। इनपर हजारों हाथ-करघे निर्भर हैं, इसलिए इनके बन्द होते ही बड़ी संख्यामें कारीगर लोग बेकार होने लगे हैं। दूसरी बात यह है कि इनसे बननेवाले कपड़ेकी कीमतका ६० से ७५ फीसदी हिस्सा देशमें रहता है। ऐसी दशामें क्या इस उद्योगको नष्ट करनेसे स्वदेशीको फायदेके बजाय नुकसान न होगा? और यदि नुकसान हो तो क्या जरूरी नहीं है कि इस सूतका बहिष्कार न किया जाये?

ऊपर इसका जवाब आ चुका है। महान् आन्दोलनोंमें बारीक बनियागिरीके हिसाब नहीं किये जाते। ऐसे हिसाबसे प्रचण्ड भावनाओंको धक्का पहुँचता है।

आप कहते हैं कि विदेशी कपड़ेका बहिष्कार खादी द्वारा ही हो सकता है; परन्तु पिछले साल जब यह बहिष्कार बहुत बड़े पैमानेपर शुरू हुआ तो खादी करीब-करीब खत्म हो चुकी थी, और बादमें जब खादी काफी तादादमें मिलने लगी तब बहिष्कार आन्दोलन बहुत आगे बढ़ चुका था। बहिष्कारकी इस सफलताके दो मुख्य कारण थे। एक तो हाथ तंग होनेसे और श्रीयुत विट्ठलभाई पटेलकी सलाहसे लोगोंने कपड़ेकी आवश्यकता कम की, और दूसरी ओर मिलोंने अपना उत्पादन खूब बढ़ाया। इस तरह मिलके कपड़ेने अधिकतर विदेशी कपड़ेका स्थान ले लिया –– इससे क्या आप यह अनुभव नहीं करते कि खादी उत्पादनकी अपेक्षा मिल कपड़ेकी वृद्धि और जनताकी घटी हुई आवश्यकता, इन दो साधनों द्वारा बहिष्कार विशेष रूपसे आसान हो सकता है?

जो सफलता मिली है, उसका श्रेय खादीकी भावना और गरीबोंकी सहायता करनेकी भावनाको है। देशी मिलें चाहे जितना अधिक उत्पादन करें, किन्तु अगर भावना न हो तो बहिष्कार नहीं हो सकता। नया कपड़ा न खरीदनेकी सलाह बिना भावनाके अपनाई ही नहीं जा सकती। खादीका अभाव तो एक-दो महीनेतक रहा। एक-दो महीनोंके बाद तो खादीका ढेरों उत्पादन होने लगा। यदि माँग हो तो चाहे जितनी खादीका उत्पादन थोड़े ही समयमें हो सकता है। क्योंकि खादीके लिए जो साधन तैयार हैं, वे देशी मिलोंमें कपड़ा उत्पादनके लिए उपलब्ध हो ही नहीं सकते। कुदरत खादीके अनुकूल है। देशी मिलों वगैराको कुदरतके खिलाफ जाकर श्रम करना पड़ता है; इसे मैं दोष नहीं गिनता। कुदरतके खिलाफ चलनेके लिए मनुष्यको बहुत कुछ करना पड़ता है, और कुछ हदतक वह जरूरी भी होता है। आज तो कुदरतको बीचमें डालकर और यह बताकर कि वह खादीके अनुकूल है, मैं वस्तुस्थितिका ही दर्शन करा रहा हूँ। हमने अनुभवसे यह देखा है कि खादीयुग आनेके बाद ही हम विदेशी वस्त्रके बहिष्कारको सम्भव मानने लगे और उसके बाद ही लोक-जागृति हुई। खादी हो तभी हम मिल-मालिकोंको कुछ हदतक स्वार्थके पंजेसे मुक्त रख सकते हैं।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २६-४-१९३१

३९. पत्र : जे० एच० गेरेटको

बोरसद
२६ अप्रैल, १९३१

आपका २४ तारीखका पत्र मिल गया।

मेरे पत्रके एक वाक्यको[1] उसके सन्दर्भसे काटकर इस तरह पेश करना कि उस अलग-थलग वाक्यका अर्थ अपने सन्दर्भमें निहित मूल अर्थसे कहीं व्यापक लगने लगे उचित नही कहा जा सकता। यदि आप कांग्रेसकी हैसियत समझौतेमें शामिल एक प्रतिनिधिकी मानते हैं तो यह कहाँतक उचित है कि मामलतदार, प्रतिनिधियोंसे सलाह किये बिना ही उस नोटिसके स्थानपर ऐसा नोटिस जारी कर दें जिसके सम्बन्धमें मैंने शिकायत की थी?

मुझे कहना पड़ रहा है कि हमारी भेंटके फलस्वरूप मुझे आपसे जिस मैत्रीपूर्ण सहयोगकी आशा थी, वह मुझे कहीं दिखाई नहीं दे रहा है। मैं फिर आपसे अनुरोध करता हूँ कि समझौतेके प्रति वही भावना रखिए, जिससे प्रेरितहोकर लॉर्ड इर्विनने समझौता किया था। आप जो मार्ग अपना रहे है वह झगड़ा बढ़ानेवाला है। मैं आपको आश्वस्त करता हूँ कि मैं समझौतेपर यथासम्भव अधिक-से-अधिक मैत्रीपूर्ण भावनासे अमल करना चाहता हूँ। क्या आप भी अपना हाथ आगे नहीं बढ़ायेंगे?

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, २०-८-१९३१

४०. पत्र : आर० एम० मैक्सवेलको

स्थायी पता,
बोरसद
२६ अप्रैल, १९३१

प्रिय श्री मैक्सवेल,

इस महीनेकी २४ तारीखके आपके पत्रके[2] लिए धन्यवाद। मैं श्री गेरेटके नाम इसी महीनेकी २० तारीखके अपने पत्रकी एक प्रति आपको नहीं भेज पाया; इसके लिए क्षमा चाहता हूँ। मैं अब उस त्रुटिकी पूर्ति करते हुए इसके साथ आपको उसकी एक प्रति तथा उल्लिखित परिपत्रका अनुवाद भी भेज रहा हूँ। इस प्रतिसे आप देख सकेंगे कि मैंने ऐसा दावा तो कभी नहीं किया कि सरकार और जनतामें

१. देखिए अगला शीर्षक।
२. देखिए परिशिष्ट २।

प्रति अपना दायित्व यथासम्भव पूरी तौरपर निभाये, मैं इसके लिए पूरी तरह प्रयत्नशील हूँ।

यदि कार्यवाहक गवर्नर महोदय समझें कि परस्पर चर्चा करनेसे कोई लाभ हो सकता है, तो वे जब भी ठीक समझें मुझे बुला सकते हैं।

हृदयसे आपका,

[अंग्रेजीसे]

अ० भा० कां० क० फाइल स० १६-बी, १९३१

सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय; **यंग इंडिया,** २०-८-१९३१से भी।

४१. पत्र : सतीशचन्द्र दासगुप्तको

बारडोली
२६ अप्रैल, १९३१

प्रिय सतीश बाबू,

बड़ी संख्यामें पत्र आकर पड़े थे; उनके उत्तर लिखनेका काम काफी समयसे पिछड़ा हुआ था। अब मुझे एक आशुलिपिकका सहयोग प्राप्त हो गया है। आशा है, मैं बकाया काम शीघ्र ही पूरा कर सकूँगा। हाँ, आजकल की तरह कुछ और दिन शान्तिपूर्वक बितानेके लिए मिलना जरूरी है। तुम्हारे पत्र शिक्षाप्रद होते हैं। मैं तुम्हारी इस बातसे पूरी तरह सहमत हूँ कि जबतक वातावरण स्वच्छ नहीं हो जाता, तुम धरना देनेका कार्य मुलतवी रखो। इसके कारण तुम्हारे सम्बन्धमें कोई भ्रान्ति पैदा होनेकी सम्भावना नही है। तुम्हारे इस विचारसे भी मै सहमत हूँ कि तुम्हें सभी दलोंसे बचकर चलना चाहिए। कृपया डॉ० रायको मेरा स्नेह दें। मैं आशा करता हूँ कि वे पूरी तरह ठीक हो गये होंगे। उन्हें अभी बहुतसे सेवा-कार्योंका संचालन करना है। 'राष्ट्रवाणी[1]'का प्रकाशन आरम्भ करते हुए तुम्हें इस सुनहरे नियमको नही भूलना चाहिए कि पत्रिकाको आत्म-निर्भर होना चाहिए।

आजकल क्या खाते हो और वजन कितना बढ़ा लिया है? यह सम्भव है कि मैं अभी कुछ दिन गुजरातमें ही रहूँ।

क्या श्री मुजीबुर्रहमानसे मिले थे? अगर मिले थे तो क्या हुआ?

हृदयसे तुम्हारा,

श्री सतीशचन्द्र दासगुप्त
१५, कालेज स्क्वेअर
कलकत्ता

अंग्रेजी (एस० एन० १७०१७) की माइक्रोफिल्मसे।

१. बंगला साप्ताहिक।

४२. पत्र : ई० स्टेनले जोन्सको

बारडोली
२६ अप्रैल, १९३१

प्रिय मित्र,

आपकी खुली चिट्ठी पाकर मुझे गहरा धक्का लगा। दुःख इसलिए भी ज्यादा हुआ कि इस तरहके समाचारकी सचाईपर स्वयं आपको यकीन नहीं था। और गलत-बयानीके कारण आपको स्वयं ही कष्ट भोगना पड़ा। यदि आप इतनी लम्बी चिट्ठी लिखनेके पूर्व केवल एक लाइन लिख देते तो आप और मैं ईश्वरका दिया कितना कीमती समय बचा पाते। जो कुछ हुआ है, उसके लिए 'गीता' की भाषामें कहें तो आप चोरीके अपराधी हैं और आपके इस व्यवहारसे एक मित्रका अहित हुआ है।

आपको यह जानकर प्रसन्नता होगी कि तीन अनजान मित्रोंने अधिक सावधानी से काम लिया। उन्होंने लिखकर पूछा कि क्या वह समाचार मेरे विचारोंको सही ढंगसे प्रस्तुत करता है। भविष्यमें जब कभी आप कुछ ऐसी बात सुनें जिससे आपके मनमें बनी मेरी आकृति बिगड़ती हो तो इस तरह खुली अथवा निजी चिट्ठी भेजनेकी अपेक्षा कृपया पहले मुझसे पूछताछ कर लें। अन्तमें मै यह कहूँगा कि यदि आपने कभी मुझे अपना स्नेह दिया है, मैं जानता हूँ कि आपने स्नेह दिया है, तो आपकी खुली चिट्ठीके बारेमें 'यंग इंडिया' में प्रकाशित मेरे लेखको[१] पढ़नेके बाद आपको यह लगेगा कि मेरे प्रति अपनी भावना बदलनेकी आपको कोई आवश्यकता नहीं है। और यदि आपके अनुसार मैं भूल भी करूँ, तो भी आप मुझे अपना स्नेह क्यों नहीं देंगे? क्या स्नेहके लिए भी किसी तरहका सोच-विचार जरूरी होता है?

हृदयसे आपका.

रेवरेंड ई० स्टेनले जोन्स
सतताल आश्रम, सतताल (जिला नैनीताल)

अंग्रेजी (एस० एन० १७०१५) की फोटो-नकलसे।

१. देखिए "विदेशी मिशनरी", २३-४-१९३१।

४३. पत्र : सरदार सुरेन्द्रसिंहको[1]

बारडोली
२६ अप्रैल, १९३१

प्रिय मित्र,

आपके पत्र तथा सिख लीगमें पढ़े जानेवाले आपके भाषणकी[2] प्रति मिली। इसके लिए धन्यवाद। आपके पत्रके कुछ अंशोंसे मै पूरी तरह सहमत हूँ। यदि हम साम्प्रदायिकताकी छायासे भी दूर रह पाते तो अच्छा होता। लेकिन ऐसा लगता है कि यदि निकट भविष्यमें कोई समझौता हुआ तो उसमें कुछ न कुछ अंशोंमें साम्प्रदायिकताकी भावना रहेगी।

मै उस व्यक्तिकी राष्ट्रीयताको समझ नहीं पाता जो राष्ट्रवादी केवल तभी रहता है जब अन्य सभी लोग राष्ट्रीय भावनाका पालन करें। ऐसा न हो तो उसकी भावना कट्टर साम्प्रदायिकतामें परिवर्तित हो जाती है।

आपको वयस्क मताधिकारसे जो डर है, वह मुझे नहीं है। हर प्रकारके मताधिकारका दुरुपयोग हो सकता है, पर वयस्क मताधिकारका कमसे-कम होता है। फिर मेरे पास एक प्रभावकारी तरीका भी है, जो कुछ अंशोंमें इस शरारतको रोक सकेगा। परन्तु इस समय उसके सविस्तार वर्णनकी आवश्यकता नहीं है।

मैं आपके इस विचारसे भी सहमत हूँ कि हमें जनताके लिए बड़े पैमानेपर शिक्षाकी सुविधाएँ जुटानी चाहिए। बच्चोंकी अपेक्षा उन वयस्क पुरुषों व स्त्रियोंकी शिक्षा अधिक जरूरी है जो अच्छा या बुरा कर सकनेकी शक्ति प्राप्त करने जा रहे हैं। मै सोचता हूँ कि यह शिक्षा कांग्रेसने चाहे सदा सफलताके साथ और सदा ठीक ढंगसे न दी हो, पर कुल मिलाकर तो सफलताके साथ और ठीक ढंगसे दी है।

कार्यकुशलता तथा सार्वजनिक ईमानदारीका सम्बन्ध बड़े वेतनोंके साथ जोड़नेको मै शासकोंका फैलाया एक मोह-जाल मानता हूँ। इस मोह-जालसे हम जितनी जल्दी छुटकारा पा सकें उतना ही अच्छा होगा। आजकलके सरकारी अफसरोंको प्रभावित किया जा सकता है और यह तो खुले आम रिश्वत लेनेसे अधिक घातक है। मैं देशके आज प्रशासनको कुशल नही मानता। हाँ, इससे यूरोपवासियोंके प्राणोंकी बन्दूककी नोकसे रक्षा जरूर होती है; पर सामान्य जनताकी नहीं। मैं समझता हूँ, इस देशमें ऐसे देशभक्त स्त्री-पुरुषोंकी कमी नहीं है जो, स्वतन्त्रता मिलनेपर, गुजारे लायक वेतन पर खुशीसे सेवा करेंगे। वह वेतन लाखों मेहनतकश, भूखे लोगोंको औसत आयसे बहुत अधिक नहीं होगा। अगर अज्ञान गरीबीका कारण है तो उसका उतना ही बड़ा कारण वह निर्मम शोषण भी है जिसकी कही मिसाल नहीं मिलती।

१. तत्कालीन कृषि विभागके एक सदस्य।

२. सिख लीगकी बैठक ८ अप्रैलको अमृतसरमें हुई थी।

इस प्रकार यद्यपि हमारा मतभेद है फिर भी मै आपके पत्र तथा उसके साथ भेजे भाषणकी कद्र करता हूँ। उन्हें मैंने पर्याप्त रुचिसे पढ़ा है। इसलिए अगर आप भविष्यमें कोई महत्वपूर्ण बात मुझे लिखना चाहें तो अवश्य लिखनेकी कृपा करें।

हृदयसे आपका,

सरदार सुरेन्द्रसिंह
पंजाब सिविल सेक्रेटेरिएट
लाहौर

अंग्रेजी (एस० एन० १७०१६) की फोटो-नकलसे।

४४. भाषण: अकोटीके ग्रामीणोंके बीच

२७ अप्रैल, १९३१

गांधीजी जब यहाँ आये तो गाँवके लोगोंने उन्हें बताया कि उनकी लगभग ५०,००० रुपयेकी धानकी फसल, जो गाँवकी प्रमुख उपज है, जब्त करके एक पारसीको १४०० रुपयेमें बेच दी गई है। उनके पास जीवन-निर्वाहका और कोई साधन नहीं है। कांग्रेससे मिलनेवाली सहायतापर ही वे गुजर कर रहे हैं। इसपर भी मामलतदार उन्हें लगान जमा करानेको कह रहे हैं।

गांधीजीने कहा कि उनकी दशाको देखते हुए, समझौतेके अधीन उन्हें लगान जमा करानेके लिए कुछ समयकी मोहलत मिल सकती है। गांधीजीने उन्हें तथा गुजरातके अन्य किसानोंको सलाह दी कि अगर सम्भव हो तो वे लगान जमा करा दें। किन्तु यदि वे ऐसा नहीं कर सकते हैं, तो उन्हें लगान देनेसे इन्कार करनेसे डरना नहीं चाहिए तथा जो भी नतीजा निकले उसे शान्तिपूर्वक सहनेको तैयार रहना चाहिए।. . .

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २९-४-१९३१

४५. पत्र : एच० डब्ल्यू० एमर्सनको

स्थायी पता, बोरसद
२७ अप्रैल, १९३१

प्रिय श्री एमर्सन,

मै अपने पिछले पत्रके साथ एक महत्त्वपूर्ण पत्रकी[1] प्रति नहीं भेज पाया था। इसके लिए मैं क्षमा चाहता हूँ। अब उसे भेज रहा हूँ। इनके बाद और भी पत्र व्यवहार हुआ है। मनमें शंका उत्पन्न करनेवाली कुछ और भी बातें हैं; किन्तु उनका अभी उल्लेख करना जरूरी नहीं है।

आपको याद होगा कि भारत सरकारने बम्बई सरकारके प्रतिवेदनके आधार पर दमनकारी कदम उठानेकी छूट दे दी थी। उस प्रतिवेदनकी एक प्रति आपने मुझे दी थी। मैं आपको बतला ही चुका हूँ कि वह प्रतिवेदन कितना भ्रामक था और मेरी रायमें जनताने इस तथ्यके बावजूद कि स्थानीय अधिकारियोंने कई मामलोंमें समझौतेकी शर्तोको अबतक पूरा नहीं किया है, कितनी सदाशयताके साथ अदायगी की है। मैं साथमें एक सूची संलग्न कर रहा हूँ; उससे मेरे कथनकी पुष्टि हो जायेगी। ये दमनकारी नोटिस देनेके बजाय इन लोगोंके साथ कोई अच्छा बरताव किया जाना चाहिए था। आपका ध्यान मैंने जिन विषयोंकी ओर दिलाया है, यदि वे स्पष्ट न हों और यदि आप आवश्यकता महसूस करते हों, तो मुझे शिमला बुला सकते हैं और यदि आप मुझे शिमला बुलाते हैं, तो आवश्यक है कि कम-से-कम हमारी बात होनेतक तो सारी दमनकारी कार्रवाइयाँ आप बन्द करा दें।

समझौतेको भंग न होने देनेमें मुझे आपकी सहायताकी जरूरत है। मै लॉर्ड इर्विनको वचन दे चुका हूँ कि समझौता भंग न होने देनेकी दृष्टिसे मैं ऐसा कोई भी काम, जिसे न करना मेरे लिए अशोभनीय न हो, नहीं करूँगा। लेकिन ताली दोनों हाथोंसे ही बजती है। मैं यह मानते हुए आश्वस्त हूँ कि आप भी यदि आपसे बन पड़ा तो अपनी ओरसे इस समझौतेको, जिसे आपने बिलकुल ही उचित संज्ञा देते हुए, सज्जनोंका करार, कहा है, भंग नही होने देंगे।

हृदयसे आपका,

श्री एच० डब्ल्यू० एमर्सन
गृह-सचिव, भारत सरकार, शिमला

[अंग्रेजीसे]

अ० भा० कां० क०, फाइल संख्या १६-बी, १९३१ से; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय; **यंग इंडिया**, २०-८-१९३१ से भी।

१. देखिए "पत्र : जे० एच० गेरेटको", २०-४-१९३१।

४६. पत्र : आर० एम० मैक्सवेलको

बोरसद
२८ अप्रैल, १९३१

प्रिय श्री मैक्सवेल,

नमक-कानूनोंमें समझौतेकी शर्तोंके अनुसार ढिलाई करनेके लिए जारी की गई सरकारी हिदायतोंकी एक प्रति मुझे मेरे एक मित्रने दी है; लेकिन मैंने सरकारके इस निश्चयके बारेमें समाचारपत्रोंमें कुछ नहीं पढ़ा है। अपने साथियों या आम जनताको इस सम्बन्धमें कुछ सुझाने-समझानेका कार्य मैंने जान-बूझकर रोक रखा है; क्योंकि श्री एमर्सनने मुझे यह बताया था कि नमक-प्रशासनसे सम्बन्धित हिदायतें सार्वजनिक रूपसे प्रकाशित की जायेंगी। कृपया मुझे सूचित करें कि क्या बम्बई सरकार इस सम्बन्धमें सार्वजनिक रूपसे कोई निश्चित आदेश जारी करनेवाली है, ताकि मामलेसे सम्बन्धित लोग अपनी ठीक-ठीक स्थिति जान सकें। इस सम्बन्धमें मुझसे कई लोगोंने पूछताछ की है।

हृदयसे आपका,

श्री आर० एम० मैक्सवेल,
बम्बईके गवर्नर महोदयके निजी सचिव
महाबलेश्वर

[अंग्रेजीसे]

अ० भा० कां० क०, फाइल संख्या १६–सी, १९३१
सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

४७. तार : ठाकुरदास खुशालदासको[१]

[२८ अप्रैल, १९३१ के बाद]

अगर लोग तर्कयुक्त बात नहीं मानते तो आप फिलहाल उन्हें उनकी मर्जीके मुताबिक कार्य करने दें।

[अंग्रेजीसे]

अ० भा० कां० क०, फाइल संख्या ३–ए, १९३१
सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

१. जिला कांग्रेस कमेटी, मिरपुरखास, (सिन्ध) के मन्त्री; उन्होंने अपने दिनाँक २८ अप्रैलके पत्रमें मीरपुर खासके कपड़ा-व्यापारियोंके कांग्रेसकी हिदायतोंके विरुद्ध सील लगे विदेशी कपड़ेको बेचनेके निर्णय और उसके उत्तरमें भूख-हड़ताल और धरना शुरू करनेके सत्याग्रहियों द्वारा लिए निर्णयके सम्बन्धमें गांधीजीकी राय माँगी थी।

४८. खेड़ा जिलेके किसानोंसे

[२९ अप्रैल, १९३१][1]

मैंने 'नवजीवन'[2] में लगान देनेके बारेमें लिखा है कि कर्ज लेकर लगान भरनेके लिए किसान[3] बाध्य नहीं है। यह टिप्पणी उस विषयको और भी अधिक स्पष्ट करनेके विचारसे लिख रहा हूँ।

(१) हिजरतमें गया हो या न गया हो, जिस सत्याग्रही किसानको सत्याग्रहमें भाग लेनेके कारण अच्छा खासा नुकसान हुआ हो, वह ब्याजपर कर्ज लेकर लगान अदा करनेके लिए बाध्य नहीं है।

(२) मेरी राय है कि जिन्होंने सत्याग्रहमें भाग लिया ही नहीं और जिनको सत्याग्रहमें भाग लेनेपर भी नुकसान नहीं हुआ, उन दूसरे सभी किसानोंका कर्त्तव्य है कि वे अबतक जैसा करते आये हैं, उसी तरह ब्याजपर भी पैसा लेकर फौरन लगान अदा कर दें।

(३) जिन किसानों पर पहली बात लागू होती है उन्हें जानना चाहिए कि उनकी रक्षा समझौतेके अनुसार चलनेमें है। मेरी ऐसी मान्यता होनेके कारण उनका लगान अगले वर्षतक मुल्तवी करानेका मैं पूरा प्रयत्न करूँगा। किन्तु यदि मेरा प्रयत्न निष्फल हो जाये तो सम्भव है कि उनको बहुत कष्ट उठाना पड़े। इसलिए यह सुझाव उन लोगोंके लिए नहीं है जो यह कष्ट सहन करनेके लिए तैयार न हो।

[गुजरातीसे]
नवजीवन, ३-५-१९३१

४९. पत्र : चारुप्रभा देवीको

बोरसद
२९ अप्रैल, १९३१

प्रिय चारुप्रभा,

तुम्हारा पत्र पाकर खुशी हुई। निश्चय ही अहिंसाके विषयमें तुम्हारे या मेरे विचारोंसे मतभेद रखनेवाले तरुणोंके साथ काम करनेसे तुम्हें इन्कार नहीं करना चाहिए। बल्कि तुम्हें आशा यह करनी चाहिए कि तुम अपने स्नेहके बलपर और उससे भी कहीं अधिक अपने नित्य-प्रतिके आचरणमें अपने तरीकेसे कार्य-साधकता

१. ३०-४-१९३१ के **हिन्दू**के अनुसार।
२. १९-४-१९३१ के अंकमें, देखिए १३-१४।
३. गृह-विभागकी राजनीति सम्बन्धी फाइलमें उपलब्ध अनुवादमें इस शब्दकी जगह 'खातेदार' है।

सिद्ध करके उनका हृदय-परिवर्तन कर सकती हो। मुझसे लम्बे-चौड़े पत्रोंकी आशा न रखना। अशुद्ध अंग्रेजीके लिए क्षमा-याचनाकी कोई आवश्यकता नहीं है। किसी विदेशी भाषामें गलती करनेपर हमें लज्जाका अनुभव किसलिए हो? फिर भी मैं इतना अवश्य चाहूँगा कि तुम हिन्दी सीख लो और हिन्दीमें लिखने लगो। हिन्दी तुम बहुत जल्दी सीख सकती हो।

बापू

चारुप्रभा देवी
राजबाड़ी (बंगाल)

अंग्रेजी (जी० एन० ८७०१) की फोटो-नकलसे।

५०. पत्र : सी० एफ० एन्ड्रयूजको

[स्थायी पता] साबरमती[1]
२९ अप्रैल, १९३१

आपके कई पत्र[2] मिले। ऊपरसे ऐसा लग सकता है कि मैंने आपकी उपेक्षा की है। सच तो यह है कि मुझे समय ही नहीं मिला। कराचीने मुझे थका डाला और बिलकुल ही त्रस्त कर दिया। थकावट अभीतक पूरी तरह नहीं गई है। मुझे दिनमें दो या तीन बार सोना पड़ता है, ताकि मैं आवश्यक कामोंको पूरा करनेके लिए तरोताजा हो सकूँ।

आशा है, आपकी बहन अगर पूरी तरह नहीं, तो कम-से-कम पहलेसे तो स्वस्थ है। उसे मेरा स्नेह दें।

आपने यह मान लिया है कि मैं लन्दन जा ही रहा हूँ। मै जानेकी बात निश्चयपूर्वक नही कह सकता; और इतना निश्चित है कि यदि हिन्दू-मुस्लिम समस्या का समाधान न हुआ तो मैं लन्दन नहीं जाऊँगा। अभी ऐसी सम्भावना नजर नहीं आती। इसके अलावा गुजरातमें तो खुद समझौतेके ही पूरी तरह भंग हो जानेका जबर्दस्त खतरा है। यों, मै तो पूरा प्रयत्न कर रहा हूँ कि यहाँका अधिकारी वर्ग समझौतेका पालन करे। लेकिन संघर्ष अत्यन्त ही कठिन है। आप जानते ही है कि अधिकारी लोग राजस्वके मामलोंमें कितनी मुश्किलसे थोड़ा-सा भी सुननेको तैयार होते हैं। पर यदि मैं वहाँ आया और अपने मनकी कर सका तो मैं म्यूरियल लेस्टरका निमन्त्रण स्वीकार करना चाहूँगा। अगर आप समझते हों कि यह ठीक नहीं होगा और घनश्यामदासके होस्टलमें रहना ही ज्यादा ठीक रहेगा, तो आप उनसे मिल लेनेकी कृपा अवश्य करें।

१. गांधीजी ११ मई तक बोरसदमें थे फिर शिमला चले गये थे। इस पत्रमें और अन्य पत्रोंमें भी यह पता केवल उत्तर प्राप्त करनेकी सुविधा की दृष्टिसे दिया था।
२. इंग्लैंड और अमेरिकासे लिखे गये पत्र।

और अब ट्रान्सवालकी समस्या। यह समस्या तो दिनोंदिन कठिन बनती जा रही है। मेरी समझमें भारत जबतक स्वाधीनता प्राप्त नहीं कर लेता, तबतक इस समस्याका निकट भविष्यमें कोई समाधान नहीं निकल सकेगा। हाँ, वहाँ रहनेवाले भारतीयोंको जैसे-तैसे अपना अस्तित्व तो बनाये ही रखना पड़ेगा। उनमें सूझबूझ तो बहुत है, परन्तु उनको गरीबीमें ही दिन काटने पड़ेंगे। फिर भी जो-कुछ हम कर सकते हैं, हमें करना चाहिए। मैं जानता हूँ कि इस सिलसिलेमें सबसे अधिक योगदान आपको ही करना है। इस दिशामें कुछ करनेकी मुझमें तो जैसे क्षमता ही नहीं रह गई है। किन्तु भेंट होनेपर हम लोगोंको इस परिस्थितिपर चर्चा अवश्य करनी चाहिए और हो सकता है, मैं इस परिस्थितिसे निबटनेका कोई कारगर उपाय भी सुझा सकूँ।

आशा है, 'यंग इंडिया'की प्रति आपको ठीक-ठीक मिल रही होगी। मेरा यह पत्र उस साप्ताहिक पत्रका एक परिशिष्ट-मात्र है।

श्री सी० एफ० एन्ड्रयूज

अंग्रेजी (एस० एन० १७०२४) की फोटो-नकलसे।

५१. पत्र : सी० विजयराघवाचारियरको

बोरसद
२९ अप्रैल, १९३१

प्रिय मित्र,

घनश्यामदास बिड़लाने कहा था कि कुछ पंक्तियाँ ही क्यों न हों, मैं आपको पत्र अवश्य लिखूँ। पर मैं लिख नहीं पाया; रोज ही काफी बड़ी संख्यामें आनेवाले पत्रोंको पिछले सप्ताहतक तो मैंने देखना लगभग छोड़ ही रखा था। प्यारेलाल और महादेवने उन पत्रोंके उत्तर अपनी इच्छाके अनुसार दिये थे और मैं जानता था कि आप भी मेरी इतनी अधिक व्यस्ततामें मुझसे पत्र की आशा नहीं रखेंगे। अब जाकर कुछ पत्र लिखवानेकी फुरसत मुझे मिली है; तो सवाल है कि मैं आपको क्या लिखूँ? आप यह क्यों समझते हैं कि यदि आपके तार या पत्रोंकी प्राप्ति-स्वीकृति नहीं पहुँची तो उनपर विचार भी नहीं किया गया? विचार उनपर किया गया था। दुर्भाग्यकी बात यह है कि आपका सुझाव स्वीकार नहीं किया जा सका। सर तेज बहादुर सप्रू-जैसे विधि विशेषज्ञने सजाओंकी[1] वैधताके बारेमें वाइसरायके साथ बारीकीसे बातचीत की थी और आप जानते ही हैं कि उनका वाइसरायपर कितना प्रभाव है। लेकिन वह सब भी निष्फल ही रहा। इसलिए कांग्रेसके सामने एक ही चारा रह गया था; और फिर उसे वैसा ही रुख

१. भगतसिंह, सुखदेव और राजगुरुकी।

अपनाना पड़ा। अतः मैं आपसे अनुरोध करूँगा कि आप इसका दुःख न मानें। याद रखिए; अब कांग्रेसपर नई पीढ़ीके लोगोंका प्रभुत्व है। ये लोग कानूनी तौर-तरीकों की परवाह नहीं करते। उन्होंने अपने अनुभवसे देखा है कि आजादी प्राप्त करनेके लिए ये कानूनी तौर-तरीके कितने प्रभावहीन सिद्ध हुए हैं और अपने कटु अनुभवों द्वारा उन्होंने यह भी जान लिया है कि आजादीको मर्यादित करनेमें ये कानूनी फंदे कितने शक्तिशाली रहे हैं। इसलिए यह मानकर कि ये नौजवान, स्त्री-पुरुष कुल मिलाकर एक सही दिशामें जा रहे हैं, आप इन्हें आशीर्वाद देकर ही सन्तोष क्यों नही करते? लेकिन इसका अर्थ यह भी नहीं कि आप कांग्रेसको — विशेषकर मुझे अपनी बहुमूल्य सलाहसे वंचित रखें। आप यह मानकर अवश्य न चलें कि आपकी हर सलाहपर अमल किया ही जायेगा। मैं आशा करता हूँ कि वृद्धावस्थाके प्रभावके बावजूद आप चंगे हैं; और देशमें होनेवाले भारी परिवर्तनोंको समझते चल रहे हैं।

हृदयसे आपका,

श्री सी० विजयराघावाचायिर
आराम
सेलम

प्रतिलिपि : घनश्यामदास बिड़लाको

अंग्रेजी (एस० एन० १७०२२)की फोटो-नकलसे।

५२. पत्र : आर० बी० ग्रेगको

[स्थायी पता] साबरमती
२९ अप्रैल, १९३१

प्रिय गोविन्द,

तुम्हारा पत्र मिला। मैंने उसे मीराको भी पढ़कर सुनाया। मीराको लिखे अपने पत्रमें तुमने जो चिन्ता व्यक्त की है, मै उसे समझता हूँ और ठीक भी मानता हूँ। मैं नही जानता कि मेरा लन्दन जाना होगा भी या नहीं। अगर मुझे साफ तौरपर यह नही लगता कि मैं वहाँ पहुँचकर अपनी बात लोगोंको समझा सकूँगा, तो मैं बिलकुल नहीं जाऊँगा। मुझे शुरूसे ही लगता रहा है कि अभी इस समय मेरी बात स्वीकार किये जानेकी कोई सम्भावना नहीं है। फिर भी यदि कांग्रेस सुलहकी शर्तोंपर चर्चा करनेका प्रस्ताव स्वीकार न करती, तो अपनेको गलत स्थितिमें डाल लेती। लेकिन उसे स्वीकार करनेसे अब हम सब ओरसे सुरक्षित हैं। अगर वार्ता द्वारा स्थायी शान्तिकी स्थापना हो सकती है तो यह बहुत अच्छी और शानदार बात होगी। इसलिए मैं इसे पानेके लिए कोशिश करनेमें कोई कसर नहीं रहने दूंगा। वार्ता निष्फल रही, तो भी स्थिति उतनी ही अच्छी और शानदार रहेगी। वह स्थिति

भारतकी कसौटी होगी और तब उसे कहीं अधिक कष्ट सहन करनेकी अपनी क्षमताका परिचय देना होगा। भोज या अन्य प्रकारके स्वागत-समारोहोंमें मेरे आमन्त्रित किए जानेका सवाल ही पैदा नहीं होता। मैं कुछ खा नहीं सकता और मेरी लँगोटीके कारण मुझे बर्नमकी प्रदर्शनीकी[1] किसी शानदार चीजकी भाँति प्रदर्शित भी नहीं किया जा सकता। इसलिए यदि मैं लन्दन गया तो केवल ठोस कामके लिए और वहाँ कतिपय गिने-चुने मित्रोंके हार्दिक स्नेहका रसपान करनेके लिए ही जाऊँगा। वहाँ क्या होगा — मैं ऐसी अटकलबाजीमें नहीं पड़ता। ईश्वर मुझे जहाँ भी ले जायेगा, वहाँ मैं इसी विश्वासके साथ जाऊँगा कि अपने निर्देशित मार्गपर चलनेसे सब-कुछ ठीक हो जायेगा।

मेरी अमेरिका-यात्राके सम्बन्धमें फैली अफवाहोंपर विश्वास मत कीजिए। मनमें उस महान देशकी यात्रा करनेकी इच्छा तो बहुत है, परन्तु मैं जानता हूँ कि अभी उसका समय नहीं आया। मै वहाँ चार दिनके लिए एक अजूबा बनने ही नहीं आना चाहता।

तुमको और राधाको स्नेह।

हृदयसे तुम्हारा,
बापू

श्री आर० बी० ग्रेग
५४३, बायलस्टन स्ट्रीट
बोस्टन, मैसाच्युसेट्स

अंग्रेजी (जी० एन० ४६६३)की फोटो-नकल तथा एस० एन० १७०२३से भी।

५३. पत्र : जमनादास गांधीको

बोरसद
२९ अप्रैल, १९३१

चि० जमनादास,

तू तो बिलकुल पत्र नहीं लिखता, ऐसा क्यों? मैं तुझे पत्र लिख नही सकता, किन्तु तेरा खयाल तो आता ही रहता है। तेरी मानसिक दशा कैसी है? माता-पिता कैसे हैं? पाठशाला कैसी चल रही है? जेलका कोई अनुभव लिखना। नया राजा कैसा है? पुरुषोत्तमको पत्र लिखनेको कहना।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९२९१)की फोटो-नकलसे।
सौजन्य : जमनादास गांधी

१. १८५१ के आसपास इंग्लैंडमें बर्नम प्रदर्शनियाँ अपने प्रदर्शनोंके अतिशयोक्तिपूर्ण विज्ञापनोंके लिए प्रसिद्ध थीं।

५४. पत्र : घनश्यामदास बिड़लाको

बोरसद
२९ अप्रैल, १९३१

भाई घनश्यामदास,

आपके दो पत्र मीले हैं। विजयराघवाचारीजीको पत्र[1] लिखा है उसका नकल भेजता हुँ।

हिंदु-मुस्लीम बारेमें क्या लिखुं? नवाबसाहब भोपाल काम कर रहे हैं। जब मौका मिले तब कोई भी मुसलमान मिले उसकी सेवा करना। सेवाका मतलब आर्थिक सहाय नहिं है। योग्य गरीब मुसलमान मिल जावे उसे आर्थिक सहाय देना वह तो है हि। और हिंदुमें जो गुंडाबाजी पैदा हुई है उसको दूर करनेकी चेष्टा करना भी कर्त्तव्य है। जो अत्याचार कानपुरमें और काशीमें हिंदुसे हुए उससे हिंदु धर्मको लाभ नहिं हुआ है, हानि अवश्य हुई है।

मेरा विलायत जाना होगा या नहिं कुछ पता अब तक तो नहिं है। यहांका मामला गंभीरसा है।

आप अमेरीका अवश्य जाइये। जानेसे कुछ लाभ हि होगा।

विदेशी वस्त्रके बहिष्कारके बारेमें जो कुछ शक्य हो करो।

मेरा स्वास्थ्य अच्छा है।

बापू

सी० डब्ल्यू० ७८८५ से।
सौजन्य : घनश्यामदास बिड़ला

५५. मेरी लँगोटी

दिल्लीमें व्यापार मण्डलकी सभाके सामने मैंने कहा था कि भारतीय संस्कृतिको हमें पश्चिमी सभ्यताके हमलेसे नष्ट नहीं होने देना चाहिए। इस कथनसे एक आलोचक बिगड़ उठे हैं। उन्होंने पहले तो भारतीय संस्कृति और लंगोटीको अभिन्न मान लिया है और फिर उसकी निन्दा की है। चर्चिलने सारी दुनियामें मेरी लँगोटीका विज्ञापन करनेकी अयोचित कृपा की है। इसलिए, उक्त टीकाकारकी तरह उसका मजाक उड़ानेका रिवाज-सा पड़ गया है। ऐसी हालतमें उसका अर्थ समझा देना ठीक होगा।

१. देखिए पृष्ठ ५३-५८।

सन् १९२१ में मौलाना मुहम्मद अली और मैं दक्षिण भारतकी यात्रा कर रहे थे कि वालटेरमें मौलाना गिरफ्तार कर लिये गये।[1] पर उनकी बेगम हमारे साथ थी। मौलानाको इस तरह उनसे जुदा कर दिया गया। मेरे दिलपर इसका गहरा असर पड़ा। बेगम साहिबाने बहादुरीके साथ इसे सहा और वे मद्रासकी सभाओंमें हाजिर रहीं। उन्हें मद्रासमें छोड़कर मैं मदुरा गया। मैंने रास्तेमें देखा कि डिब्बोंमें लोगोंकी जो भीड़ थी, उसपर इस घटनाका कोई असर नहीं है। लगभग सभी रंग-बिरंगे विदेशी कपड़े पहने हुए होते थे। चूँकि अलीभाइयोंको छुड़ानेके लिए मेरे पास खादीके सिवा और कोई रास्ता न था, इसलिए उनमेंसे कुछके साथ मैंने बातें कीं, और उनसे खादी पहननेके लिए कहा। उन लोगोंने तो सिर हिलाकर कहा — हम इतने गरीब हैं कि खादी नहीं खरीद सकते, खादी तो बहुत महँगी है। इस बातके मूलमें छिपे हुए सत्यको मैं पहचान गया। मैं कुर्त्ता, टोपी और पूरी धोती पहने था। ये लोग जब इस अर्द्ध-सत्यका उच्चारण कर रहे थे, तभी चार इंच चौड़ी और करीब चार फुट लम्बी लंगोटीको छोड़कर, जो करोड़ों लोग विवशताके कारण नंगे ही रहते हैं मानो अपने खुले शरीरके द्वारा इस नग्न सत्यका उच्चारण कर रहे थे। मुझे लगा कि सभ्यताका त्याग किये बिना यदि मैं अनावश्यक एक-एक इंच कपड़ेका त्याग कर सकूँ, तो उन करोड़ों अधनंगे लोगोंके रहन-सहनके अधिक समीप होकर उनसे अपनेको जोड़ सकूँगा। इसके सिवा और अधिक पुरअसर जवाब मैं उन लोगोंको क्या दे सकता था? फलतः यह परिवर्तन मैंने मदुराकी सभाके बाद दूसरे दिन[2] सवेरे ही कर डाला।

इसलिए इसमें लँगोटीवाली सभ्यताका तो सवाल ही नहीं है। लँगोटी पहननेके सिवा मेरे पास और कोई चारा ही न था। परन्तु जिस हदतक लँगोटी सादगीकी निशानी है, उस हदतक वह भारतीय संस्कृतिका प्रतीक भी मानी जा सकती है। भारतीय संस्कृति संस्कृतियोंका मिश्रण है। ये संस्कृतियाँ भिन्न-भिन्न धर्मोंसे निकलकर भौगोलिक तथा दूसरे जिस प्रकारके भिन्न वातावरणमें पहुँची हैं उनके कारण उनका रूपान्तर हो गया है। इस प्रकार मुसलमानी सभ्यताका रूप, अरब, तुर्की, मिस्र और हिन्दुस्तानमें एक ही नहीं है, बल्कि उसपर विभिन्न सम्बन्धित देशोंकी परिस्थितियोंका असर पड़ा है। इसी अर्थमें भारतीय संस्कृति भारतीय ही है। वह न सम्पूर्णतया हिन्दू संस्कृति है, न इस्लामी और न कोई दूसरी। वह सब संस्कृतियोंका मिश्रण है और सच्चे अर्थोंमें पूर्वकी संस्कृति है। मेरे मनमें तब भारतीय संस्कृतिका यही अभिप्राय था। अपनेको भारतीय कहलानेवाले हरएक स्त्री-पुरुषका धर्म है कि वह इस संस्कृतिको अपनाये, इसका रक्षक बने और इसपर होनेवाले आक्रमणोंका सामना करे।

निस्सन्देह यूरोपकी सभ्यता यूरोपीयनोंके लिए अनुकूल है; फिर भी अगर हम उसकी नकल करेंगे, तो उसका परिणाम हिन्दुस्तानका नाश ही होगा। इस बातका यह अर्थ नहीं है कि उनमें जो अच्छा और ग्राह्य हो वह भी न लें; उसी प्रकार

१. देखिए खण्ड २१, पृष्ठ १००-१०१।

२. २२ सितम्बर, १९२१, देखिए खण्ड २१, पृष्ठ १६३-६४।

इसका यह अर्थ भी नही है कि उनमें जो खराब बातें घुस गई हैं, स्वयं यूरोपियनोंको भी उनका त्याग नही करना पड़ेगा। शारीरिक सुखोंकी दृष्टिसे अविरत शोध और उनकी वृद्धि एक ऐसी ही बुरी प्रवृत्ति है; और मेरा ख्याल है कि जिन भोगोंके वे गुलाम बने जा रहे हैं यदि वे उनके भारसे दबकर तबाह न होना चाहते हों, तो स्वयं उन्हें भी अपनी जीवन-दृष्टिको नया रूप देना पड़ेगा। हो सकता है कि मेरा यह ख्याल गलत हो, पर इतना तो मैं जानता हूँ कि भारतवर्षका इस सोनेके हिरनके पीछे दौड़ना निश्चय ही मौतको गले लगाना है। 'सादा जीवन और उच्च विचार', एक पश्चिमी तत्त्ववेत्ताके इस सूत्रको हमें अपने हृदय-पटपर लिख रखना चाहिए। आज यह तो स्पष्ट है कि करोड़ों लोगोंको उच्च रहन-सहनकी प्राप्ति असम्भव है, और हम मुट्ठी-भर लोग जो जन-साधारणके लिए विचार करनेका दावा करते हैं — उच्च रहन-सहनकी मिथ्या खोजमें उच्च विचारको खो बैठनेका जोखिम उठा रहे हैं।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ३०-४-१९३१

५६. मरकर अमर हुए

श्रीयुत जी० वी० केतकरने महान् वीरताकी एक घटनाका हाल भेजा है, जो यहाँ उल्लेखनीय है:

> **श्री पुरुषोत्तम, जो बापू गायधनीके नामसे अधिक पहचाने जाते हैं, नासिकके एक नौजवान कार्यकर्त्ता थे। पिछले कुछ वर्षोंसे वह नासिककी गुलालवाड़ी सार्वजनिक व्यायामशालाके सहायक मन्त्रीका काम कर रहे थे। वे समय-समय पर कांग्रेस और स्वदेशी प्रचारके कामोंमें भी हाथ बँटाया करते थे। ४ अप्रैलको नासिकमें एक मकानमें आग लगी। बापू गायधनी आग बुझानेमें जुट गये और यह मालूम होनेपर कि मकानमें बालक रह गये हैं, परिणामकी तनिक भी चिन्ता न करके, वे मकानमें घुस पड़े और बच्चोंको निकाल लाये। वे फिर एक बार ढोरोंको बचानेके लिए घरमें घुसे। बदकिस्मतीसे इस वक्त तक आग चारों ओर फैल चुकी थी। एक जलता हुआ शहतीर अर्राकर उनके सरपर गिर पड़ा। वे बुरी तरह जल गये और सारे शरीरपर चोटें भी आईं। घायल दशामें वे अस्पताल पहुँचाये गये, वहाँ ११वीं अप्रैलको उनका स्वर्गवास हो गया।**

अगर बापू गायधनीके माता-पिता जीवित हैं तो उन्हें अपने ऐसे बहादुर पुत्र पर गर्व होना चाहिए। बापू गायधनी ऐसी भव्य मृत्यु पाकर अमर हो गये हैं।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ३०-४-१९३१

५७. गुजरातका किसान

'कुत्तेको पागल कहकर उसे गोली मार दो।' इसी तरह यह कहकर कि गुजरातका किसान सरकारी आज्ञाका अनादर करता है, उसे तबाह कर डालो। कुछ दिन पहले पत्र-प्रतिनिधियोंसे बातचीत करते हुए मैंने कहा था[1] कि श्री बेनने भ्रमित होकर जो यह कहा है कि गुजरातका किसान वचनका पालन नहीं कर रहा है, यह दुर्भाग्यकी बात है। दूसरे शब्दोंमें, वह लगान नहीं दे रहा है। जब पहली बार यह बात मेरे सामने आई तो मैं चौंक उठा, क्योंकि मुझे विश्वास था कि अभावोंसे ग्रस्त होनेपर भी गुजरातका किसान, समझौतेकी शर्तोंका अपने सामर्थ्यके अनुपातमें पूरी तरह पालन करेगा। समझौतेमें इससे अधिककी आशा भी नहीं रखी गई है।

दिल्लीमें मुझसे शिकायत की गई कि २८ फरवरीसे पहले बारडोली और वालोड तहसीलोंमें बड़ी-बड़ी रकमें जमा हुई थीं; किन्तु १५ मार्चको खत्म होनेवाले सप्ताहमें सिर्फ ३,२१२ ही जमा हुए। अभिप्राय यह था कि समझौतेके बाद बहुत कम लगान जमा किया गया।

७ मार्चके दिन समझौतेकी घोषणा हुई थी। सरदार वल्लभभाईके साथ मैं १४ मार्चके दिन बारडोली पहुँचा था। यह जाहिर है कि हमारे बारडोली पहुँचनेके पहले किसानोंसे किसी भी बातकी आशा नहीं की जा सकती थी, क्योंकि हमारे द्वारा परिस्थितिसे वाकिफ हुए बिना और अपने घरोंको लौटे बिना वे रकमें जमा कैसे कर सकते थे। अस्तु; नीचे अबतक जमा की गई रकमोंके आँकड़े दिये जा रहे हैं:[2]

मैं दावेके साथ कहता हूँ कि बारडोलीके किसानोंने बहुत ही अच्छी तरह अपना वचन निबाहा है; और यह भी उस हालतमें जब कि जब्त की हुई जमीनें अबतक लौटाई नहीं गई हैं, उनमें से कुछ बेची जा चुकी है, पुराने पटेल और पटवारी फिरसे नौकरीपर नही लिये गये हैं, सारेके-सारे लोग अभी जेलसे नहीं छोड़े गये हैं, और उनके विरुद्ध मामलोंका फैसला अभीतक मुल्तवी पड़ा है।

पर मुझे अपनी बात यही खत्म कर देनी चाहिए। मैं कहूँगा कि स्थानीय अधिकारियोंके साथ प्रेमपूर्ण व्यवहार स्थापित करनेमें बड़ी कठिनाईका सामना करना पड़ रहा है। नतीजा यह हुआ है कि कई बातें जो सरकारकी तरफसे बहुत पहले

१. देखिए "भेंट: पत्र-प्रतिनिधियोंको", १८-४-१९३१।

२. यहाँ नहीं दिये जा रहे है। आंकड़ोंमें दिखाया गया था कि १५ मार्च तक बारडोलीमें और वालोडमें क्रमशः २,५०० और २०,००० रुपये जमा हो चुके थे और फिर उसके बाद विभिन्न तारीखोंमें बारडोली तथा वालोडमें जमा रकमोंकी तफसील थी। उसके अनुसार २६ अप्रैल तक बारडोलीमें १,५४,४०७ रु० और वालोडमें ८३,५२८ रु० १२ आ० २ पाई जमा हो चुके थे। (विस्तृत तालिकाके लिए देखिए अंग्रेजी संस्करण)

हो जानी चाहिए थीं, अबतक नहीं हुई हैं, और यद्यपि लोग लगान जमा करनेको राजी हैं, दमनकी धमकियाँ उनके सिरपर कच्चे धागेसे बँधी तलवारकी तरह लटक रही हैं। इसका आरम्भ खेड़ा जिलेसे हुआ है। अधिकारी यह अनुभव करते दिखाई नहीं पड़ते कि अस्थायी ही सही, इस वक्त सरकार और जनतामें सन्धि हो गई है और इस बातकी कोशिश की जा रही है कि जो सुलह आज क्षणिक और अस्थायी है, वह स्थायी हो जाये।

हमारे रास्तेमें जबर्दस्त कठिनाइयाँ हैं। किन्तु मैं लॉर्ड इर्विनको यह वचन दे चुका हूँ कि एक मनुष्यके किए जितना हो सकता है, मैं उस हदतक सुलहको भंग होनेसे रोकूँगा। इस समझौतेको भलेमानसोंका इकरारनामा कहा गया है। मैं जानता हूँ कि लॉर्ड इर्विन सच्चे दिलसे इस बातके लिए चिन्तित थे कि सरकारी हाकिमों द्वारा समझौतेका पूरा पालन हो; और जैसा कि उन्होंने कई बार कहा था, कांग्रेससे समझौतेका पूरा पालन करानेकी जिम्मेदारी मेरी है।

लोगोंके सामने इतना कहते हुए भी मुझे दुःख तो होता है; पर मैं देखता हूँ कि मै इस हकीकतको अधिक समय तक नहीं छिपाये रह सकता कि वायुमण्डल में तूफानके आसार दिखाई पड़ रहे हैं। सत्याग्रहीके पास लोकमत और कष्ट-सहनके सिवा और कोई हथियार नहीं होता। पाठक इस लेखका उतना ही अर्थ लगायें, जितना मोटे तौरपर इसके शब्दोंसे निकलता है। मै आशा और प्रार्थना करता हूँ कि अगले हफ्तेमें मैं यह कह सकूँगा कि ये डरानेवाले बादल बिखर चुके हैं।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ३०-४-१९३१

५८. ग्रामवासियोंके प्रति हमारा कर्त्तव्य

पिछले वर्षके तीव्र राजनीतिक संघर्षने राष्ट्रीय स्वतन्त्रता संघर्षमें विदेशी वस्त्रोंके बहिष्कारका महत्त्व और भी उभारकर सामने रख दिया है। विदेशी वस्त्रोंके आयातमें आई गिरावट इस बातका प्रमाण है कि बहिष्कारका कार्यक्रम एक हदतक कारगर सिद्ध हुआ है। परिणाम सन्तोषजनक तो हैं, पर हमें इतनी सफलता प्राप्त करके और सन्तुष्ट होकर बहिष्कार आन्दोलनका सच्चा प्रयोजन और उसका वास्तविक अर्थ नहीं भुला देना चाहिए। हमें याद रखना चाहिए कि हमारा राष्ट्र गाँवोंकी लाखों-करोड़ों झोंपड़ियोंमें बसता है और बहिष्कार आन्दोलनका सच्चा और बुनियादी लक्ष्य तबतक पूरा नहीं होगा जबतक उसे इस ढंगसे क्रियान्वित नहीं किया जायेगा कि उसका अधिकांश लाभ गाँवोंके लोगोंको ही पहुँचे। उनको इससे लाभ तभी हो सकता है जब राष्ट्र हर प्रकारके देशी वस्त्रोंमें खादीको ही सबसे ऊँचा स्थान देने लगे।

ऐसा करनेके लिए जरूरी है कि हम अपनी रुचिमें तब्दीली करें। हमें मोटी, खुरदरी खादी अपनानी चाहिए। भारतमें पैदा होनेवाला कपास अधिकांशतया छोटे

रेशेका होता है, जिससे कम नम्बरका सूत ही तैयार हो सकता है। हमारे यहाँके कातनेवाले अधिकतर अपनी ही जरूरत या पासपड़ौसकी जरूरतोंके लायक सूत ही कातते रहे हैं और अधिकांश क्षेत्रोंमें वे मोटा सूत कातनेके अभ्यस्त हो गये हैं, इसलिए एकाएक उनके लिए अधिक महीन सूत कातने लगना मुश्किल है। लगभग समूचे उत्तर भारतमें यही हालत है। पंजाब, राजस्थान, यू० पी०, बिहार और बंगालमें जहाँ लाखोंकी तादादमें चरखे बेकार पड़े हैं या कुछ ही समयके लिए चल पाते हैं, वहाँ सिर्फ मोटी खादी ही तैयार की जा रही है। दक्षिण भारतमें महीन और मध्यम दर्जेकी खादी एक सीमित मात्रामें उपलब्ध हो जाती है; पर वहाँ भी खादी ज्यादातर मोटे सूतसे ही बनाई जाती है। अखिल भारतीय चरखा संघके तत्वावधानमें कुछ काम हो रहा है। काम काफी व्यापक भी हो रहा है, पर इन प्रान्तोंमें उत्पादनके लिए जितनी भी ज्ञात और सर्वथा निश्चित सुविधाएँ सुलभ हैं, संघ उसके दसवें भागको भी संगठित नहीं कर पाया। मोटी खादीके उत्पादनकी सम्भावनाएँ लगभग असीमित हैं और यदि देश समझ-बूझकर मोटी खादीको अपना ले, उसे तरजीह देने लगे तो निश्चय ही खादी उस स्थानपर विराज सकती है जहाँ अबतक विदेशी वस्त्र आसीन थे। इस राष्ट्रीय कार्यक्रमका लाभ देशकी जनताके विशाल समुदायको मिलेगा, केवल मुट्ठी-भर धनवानोंको नहीं।

चालू वर्ष और गत वर्षके दौरान देशकी आर्थिक स्थितिकी एक विशेषताने बहिष्कारकी दृष्टिसे खादीके आग्रहको और अधिक सबल बना दिया है। कपासकी कीमत असाधारण रूपसे कम हो जानेके कारण, बल्कि देखा जाये तो सभी कृषीय उत्पादनोंकी कीमतें बहुत ज्यादा गिर जानेके कारण गाँव एक बड़ी विपत्ति में ही पड़ गये हैं। कई चीजोंकी कीमतें तो इतनी गिर गई है कि उनसे खेतीकी लागत और अन्य खर्च भी नही निकल पाते। इसीलिए अपेक्षाकृत छोटे पैमानेपर कपासका उत्पादन करनेवालोंने अपने ही घरोंमें एक-दो चरखे चलवाकर अपनी कपाससे थोड़ी कुछ अधिक आय प्राप्त करनेकी कोशिश की है। इसी प्रकार और चीजोंकी खेती करनेवालोंने भी कताईके जरिए अपनी आय कुछ बढ़ानेकी कोशिश की है। नतीजा यह हुआ है कि देशके अनेक भागोंमें आसपासके गाँवोंसे लोग एक बड़ी संख्यामें अपने पासके खादी भण्डारमें सूत बेचने पहुँच जाते हैं। गत वर्षके पहले भी हाथ-कता सूत इतनी मात्रामें सुलभ रहता था कि मौजूदा खादी-भण्डारोंको उसकी बुनाईका प्रबन्ध कर पाना मुश्किल लगता था। लेकिन अब तो स्थिति और भी कठिन बन गई है। खादी-भण्डारोंके पास पूंजी थोड़ी-सी ही रहती है, इसलिए वे सारा-का-सारा सूत खपा नही पाते और इसलिए उन्हें अनेक कतैयोंको निराश करना पड़ता है। यदि खादीकी माँग बढ़ाई जा सके तो खपत बढ़नेपर खादी-भण्डारोंसे कतैयोंको कहीं अधिक राहत पहुँचाई जा सकती है। उस दशामें निजी पूँजी भी अधिक मात्रामें खादीकी ओर आकर्षित होगी; गत वर्ष एक सीमातक ऐसा हुआ भी था। इसलिए बहिष्कार आन्दोलन और वर्तमान संकटमें फौरी राहत — इन दोनों ही दृष्टियोंसे देशका स्पष्ट कर्त्तव्य है कि वह खादीको प्राथमिकता दे और उसे अधिक अपनाये।

मोटी होनेके कारण खादीकी धोती या साड़ी पहननेमें जिन लोगोंको कठिनाई अनुभव होती है, यदि वे भी एक बड़ी संख्यामें अपनी अन्य आवश्यकताओंके लिए — तौलियों, कमीजों, कोटों, चादरों, दरियों और इसी तरहकी अन्य जरूरतोंके लिए खादीका प्रयोग शुरू कर दें तो यही नहीं कि आज तैयार होनेवाला सारा-का-सारा हाथ-कता सूत खप सकता है, बल्कि उसकी खपत वर्तमान उत्पादनसे भी कई गुनी अधिक बढ़ जायेगी। खादीकी सारी सम्भावनाओंको समझनेके लिए केवल ठीक सूझबूझसे काम लिया जाना है। यदि हम अपना पहनावा देशकी जलवायु और गाँवके लोगोंके साधनोंके अनुकूल बना लें, तो हम स्वयं कई तरह की पोशाकोंका पहनना त्याग देंगे, धोती या साड़ीकी लम्बाई घटा देंगे, साफेकी जगह टोपियाँ काममें लाने लगेंगे। इस सबसे आजकी अपेक्षा हमें ज्यादा आराम भी मिलेगा और एक सुथरापन भी हासिल होगा; इसके सिवा वस्त्रोंके खर्चमें जो बचत होने लगेगी, वह तो अलग ही है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ३०-४-१९३१

५९. सच क्या है?

कारवाडके श्री एस० डी० नाडकर्णीके एक पत्रका कुछ अंश नीचे देता हूँ:

अभी-अभी मैंने पढ़ा है कि आपको लिखे गये एक पत्रमें, जो अखबारोंमें छप चुका है, सर्वदलीय मुस्लिम सम्मेलनके एक नेता श्री मुशीर हुसैन किदवईने मिस्रकी अल्पमतवाली कौमके सवालके बारेमें लिखते हुए कहा है कि, "मेरी रायमें मिस्रमें जगलुलने जो रुख अख्तियार किया था, वही यहाँके हिन्दुओंका होना चाहिए; यानी उन्हें आँख बन्द करके अल्पमतवाली कौमकी माँगोंपर दस्तखत कर देना चाहिए . . . .।

श्री किदवईके उक्त पत्रकी अन्य किसी बातका जिक्र किए बिना मैं सिर्फ उसी बातकी सचाईकी ओर आपका ध्यान आकर्षित करना चाहता हूँ, जहाँ उन्होंने मिस्रकी राजनीतिका एक दृष्टान्त देते हुए तुलना की है। मैं १५ अगस्त १९२९ के 'सर्वेंट ऑफ इंडिया' के अग्रलेखकी कतरन साथमें भेजता हूँ। उसमें लेखकने उन्हीं दिनों सर इब्राहीम रहमतुल्लाकी एक ऐसी ही बातके जवाबमें जो-कुछ लिखा है, उससे पता चल जायेगा कि मिस्र, जहाँ मुसलमानोंकी कौम बहुसंख्यक है, और कॉप्ट कही जानेवाली वहाँके ईसाइयोंकी अल्पसंख्यकोंकी स्थितिके बारेमें श्री किदवई जिसे तथ्यके रूपमें आपके सामने रख रहे हैं, वस्तु-स्थिति उसके बिलकुल विपरीत है।

मुझे विश्वास है कि इस उद्धरणकी एक-एक बातकी सत्यता वर्तमान इतिहासकी किसी भी पुस्तक अथवा किसी भी प्रामाणिक सन्दर्भ-ग्रन्थको देखनेसे सिद्ध हो सकती है।

श्री नाडकर्णी द्वारा भेजे गये उद्धरणके आवश्यक अंश नीचे देता हूँ:

स्पष्ट है कि सर इब्राहीमने इतिहासको ठीक तरहसे नहीं पढ़ा। उदाहरणके लिए, मिस्रके बारेमें उन्होंने जो कहा है, उसीको लीजिए। बड़ी कौमको छोटी कौमोंके साथ उदारतापूर्वक पेश आना चाहिए, इसकी हिमायत करते हुए उन्होंने मिस्रके ईसाइयोंके साथ जगलुलपाशाके व्यवहारका उदाहरण दिया है। मालूम होता है, सर इब्राहीम यह मानते हैं कि अपने हित और हक़ूकके बारेमें जगलुलकी सूक्ष्म भावनाओंको देखकर ही कॉप्ट लोग मुसलमानोंका शासन स्वीकार करनेको तैयार हो गये थे। परन्तु हकीकत तो ठीक इससे उलटी है। कॉप्ट लोगोंने अपने भाग्यको मिस्रके राष्ट्रवादियोंके साथ पूरी तरह एक बना लिया था और इसीकी वजहसे मुसलमान उनके साथ उदारताका व्यवहार करनेको प्रेरित हुए। उससे पहले कॉप्ट लोग जुल्मोंसे पूरी तरह मुक्त नहीं थे। उनकी हालतके सुधर जानेका एकमात्र कारण यह था कि वे देशकी आजादीके जंगमें उसके विरोधी या उसके प्रति लापरवाह तो नहीं ही रहे, उन्होंने वफ़्दमें बहुत ही आगे बढ़कर काम भी किया। कॉप्ट लोगोंका यह काम बहुत बुद्धिमानीपूर्ण था, और यही वजह है कि वहाँके मन्त्रिमण्डलमें कॉप्ट लोगोंको भी स्थान दिया गया।

इन उद्धरणके मूलकी जाँच पाठक करेंगे। इस उद्धरणमें कही गई बातकी अथवा जिस कथनका यह जवाब है, उसकी सचाईके बारेमें मैंने कोई छानबीन नही की है। साथ ही, मुझे सत्यकी सेवाके अतिरिक्त इसमें किसी प्रकारकी दिलचस्पी भी नहीं है।

मुझे तो सत्याग्रहीकी हैसियतसे सम्पूर्ण आत्मसमर्पणकी परमशक्तिमें श्रद्धा है। संख्याकी दृष्टिसे हिन्दू कौम बड़ी है। इसलिए मिस्रकी बहुसंख्यक कौमके कार्यका विचार किए बिना, अल्पसंख्यक कौमें जो माँगें, सो वे उन्हें दे दे। लेकिन यदि हिन्दू संख्यामें कम होते तो भी, एक सत्याग्रहीके और हिन्दूके नाते मै यही कहता कि आखिरकार सम्पूर्ण आत्मसमर्पणसे हिन्दुओंका कोई नुकसान नहीं होगा।

इस दलीलके जवाबमें बिना विचारे कहा जाता है कि, तो फिर आप भारतवर्षको अंग्रेजोंकी शरणमें बने रहनेकी सलाह क्यों नही देते? वे हुकूमत चाहते हैं; उन्हें हुकूमत करने दें और चैनसे रहें। इस बिना सोची हुई बातको कहते हुए लोग एक महत्वकी बात भूल जाते है और वह यह है कि मैंने बन्दूकका भय मानकर दिन काटने की सलाह कभी नहीं दी है। सत्याग्रहीके शास्त्रमें पशुबलके सामने झुक जानेकी कोई गुंजाइश ही नहीं है। अथवा कहिए, समर्पण बन्दूक चलानेवालेकी इच्छापर नहीं, बल्कि अपनी ही दुःख सहनेकी शक्तिपर निर्भर होगा। सत्याग्रहीका आत्मसमर्पण उसकी कमजोरीका नहीं, वरन् उसकी शक्तिका परिणाम होना चाहिए। मैंने इज्जतके त्यागकी

नहीं, बल्कि पार्थिव वस्तुओंके त्यागकी सलाह दी है। धनोपार्जनकी जगहों और ओहदोंका त्याग करनेमें थोड़ी भी अप्रतिष्ठा नहीं है। उनके लिए सौदाबाजी करनेमें अप्रतिष्ठा है। यदि अंग्रेज बन्दूकका त्याग करके हमारे साथ मित्र बनकर रहें, तो मैं उनकी भी हिमायत करूँगा। आत्म-समर्पण और कष्ट-सहनका नियम सर्वव्यापी है, और उसमें अपवादकी थोड़ी भी गुंजाइश नहीं है।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, ३०-४-१९३१

६०. पत्र : पद्माको

बोरसद
३० अप्रैल, १९३१

चि० पद्मा,[1]

तेरा पत्र मिला। मैं भूला तो बिलकुल नहीं था, लेकिन क्या करूँ? तू गीता जबानी याद कर रही है, यह अच्छा है। मगन चरखेपर एक घंटेमें कितने तार कात लेती है? लगातार कितने घंटेतक कात पाती है?

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ६११८) की फोटो-नकलसे।

६१. भेंट : 'फॉक्स मूवीटोन न्यूज' के प्रतिनिधिको

बोरसद
[३० अप्रैल, १९३१][2]

चलचित्र बनानेके लिए 'फाक्स मूवीटोन न्यूज़' और एसोसिएटेड प्रेस ऑफ अमेरिकाके प्रतिनिधिने महात्मा गांधीसे बोरसदमें भेंट की जिसका पूर्ण विवरण नीचे दिया जा रहा है। 'बॉम्बे क्रॉनिकल' का कथन है कि भेंटका यह वर्णन प्रकाशित होनेके पूर्व गांधीजी द्वारा ठीक कर दिया गया है।

गांधी जीने नीचे लिखी टिप्पणीके साथ अपनी भेंट-वार्ता आरम्भ की :

मैं यह सब पसन्द नही करता, लेकिन यदि कुछ मिनट ही देनेकी बात है तो मैं इसके लिए अपने मनको तैयार कर लूँगा; यद्यपि मैं जानता हूँ कि इस सबसे आपका विज्ञापन होगा और यही आपका मुख्य लक्ष्य भी है। लेकिन इस बहानेमें

१. सीतलासहायकी पुत्री।
२. **हिन्दू**, १-५-१९३१ से।

अपने उद्देश्य — अर्थात् भारतकी आजादीका भी प्रचार कर सकूँगा। प्रचारके महत्त्वको मैं बिलकुल नगण्य नहीं मानता। मेरी गिनती तो संसारके सबसे बड़े प्रचारकोंमें की गई है। हो सकता है मैं इस प्रशंसाके सचमुच योग्य होऊँ। लेकिन प्रचारका मेरा ढंग सामान्य ढंगसे भिन्न है। मेरा मार्ग सत्यवादिताका है और सत्य स्वयं-प्रचारी होता है। वह कृत्रिमताको सहन नहीं करता।

इसलिए आप मुझे अपने-अपने केमरेके सामने बैठनेके लिए सहमत न होनेपर क्षमा करेंगे। ऊपर बताये कारणोंके अलावा एक कारण यह भी है कि इस प्रकार चित्र आदि न खिचानेके लिए मैंने १९०५में ही शपथ ले ली थी।

इसलिए उन्होंने चित्रके लिए उपयुक्त खुली जगह बैठनेसे इनकार कर दिया। भेंट उनके कमरेमें ही हुई।

प्रश्न : श्री गांधी, 'फॉक्स मूवीटोन न्यूज' और 'एसोसिएटेड प्रेस ऑफ अमेरिका'के प्रतिनिधिके रूपमें हम सात समुद्र पार, न्यूयार्कसे भारत आये हैं। इन दोनों संस्थाओंका काम संसार-भरमें करोड़ों लोगोंतक पहुँचता है। हम चाहते हैं कि 'फॉक्स मूवीटोन न्यूज' के माध्यमसे आप अमेरिकाके लोगोंके नाम मित्रता और सौहार्दका सन्देश दें। जैसा कि आप जानते हैं कि संयुक्त राज्य अमेरिकाके निवासी भारतके स्वाधीनता-संघर्षमें बड़ी रुचि और सहानुभूति रखते आये हैं। इसका कारण यह है कि १५० वर्ष पूर्व अमेरिकाके लोगोंको भी इसी प्रकारसे स्वाधीनता पानेके लिए संघर्ष करना पड़ा था।

उत्तर : अमेरिकाके लोगोंने हमारे संघर्षके प्रति जो रुचि और सहानुभूति प्रदर्शित की है, मैं उसकी कद्र करता हूँ। मुझे आशा है कि इस संघर्षके अन्त तक हम अमेरिकाके लोगोंके हृदयमें अपने प्रति सद्भावना और मित्रता बनाये रखेंगे।

आप कब अमेरिका आनेकी बात सोचते हैं?

आपके महान् देशकी यात्रा करनेकी मेरी इच्छा तो बहुत है, परन्तु इस सम्बन्धमें अभी इसके अलावा कुछ नहीं कह सकता कि मैं तबतक अमेरिका जाना पसन्द नहीं करूँगा जबतक कि भारतके स्वतन्त्रता-संग्रामको स्पष्ट रूपसे सफलता मिलती नहीं दिखने लगती।

आप दूसरे गोलमेज सम्मेलनके लिए कब लन्दन जानेकी सोचते हैं?

इस सम्बन्धमें भी, मैं कुछ नहीं कह सकता। इतना अवश्य कह सकता हूँ कि जबतक हिन्दू-मुसलमानोंकी साम्प्रदायिक समस्याका कोई सन्तोषजनक हल नहीं मिलता, मैं लन्दन जानेकी बात नहीं सोच सकता। और यदि वर्तमान समझौतेका उल्लंघन हुआ, तब तो मैं लन्दन बिलकुल ही नहीं जाऊँगा।

क्या आपने लॉर्ड इर्विनको इंग्लैंडके प्रधान मन्त्रीके नाम कुछ लिखकर भेजा है?

लॉर्ड इर्विनके हाथ श्री मैकडोनाल्डको मेरे द्वारा कुछ लिखकर दिये जानेकी बात बिलकुल गलत है।

क्या आप यह आशा रखते हैं कि दूसरे गोलमेज सम्मेलनमें इंग्लैंड आपकी सभी माँगें पूरी कर देगा?

मैं इतनी बड़ी बात तो नहीं कह सकता।

लेकिन क्या आपको सचमुच ऐसी आशा है कि इस बार इंग्लैंड आपकी माँगें पूरी कर देगा?

मैं इतना भर कह सकता हूँ कि मैं आशावादी हूँ।

आप जो चाहते हैं, अगर इंग्लैंड वह सब नहीं देता तो आप कौन-सा रास्ता अपनायेंगे?

सविनय अवज्ञा और सत्याग्रहके अन्य सभी तरीके अपनानेका अधिकार तो सदा हमारा है ही। लेकिन इन अस्त्रोंका प्रयोग हम तुरन्त ही आरम्भ कर देंगे अथवा कोई और तरीका अपनायेंगे, यह इस समय स्पष्ट परिस्थिति सामने आये बिना बताना कठिन है।

अगर इंग्लैंड आपकी माँगें स्वीकार नहीं करता, तो क्या आप फिर जेल जानेके लिए तैयार हैं?

भारतकी आजादीकी खातिर मैं हमेशा ही जेल जानेको तैयार हूँ।

क्या इस उद्देश्यके लिए आप प्राण देनेको तैयार हैं?

यह कोई अच्छा प्रश्न नहीं हुआ।

यदि इंग्लैंड आपकी माँगें स्वीकार कर ले, तो क्या आप नए भारतमें पूर्ण मद्य-निषेध लागू करना चाहेंगे?

जी हाँ, मैं आशा करता हूँ कि नए भारतीय राज्यमें पूर्ण मद्य-निषेध दृढ़तासे लागू किया जायेगा।

नया भारतीय राज्य स्थापित होनेपर क्या आप बाल-विवाह समाप्त कराना चाहेंगे?

मैं तो चाहूँगा कि बाल-विवाहकी प्रथा इसके बहुत पहले ही समाप्त कर दी जाये।

क्या आप सोचते हैं कि नए भारतीय राज्यमें देशके छः करोड़ लोगोंको तथा-कथित अछूत माननेवाली वर्तमान जाति-प्रथाकी कपाल-क्रिया कर दी जायेगी?

निश्चय ही।

क्या आप भारतीय विधवाओं द्वारा पूर्ण एकान्त तथा ब्रह्मचर्यपूर्ण कठोर जीवन अपनानेकी वर्तमान प्रथाको समाप्त करा देना चाहेंगे?

अगर विधवाएँ चाहें तो पुनर्विवाह करनेसे उनको रोकनेवाली कोई व्यवस्था नहीं है। इसी तरह यह कहना भी पूरी तरह गलत है कि भारतीय विधवाएँ आम तौरसे एकान्तवास करती हैं।

मैंने विधवाओंको पर्दे में रखनेकी प्रथाकी ओर इशारा किया था।

पर्देकी प्रथा वास्तवमें मध्यम श्रेणीके थोड़े-से लोगोंतक ही सीमित है और सो भी सारे भारतमें नहीं।

क्या आप समझते हैं कि नए भारतीय राज्यमें हिन्दुओं तथा मुसलमानोंमें सामाजिक रूपसे पूर्ण साम्प्रदायिक एकता और मैत्री बनी रहेगी?

निश्चय ही, मैं आशा करता हूँ कि नये भारतमें भारतीय परिवारके इन दोनों, सबसे बड़े सम्प्रदायोंमें सामाजिक मैत्री और एकता स्थापित हो जायेगी।

यदि आप गोलमेज सम्मेलनमें जायें और इंग्लैंडका सम्राट् आपको बकिंघम पैलेसमें दावतके लिए बुलाये, तो क्या आप ठेठ भारतीय ढंगके वस्त्र पहनेंगे अथवा यूरोप-वालोंकी तरह?

अगर मैं अपनी नित्यकी भारतीय वेशभूषाके अलावा किसी और तरहकी पोशाक पहनूं, तो वह सम्राट्के प्रति अशिष्टता होगी। अगर मौसम ठीक रहा तो मैं इंग्लैंडमें वही पोशाक पहनूंगा जो भारतमें पहनता हूँ अर्थात् घुटनों तककी धोती।

श्री गांधी, आप अक्सर कहते आये हैं कि ब्रिटेनवासियोंमें बहुत-से लोग आपके बड़े अच्छे मित्र और समर्थक हैं। 'ब्रिटिश मूवीटोन न्यूज' के माध्यमसे ब्रिटिश साम्राज्य-भरमें जिसके असंख्य श्रोता बिखरे पड़े हैं, क्या आप अपने उन मित्रों और ब्रिटेनकी महान जनताके अन्य लोगोंके नाम कोई संक्षिप्त सन्देश देनेकी कृपा करेंगे?

मुझे यह कह सकनेपर हर्ष है कि ब्रिटेनमें मेरे मित्रोंकी संख्या बढ़ रही है। दूसरी कोई बात हो भी नहीं सकती, क्योंकि वर्तमान सत्याग्रह आन्दोलन उन लोगोंके साथ जिनके विरुद्ध हम संघर्ष करते जान पड़ते हैं, सद्भावनापूर्ण सम्बन्ध स्थापित करनेके एक आन्दोलनके अतिरिक्त कुछ है ही नहीं; भले ही इस आन्दोलनको विदेशी वस्त्रोंके प्रश्नके साथ जोड़कर काफी हदतक भ्रान्ति पैदा की जा रही हो। इसलिए इस आन्दोलनके अन्तिम परिणामके बारेमें मेरे मनमें कोई आशंका नहीं है।

क्या संसारकी वर्तमान परिस्थिति और उसकी आवश्यकताओंको देखते हुए आप [हजरत मूसाकी भाँति] लौकिक धर्मके नये 'दशानुशासन' (टेन कमान्डमेन्ट्स) देंगे?

यह तो एक बहुत बड़ी अपेक्षा है।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, ५-५-१९३१

६२. तार : एच० डब्ल्यू० एमर्सनको

बोरसद
१ मई, १९३१

श्री एमर्सन
गृह सचिव
शिमला

चारसद्दावाले अब्दुल गफ्फार खानके विरुद्ध प्रचार आन्दोलनके पीछे मुझे कोई बाहरी हाथ दिखाई देता है। कराचीमें मेरे मनपर उनकी यह छाप पड़ी थी कि वे अहिंसाका प्रतिपादन सच्चे हृदयसे करते हैं। उनके खिलाफ कोई शिकायतें हों तो मै चाहूँगा कि वे मुझे बतला दी जायें ताकि मैं उनसे बातचीत कर सकूँ। भरोसा है कि वे उचित बातको माननेके लिए तैयार रहते हैं। मुझे उनका स्पष्टीकरण पानेका अवसर दिये बिना अगर उनको गिरफ्तार किया गया, तो उलझन पैदा हो जायेगी। मैं सीमाप्रान्त न जाऊँ, लार्ड इर्विनकी इस इच्छाने मेरी चिन्ता और बढ़ा दी है। मुझे पूरा यकीन है कि वहाँ मेरी उपस्थितिसे तनावमें कमी अवश्य होगी। जहाँतक पंजाबके गवर्नरके भाषणका[१] सम्बन्ध है, क्या आप उन भाषणों, लेखों अथवा उन अन्य कार्यवाहियोंका ब्यौरा भेज सकेंगे जिनको ध्यानमें रखकर गवर्नरने सार्वजनिक रूपसे वह चेतावनी दी थी?

गांधी

[अंग्रेजीसे]

अ० भा० कां० क०, फाइल-संख्या १६-बी, १९३१।
सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

१. भगतसिंहकी फाँसीके विरोधमें होनेवाले आन्दोलन तथा श्रीमती कर्टिसकी हत्याके समर्थनको ध्यानमें रखकर पंजाबके गवर्नरने २५ अप्रैल, १९३१ को चेतावनी दी थी कि कांग्रेसियों तथा अन्य लोगोंके खिलाफ भी हिंसाकी उत्तेजनासे सम्बन्धित सामान्य कानूनोंको और अधिक सख्तीसे लागू किया जायेगा।

६३. पत्र : जी० एन० कॉलिन्सको

[१ मई, १९३१][1]

प्रिय श्री कॉलिन्स,

आशा थी कि जो विभिन्न मामले मेरे सामने हैं उनके सिलसिलेमें मैं आपको लिख पाऊँगा। परन्तु खेद है कि मै अबतक उसकी तैयारी पूरी नही कर पाया हूँ। इसलिए मैं फिलहाल केवल श्री राजवाडेके मामलेके बारेमें ही लिख रहा हूँ।

आपने कहा था कि इनकी रिहाई न होनेका कारण यह है कि उन्होंने लोगोंको हिंसाके लिए उकसाया था। अब मेरे पास मुकदमेका प्रमाणित विवरण और वह लेख भी आ गया है जिसको मुकदमेका आधार बनाया गया था। आरोप-पत्रमें जो आरोप लगाया है वह तो यह है कि उन्होंने सुव्यवस्था और सार्वजनिक सुरक्षामें बाधा डालनेवाला काम किया और गिरफ्तार होनेसे बचनेकी कोशिश की। इसमें हिंसाकी तो कोई बात नहीं है।

मैंने उनका मूल मराठी लेख पढ़ लिया है। उसमें कोई भी रंग चढ़ाये बिना घटनाओंका ठीक-ठीक विवरण दिया गया है। उस विवरणमें कम-से-कम मुझे तो हिंसाके लिए उकसानेकी झलकतक दिखाई नहीं दी। इसलिए मेरी रायमें यह मामला स्पष्ट ही समझौतेकी हदमें आ जाता है।

यदि न्यायालयके सामने उनका दूसरा कोई लेख भी पेश किया गया हो, तो कृपया उसे मेरे पास भेज दें। पर यदि इसके अलावा कोई और लेख न हो, तो आशा है कि श्री राजवाडे अविलम्ब रिहा कर दिये जायेंगे।

हृदयसे आपका,

[अंग्रेजीसे]

अ० भा० कां० क०, फाइल संख्या १६–सी, १९३१।
सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

१. जी० एन० कॉलिन्सके बम्बई सरकारके गृह मन्त्रालयकी ओरसे दिये गये ९ मईके पत्रके उत्तरसे।

६४. पत्र : लक्ष्मीनारायण गाडोदियाको

बोरसद
१ मई, १९३१

भाई लक्ष्मीनारायणजी,[१]

आपका पत्र मिला है। रामानंदजीको सहाय की उसके लिए अनुग्रह मानता हुँ। उनका कार्य देखा है?

विदेशी कापडके व्यापारके हाल लिखो।

कांग्रेस कमिटिका झगडा किस बारेमें है?

बापू

जी० एन० ५६१७ की फोटो-नकलसे।

६५. वक्तव्य : समाचारपत्रोंको[२]

बोरसद
२ मई, १९३१

एक भी पटेल ऐसा नहीं था जिसने कामपर आनेकी इच्छा व्यक्त न की हो; और निष्ठापूर्वक काम करनेका आश्वासन देनेका तो सवाल ही नहीं रह गया था। ऐसा आश्वासन तो कामपर उनके लौट आनेमें निहित था ही। समझौतेके बिलकुल प्रारम्भिक दौरमें इस प्रकारकी शर्तें पटेलोंके सामने रखी गई थीं और वे मेरे द्वारा शिकायत करनेपर हटा ली गई थीं।

भू-स्वामियों द्वारा लगानकी अदायगी न करनेके कारण जब्त की गई भूमि का २५ प्रतिशत भाग उनको वापस न करना समझौतेकी धारा १७ (ख)का स्पष्ट उल्लंघन है। इसलिए कि जबतक यह माननेके लिए उचित आधार न हो कि भूमिधर किसी दुराग्रहपर अड़ा है, तबतक जब्तशुदा भूमि तो लौटानी ही पड़ेगी। और यह तो स्पष्ट ही है कि बारडोली अथवा अन्य प्रभावित जिलोंमें ऐसे दुराग्रहका कोई सवाल ही नहीं उठता।

यह कहना बिलकुल गलत है कि कांग्रेसके किसी भी शिविरमें अनुशासन नहीं है। मैंने जबसे प्रत्येक कांग्रेसी कार्यकर्त्तासे इस बातका बड़ा आग्रह किया है कि वे समझौतेकी शर्तोंका पालन उसी तत्परताके साथ करें जो उन्होंने संघर्षमें दिखाई थी,

१. दिल्लीके एक प्रसिद्ध व्यापारी।

२. बम्बईके एक समाचारपत्रमें प्रकाशित कुछ समाचारोंके खण्डनके लिए।

तबसे एक भी ऐसा अवसर कभी नहीं आया कि मुझे किसी कार्यकर्त्ताकी [विरोधी-वृत्ति देखकर] भर्त्सना करनी पड़ी हो।

इसके विपरीत मुझे तो यह जानकर हर्ष हुआ है कि कार्यकर्त्ताओंने सभी हिदायतोंका पूरी तरह पालन किया है। एक दुर्भाग्यपूर्ण मामलेको छोड़कर, मैं यह कह सकता हूँ कि किसी भी कार्यकर्त्ताको कांग्रेस संगठनसे — विशेषकर सूरत और खेड़ा जिलेमें, जिनकी ओर मैं और वल्लभभाई पटेल पूरा ध्यान दे रहे हैं — कांग्रेस फंडके गबनके लिए संस्थासे नहीं निकाला गया है।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, ४-५-१९३१

६६. तार : हरिभाऊ उपाध्यायको

बोरसद
२ मई, १९३१

हरिभाऊ
'त्यागभूमि'
अजमेर

आपका तार मिला। मेरे उदयपुर[1] तार भेजनेसे कुछ होनेका भरोसा नहीं। जमनालालजी या मालवीयजीको हस्तक्षेप करने दीजिए।

गांधी

अंग्रेजी (एस० एन० १७०४९) की माइक्रोफिल्मसे।

६७. पत्र : ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, बम्बईके प्रबन्धकको

बोरसद
२ मई, १९३१

प्रिय महोदय,

आपके पत्रके लिए धन्यवाद। मुझे नहीं मालूम कि आपका सुझाव मान लेनेसे श्री एन्ड्रयूजकी पुस्तकोंपर[2] कितना असर पड़ेगा। व्यक्तिगत तौरपर तो मुझे इसपर कोई आपत्ति नहीं कि आप चुने हुए उद्धरणोंको एक पुस्तकके रूपमें प्रकाशित कर दें। पहली कठिनाईके बारेमें तो शायद आप मुझसे कहीं अधिक जानते हैं और जहाँतक

१. देखिए "पत्र : हरिभाऊ उपाध्यायको, ६-५-१९३१।
२. **महात्मा गांधीज आइडियाज** (१९२९) और **महात्मा गांधी : हिज ओन स्टोरी** (१९३०)।

प्रस्तावित पुस्तककी बात हैं, मैं चाहता हूँ कि आप अपने सुझावके बारेमें थोड़ा और खोलकर लिखें जिससे कि मैं उसके बारेमें हर पहलूसे और अच्छी तरह विचार कर सकूँ।

आपका विश्वस्त,
मो० क० गांधी

प्रबन्धक
ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस
बम्बई

अंग्रेजी (जी० एन० ५६८५) की फोटो-नकलसे।

६८. पत्र : जे० सी० कुमारप्पाको

बोरसद
२ मई, १९३१

प्रिय कुमारप्पा,

मैं आपकी इस बातसे बिलकुल सहमत हूँ कि श्री वाडियाको[1] कोई काम दिया जाना चाहिए। आपके विचारार्थ एक और पत्र भेज रहा हूँ। आशा है, आपके काममें निरन्तर और एक-सी प्रगति हो रही है। मैं चाहता हूँ कि आपका प्रतिवेदन[2] उस विषयपर एक पाठ्य-पुस्तकके दर्जेका हो।

बापू

संलग्न : १

श्री जे० सी० कुमारप्पा
संयोजक
आंग्ल-भारतीय वित्तीय समझौता सम्बन्धी कांग्रेस प्रवर समिति
६५, एस्प्लेनेड रोड, बम्बई

अंग्रेजी (जी० एन० १००९३) की फोटो-नकलसे।

१. प्रोफेसर पी० ए० वाडिया।
२. देखिए "बहादुरजी कमेटीकी रिपोर्ट", २३-७-१९३१।

६९. पत्र : शैलेन्द्रनाथ घोषको[1]

[स्थायी पता] साबरमती
२ मई, १९३१

प्रिय मित्र,

आपका पत्र मिला। निर्वासितका जीवन कैसा होता है, यह मैं स्वयं अपने और अन्य लोगोंके भी अनुभवसे जानता हूँ। मैं मानता हूँ कि मेरा अपना निर्वासित जीवन उतना महत्त्व नहीं रखता, जितना कि आपका; और उसका सीधा-सा कारण यही है कि मैंने स्वेच्छासे निर्वासित जीवन अपनाया था। परन्तु गणितके सामान्य नियमके आधारपर मैं अनुमान कर सकता हूँ कि यदि स्वयं स्वीकार किया निर्वासन भी मुझे इतना कठिन लगा, तो फिर आप-जैसे मित्रोंके लिए एक थोपा गया निर्वासन कितना असह्य होगा। अगर बात ठीक ढंगसे बनती गई तो देशसे निर्वासित लोगोंको एक वर्षसे अधिक समय बाहर नहीं बिताना होगा। मेरे वहाँ आनेकी खबरमें कुछ सार नहीं है, इसलिए उसपर आगे चर्चा करनेकी जरूरत नहीं। जबतक यहाँके प्रयोग सफल सिद्ध नहीं हो जाते, मुझे अमेरिका नहीं जाना चाहिए।

हृदयसे आपका,

श्री शैलेन्द्रनाथ घोष
३१ यूनियन स्क्वेयर
न्यूयार्क सिटी

अंग्रेजी (एस० एन० १७०४६)की फोटो-नकलसे।

१. अमेरिकाकी भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस, न्यूयार्क सिटीके अध्यक्ष।

७०. पत्र : मार्टिन सी० मिलरको

[स्थायी पता] साबरमती
२ मई, १९३१

प्रिय मित्र,

आपका पत्र मिला। धन्यवाद। आपके प्रश्नके उत्तरमें मुझे यही कहना है कि 'गिरि-प्रवचनों' को श्रद्धासे पढ़नेसे मुझे तो यथेष्ट लाभ ही हुआ है। मैं ईसाको संसारके महानतम शिक्षकोंमें गिनता हूँ। एकमात्र अवतारी पुरुष तो मैं उनको नहीं मानता।

हृदयसे आपका,

श्री मार्टिन सी० मिलर
द क्लेवलेंड ग्रेफाइट ब्रोन्ज़ कम्पनी
क्लीवलेंड (अमेरिका)

अंग्रेजी (एस० एन० १७०४७)की फोटो-नकलसे।

७१. पत्र : अप्टन क्लोज़को

[स्थायी पता] साबरमती
२ मई, १९३१

प्रिय मित्र,

मुझे आपके दो पत्र मिले। आखिरी पत्र ८ अप्रैलका था। मेरे अमेरिका आनेकी बात अभीतक अफवाह ही समझी जानी चाहिए। और अमेरिका आनेपर क्या होगा, इसके सम्बन्धमें आपके अनुमानने तो मुझे और भी अधिक डरा दिया है। इसलिए इस समय तो मुझे अस्थायी तौरपर भी ऐसी घटनासे सम्बन्धित किसी प्रबन्धकी बात की चर्चा नहीं करनी चाहिए जिसकी निकट भविष्यमें घटनेकी कोई सम्भावना नजर नहीं आती।

हृदयसे आपका,

श्री अप्टन क्लोज़
न्यूयार्क (अमेरिका)

अँग्रेजी (एस० एन० १७०४८)की फोटो-नकलसे।

७२. पत्र : करमचन्दानीको

बोरसद
२ मई, १९३१

प्रिय मित्र,

आपका पत्र[1] मिला। गढ़वाली बन्दियोंके बारेमें आपकी भावनाओंसे मैं सहमत हूँ और यदि मैं आज ही उनकी रिहाई करा सकता, तो अवश्य करा लेता। इसलिए हमारे पारस्परिक विचारों पर बहस करनेकी मुझे कोई जरूरत नहीं दिखाई पड़ती। लेकिन मैं एक मोटे तौरपर इतना जरूर कह सकता हूँ कि यदि किसी व्यक्तिका अन्तःकरण उसे कुछ अनुदेशों या आदेशोंकी अवज्ञा करनेके लिए प्रेरित करे तो निश्चय ही उसे अवज्ञा करनेकी पूरी स्वतन्त्रता है; साथ ही उससे यह अपेक्षा भी की जाती है कि वह उसके परिणाम भुगतनेके लिए तैयार रहेगा। आपके पत्रका उत्तर देनेमें जो विलम्ब हुआ, इसके लिए क्षमा-प्रार्थी हूँ।

हृदयसे आपका,

श्री करमचन्दानी
कराची

अंग्रेजी (एस० एन० १७०५०)की माइक्रोफिल्मसे।

७३. पत्र : लालजी परमारको

२ मई, १९३१

चि० लालजी,

तुम्हारा पत्र मिल गया है। धीरज रखना। मैं जाँच कर रहा हूँ। यहाँ आना हो तो आ जाओ।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ३२९१)की फोटो-नकलसे।

१. पत्रमें कारावासका दण्ड पाये जिन गढ़वाली सैनिकोंने सैनिक आदेशोंकी अवज्ञा की थी, उनकी हिमायत की गई थी।

७४. बीसवीं सदीकी सती (?)

घाटकोपरसे एक बहन लिखती हैं :

'बम्बई समाचार' के २३ अप्रैल, १९३१ के अंकमें प्रकाशित बीसवीं सदीकी लुहाणा जातिकी सतीकी बात सच हो तो उस बहनकी पतिभक्ति वन्दनीय है। इस सम्बन्धमें यदि आप अपनी राय 'नवजीवन' द्वारा व्यक्त करेंगे तो विशेष जानकारी हासिल होगी।

मुझे आशा है, यह समाचार सच नहीं है। अगर उक्त बहन मरी है तो किसी रोग या आकस्मिक घटनासे मरी है, आत्महत्या करके नहीं। बीसवीं या किसी भी अन्य शताब्दीमें सतीके लक्षण एक ही प्रकारके होने चाहिए। सती स्त्री वह है जो पतिके जीवित रहते और मृत्युके बाद सत्यपरायणा रहकर सेवा करे और मन, वचन तथा कर्मसे निर्विकार रहे। पतिके लिए आत्महत्या करनेमें ज्ञान नही, अज्ञान है। ऐसा करनेमें बड़ा अज्ञान तो आत्माके गुणके विषयमें है। आत्मामात्र अमर है, वह सर्वव्यापक है, एक देह छूटनेपर दूसरी देहका निर्माण करती है और यों करते-करते अन्तमें देहातीत हो सकती है। यह बात सच है, अनुभवसिद्ध है और आज अनुभवगम्य है। ऐसी दशामें पत्नीका पतिके साथ मरना क्यों ठीक माना जाये?

फिर विवाह भी शरीरका नहीं, आत्माका है। अगर विवाह शरीरका ही हो तो पतिके मरनेपर मोमके पुतले या चित्रसे ही सन्तोष क्यों न कर लिया जाये? अगर विवाह एक शरीर-विशेष जीवके साथका ही सम्बन्ध माना जाये तो उस शरीरके नष्ट होनेपर उस सम्बन्धका भी अन्त हो जाता है और आत्महत्या करनेसे तो शरीर पुनः नहीं मिल सकता। तब फिर एकके शरीर-नाशपर दूसरे शरीरके नाश करनेमें क्या सार है?

विवाह शरीर द्वारा आत्माका होता है, और एक आत्माकी भक्तिसे अनेक आत्मा अर्थात् परमेश्वरकी भक्ति सिद्ध करनेकी कला सीखनेका भेद विवाहमें छिपा हुआ है। इसी कारण अमर मीराने गाया है :

"मेरे तो गिरिधर गोपाल दूसरा न कोई।"

इसलिए सती स्त्रीकी दृष्टिमें विवाह, वासनाको तृप्त करनेका साधन नहीं होता बल्कि 'एकको दूसरेका सहारा' इस न्यायसे पतिमें लीन होकर सेवाकी शक्तिको बढ़ानेका साधन है। इसलिए सच्ची सती अपना सतीत्व सप्तपदीके समयसे ही सिद्ध करती है। वह साध्वी बनती है, तपस्विनी बनती है, पति, कुटुम्ब और देशकी सेवा करती है, वह घरगृहस्थीमें फँस जाने और भोग भोगनेके बजाय अपना ज्ञान बढ़ाती है, त्यागशक्ति बढ़ाती है और पतिमें लीन होकर जगत-मात्रमें लीन होना सीखती है।

१. देखिए "फिर भी वही राय", १७-५-१९३१ भी।

ऐसी सती स्त्री पतिकी मृत्युपर शोक नहीं मनायेगी, दुःखसे पागल नहीं बनेगी; बल्कि पतिके समस्त सद्‌गुणोंको वह अपनेमें प्रगट करेगी और उन्हें अमर बनायेगी। और यह जानकर कि सम्बन्ध आत्मासे था, वह फिरसे ब्याह करनेका विचारतक न करेगी।

पाठक देखेंगे कि मेरी कल्पनाकी सती विवाहके आरम्भसे ही निर्विकार है, इसलिए वह सन्तान उत्पन्न नहीं करेगी, विषयभोग नहीं करेगी। यदि कोई यह प्रश्न करे कि ऐसी सती विवाह-बन्धनमें बँधे ही क्यों, तो प्रश्न उचित होगा। परन्तु हिन्दू-जगत में विवाहके बारेमें स्त्री या पुरुषकी पसन्दका कोई सवाल ही नहीं होता। और आज-कलके गये-बीते सुधारोंके इस युगमें कुछ लोग संयमके खयालसे विवाह करते हैं। मैं स्वीकार करता हूँ कि इसके मूलमें सूक्ष्म मूर्छा, मोह, है। फिर भी कुछ ऐसे लोग पाये जाते हैं जो निर्विकार रहनेका निश्चय करके सम्बन्ध जोड़ते है। ऐसा एक उदाहरण मुझे अपने अनुभवसे इस समय याद आ रहा है। विवाह करते समय भोग की इच्छा थी, परन्तु बादमें संयमवृत्तिके प्रबल होते ही निर्विकार जीवन बितानेका प्रयत्न करनेवाले दम्पतीके एकाधिक उदाहरण इस समय मेरी आँखोंके सामने तैर रहे हैं। अतः पाठक यह न समझें कि मेरी कल्पनाको हकीकतमें कहीं स्थान ही नहीं है।

परन्तु यदि साधारण विवाहका विचार करें तो सती स्त्रीकी जिन शक्तियोंको ऊपर गिना चुका हूँ, उनमें प्रजापालनकी शक्तिको बढ़ाना होगा। यानी सती स्त्री मर्यादामें रहकर सन्तानकी उत्पत्तिके कार्यमें भाग लेगी और बालक या बालकोंका ठीक प्रकारसे लालन-पालन करके उन्हें सुशिक्षित बनाकर देशके सेवा-धनमें वृद्धि करेगी।

जो बातें ऊपर मैं सती स्त्रीके विषयमें कह चुका हूँ, वे सत्पतिपर भी लागू होती हैं। अगर स्त्रीको पतिके प्रति सतीत्व सिद्ध करना उचित है तो पतिके लिए भी अपना सत्व सिद्ध करना आवश्यक है और हमने स्त्रीके साथ पतिको जलते हुए नहीं सुना; इसलिए हम यह मान लेते हैं कि पतिके साथ पत्नीके जल मरनेकी प्रथा चाहे जब शुरू हुई हो, किन्तु वह अज्ञान मूलक है। और यदि ऐसा साबित हो सके कि किसी समय उसमें कुछ रहस्य था, तो भी इन दिनों तो उसमें घोर अज्ञान ही है, इस सम्बन्धमें कोई भी बहन अपने मनमें सन्देह न रखे। स्त्री पतिकी दासी नहीं, उसकी सहचारिणी है, अर्द्धांगिनी है, मित्र है, इसलिए उसीके साथ समान अधिकार का उपभोग करनेवाली है, उसकी सहधर्मिणी है। इस कारण एक दूसरेके प्रति और जगत्‌के प्रति दोनोंके कर्त्तव्य समान है।

अतएव, अगर उक्त लुहाणा बहनने इस प्रकार अपने प्राण दिये हों, तो यह व्यर्थकी आत्महत्या ही है। वह बिलकुल अनुकरणीय नहीं है। कोई कहेगा कि उसके मरनेकी क्षमताकी स्तुति तो करें! किन्तु मेरा मन वैसा करनेसे भी इनकार करता है। क्योंकि दुष्ट कर्म करनेवालेमें भी मरनेकी शक्ति हम देखते है; परन्तु उस शक्तिकी स्तुति करनेका कर्त्तव्य हम स्वीकार नहीं करते; ऐसी दशामें इस अज्ञानी बहनके मरनेकी शक्तिकी स्तुति करके भ्रममें पड़ी हुई बहनोंको अनजाने भी भ्रममें

डालनेका पाप मैं क्यों अपने सिर लूँ? सतीत्वका अर्थ है पवित्रताकी पराकाष्ठा। यह पवित्रता आत्महत्या करके सिद्ध नहीं की जा सकती; जीकर उसका कठोर पालन किया जाना चाहिए।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ३-५-१९३१

७५. टिप्पणियाँ

पत्र-लेखकोंसे[1]

मुझ पर पत्रोंकी बारिश हो रही है। बिलकुल तन्दुरुस्त होऊँ तो भी मैं इन सब चिट्ठियोंको न तो तत्काल पढ़ सकता हूँ, न उन सबके जवाब ही दे सकता हूँ। फिर मेरी मौजूदा कमजोर हालतमें समझौतेकी शर्तोंके प्रति सावधान रहना 'यंग इंडिया' और 'नवजीवन' के लिए लिखना और दूसरे काम करनेके साथ-साथ इन सबके उत्तर देना अशक्य ही है। इसलिए मेरे सामने चुने हुए पत्र ही रखे जाते हैं, और उनमें से जितनोंका जवाब तत्काल दे सकता हूँ, दे देता हूँ और बाकी पत्रोंका जवाब धीरे-धीरे देता रहता हूँ। मुझे यह स्थिति पसन्द नहीं है। मैं जानता हूँ कि पत्र लिखनेवाले समयपर उत्तरकी आशा रखते ही हैं। पर मेरी लाचारीकी दलील मेरे पक्षमें है। पत्र-लेखक मेरी और मेरे साथियोंकी मदद कर सकते हैं। वे कृपा कर इतनी शर्तोंका पालन करें:

१. बिना कारण कभी पत्र न लिखें।
२. पेंसिलसे न लिखें।
३. लम्बे पत्र न लिखें।
४. बारबार एक ही बात न कहें।
५. जहाँतक हो सके, तर्क बिलकुल ही न दें।
६. अक्षर मोतीके दानों जैसे लिखें।

ये नियम सरल हैं, और इन सबके मूलमें अहिंसा है। मेरे अक्षर बहुत खराब हैं। उन्हें पढ़नेमें पढ़नेवालेको कितना कष्ट होता है, मुझे इसका पूरा अनुभव है। जिससे किसीको कष्ट हो, ऐसा काम करना हिंसा है। इसलिए सभी इतना समझ सकते हैं कि खराब अक्षर लिखना हिंसा है। दूसरी शर्तोंके सम्बन्धमें भी यही बात लागू होती है। उक्त नियम सदा उपयोगी हैं। मेरी मौजूदा हालतमें उनकी उपयोगिता दूनी हैं। कुछ भी क्यों न हों, पर मुझे पत्र लिखनेवाले, जवाब न मिलनेपर यह तो कभी न मानें कि मेरे अविनयके कारण ऐसा होता है।

१. **यंग इंडिया**, ७-५-१९३१ में भी "टिप्पणियाँ" के अन्तर्गत "निजी और वैयक्तिक पत्र-लेखकोंसे" नामसे एक मिलती-जुलती टिप्पणी प्रकाशित हुई थी।

एकताकी बुनियाद ही नहीं है

'खून क्यों नहीं खौल उठता ?' प्रश्न के[1] पूछनेवालेका दूसरा प्रश्न यह है :[2]

इस प्रश्नके मूलमें जो विचारश्रेणी है, वह अधूरी है। जो भेद बताये गये हैं, अन्य कारणोंसे वे अमेरिका, इंग्लैंड वगैरा देशोंमें भी हैं; फिर भी वहाँ राजनैतिक एकता है और उक्त भेदोंमें से भी कई तो सिर्फ शहरोंमें ही होते हैं। गाँवोंमें वैसे भेद हैं ही नहीं। जरूरत मदरसों, अखाड़ों या खेलोंकी एकताकी नहीं है, एकता हृदयकी अपेक्षित है। वह प्राप्त न हो तो दूसरी एकता निरर्थक है, वह प्राप्त हो जाये, तो दूसरी अनावश्यक है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ३-५-१९३१

७६. पत्र : खेड़ा जिलेके कलेक्टरको[3]

३ मई, १९३१

हम दोनों ही चाहते हैं कि लोग अपनी पूरी सामर्थ्यके अनुसार लगानकी अदायगी करें। मै जानता हूँ कि 'सामर्थ्य' शब्दकी परिभाषाके बारेमें हमारे बीच मतभेद हो सकता है या जैसा कि आपके पत्रसे पता चलता है, इसपर मतभेद है। मैं सोचता था कि हमारी बातचीतके दौरान आप इस बातपर राजी हो गये थे कि बकाया लगानकी अदायगीके लिए किसीको कर्ज लेनेकी जरूरत नही है। मैं उसी स्वस्थ सिद्धान्तको आधार बनाकर चल रहा हूँ। मैं जानता हूँ कि पहले कभी इस सिद्धान्त पर अमल नहीं हुआ था और भविष्यमें भी शायद न हो। जो भी हो, मैं समझता हूँ कि इस असाधारण वर्षमें तो इसका पालन किये बिना काम चल नहीं पायेगा। आशा है कि मैं इसे यथासमय पूरी तौर पर सिद्ध कर दिखाऊँगा। जाहिर है, इसका यह अर्थ नहीं कि जो लोग कर्ज लेकर लगानकी अदायगी करना चाहते हों, मैं उनको उससे रोकने लगूँगा। मैं तो केवल इतना चाहता हूँ कि ऐसा करनेके लिए उनसे आग्रह करनेका काम मुझे न करना पड़े।[4]

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, ८-१०-१९३१

१. देखिए "अहिंसाकी शक्ति", ७-५-१९३१।

२. नहीं दिया जा रहा है। पत्र-लेखकने हिन्दू और मुसलमानोंके अलग-अलग मोहल्लों, अखाड़ों आदिके विरोधमें गांधीजीसे जोर देनेका आग्रह किया था।

३. श्री पेरी।

४. पेरीने उत्तर दिया था : "ब्याजपर रुपया लेनेके सम्बन्धमें आपकी बातसे मैं सहमत हूँ। मित्रों अथवा ऐसे ही अन्य किसी स्थानसे हो सकनेवाली व्यवस्थाको हम इसमें शामिल नहीं करते।"

७७. पत्र: जेम्स टी० रत्नम्‌को

बोरसद
३ मई, १९३१

प्रिय मित्र,

मैं आपका पत्र तथा उसका संक्षिप्त उत्तर 'यंग इंडिया'[1] के आगामी अंकमें प्रकाशित कर रहा हूँ। मैं आशा करता हूँ कि आपको तथा उन मित्रोंको जिनके मनमें मेरे दृष्टिकोणके सम्बन्धमें कुछ आशंकाएँ हैं, इस उत्तरसे सन्तोष हो जायेगा।

हृदयसे आपका,

श्री जेम्स टी० रत्नम्
सेंट जेवियर्स
नुवारा इलिया (श्रीलंका)

अंग्रेजी (एस० एन० १७०२८) की माइक्रोफिल्मसे।

७८. पत्र: हरिदास टी० मजूमदारको

साबरमती
३ मई, १९३१

प्रिय हरिदास,[2]

२६ मार्चका आपका पत्र[3] और आपकी डायरीका उद्धरण देखकर आश्चर्य हुआ। मेरे कार्य-कलापके बारेमें जान-बूझकर तोड़े-मरोड़े गये एक समाचारका या मेरे कार्य-विशेषके बारेमें ईमानदारीसे पेश किये गये किसी ऐसे समाचारका ही तार पाकर जिसे आप समझ न पायें हों यदि आपके हृदयपर इतनी प्रतिक्रिया हो कि आप अपने

१. देखिए "फिर विदेशी मिशनरी", ७-५-१९३१।

२. डा० हरिदास टी० मजूमदार; **गांधी द एपोस्टल,** (१९२३); **गांधी वर्सेज द एम्पायर,** (१९३२); **गांधी ट्रायम्फेंट,** (१९३९); **महात्मा गांधी: पीसफुल रिवोल्युशनरी,** १९५२; **महात्मा गांधी: ए प्रोफेटिक वॉयस,** (१९६३); **द ग्रामर ऑफ सोशिओलाजी: मैन इन सोसाइटी** १९६६ के लेखक; ये १९२९ में लाहौर कांग्रेसके अवसरपर भारत आये थे और गांधीजीके साथ जनवरी-मार्च १९३० के दौरान साबरमतीमें ठहरे थे। वे दांडी यात्रामें और गोलमेज परिषदमें भी उनके साथ थे।

३. उपलब्ध नहीं। उसमें मजूमदारने बहुत ही आवेशमें गांधीजीपर यह आरोप लगाया था कि पुलिसकी बर्बरताकी निष्पक्ष जाँच कराये बिना गोलमेज परिषद्‌में शामिल होनेपर सहमत होकर उन्होंने जनताके साथ विश्वासघात किया है।

द्वारा दिये गये पहलेके प्रमाणपत्रको ही गलत कह दें, तो फिर आपके किसी प्रमाण-पत्रका कोई मूल्य नहीं रह जाता। आप देखेंगे कि इससे एक अत्यन्त ही कटु निष्कर्ष यह निकलता है कि आपकी इस रायका आधार भी वैसा ही जल्दबाजीमें किया गया अनुमान है जैसे अनुमान पर आपका पहलेवाला प्रमाणपत्र आधारित था? परन्तु इससे भी कहीं आश्चर्यजनक है, आपका यह आग्रह कि आपकी व्यक्ति-परक-निष्ठा उतनी ही गहन, उतनी ही तीव्र और हार्दिक तथा दृढ़ है, जितनी कि वह एक वर्ष पहले थी। क्या आप महसूस नहीं करते कि आपके इस कथन और मेरे बारेमें हालमें दी गई आपकी अपनी रायके बीच एक बहुत ही स्पष्ट विरोध है? निश्चित है कि आपकी निष्ठाका केवल एक ही आधार था — आपकी दृष्टिसे किया गया मेरा मूल्यांकन, मेरे बारेमें आपकी राय और जब इसमें आपको परिवर्तन करना पड़ गया तो आपकी निष्ठा आधार रहित हो गई। यदि आपने अपने पत्रोंकी प्रतियाँ अपने पास रख छोड़ी हों तो उनसे क्या-क्या निष्कर्ष निकलते है यह तो मेरे बतलानेकी अपेक्षा आप स्वयं कहीं अच्छी तरह समझ सकते हैं। खैर, मैं तो यह सोचकर धीरज रख सकता हूँ कि आपने जो आघात पहुँचाया है उससे कही बड़े आघात मैं सह चुका हूँ।

हृदयसे आपका,

श्री हरिदास टी० मजूमदार
सम्पादक 'इंडिया टुडे ऐंड टुमारो'
२०, वैसी स्ट्रीट, न्यूयार्क (अमेरिका)

अंग्रेजी (एस० एन० १७०५३) की फोटो-नकलसे।

७९. पत्र : ब्रजकृष्ण चांदीवालाको

बोरसद
३ मई, १९३१

चि० ब्रजकृष्ण,

तुमारे खत आते रहते हैं। मेरी तबीयत अच्छी, प्रोग्राम अनिश्चित है। कब कहां जाना होगा मैं नहिं जानता हुं। मेरा खानेंका दूध खजुर और जो स्थानिक फल मिले सके वह। दूध १॥ रतलसे ज्यादा नहि ले सकता हुं। वजन १०३ रतल है।

तुमारा शरीर कैसे रहता है? बनोईके हाल क्या है?

बापुके आशीर्वाद

जी० एन० २३८९की फोटो-नकलसे।

२. इसे अमलमें लानेके लिए आपके पास कार्यकर्त्ताओंकी एक बड़ी टोली होनी चाहिए।

आप यह क्यों कहते हैं कि मैंने करार तोड़ा है। क्या मैंने इस सवालको लेकर कोई ऐसी बात कही या लिखी है जो करारका उल्लंघन करती हो। नवाब भोपालकी सद्भावनापूर्ण पहलको बिलकुल ठुकरा देना तो मुझे शोभा नहीं देता। और आखिर उनको इस सिलसिलेमें सम्भावनाओंकी चर्चा करनेके लिए आपको बुलाना ही पड़ता। बम्बईमें हुई मुलाकातके बाद मुझे उनका कोई सन्देश नही मिला। और बड़े भाईसे[1] भी बम्बईमें आधे घंटेकी भेंटके बाद फिर मेरी कोई भेंट नही हो सकी। श्रीमती नायडू उनको ले आई थीं। और मैं पहलेकी तरह ही उनसे सोत्साह मिला था। इससे अधिक मैंने अगर कुछ किया है तो बस प्रार्थना-भर की है जिसके बारेमें मैंने एक पत्र-प्रतिनिधिको बताया भी था। हाँ, मै उन्हींके अनुरोधपर मुल्लाजीसे भी मिला था। क्या यह मैंने गलत किया ?

हाँ, वृद्धा-विधवाकी[2] हालत तो करुणाजनक होगी, यद्यपि वह बहुत बहादुर महिला है। मेरा ख्याल है कि आप उनसे रोज मिल लेते होंगे। कृपया उनसे मेरा सस्नेह अभिवादन कहिए। क्या सरूप[3] वही है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[पुनश्च :]

इस माह ११ तारीखके करीब मुझे शायद शिमला जाना पड़े।

अंग्रेजी (जी० एन० ५०८०)की फोटो-नकलसे।

८२. पत्र : तान युन-शानको[4]

[स्थायी पता] साबरमती
४ मई, १९३१

प्रिय मित्र,

आप जब भी ठीक समझें फिरसे अवश्य पधारें।

चीनी विद्यार्थियोंको मेरा यह सन्देश है:

१. शौकत अली।

२. मोतीलाल नेहरूकी विधवा पत्नी।

३. विजयलक्ष्मी पंडित।

४. तान युन-शान बारडोलीमें गांधीजीसे मिले थे और उनसे अनुरोध किया था कि वे चीनी विद्यार्थियोंको अपने आशीर्वाद सहित एक सन्देश दें। गांधीजीका सन्देश चीनकी लगभग सभी प्रमुख पत्रिकाओंमें व्यापक रूपसे प्रकाशित हुआ था और न केवल विद्यार्थियोंने बल्कि सभी लोगोंने इसकी सराहना की थी।

"ध्यान रखिए कि चीनकी मुक्ति शुद्ध अहिंसासे ही होगी – ऐसी अहिंसा जिसमें कोई मिलावट न हो।"

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजी (जी० एन० ९६७३) की फोटो-नकलसे तथा सिनो-इंडियन जर्नलके "गांधी स्मृति अंक," खण्ड १, भाग २, पृष्ठ ३७ से भी।

८३. पत्र : दलाई लामाको[1]

[स्थायी पता] साबरमती
४ मई, १९३१

प्रिय मित्र,

आपके उपहारके लिए धन्यवाद। मुझे खेद है कि मैं आपकी भाषा नहीं समझ सकता। मेरी इच्छा और आशा है कि तिब्बतके लोग भगवान बुद्ध द्वारा दिये अहिंसाके पवित्र सन्देशको समझें और उसपर अमल करें।

आपका मित्र,
मो० क० गांधी

महाविभव लामा
तिब्बत

अंग्रेजी (जी० एन० ९६७४) की फोटो-नकलसे भी; तथा सी० डब्ल्यू० ६२०८
सौजन्य : मीराबहन

१. तान युन-शान तिब्बतके १३ वें दलाई लामाका पत्र लाये थे। पत्र तिब्बती भाषामें था जिसे कोई पढ़ नहीं पाया। गांधीजीने कहा था कि वे पत्रकी प्राप्ति स्वीकृति गुजराती भाषामें करेंगे ताकि दलाई लामा उसे समझे बिना पत्रका आनन्द ले सकें। मीराबहनकी टिप्पणीके अनुसार यह पत्र मूल गुजरातीका अंग्रेजी अनुवाद है। मूल पत्र उपलब्ध नहीं है।

८४. पत्र : नारणदास गांधीको

४ मई, १९३१

चि० नारणदास,

तुमपर एक बोझ और बढ़ जायेगा। जमनादास रतिलालकी[1] बात करेगा। जब वह आये उसे बंगलेमें रखना। ऊधम करे तो उसे बाँधकर रखनेके सिवा कोई चारा नही है। डॉ० कानूगा और डॉ० हरिभाईको बुलाना। उनको फीस दे देना और वे जो कहें, वही करना। डॉ० हरिभाई अपने अस्पतालमें रखें तो वहाँ, नहीं तो पागलखानेमें रखें। सम्भव है, वह ठीक हो जाये; फिर भी उसके बारेमें हमें सावधान तो रहना ही चाहिए। उसके पास छुरी आदि न रहने पाये। किसी व्यक्तिको उसकी देखरेखके लिए नियुक्त करना पड़े तो कर देना। नया व्यक्ति रखना ही हो तो वेतन देकर भी रख लेना। मै नहीं चाहता कि इसमें तुम्हारा ज्यादा समय जाये। फिर भी उसकी जिम्मेदारी लिए बिना छुटकारा नही। शायद उसे प्रेमसे वशमें किया जा सके। यदि चम्पा[2] भी आये तो मुझे लगता है कि वह उसके साथ नहीं रह सकती। वह आये तो आश्रममें रहे। यदि उसमें स्वयं रतिलालके साथ रहनेकी हिम्मत हो तो दूसरी बात है।

दूसरा सवाल लक्ष्मीका[3] है। लक्ष्मीका लालन-पालन इस रीतिसे हुआ है कि किसी अन्त्यजको सौंपनेसे वह सुखी नही रह सकती। मुझे अनायास ही मारुतिका विचार आया। लक्ष्मीदासका पत्र पढ़ लेना और अपनी राय लिखना। धर्मदृष्टिसे भी यह कदम उचित और आवश्यक लगता है। फिर भी तुम्हारी निष्पक्ष राय जानना चाहता हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती एम० एम० यू० – १ से।

१. डा० प्राणजीवन मेहताके पुत्र जो कि पागल हो गये थे।

२. रतिलालकी पत्नी।

३. दूधाभाईकी लड़की जिसे गांधीजी अपनी पुत्री मानते थे।

८५. पत्र : किशनसिंह चावड़ाको

बोरसद
४ मई, १९३१

भाई किशनसिंह,

तुम्हारा पत्र मिल गया है। उसमें मुझे कोई नई दलील नहीं दिखाई देती। तुमने जो विरोध व्यक्त किया है, उस सबका जवाब कई बार 'यंग इंडिया' तथा 'नवजीवन' में दिया जा चुका है। इसलिए अब तो तुम जब किसी दिन मिलोगे तो इस प्रश्नपर थोड़ी-सी चर्चा करनेको तैयार रहूँगा। इसके लिए जूनसे पहले समय नहीं मिल सकता। इस बीच मेरी सलाह है कि मैं जो-कुछ लिख चुका हूँ, उसपर पुनः विचार करो।

मोहनदासके वन्देमातरम्

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९२९५)की फोटो-नकलसे।
सौजन्य : किशनसिंह चावड़ा

८६. पत्र : जमनादास गांधीको

४ मई, १९३१

चि० जमनादास,

साथके दोनों पत्र [यथास्थान] भिजवा देना। डाक्टरको लम्बा तार किया है। पत्र भी लिखा है। मुझे पत्र लिखते रहना। तुम डाक्टरको लिखो तो अच्छा रहे। मैंने उसके तार और पत्रमें तुम्हारा उल्लेख किया है।

मनुके बारेमें पूरी बातोंका पता लगाकर लिखना। केलीसे मिल चुके होओ तो उसके बारेमें भी लिखना।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९३२०)से।
सौजन्य : जमनादास गांधी

८७. पत्र : शारदाबहन चि० शाहको

बोरसद
४ मई, १९३१

चि० शारदा,

क्या खुद मुझे लिखे विना मुझसे पत्र पानेकी तुम्हारी अपेक्षा उचित है? फिलहाल मैं न लिखूँ तो भी तुम सब तो मुझे लिख सकती हो।

आनन्दी यहाँ नही है। तेरे कौन-कौनसे पाँच वर्ग चल रहे हैं और पढ़ाता कौन है?

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९९००)से।
सौजन्य: शारदाबहन चोखावाला

८८. पत्र : एच० डब्ल्यू० एमर्सनको

बोरसद
४ मई, १९३१

प्रिय श्री एमर्सन,

बिहारके सम्बन्धमें लगाये गये जिन विभिन्न आरोपोंकी प्रतियाँ आपने भेजनेकी कृपा की थी, उनका उत्तर प्राप्त करनेमें मुझे थोड़ा समय लग गया। बाबू राजेन्द्र-प्रसादने सभी आरोपोंकी जाँच कराई थी और उनके ही द्वारा तैयार किया गया, उस जाँचका संक्षिप्त सार मैं आपको भेज रहा हूँ। पूरी रिपोर्ट भेजकर मैं आपकी व्यस्तता नही बढ़ाना चाहता; लेकिन यदि आप सारको पढ़कर आगे कुछ जानना चाहेंगे तो मै आपके पास पूरी रिपोर्ट सहर्ष भेज दूँगा।

बाबु राजेन्द्रप्रसादने समझौतेकी बहुत-सी धाराओंको स्थानीय प्रशासन द्वारा कार्यान्वित न किये जानेकी शिकायत की है। उसकी एक प्रति आपको भेज रहा हूँ। मैं जानता हूँ कि वकीलोके मामलेमें सरकारको औपचारिक रूपसे दोषी नहीं ठहराया जा सकता। लेकिन फिर भी सवाल उठानेके और तरीके तो हैं ही।

हृदयसे आपका,

श्री एच० डब्ल्यू० एमर्सन
गृह सचिव, भारत सरकार
शिमला

[५ मई, १९३१]

[पुनश्च :]

यह पत्र मैंने कल बोलकर लिखवाया था। आज मेरा मौनव्रत है। इसी महीनेकी २ तारीखका आपका कृपापत्र मिला। बिहारका पहला विवरण गलतीसे मेरे टाइपिस्टको नही दिया गया था, इसलिए मैं मूल विवरण ही भेज रहा हूँ। कृपया लौटा दें।

आपने मेरे शिमला आनेकी तारीख ११ के आसपास रखी है। ११ तारीखको सोमवार है। अगर मै १३ तारीखको शिमला पहुँचूँ तो क्या यह ठीक होगा? कृपया नई तारीखकी सूचना तारसे भेजें। जहाँतक मेरा सम्बन्ध है, मैं खेड़ाके मामलेको जितना मुझसे बन सके निबटा देना चाहता हूँ। लेकिन अगर मेरी उपस्थिति और भी जल्दी आवश्यक हो तो मै अपने कुछ काम रोक दूँगा।

[अंग्रेजीसे]

अ० भा० कां० कमेटी, फाइल-संख्या १६-बी, १९३१।
सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

८९. पत्र : फ्लोरेंस रोजनब्लाटको

[स्थायी पता] साबरमती
५ मई, १९३१

मेरी युवा मित्र,

तुम्हारा सुन्दर पत्र मिला। तुम्हें अपनी आत्माको शान्त बनाये रखना चाहिए। मेरे जीवनकी जो भी बात तुमको अच्छी लगी हो, उसे तुम वहाँ रहकर भी अपना सकती हो और इस हदतक जिस हदतक यह मिलने पर सम्भव है; बल्कि ऐसा करना मिलनेसे भी अच्छा रहेगा। तुम भारतके लिए प्रभावकारी ढँगसे जो कर सकती हो सो तो यही हैं कि जहाँ भी कही कोई भारत अथवा यहाँके निवासियोंकी बुराई करे, वहाँ तुम इस देशकी तारीफमें कुछ ठीक शब्द कह दो। भारतकी प्रशंसामें विश्वासके साथ कुछ कहनेके लिए तुम्हें भारतीय संघर्षके सम्बन्धमें अध्ययन करनेके लिए कुछ समय निकालना पड़ेगा। तभी तुम साधिकार कुछ कह सकोगी।

हृदयसे तुम्हारा,

फ्लोरेंस रोजनब्लाट
ब्रूकलिन, न्यूयार्क (अमेरिका)

अंग्रेजी (एस० एन० १७०२९)की फोटो-नकलसे।

९०. पत्र : वी० टी० कृष्णमाचारीको

बोरसद
५ मई, १९३१

प्रिय दीवान साहब,

बीजापुरमें 'उद्योगालय' नामक एक औद्योगिक प्रतिष्ठान है। आपके पहले जो दीवान थे, मुझे उनकी कृपासे, विशेषकर महिलाओं द्वारा कताई-बुनाईके केन्द्रकी स्थापनाके लिए जमीनका एक टुकड़ा प्राप्त हुआ था। उस जमीनका पट्टा एक महिला कार्यकर्त्रीके नामपर दिया गया था। अब उन्होंने इस कार्यसे अवकाश ग्रहण कर लिया है। जहाँतक उनका सम्बन्ध है, उन्होंने जमीनका वैधानिक अधिकार सत्याग्रह-आश्रमके न्यासियोंको सौंप दिया है। एक न्यासी तो उद्योगालयमें काम भी कर रहा है। उसने जमीनका पट्टा सत्याग्रह-आश्रमके न्यासियोंके नाम करानेके लिए प्रयत्न भी किया था। काफी समयतक प्रतीक्षा करानेके बाद सम्बन्धित अधिकारीने जमीनकी दाखिल-खारिजकी अर्जी नामंजूर कर दी। जहाँतक मेरी जानकारी है, अधिकारीने इसका कोई कारण नहीं बताया। एक बार यह भी सुननेमें आया था कि यदि प्रतिष्ठान इस बातको लिखकर दे दे कि उसका राजनीतिसे कुछ सम्बन्ध नहीं रहेगा, तो जमीनके हस्तान्तरणमें कोई परेशानी नहीं होगी। मेरा ख्याल है कि इसके बाद अधिकारीकी बदली हो गई। निःसन्देह, मेरी कार्य-प्रणालीके अनुरूप इस संस्थाका भी अन्य देशी राज्योंमें चल रहे प्रतिष्ठानोंकी तरह आरम्भसे ही राजनीतिके साथ बिलकुल कोई सम्बन्ध नहीं रहा। पिछले संघर्षके दौरान भी यही बात रही। जैसा कि आप जानते हैं, अखिल भारतीय चरखा संघके माध्यमसे बड़ौदा राज्यको अपने ग्रामोंके पुनर्गठनमें चरखेसे बड़ा सहयोग मिलता रहा है। बीजापुरमें चल रहा कार्य भी इसी प्रकारका है। क्या आप इस मामलेको देखनेका कष्ट करेंगे और यदि मेरे द्वारा प्रस्तुत तथ्योंसे आप सन्तुष्ट हों, तो उपर्युक्त न्यासियोंके नाम जमीनका पट्टा कर देनेके आदेश जारी कर देंगे? राज्यने यह जमीन आजकल तो बहुत थोड़े किराए पर कुछ लोकसेवाके कार्योंके लिए दे रखी है; लेकिन यदि राज्यको कोई आपत्ति न हो तो मैं इस जमीनको खरीद लेना चाहूँगा। पहले भी ऐसा प्रस्ताव किया गया था। मैं यहाँ यह भी बतला दूँ कि हमने इस जमीनपर १२,००० रुपयेकी लागत की एक इमारत बना ली है। इस संस्थाके माध्यमसे कताईका काम देकर हम बीजापुरकी बहुत-सी गरीब महिलाओं तथा बुनकरों और धुनियोंकी एक बस्तीके लिए निर्वाहका साधन जुटा रहे हैं। इसके अतिरिक्त इस प्रतिष्ठानका कोई और कार्यक्रम नहीं है। मुझे दुःख है कि इस छोटे-से मामलेको लेकर मुझे आपको कष्ट देना

पड़ा। पर मेरे लिए यह बात छोटी नहीं हैं, क्योंकि मुझपर अनेक लोगोंके हितोंकी देखरेखकी जिम्मेवारी है।

आपका,
मो० क० गांधी

श्री वी० टी० कृष्णमाचारी
बड़ौदाके दीवान
बड़ौदा

अंग्रेजी (एस० एन० १७०३०) की फोटो-नकलसे।

९१. पत्र : बॉयड टुकरको

बोरसद
५ मई, १९३१

प्रिय बॉयड,

आपका पत्र पाकर और यह जानकर प्रसन्नता हुई कि भारतके मैदानी इलाकोंकी भीषण गर्मीसे आपको थोड़ी राहत मिल गई है। मेरी अमेरिका-यात्राकी अफवाहमें कोई सार नहीं। लेकिन जैसे ही यह समाचार विदेशोंमें फैला, मुझे श्री पेज, डॉ० शेरवुड एडी, रेवेरेंड होम्स, डॉ० वार्ड और अन्य लोगोंके हस्ताक्षरसे एक तार मिला, जिसमें मुझे बिलकुल निश्चित और एक स्वरसे अमेरिकाकी यात्राके विरुद्ध आगाह किया गया था।[1] उन्होंने स्पष्ट कहा कि यदि आप गये तो लोग आपकी यात्रासे अनुचित लाभ उठानेकी कोशिश करेंगे; आप अमेरिकी जनताके बीच जानेकी अपेक्षा यहाँ दूर रहकर अपने उद्देश्यकी सेवा कही अधिक अच्छी तरह कर सकते हैं। ध्यान रखिए यह सब एक ही तारमें लिखा गया है। इसी डाकसे मेरे किसी अपरिचित अमेरिकी मित्रका एक पत्र भी आया है, जिसमें मेरे कार्य और सन्देशको तो उचित बताया गया है, पर मुझे साग्रह समझानेकी कोशिश की गई है कि मैं अमेरिका न जाऊँ। मुझे भी बिलकुल ऐसा ही लग रहा है। इसलिए यदि मैं लन्दन गया और मेरे पास कुछ सप्ताहोंका समय हुआ, तो भी अपने सम्माननीय मित्रोंकी इन चेतावनियोंको ध्यानमें रखते हुए मैं अमेरिका नहीं जाऊँगा। और अधिक सोच-विचारके बाद क्या आपकी भी लगभग यही राय नहीं बन जायेगी?

अब रही लन्दनकी बात। जबतक हिन्दू-मुसलमानोंकी समस्या हल नहीं हो जाती, मेरे वहाँ जानेकी कोई सम्भावना नहीं है। यदि मैं वहाँ गया भी तो मैं आपके समाजको पूर्ण सम्मान देते हुए भी सोच नहीं पा रहा हूँ कि आपकी सेवाओंका

१. देखिए “टिप्पणियाँ”, १४-५-१९३१ का उपशीर्षक “अमेरिका जानेकी अफवाह”।

मैं क्या उपयोग कर सकूँगा। फिर एन्ड्रयूज वहाँ मौजूद ही हैं जो हर तरहसे मुझे अपनी गिरफ्तमें ले लेंगे; यह आप जानते ही हैं। उनका एक पत्र मेरे पास आया है, जिसमें उन्होंने मेरी लन्दन-यात्राको सर्वथा निश्चित मान लिया है और अपने-आपको मेरी सेवामें नियुक्त कर लिया है और यह भी लिख दिया है कि मुझे कहाँ ठहरना है। हेनरी पोलक भी वहाँ हैं, जिन्होंने दक्षिण आफ्रिकामें वर्षो मेरे कार्यालयमें काम किया है। फिर वहाँ म्यूरियल लेस्टर इनके सिवा है। इसलिए अगर आप मेरे साथ लन्दन चलें भी, तो सचिवकी हैसियतसे नही। फिर मुझे मीराका भी ख्याल रखना होगा। वह तो मेरे साथ होगी ही। लेकिन यह सब अभीतक अटकलबाजी ही है। मैंने सोच लिया था कि यदि जाना निश्चित हुआ तो कार्यक्रमकी जानकारी आपको होनी ही चाहिए। आप कराचीमे मेरे साथ थे; उससे मुझे खुशी हुई थी। दुख तो इस बातका रहा कि मैं आपके साथ फुरसतसे बैठकर बातचीत नही कर पाया। यह जरूर एक बुरी बात रही कि आपसे कोई-न-कोई चीज गुम होती ही रहती थी; लेकिन मै उसे ऐसी अयोग्यता नही मानता कि वह आपको साथ ले चलनेमें बाधक बने। मुझे आपसे अपने असबाबकी निगरानी की अपेक्षा कही अधिक अच्छा काम ले सकना चाहिए।

श्री बॉयड टुकर
द्वारा पोस्ट मास्टर,
श्रीनगर (कश्मीर)

अंग्रेजी (एस० एन० १७०३१) की फोटो-नकलसे।

९२. पत्र : राजेन्द्रप्रसादको

बोरसद
५ मई, १९३१

प्रिय राजेन्द्र बाबू,

समय बचानेकी दृष्टिसे मै यह पत्र बोलकर लिखा रहा हूँ। अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीके मन्त्रीके नाम आपका पत्र तथा आपके दो वक्तव्योंको प्रतियाँ मैंने सरकारको भेज दी हैं और मुझे आशा है कि मै अगले सप्ताह शिमला जाऊँगा, जहाँ अन्य बातोंके साथ-साथ बिहारकी स्थितिकी भी चर्चा करूँगा; इसलिए शिमला-यात्राके बाद ही आपको पत्र लिखूँगा। आशा है, आप स्वस्थ होंगे। व्रजकिशोर बाबू कैसे है ?

श्री राजेन्द्रप्रसाद
सदाकत आश्रम
जिला पटना

अंग्रेजी (एस० एन० १७०३२) की फोटो-नकलसे।

९३. पत्र : सी० एफ० एन्ड्रयूजको

[स्थायी पता,] साबरमती
५ मई, १९३१

यह पत्र रेजिनाल्ड रेनॉल्ड्सके बारेमें जानकारी देनेके लिए लिख रहा हूँ। उनका पता है टर्नर्स कोर्ट, बेनसन, आक्सफोर्डके समीप। उनको समझौतेसे निराशा हुई है। जिस लड़कीसे उनका विवाह होनेवाला था, उससे उनकी सगाई टूट गई है। उनकी आर्थिक दशा खराब है। मेरी उनके साथ हार्दिक सहानुभूति है। मैं नही समझता कि उनके पत्रके 'यंग इंडिया' में प्रकाशित मेरे उत्तरसे[1] उनको कोई सन्तोष हुआ है। मैं चाहूँगा कि वे इतना समझ लें कि सब-कुछ ठीक चल रहा है और समझौतेके लिए सिद्धान्तका होम नहीं किया गया है। मै चाहूँगा कि आप उसके पास जाकर इस विषयसे सम्बन्धित पूरी बात उनको समझा दें; और अन्यथा भी उनकी सहायता करके उनका एकाकीपन दूर करें। वह तो सोने-जैसे खरे और अत्यन्त ही वीर व्यक्ति हैं। लगता है, जो-कुछ मैंने आपको लिखा है, सब अनावश्यक ही है और आप इससे पहले ही उनसे मिल चुके होंगे तथा मैंने जितना-कुछ उनके बारेमें कहा है उससे ज्यादा आप स्वयं जान गये होंगे। लेकिन मैं भी आपको लिखे बिना नहीं रह सका; आप इन बातोंमें मेरे प्रति सहानुभूतिका भाव रखेंगे ही; क्यों कि आप इस तरहके काम मुझसे कही अधिक कई बार कर चुके हैं। मै अब भी गुजरातकी समस्यामें व्यस्त हूँ, इतना व्यस्त कि और किसी कामके लिए समय ही नही रहता। अफसरोंकी काहिली, अनिच्छा और यहाँतक विरोधके रहते हुए समझौतेको लागू कराना बड़ा कठिन काम है। यह तो मेरा भी धैर्य डिगा देता लेकिन आशा है, मुझे यह परिस्थिति पस्त नही कर पायेगी। वातावरण अब जरा साफ़ हो गया है। अगले सप्ताहमें शिमला जानेका विचार कर रहा हूँ, वहाँ समझौतेसे सम्बन्धित इस तथा अन्य मामलोंपर और गोलमेज परिषद्के सम्बन्धमें भी बातचीत करूँगा। हिन्दू-मुस्लिम समस्याका हल निकलनेके पहलेसे ज्यादा अच्छे आसार दिखाई नहीं पड़ते। जबतक यह रोड़ा रास्तेसे नही हटता, मेरे लन्दन जानेका सवाल ही पैदा नही होता।

श्री सी० एफ० एन्ड्रयूज

अंग्रेजी (एस० एन० १७०३३) की फोटो-नकलसे।

१. देखिए "एक अंग्रेजकी परेशानी", १६-४-१९३१।

९४. पत्र : नानीबहन झवेरीको

बोरसद
५ मई, १९३१

चि० नानीबहन,[1]

तुम्हारा पत्र मिला। तुम्हारा स्वास्थ्य किसी भी तरह सुधर जाये तो वही काफी है। गंगाबहन कहाँ है? कैसी है?

पुस्तकें तो तुमने बहुत-सी पसन्द कर ली है। अमृतलाल मणियारकी पुस्तकोंमें पढ़ जाने लायक बातें हैं।

पन्नालालके प्रश्नोंका समाधान न हुआ हो तो वह मुझे लिखता रहे।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ३११२) की फोटो-नकलसे।

९५. पत्र : महावीर गिरिको

५ मई, १९३१

चि० महावीर,

तुम्हारा पत्र मिला। विभक्ति-प्रत्यय नामसे अलग नहीं[2] लिखा जा सकता। समासके पद भी अलग-अलग नहीं लिखे जा सकते। इसलिए 'चरण कमल' में नहीं; 'चरणकमलमें' लिखा जायेगा। क्या दैनन्दिनी लिखते हो? 'गीता' आदि जबानी याद कर रहे हो?

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ६२२८) की फोटो-नकलसे।

१. आश्रम-दुग्धालयके प्रबन्धक पन्नालाल झवेरीकी पत्नी।

२. विभक्तियोंको संज्ञासे हटाकर और सटाकर लिखनेमें विकल्प है। समस्त पदोंमें विकल्प नहीं हैं; उन्हें अलग-अलग नहीं लिख सकते।

९६. सन्देश : भूटानवासियोंको[1]

बोरसद
५ मई, १९३१

आपसे मिलकर खुशी हुई। आशा है, भूटानवासी सत्य और अहिंसाका सन्देश पूरी तरह समझकर उसके अनुरूप आचरण करेंगें।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, ६-५-१९३१

९७. सन्देश : खादीका[2]

बोरसद
५ मई, १९३१

लोग मुझसे पूछते हैं कि मैं खादीके पीछे दीवाना क्यों बना हुआ हूँ। गाँवोंकी संख्या सात लाख है। इन गाँवोंकी एक बड़ी संख्या लगभग भुखमरीकी अवस्थामें दिन काट रही है। वहाँ वर्षमें लगभग छः महीने लोगोंके पास काम नहीं रहता। इनके लिए कोई अनुपूरक धन्धा ढूँढना जरूरी है। हमें उनके लिए कोई ऐसा धन्धा खोजना चाहिए जिसे वे पहले करते रहे हों। हाथ-कताई इसी प्रकारका एक धन्धा है। अगर गाँवोंमें हाथकी कताईका प्रचार करना है तो लोगोंसे खादी पहननेकी अपेक्षा रखना स्वाभाविक ही है। इसलिए मैं खादीके पीछे दीवाना हूँ।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, ६-५-१९३१

९८. पत्र : हरिभाऊ उपाध्यायको

बोरसद
६ मई, १९३१
सुबहकी प्रार्थनाके तत्काल बाद

भाई हरिभाऊ,

तुम्हारे पत्र मिलते रहते हैं। तुम्हें मैंने जो तार[3] भेजा था, उसकी पहुँच अभीतक नहीं मिली। मिल जानी चाहिए थी। तारमें इतना ही था कि मैं उदय-

१. भूटान-नरेशके भाई द्वारा सोने और चाँदीकी दो छोटी मंजूषाएँ और हाथसे बुना कपड़ा भेंट किये जानेके अवसरपर यह सन्देश गांधीजीने हिन्दीमें दिया था।

२. यह सन्देश एक भारतीय फिल्म कम्पनीको पहले हिन्दी, फिर अंग्रेजीमें दिया था।

३. देखिए "तार : हरिभाऊ उपाध्यायको", २-५-१९३१।

पुरमें किसीको तार नहीं दे पाऊँगा। मैं वहाँ किसीको नहीं जानता। मालवीयजी और जमनालाल तार दे सकते हैं। तुमने रामको तो लिखा ही है। यह ठीक किया। मणिलाल कहाँ है, इसकी भी मुझे खबर नहीं। उसको एक तार दिया था; जवाब नहीं मिला।

तुम्हारी स्थिति विषम है। सम्भव है कि रियासत तुम्हारी बात न सुने। ट्रेंचको[1] तुमने पत्र लिखा है; शायद वह उसकी परवाह न करे। पर लिखकर अच्छा किया है। उससे नुकसान नहीं होगा। यदि लोगोंका दुःख दूर न किया गया हो तो तुम्हें स्वयं सीमाको पार करके जेलमें जाना चाहिए; क्योंकि तुमने उनका मुखिया बनना स्वीकार किया है। यदि किसान अहिंसाका पूरा-पूरा पालन करेंगे तो जीत उनको मिलेगी ही। जमीनका कब्जा लेनेमें अहिंसाकी रक्षा कहाँतक हो सकती है, यह प्रश्न तो रहेगा ही। रियासतके सिपाही कब्जा छीनने आ जाये तब लोग क्या करेंगे? विरोध करेंगे? बैठे रहेंगे? कई प्रश्न उठते हैं। ऐसे मामलोंमें स्थूल अहिंसाका पालन ही देखनेमें आता है। आसपासकी हकीकत देखने-विचारनेके बाद जैसा तुम्हें ठीक लगे वैसा करना। फिर बादमें भले ही जिसे तुम अहिंसा मानो, वह मुझे हिंसा ही क्यों न लगे। शुद्ध भावसे व्यवहार करनेके सिवा हमारे पास दूसरा रास्ता ही नहीं है। मुझे सब बातें दीपककी तरह स्पष्ट दिखाई दे रही होतीं तो मैं यह निर्णय तुमपर न लादता। क्योंकि [वहाँकी] रियासतोंमें जो हो रहा है, वह देशकी दूसरी रियासतोंमें भी हो रहा है; और अंग्रेजी राज्यके अंचलोंमें भी वही हो रहा है। उसे देखते हुए ऐसा लगता है कि जो संघर्ष पहले हुआ, उसका प्रभाव तात्कालिक था, ज्यादा देरतक टिकनेवाला नहीं था। अहिंसाका वह प्रयोग बड़े पैमानेपर किया गया था; किन्तु वह इतना शुद्ध नहीं था या रह नहीं पाया। वह लाचारोंकी अहिंसा थी। इसका शोक नहीं है। इतना ही कर पाना सम्भव था। जो-कुछ हुआ, उसके सच्चे स्वरूपको ठीक ढंगसे देखना ही ऊपरकी टीकाका उद्देश्य है।

'त्यागभूमि' के बारेमें समझ गया हूँ। विज्ञापनोंके बारेमें भी समझ गया हूँ। जो हो सके सो करना।

रामनारायणको कहीं जाकर पूरी तरह आराम जरूर करना चाहिए। उसे काम न करने देना। अलमोड़ा जाना शायद आसान रहेगा। जहाँ जायेगा, वहाँ सेवा-कार्य तो मिलेगा ही।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ६०७३) से।
सौजन्य : हरिभाऊ उपाध्याय

१. उदयपुर राज्यके राजस्व आयुक्त।

९९. तार : फ्रामरोज़ बी० गरदाको[1]

बोरसद
६ मई, १९३१

सरदार फ्रामरोज़ गरदा
नवसारी

आश्चर्यजनक तार मिला। क्या मैं यह मान लूँ कि आपने समझौता अस्वीकृत कर दिया है। मैंने कहा था कि जिस तरह तंग किया जा रहा है, उसके स्पष्ट ठोस उदाहरण बतलाइए।

गांधी

[अंग्रेजीसे]

अ० भा० कां० क०, फाइल संख्या १६-सी, १९३१।
सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

१००. तार : सर कावसजी जहाँगीरको

[६ मई, १९३१][2]

सर कावसजी जहाँगीर
नेपियन सी रोड
बम्बई

सरदार गरदाका तार है कि अस्पष्ट आरोप लगाकर समझौतेको एक तरहसे तिलांजलि ही दी जा रही है और तंग करना जारी है। उन्हें सुस्पष्ट उदाहरण जुटानेको कहा है। बोनेका समय आ रहा है।

गांधी

[अंग्रेजीसे]

अ० भा० कां० क०, फाइल-संख्या १६-सी, १९३१।
सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय, तथा पुस्तकालय

१. फ्रामरोज़ बी० गरदाके तारके उत्तरमें, जो इस प्रकार था : "खेद है, इस सम्बन्धमें कुछ नहीं हो सकता। समझौतेके बाद भी लोगोंका व्यवहार अत्यधिक परेशानी पैदा करनेवाला है।"
२. देखिए पिछला शीर्षक।

१०१. पत्र : अब्बास तैयबजीको

बोरसद
६ मई, १९३१

प्रिय भुर्रर,[१]

विद्यापीठके पतेपर भेजा आपका पत्र मुझे नही मिला। आशा है, कुछ समय बाद मिल जायेगा। यह जानकर प्रसन्नता हुई कि आपका ऑपरेशन सफल रहा। आशा है, इसके बाद अब ऑपरेशनकी जरूरत कभी नही पड़ेगी। अस्पतालमें आपको कबतक रखेंगे? मैं कमसे-कम सोमवारतक तो बोरसदमें रहूँगा ही। फिर मुझे शिमला जाना पड़ सकता है।

मुझे विद्यापीठवाला आपका पत्र अभी मिला। मै गायकवाड़को लिख रहा हूँ। लगता है, कही जरूरतसे ज्यादा विलम्ब न हो गया हो। मुझे अभी बड़ौदा बिलकुल नही जाना चाहिए।

हृदयसे आपका,
बापू

श्रीयुत अब्बास तैयबजी
के० ई० एम० अस्पताल
बम्बई

अंग्रेजी (एस० एन० ९५७५)की फोटो-नकलसे।

१०२. पत्र : यूसुफ हुसैनको

[स्थायी पता,] साबरमती
६ मई, १९३१

मेरे नौजवान दोस्त,

१० मार्चका आपका खत पाकर बहुत खुश हुआ। उसका उत्तर जल्दी न लिखनेके लिए आप मुझे माफ करेंगे। मैं इस बीच बहुत ही व्यस्त रहा और सफरमें होनेके कारण कहीं अधिक नहीं रह पाया। तरुण विद्यार्थी देशके लिए बेशक बहुत काफी काम कर सकते हैं। सबसे पहली बात तो यह कि वे खादी पहनकर उन गरीबोंकी मदद करें जो घरोंमें बैठकर कताई-बुनाई करते हैं। वे खुद भी हाथ-कताई और धुनाई कर सकते हैं। इस तरह वे मुल्ककी दौलत बढ़ा सकेंगे और पढ़ाई पूरी

१. गांधीजी और तैयबजी द्वारा आपसमें अपनाया गया अभिवादनका प्रकार।

करनेके बाद गाँवोंमें काम करनेके लायक भी बन जायेंगे। विद्यार्थी दूसरी जातिके नौजवानोंके साथ दोस्ती करके और विभिन्न प्रकारों एक-दूसरेकी सेवा करके और तनाव के दिनोंमें खतरेमें पड़े लोगोंकी सहायता करने और उन्हें बचानेके लिए अपनी जान तककी बाजी लगाकर दोनों जातियोंमें नेकनीयतीको बढ़ावा भी दे सकते हैं।

हृदयसे आपका,

श्री यूसुफ हुसैन
मुस्लिम युनिवर्सिटी, अलीगढ़

अंग्रेजी (एस० एन० १७०३५)की माइक्रोफिल्मसे।

१०३. पत्र : एच० हरकोर्टको

[स्थायी पता,] साबरमती
६ मई, १९३१

प्रिय मित्र,

आपके पत्रके लिए धन्यवाद। उत्तर देनेमें विलम्बके लिए मुझे क्षमा करें; पर मैं लाचार था। मैं नहीं कह सकता कि गोलमेज परिषद्के फलस्वरूप दोनों देशोंके बीच स्थायी तौरपर सद्भावना स्थापित हो गई है। तथापि दोनों देशोंके प्रतिनिधि आपसमें समझौता करनेको कृत-संकल्प हों तो परिषद्से बहुत लाभ हो सकता है। मैं यह भली-भाँति समझता हूँ और इस बातके लिए बड़ा आभारी हूँ कि ब्रिटिश द्वीप-समूहमें मेरे प्रति अनेक अपरिचित सज्जनकी मित्रताका भाव रखते हैं।

हृदयसे आपका,

श्री एच० हरकोर्ट, लन्दन, दक्षिण पूर्व १९

अंग्रेजी (एस० एन० १७०३६) की फोटो-नकलसे।

१०४. पत्र : च० राजगोपालाचारीको

[स्थायी पता,] साबरमती
६ मई, १९३१

कोयम्बटूरके चिन्नापावुका एक पत्र भेज रहा हूँ। उन्होंने अपने पत्रमें आपका उल्लेख किया है। उनके और उनके कामके बारेमें कृपया मुझे पूरी-पूरी जानकारी दें। मैं चाहता हूँ कि आप ही इस पत्रके सिलसिलेमें उन्हें लिखें। उन्होंने सिंगानाल्लूरमें आदि-द्रविड़ोंके साथ व्यवहारके बारेमें जो लिखा है, क्या वह सच हो सकता है?

संलग्न : १

श्री चक्रवर्ती राजगोपालाचारी
तिरुचेन्गोडु (दक्षिण भारत)

अंग्रेजी (एस० एन० १७०३७) की फोटो-नकलसे।

१०५. पत्र : रुनहम ब्राउनको

[स्थायी पता,] साबरमती
६ मई, १९३१

प्रिय मित्र,

आपके ४ फरवरीके पत्रके लिए धन्यवाद। इसकी प्राप्ति सूचना पहले न भेज पानेके लिए मुझे क्षमा करें। वह किसी तरह सम्भव ही नहीं हो पाया। मेरा ख्याल है कि प्रो० आइन्स्टीनका सुझाव सर्वथा तर्कसंगत है। और यदि युद्धमें विश्वास न करनेवालोंके लिए युद्ध सम्बन्धी सेवाओंमें शामिल होनेसे इन्कार करना उचित माना जाता है, तो इससे अनिवार्य निष्कर्ष यही निकलता है कि युद्धका प्रतिरोध करनेवालोंको कमसे-कम उनके साथ सहानुभूति तो रखनी ही चाहिए; भले ही उनमें अपने अन्तःकरणकी खातिर कष्ट-सहन करनेवाले लोगोंके उदाहरण पर स्वयं अमल कर सकने जितना साहस न हो।

हृदयसे आपका,

श्री एच० रुनहम ब्राउन
११, एबे रोड, एन्फील्ड
मिडिल सेक्स (इंग्लैंड)

अंग्रेजी (एस० एन० १७०३८) की फोटो-नकलसे।

१०६. पत्र : खानचन्द देवको

[स्थायी पता,] साबरमती
६ मई, १९३१

प्रिय लाला खानचन्द,

आपका पत्र मिला। मैं इन सभी मामलोंके सिलसिलेमें सरकारसे लिखा-पढ़ी कर रहा हूँ और सम्भव है कि इन सबके बारेमें चर्चा करनेके लिए मैं शिमला भी जाऊँ। इसलिए इस समय तो मैं आपको यही सलाह दे सकता हूँ कि वहाँ जो कुछ भी हो, उसकी खबर मुझे देते रहें। मेरी यह भी सलाह है कि आप धरने देना शुरू न करें और यदि पूर्ण शान्ति न रख सकें तो जो धरने चल रहे हों उनको भी बन्द कर दें। किसी भी तरहका उत्पात नहीं होना चाहिए। मैं नहीं कह सकता कि पंजाबके गवर्नरके इस आरोपमें कितनी सचाई है कि तरह-तरहके उत्तेजनापूर्ण भाषण दिये गये हैं। क्या आप पंजाबके समाचारपत्रोंको नियन्त्रणमें रख सकते हैं? मैं जानता हूँ कि अक्सर हिंसात्मक लेख लिखे जाते हैं। मैं नहीं चाहता कि कांग्रेससे सम्बन्धित कोई भी व्यक्ति हिंसात्मक भाषण दे या लेख लिखे। इस प्रकारके भाषणों और लेखोंसे हमारा पक्ष कमजोर होता है।

हृदयसे आपका,

लाला खानचन्द देव
पंजाब प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी
ब्रैडलॉ हॉल, लाहौर

अंग्रेजी (एस० एन० १७०३९) की माइक्रोफिल्मसे।

१०७. पत्र : गुलजारीलाल नन्दाको

बोरसद
६ मई, १९३१

प्रिय गुलजारीलाल,

श्री गिडनीसे तुम दृढ़तापूर्वक कह दो कि किसी तरहकी भी जोर-जबर्दस्ती नहीं की जा रही है। परन्तु सदस्यताकी कुछ शर्तें निश्चित करनेका तुमको पूरा अधिकार है। समझौतेकी यही अपेक्षा है कि धरने नितान्त शान्तिपूर्ण रहें, सब मानते हैं कि वे शान्तिपूर्ण ही हैं। सरकार किसी भी सूरतमें शराब सम्बन्धी कानूनके प्रत्यक्ष उल्लंघनोंकी ओरसे आँखें नहीं मूँद सकती। मुझे शायद सरकार और जनताकी ओरसे किये गये समझौतेके तथाकथित उल्लंघनोंके सिलसिलेमें अगले सप्ताह शिमला जाना

पड़े। इसलिए कोशिश करके सारा विवरण जुटा दिया जाये। तुमने जो धाराएँ भेजी थीं, मेरे पास हैं।

श्री गुलजारीलाल नन्दा
सूती वस्त्र श्रमिक संघ
मजदूर कार्यालय
लाल दरवाजा, अहमदाबाद

अंग्रेजी (एस० एन० १७०४०) की माइक्रोफिल्मसे।

१०८. पत्र : कोंडा वैंकटप्पैयाको

[स्थायी पता,] साबरमती
६ मई, १९३१

प्रिय वैंकटप्पैया,

कृपया संलग्न पत्र पढ़ जाइए। नीडूके[1] बारेमें आप जो भी जानते हों सब मुझे लिख भेजिए या पूछताछ करके मुझे बतलाइए। क्या इस सारी दुर्भाग्यपूर्ण स्थितिके लिए वह स्वयं जिम्मेदार है? मैं उसकी सहायता करना चाहता हूँ, भले ही अन्नपूर्णाकी[2] स्मृति ही इसका कारण हो। पर आपको इसमें मेरा मार्गदर्शन करना पड़ेगा।

संलग्न : २

श्री कोंडा वैंकटप्पैया
गुन्टूर (मद्रास प्रेसीडेन्सी)

अंग्रेजी (एस० एन० १७०४१) की माइक्रोफिल्मसे।

१. मगन्ती बापी नीडू; देखिए अगला शीर्षक।
२. नीडूकी पत्नी, जिसकी मृत्यु, १९२७में हुई थी; देखिए खण्ड ३५, पृष्ठ २०२-३।

१०९. पत्र : मगन्ती बापी नीडूको

[स्थायी पता,] साबरमती
६ मई, १९३१

प्रिय नीडू,

तुम्हारे इस संकटमें मेरे हृदयकी सारी सहानुभूति तुम्हारे साथ है; पर यदि तुम शान्तचित्त होकर ठीक तरहसे जूझो तो सफल हो जाओगे। सुख-समृद्धि नहीं, बल्कि दुःख और विपत्ति ही मनुष्यको बनाते हैं, समृद्धि तो उसे बिगाड़ देती है। और फिर तुम यदि भूखसे पीड़ित वर्गके हो, तो तुम अपनेको लाखों-करोड़ोंमें से एक समझो। परन्तु मैं जानता हूँ कि यह दार्शनिकता कितनी ही सही क्यों न हो तुमको सान्त्वना नहीं दे सकेगी। इसलिए मैं कोई स्पष्ट सुझाव तभी दे सकूँगा, जब तुम मुझे यह बतला दो कि तुम्हारी न्यूनतम अपेक्षाएँ क्या हैं। न्यूनतम अपेक्षाएँ निश्चित करते समय तुमको अपने पिछले जीवन-स्तरका नही, बल्कि भावी उचित जीवन-स्तरका ही ध्यान रखना चाहिए। सच तो यह है कि यह निश्चित करते समय तुमको साहससे काम लेना पड़ेगा, भले ही ऊपरसे वह हृदयहीनता-जैसी लगने लगे। तुमने लिखा है कि तुमको अपने और अन्नपूर्णाके [पिता-पक्षके] परिवारका भी भरण-पोषण करना है। यह निरर्थक बात है। तुमको केवल उन लोगोंका भरण-पोषण करना है, जो शरीरसे अपंग या लाचार होनेके कारण अपना निर्वाह आप करनेमें समर्थ नहीं है। दोनों ही परिवारोंमें ऐसा एक भी व्यक्ति नहीं है। उनको जरूरतसे ज्यादा लाड़-प्यार भी नहीं देना चाहिए। उन सबको — स्त्री हो या पुरुष — अपनी रोजी आप कमानेके लिए काम करना चाहिए। यदि वे ऐसा करने लगें तो तुम देखोगे कि समस्या सन्तोषजनक तथा सम्मानपूर्ण ढंगसे हल हो जायेगी। अब तुम समझ गये होंगे कि मैं तुमसे क्या पूछ रहा हूँ। पूरे ब्योरेके साथ पत्र लिखना। उसपर तुरन्त ध्यान दिया जायेगा।

तुम्हारा,
बापू

श्रीयुत मगन्ती बापी नीडू
एल्लोर (पश्चिम गोदावरी जिला)
मद्रास प्रेसीडेंसी

अंग्रेजी (जी० एन० ८८२६)की फोटो-नकल तथा एस० एन० १७०४२से भी।

११०. पत्र : के० केलप्पन नायरको

साबरमती
६ मई, १९३१

प्रिय केलप्पन,

आपका पत्र मुझे मिल गया है। आपको जो भी अनियमितताएँ दिखाई पड़ें, उनका पूरा-पूरा विवरण भेजते रहनेकी कृपा करें। इन सब चीजोंके बारेमें चर्चाके लिए मुझे शायद शिमला जाना पड़े। इस बीच आप अपनी पूरी व्यवहार-कुशलतासे काम लेते रहें।

हृदयसे आपका,

श्री के० केलप्पन नायर
केरल प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी
'मातृभूमि' बिल्डिंग्स
कालीकट

अंग्रेजी (एस० एन० १७०४३)की माइक्रोफिल्मसे।

१११. भाषण : बोचासणमें

६ मई, १९३१

आप लोगोंने इस विद्यालयके शिलारोपणका सम्मान मुझे दिया है, इसके लिए मैं आपका आभार मानता हूँ। इस विद्यालयका नाम 'वल्लभ विद्यालय' रखा गया है। इसलिए विद्यालयके जो वर्तमान संचालक हैं, और जो आगे होंगे, और जो विद्यार्थी यहाँ विद्या प्राप्त करेंगे उन सबका यह कर्त्तव्य है कि सरदार वल्लभभाईमें जो गुण हैं, उन्हें वे अपने और दूसरोंके जीवनमें उतारें। वल्लभभाई अर्थात् त्यागकी मूर्ति, वल्लभभाई अर्थात् बहादुरी, वल्लभभाई अर्थात् वीरता, वल्लभभाई अर्थात् ऊँच-नीचका भेद मिटानेवाला; वल्लभभाईकी दृष्टिमें कोई पाटीदार होनेसे उच्च नहीं हो जाता और दूसरा भंगी या बारिया या पाटणवाडिया[1] होनेसे नीच नहीं। और यह साबित करनेके लिए कि ऐसा कोई भेद है ही नहीं — इस विद्यालयकी नींव मेरे हाथ रखवाई गई है।

भाई नरहरिने[2] निवेदनमें कहा है कि इस 'वल्लभ विद्यालय'में खासकर धाराला ठाकुर[3] और पाटणवाडियोंके बच्चे शिक्षा प्राप्त करेंगे। मैं अपना काम छोड़कर यहाँ इसी आशासे आया हूँ कि धाराला ठाकुरोंसे मिलूँ। आपके साथ जबसे मेरा परिचय हुआ है, तबसे मैंने आपको ठाकुरके रूपमें ही जाना है। आपमें से जो

१. और ३. गुजरातकी पिछड़ी कौमोंके नाम।
२. नरहरि परीख।

भाई वडतालकी विराट् सभा[१] में आये होंगे उन्हें याद होगा कि उस वक्त मैंने आप सबको धाराला ठाकुर ही कहा था। जैसे कालीपरज[२], रानीपरज बने, वैसे ही धाराला ठाकुरके रूपमें जाने गये। इस बड़े संघर्षमें आपने लाभ ही उठाया है। आपमें से कुछने लोगोंकी जमीनें भले ही ली हों, लोगोंके साथ बेवफाईकी हो, उन्हें सताया हो; पर क्या यह भूलनेकी बात है कि बोचासणमें सब बारियाभाई लोगोंके साथ ही रहे? यों तो इस बातका भी दावा नहीं किया जा सकता कि सौ फीसदी पाटीदार भी जनताके साथ थे। यहाँ सब मुसलमान भाइयोंने साथ नहीं दिया, तो देशके दूसरे हिस्सोंमें वे लोगोंके साथ कन्धेसे कन्धा मिलाकर खड़े रहे।

हमारी लड़ाई जोर-जबरदस्तीकी लड़ाई नहीं है; हमारी लड़ाई तो स्वयंस्फूर्त है। अब भविष्यमें भी जब कभी हमें लड़ना पड़ेगा तो सब उसमें साथ-साथ जूझेंगे। मैं चाहता हूँ कि सरकारके साथ जो अस्थायी समझौता हुआ है, वह स्थायी हो। इस समझौतेके अन्तमें हम पूर्ण स्वराज्य ले लें। पूर्ण स्वराज्यका तात्पर्य है, वह राज्य जिसमें अपना राजकाज हम स्वयं चलाते हों। मेरा, सरदार वल्लभभाईका और मेरे अन्य अनेक साथियोंका, जो काम कर रहे हैं, सपना साकार हुआ तो वह राज्य पाटीदारों, धाराला ठाकुरभाइयों और भंगियोंका भी होगा। मुसलमान भाइयोंका भी होगा ही। यह राज्य किसी खास कौमका नहीं बल्कि हिन्दुस्तानमें जितने स्त्री-पुरुष और बालक-बालिकाएँ हैं, उन सबका होगा। इसीका नाम पूर्ण स्वराज्य है। इससे रहित राज्य स्वराज्य नही है। कोई यह न समझे कि हमारा ही राज्य होगा और भंगी या मुसलमानोंका न होगा। वह तो हिन्दुस्तानके तीस करोड़ लोगोंका राज्य होगा। उसमें यदि इन सबके साथ इन्साफ न हो, तो वह स्वराज्य ही नहीं है। इसीलिए विद्यापीठको यह ख्याल आया कि यदि पिछड़ी हुई कौमोंकी सेवा नहीं करेंगे तो काम अधूरा रह जायेगा। मुझसे मिलनेके लिए धाराला ठाकुरभाई आते हैं; उन्हें दस्तखत करना भी नहीं आता। लेकिन मुझे इस बातकी फिक्र नहीं है कि उन्हें दस्तखत करना नहीं आता; फिर भी स्वराज्य किसे कहते हैं, उन्हें इसका मतलब मालूम होना चाहिए। आपको यह जानना चाहिए कि जनताके प्रति हमारा क्या कर्त्तव्य है, हम क्यों कातें, खादी ही क्यों पहनें, और अपनी देशी मिलोंका कपड़ा भी क्यों न पहनें। यदि आप यह सब नहीं जानते तो यह बड़ी शर्म और बड़े दुःखकी बात है। यदि आप इतना भी न जानें तो हमारा शासन कैसे चल सकता है? हमारे शासनमें धाराला ठाकुरभाई और भंगी वगैरा सब कौमें हाथ बँटा सकती हैं। इसीलिए तो शामलभाई यहाँ बैठे हैं। आप कहेंगे कि पाटीदारोंने सतानेमें तो कसर नहीं छोड़ी। शायद इसमें थोड़ी-बहुत सचाई भी होगी। मुमकिन है, सब जगह पाटीदारों और धाराला ठाकुरोंमें एकता न हो। लेकिन पाटीदारोंमें से नौजवानोंका एक ऐसा दल निकला है जिसने आपकी सेवा करना ही अपना कर्त्तव्य मान लिया है। वे मानते हैं कि पहले दूसरोंकी सेवा फिर अपनी सेवा।

१. देखिए खण्ड १९, पृष्ठ २५६-६२।

२. गुजरातकी एक आदिम जाति।

आप जो थोड़े-से धाराला ठाकुरभाई यहाँ आये हैं वे मेरे सन्देशको सब लोगों तक घर-घर पहुँचायें। पाटीदार और हम दुश्मन नहीं हैं। यदि हम परस्पर एक-दूसरेको दुश्मन समझते हों तो उसे भुला दें। पाटीदार और धाराला, दोनों मित्र हैं। अभी-अभी सूत भेंट करनेवाले एक भाईका परिचय मुझे दिया गया है, जो पहले शराब पीते थे और दूसरोंको भी पिलाते थे। लेकिन अब उन्होंने शराब छोड़ दी है, और दूसरोंसे छुड़वाते हैं। हरएक आदमी शराब तो छोड़े ही, चोरी और लूटमार करना भी छोड़ ही दे। क्या इस दुनियामें चोरको किसी दिन करोड़पति बनते देखा है? चोरी करके कोई साहूकार नहीं बना। और यदि कभी बना भी हो तो आखिरकार वह भिखारीका-भिखारी ही रहा। चोरी करके व्यापारीकी तरह करोड़पति नहीं बना जाता। चोरी, लूटपाट, मारकाट वगैरा करनेसे कोई फायदा नहीं। परन्तु यदि दुनियामें — ईश्वरके दरबारमें, हमें अच्छे बनकर जाना हो तो निश्चय मानिए कि हमारे हाथ, पैर, आँख, कान और हृदय साफ होने चाहिए। नहीं तो हम उसके दरबारमें जवाब देने लायक न रहेंगे। 'वल्लभ विद्यालय'की स्थापना इसीलिए की गई है कि यह सब हो सके। मैं तो यह आशा करता हूँ कि शामलभाई मेरे पास यह शिकायत लेकर आयें कि पाटणवाडिया और धाराला ठाकुरभाइयोंके लड़के इतनी अधिक संख्यामें आते हैं कि विद्यालय छोटा पड़ता है। इस विद्यालयमें उन छात्रोंको भोजन और वस्त्र देनेका विचार है जिनके पास पैसे नहीं हैं। परन्तु कोई इसका दुरुपयोग न करे। मैं चाहता हूँ कि जिनके पास पैसे हों वे फीस देकर भी पढ़ें। और मुझे इस बातका मौका मिले कि आप जितनी कहें उतनी शालाएँ मैं कायम कर दूँ। आप याद रखिये कि पढ़ानेवालोंकी तो मेरे पास कमी नहीं है, और मैं उन्हें चाहे जहाँ पैदा कर लूँगा। हम लड़कोंको और धीरे-धीरे लड़कियोंको भी पढ़ायेंगे। परन्तु यह सब इस बातपर निर्भर है कि इस 'वल्लभ विद्यालय'को आप कितना प्रोत्साहन देते हैं।

आपने मुझसे आशीर्वाद माँगा है। मेरा आशीर्वाद तो है ही। पर आशीर्वादकी शर्त यह है कि आप इस विद्यालय और उसके नामको चमकायेंगे। पाटीदार भी इससे नसीहत लें और 'वल्लभ विद्यालय' और मेरे नामको बदनाम न होने दें। मैं ऐसी पाठशाला नहीं चाहता जो हमारे गलेकी तौक-जैसी बनकर भार-रूप बन जाये। विद्या तो वह है, जो हमें छुड़ाये, बन्धन-मुक्त करे, शोभा बढ़ाये, देशके धनकी वृद्धि करे, जिससे हमारा चारित्रिक धन बढ़े और हमारे लड़के-लड़कियाँ कुशल बनें। इसीलिए यह विद्यालय स्थापित किया गया है। यह फूले-फले। जिन्होंने इस विद्यालयके लिए दान दिया है; चूने, मजदूरी और दूसरी तरहसे मदद की है, उन सबका मैं उपकार मानता हूँ और उन्हें धन्यवाद देता हूँ। अपनी गाँठके पैसे खर्च करके किया गया काम जितना शोभायमान होता है, उतना बम्बईके सेठोंसे धन लेकर करने पर नहीं होगा।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १०-५-१९३१

११२. भेंट : पत्र-प्रतिनिधियोंको

बोरसद
६ मई, १९३१

मैन्चेस्टर रायल एक्सचेंज द्वारा स्वीकृत प्रस्तावके सम्बन्धमें 'एसोसिएटेड प्रेस' के प्रतिनिधिसे भेंटके दौरान, महात्मा गांधीने कहा :

मैनचेस्टर रायल एक्सचेंजका प्रस्ताव कुछ अंशोंमें तो मिथ्याभय पर आधारित है। मौजूदा आन्दोलनमें ब्रिटेनके प्रति ऐसा कोई वैमनस्य नहीं है; बल्कि कांग्रेसके लोग मौजूदा परिस्थितियोंमें बहुत-सी कठिनाइयोंके बावजूद यथासम्भव सद्भावना बढ़ानेका ही प्रयत्न कर रहे हैं। लोग पूरी तरह नहीं समझ पाते कि कांग्रेसने ब्रिटिश मालके बहिष्कारको खत्म करके कितना साहसपूर्ण कदम उठाया है।

विदेशी-वस्त्र बहिष्कारको ब्रिटिश मालके बहिष्कारके साथ गड्डमड्ड नहीं करना चाहिए। विदेशी वस्त्रोंके बहिष्कारको बहिष्कार कहना ही उसे गलत संज्ञा देना है। इसलिए दिल्ली समझौतेमें इस शब्दको जान-बूझकर नहीं आने दिया गया है। विदेशी वस्त्रोंके त्यागके लिए भी मैं 'बहिष्कार' शब्दका प्रयोग इसलिए कर रहा हूँ कि आजकल यह शब्द काफी आम हो गया है। फिर भी इसके उद्देश्यको समझनेमें किसी को भ्रान्ति नहीं होती। विदेशी वस्त्रोंको त्यागनेके कुछ राजनीतिक परिणाम तो अवश्य निकलेंगे, पर यह मुख्य रूपसे आर्थिक और सामाजिक कार्यक्रम ही है और यह भुख-मरीसे पीड़ित करोड़ों लोगोंकी आर्थिक आवश्यकता है। इसलिए यदि लंकाशायरके बड़े-बड़े लोग आर्थिक उत्थानके इस स्थायी आन्दोलनकी खिलाफत करनेकी अपेक्षा अपने उत्पादनको अन्य देशोंमें, जहाँ उनकी जरूरत हो, बेचनेका प्रयत्न करें, तो वे अपना काफी समय बचा लेंगे और इस प्रकार सचमुच ही दोनों देशोंके बीच सद्-भावना बढ़ा सकेंगे।

शान्तिपूर्ण धरनोंके दमनके प्रयत्नको मैं निरर्थक मानता हूँ। यह बिलकुल सही है कि लॉर्ड इर्विनने विदेशी वस्त्रों और शराबकी दूकानोंपर दिये जानेवाले धरनोंको ठोस कारणोंके अभावमें स्वीकार नहीं किया था; और कोई भी व्यक्ति जो इस प्रश्नको उतनी ही शान्तिके साथ समझनेका प्रयत्न करेगा, जितना उन्होंने किया, वह इसी निष्कर्षपर पहुँचेगा जिसपर लॉर्ड इर्विन पहुँचे थे।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दुस्तान टाइम्स, ८-५-१९३१

११३. टिप्पणियाँ

किसानोंकी बिकी हुई जमीनें

किसी किसानकी जमीन माटी-मोल बेच देना उसका शरीर काट डालना है। गुजरातकी जब्तशुदा जमीनोंकी नीलामी ऐसा ही कारनामा था। समझौतेमें इस बातसे सम्बन्धित धाराको सरदारने विषके घूँटकी तरह पी लिया था। किन्तु उनके इसे चुपचाप पी जानेका कारण यह था कि उन्हें भी मेरी तरह इस बातका यकीन था कि खरीदार किसी लम्बी अवधितक जमीनोंके असली मालिकोंको उनसे वंचित नहीं रख सकेंगे और यदि कुछ भी नहीं हुआ तो स्थायी समझौता हो जानेपर तो वे लोगोंको वापस मिल ही जायेंगी। खरीदारोंके पक्षमें इतना कहना जरूरी है कि अब वे एकके बाद एक जमीनोंको खरीदनेकी अपनी गलतीको समझते जा रहे हैं और उन्हें उनके मूल स्वामियोंको लौटाते भी जा रहे हैं। पाठकोंको यह तो मालूम हो ही चुका है कि सर कावसजी जहाँगीर, श्री नरीमान, श्री वीमादलाल और श्री मोदी तथा रा० ब० भीमभाईकी मध्यस्थतासे सरदार गरदाने बारडोलीके सत्याग्रही किसानोंकी ली हुई जमीनें, अपने खर्चेकी रकम लेकर, वापस देनेका निश्चय व्यक्त किया है; उसके लिए मैं उन्हें धन्यवाद देता हूँ। कुकड़बेड़ाके एक दूसरे पारसीभाई कावसजीने दिये हुए पैसे बिना लिए और बिना किसीके बीच-बचावके जमीन लौटा दी है, और बोरसदके राजपूत भाई खुमानसिंह लक्ष्मणसिंहने भी खर्च हुए पैसे लिए बिना और किसी बीच-बचावके बिना जमीन वापस दे दी है। ये भाई दोहरे धन्य-वादके अधिकारी हैं। इसी तरह अभी-अभी बारडोलीमें सेठ वीरचन्द और देहवानके ठाकुर साहबने बोरसदमें किया है। ठाकुर साहबने जो-कुछ देकर जमीन ली थी, उसे वापस भी नहीं लेना चाहा। उन्होंने लगभग अच्छे किस्मकी १२० एकड़ जमीनके १२०० रु० दिये थे। तीन गरीब धारालोंने भी ११ एकड़ जमीन ४८ रु० में खरीदी थी। उन्होंने भी उसे लौटा दिया है और मुझे पत्र लिखा है कि हमें पैसे वापस माँगनेमें लाज आती है; लेकिन हम लोग गरीब हैं; यों हम समझते हैं कि हमें यह पैसा वापस नहीं माँगना चाहिए। देशभक्तिके विचारसे इन सारे खरीदारोंका जमीनें लौटा देना उनकी प्रामाणिकता सूचित करता है। मैंने 'देशभक्ति' शब्दका उपयोग इसलिए किया है क्योंकि ऐसा करनेके लिए किसीने धमकी या दबावका उपयोग नहीं किया था। इसका कारण तो मौन-मूक लोकमत ही था। अभीतक हम लोग पूरी तरह यह नहीं समझ पाये हैं कि स्वयं लोकमतका कितना जबर्दस्त असर पड़ता है। यों अभीतक परेशानियाँ बनी हैं। कुछ ऐसे पक्के खरीदार हैं जिन्होंने अभी मुट्ठी ढीली नहीं की है। फिर भी मुझे विश्वास है कि यदि कार्यकर्त्ता धीरज न खो दें और समझौता भंग न हो, तो वे भी लोकमतका आदर करेंगे। यदि लोकमत हिंसक और आक्रामक हो जाये तो वह असह्य बात होगी।

मुझे पाठकोंको यह सूचित करते हुए खुशी होती है कि अन्यथा भी, धीरे ही सही, गुजरातमें समझौतेसे सम्बन्धित प्रगति होते दिखाई दे रही है। महादेव देसाईकी 'साप्ताहिक चिट्ठी' से यह बात अंशतः स्पष्ट होती है कि हम लोग गुजरातमें कांग्रेस की ओरसे समझौतेको किस तरह कार्यान्वित कर रहे हैं।[१]

हम आशा करें कि इसी तरह धीरे-धीरे सब जमीनें वापस मिल जायेंगी। इस वक्त तो मैं यही कहना चाहता हूँ कि सत्याग्रहीका धर्म है कि वह किसीको सताये नहीं। जो उसके साथ दुश्मनी करे, उनका भी वह भला चाहे। सरदार गरदाको डर है कि किसान उनको सतायेंगे। इसकी वह शिकायत भी करते थे। मैंने उन्हें वचन दिया है कि अगर वह विस्तारसे कोई शिकायत भेजेंगे, तो मैं उसकी जाँच करूँगा। मैंने उन्हें विश्वास दिलाया है कि कोई भी सत्याग्रही उन्हें नहीं सतायेगा। मुझे इसमें शक नही कि किसानोंकी ओरसे दिये गये इस आश्वासनका किसान पूरा सम्मान करेंगे। यदि हमें तुरन्त स्वराज्य हासिल करना है, तो सबके साथ मिलकर रहना और सबके मन हर लेना हमारा धर्म है। याद रहे कि इस सबमें हाकिम लोग भी शामिल हैं।

पुलिसका अत्याचार

एक भाई पूछते हैं: "लड़ाईके दिनोंमें पुलिस या दूसरे अधिकारियोंने गैर-कानूनी बरताव किया हो तो उसके लिए आप उनपर कानूनन मामला चलानेकी सलाह देंगे?"

सुलहकी शर्तोंमें यह शामिल तो है; फिर भी जिन जगहोंमें गैर-कानूनी बरताव एक या दूसरे रूपमें अभीतक जारी हों और जहाँ भूतकालके गैर-कानूनी बरतावके सच्चे सबूत पेश किये जा सकते हों, उन जगहोंको छोड़कर अन्यत्र मुकदमे चलानेकी सलाह मैं नहीं दे सकता। परन्तु आमतौरपर मैं यही कहूँगा कि जो समझौता हुआ है, उसके ध्यानसे हमें पुरानी बातोंको भूल जाने और स्थायी सन्धिकी आशा रखकर उसके लिए काम करनेका प्रयत्न करना चाहिए।

'कश्मीरी' के नामपर

कश्मीर चरखा-संघके श्री कोटक लिखते हैं:

> **लोग अब शुद्ध खादी और नकली खादीका भेद समझने लगे हैं, किन्तु महीन पोतकी ऊनी चीजें सिर्फ कश्मीरसे आती हैं, इसलिए परदेशी ऊनी कपड़ेको 'कश्मीरी' ऊनी वस्त्र कहकर अर्थात् कश्मीरमें हाथसे कते-बुने कपड़ेकी तरह बेचनेका रिवाज-सा चल पड़ा है।**
>
> **क्या इस ठगीको रुकवानेमें आप कुछ मदद नहीं कर सकते[२]?**

महीन ऊनी और रेशमी वस्त्र खरीदनेवाले इस चेतावनीको ध्यानमें रखें। इससे एक नसीहत लेनी चाहिए, और वह यह है कि हर चीजके मूलका पता

१. इससे आगेका अंश **नवजीवन**, ३-५-१९३१ में प्रकाशित "टिप्पणी" से लिया गया है। पूरे लेखका मिलान भी उस टिप्पणीसे कर लिया गया है।

२. अंशतः उद्धृत।

लगायें। यदि हम अपने पड़ौसमें बनी हुई चीजें ही बेचें तो इस बातका पता लगता रह सकता है। किन्तु हमेशा ऐसा सम्भव नहीं होता। इसलिए दूसरा रास्ता यह है कि प्रमाणित या जिनके व्यवस्थापकोसे हमारी निजी जान-पहचान हो, ऐसे भण्डारोंसे ही चीजें खरीदी जायें। दूसरे सब धर्मोंकी तरह स्वदेशी धर्मका पालन भी कठिन है। इसलिए स्वदेशीप्रेमियोंको अपने उपयोगमें आनेवाले हरएक कपड़ेके टुकड़ेका ही नहीं, बल्कि हर चीजके इतिहासका पता लगानेमें जो कष्ट उठाना पड़े, सो उठाना चाहिए। यह सच है कि खादी स्वदेशीका केन्द्र और परिधि दोनों है, फिर भी इन दोके बीचकी जगहको भरनेवाली दूसरी कई चीजें है। जो स्त्री-पुरुष खादी पहननेके बाद अपने लिए दूसरी सब विदेशी चीजें इस्तेमाल करनेका परवाना हासिल कर लेते हैं, वे खादीके मूलमें पड़ी हुई भावनाको नही समझते, और इसलिए उसे हानि पहुँचाते हैं।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ७-५-१९३१, और **नवजीवन**, ३-५-१९३१

११४. अहिंसाकी शक्ति[1]

मैं एक सज्जन द्वारा लिखे गये गुजराती पत्रका नीचे अनुवाद दे रहा हूँ:

> हिन्दुस्तानको दुनियाके लोकमतकी नगण्य सहायता मिली है, तिस पर भी गांधीजी उसे पूरी-पूरी सहायता क्यों कहते हैं? निःशस्त्र शक्ति द्वारा लड़नेवाले राष्ट्रकी दशा एक स्त्रीकी-सी है। उसे शास्त्रधारियोंने जिस लाठी प्रहार आदि द्वारा अनेक प्रकारसे, जगहोंमें क्रूरतापूर्वक सताया है, यह देखकर दुनियामें जैसा पुण्य-प्रकोप प्रज्वलित होना चाहिए था, वैसा कहाँ हुआ है? इस प्रकोपके अभावका अर्थ तो मानवताका अभाव है। यदि दुनिया आम तौरसे मानवताके अभावका परिचय दे, तो सत्यके शस्त्रकी विजय कैसे होगी? यदि सत्य और अहिंसाकी विजय होनी है, तो निःशस्त्र भारतीय जनताका खून बहते देख दुनियाका खून जैसा खौलना चाहिए, वैसा नहीं खोला है। गांधीजी इस बातको इसी रूपमें क्यों नहीं देखते?

दुनियासे पूरी-पूरी सहायता या समर्थन मिलनेकी बात मैंने कहीं भी कही हो, तो उसे अनजाने की गई अतिशयोक्ति समझना चाहिए। यदि मैंने ऐसी कोई बात कही हो, तो वह मुझे बताई जानी चाहिए। मुझे तो इसकी कोई याद ही नहीं पड़ती।

ब्रिटिश सैनिक सत्ताके विरुद्ध लड़नेवाले निःशस्त्र राष्ट्रकी तुलना किसी बदमाश के सामने खड़ी निस्सहाय स्त्रीकी दशासे करके लेखकने अहिंसाकी और स्त्रीकी शक्तिकी

१. इसी अभिप्रायका एक लेख **नवजीवन**, ३-५-१९३१ में "उनका खून खोल क्यों नहीं उठा" शीर्षकसे छपा था।

अवगणना की है। यदि पुरुष-वर्गने स्त्रियोंको निःसत्त्व न कर डाला होता, अथवा स्त्री भोगमें फँसकर पुरुषके अधीन न हुई होती, तो वह अपनी अनन्त शक्ति संसारको दिखा सकती थी। गत युद्धमें उसने अपनी शक्तिकी थोड़ी और अपूर्ण झाँकी कराई है। जब वे भी पुरुषोंकी बराबरीसे सेवा-कार्यके लिए अवकाश प्राप्त कर लेंगी, अपनी संघ-शक्ति बढ़ा लेंगी, तब इस देशको और जगत्को उनकी अद्भुत शक्तिके दर्शन होंगे।

जिसके हाथमें अहिंसा-रूपी शस्त्र है, वह निःशस्त्र है यह कहना भी ठीक नहीं। स्पष्टतः लेखक अहिंसाके सही उपयोगको नहीं जानता और न उसने उसकी असीम शक्तिको ही पहचाना है। यदि उसने उसका प्रयोग किया भी है तो यन्त्रवत् किया है। किसी और अच्छे साधनके अभावमें उसने काम-भर चलाया है। यदि उसका मन अहिंसाकी भावनासे ओत-प्रोत होता तो वह निश्चय ही जान लेता कि हिंस्र पशु तकको वशीभूत किया जा सकता है; हिंस्र मनुष्यको तो निश्चय ही।

इसलिए यदि पिछले वर्षके अत्याचारोंसे दुनियाका खून नहीं खौल उठा तो इसका कारण दुनियाका अन्यायी या हृदयहीन होना नहीं है; बल्कि उसका कारण यह है कि हमारी अहिंसा व्यापक और हमारे उद्देश्यके लिए अच्छी भले ही थी तो भी वह शक्तिशाली और कुशल लोगोंकी अहिंसा नहीं थी। वह जीवन्त विश्वाससे प्रेरित न होकर सिर्फ एक नीति थी, एक अस्थायी साधन थी। हमने अपने ऊपर होनेवाले प्रहारोंके विरोधमें हाथ भले नहीं उठाया; किन्तु हमने मनमें क्रोध तो किया। हमारी भाषा और उससे भी बढ़कर हमारे विचार हिंसासे मुक्त नहीं थे। सामान्यतः हम हिंसापूर्ण कार्योंसे दूर रहे; क्योंकि हम अनुशासन-बद्ध थे। संसारने अहिंसाके सीमित प्रदर्शनसे भी चकित होकर बिना किसी प्रचारके हमारी पात्रताके अनुपातमें समर्थन और सहानुभूति दी। इसके बाद जो बच रहता है उसपर त्रैराशिकका हिसाब लागू करके देख लेना चाहिए। जब हालके संघर्षमें अहिंसाके सीमित और यन्त्रवत् उपयोगसे हमें इतना समर्थन प्राप्त हुआ है तब यदि हमने अहिंसाका पूर्ण पालन किया होता तो हमें और कितना समर्थन प्राप्त हो सकता था? ऐसा हो तो जरूर दुनियाका खून खौल उठे। मुझे मालूम है कि अभी यह पुनीत दिन बहुत दूर है। हमें कानपुर, बनारस और मिर्जापुरमें[१] अपनी दुर्बलताका आभास हुआ। जब हम अहिंसासे ओत-प्रोत हो जायेंगे तब हम सिर्फ अधिकारी-वर्गसे होनेवाले संघर्षमें ही अहिंसाका पालन नहीं करेंगे, बल्कि अपने आपसी झगड़ोंमें भी करेंगे। जब हमें अहिंसाकी शक्तिमें जीवन्त श्रद्धा होगी तो वह दिन-प्रतिदिन फैलती चली जायेगी और एक दिन सारे संसारमें उसकी ऐसी व्याप्त हो जायेगी कि संसारने ऐसी जबर्दस्त व्याप्ति कभी न देखी होगी। मैं तो इसी विश्वासमें जी रहा हूँ कि हम अहिंसाके इस महान प्रयोगमें सफल होकर रहेंगे।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ७-५-१९३१

१. अभिप्राय उक्त स्थानोंमें हुए साम्प्रदायिक दंगोंसे है।

११५. लोकतन्त्रके खतरे[1]

कोई भी मानव-संस्था ऐसी नहीं है जिसके अपने खतरे न हों। संस्था जितनी बड़ी होती है, उसके दुरुपयोगकी सम्भावनाएँ उतनी ही अधिक रहती हैं। लोकतन्त्र एक महान संस्था है और इसीलिए उसके दुरुपयोगकी सम्भावनाएँ उतनी ही अधिक हैं। इसलिए इलाज यही है कि दुरुपयोगकी सम्भावना कम-से-कम कर दी जाये, यह नहीं कि लोकतन्त्र ही न बनाये जायें।

कांग्रेस एक विशाल लोकतान्त्रिक संस्था बन चुकी है। पिछले बारह महीनोंके दौरान वह उत्कर्षकी एक ऊँची मंजिलतक पहुँच गई है। लाखोंकी तादादमें लोग बाकायदा सदस्योंमें नाम लिखाये बिना ही कांग्रेसमें शामिल हो गये हैं और इस तरह उन्होंने उसकी शोभामें चार चाँद लगा दिये हैं। लेकिन साथ ही कांग्रेसमें गुंडाशाही भी इतनी बढ़ गई है जितनी पहले कभी नहीं थी। यह अनिवार्य ही था। स्वयंसेवकोंको चुननेके लिए निश्चित किये गये सामान्य नियमोंको संघर्षके अन्तिम दौरमें मानो ताकपर ही रख दिया गया था। नतीजा यह हुआ कि कुछ स्थानों पर गुंडाशाही साफ दिखाई देने लगी है। कुछ कांग्रेसियोंको तो धमकियाँ तक दी गई है कि यदि वे माँगी गई राशि नहीं देंगे तो उनपर मुसीबत टूट पड़ेगी। जाहिर है कि पेशेवर गुंडे भी इस माहौलसे फायदा उठाकर अपना धन्धा चालू कर सकते हैं।

ताज्जुबकी बात तो यह है कि इतने बड़े जन जागरणके अनुपातमें इस तरहके जितने मामले मेरे सामने आये हैं वे संख्यामें उससे तो कम ही हैं जितनेकी आशंका की जाती थी। मेरा अपना विश्वास तो यह है कि इस सुखद स्थितिका कारण कांग्रेस द्वारा अपनाया अहिंसाका सिद्धान्त है, भले ही हमने उसपर बड़े मोटे तौरपर अमल किया हो। लेकिन गुंडाशाही इतनी तो अवश्य हुई है कि हम समय रहते चेतें और उसकी रोकथामके लिए उपाय करें और आगेसे सावधानी रखें।

स्वभावतः मुझे जो उपाय सूझता है वह यही है कि शास्त्रीय पद्धतिसे तथा अधिक समझदारी और अनुशासित ढंगसे अहिंसाके सिद्धान्तपर निश्चित रूपसे अमल किया जाये। पहली बात तो यह है कि हमने अहिंसाका जितनी दृढ़तासे पालन किया है, यदि उससे अधिक दृढ़ता दिखाई होती तो एक भी ऐसे स्त्री-पुरुषको स्वयंसेवक न बनाया जाता जो स्वयंसेवकोंकी भर्तीके नियमोंकी कसौटीपर बिलकुल खरे न उतरते। इसके विरुद्ध यह तो कोई दलील ही नहीं हुई कि तब उस स्थितिमें संघर्षके अन्तिम दौरके लिए कोई स्वयंसेवक रह ही नहीं जाता और संघर्ष बिलकुल ही असफल हो जाता। मेरा अनुभव मुझे बिलकुल दूसरी ही सीख देता है। अहिंसक संघर्ष तो केवल एक ही सत्याग्रहीके बलपर भी चल सकता है; और लाखों गैर-सत्या-

१. **नवजीवन**, ३-५-१९३१ में भी इसी विषयपर एक लेख "घर फूटे घर जाये" शीर्षकसे प्रकाशित हुआ था।

ग्रही साथ होनेपर भी नहीं चलाया जा सकता। फिर मैं तो शुद्ध अहिंसाके मार्ग पर चलते हुए, उससे किंचित् भी भटककर एक संदिग्ध किस्मकी सफलता प्राप्त करनेकी अपेक्षा, नितान्त असफलताको ही गले लगाना ज्यादा पसन्द करूँगा। जहाँतक अहिंसाका सम्बन्ध है, मुझे लगता है कि इसमें एक बिलकुल ही गैर-समझौतावादी दृष्टिकोण अपनाये बिना, तनिक भी न झुकनेका संकल्प किये बिना, अन्तमें विपत्तिके अतिरिक्त कुछ हाथ नही लग सकेगा। और यह इसलिए कि यदि ऐसा किया गया तो हो सकता है कि संकटके निर्णायक क्षणोंमें हम अपने-आपको अहिंसाकी कसौटीपर खरा सिद्ध न कर पायें और तब सम्भव है कि हम अपने विरुद्ध अव्यवस्था फैलानेवाली एकाएक खड़ी हो जानेवाली शक्तियोंका सामना करनेके लिए अपने-आपको बिलकुल ही अप्रस्तुत और असमर्थ पायें।

पर अन्धाधुन्ध भर्तीकी यह गलती कर चुकनेके बाद, अब उससे हुई हानिकी पूर्ति करनेका अहिंसक उपाय क्या है? अहिंसाका अर्थ है उच्च कोटिका साहस और इसीलिए कष्ट-सहनके लिए तैयार रहना। इसलिए डराने-धमकाने, धोखा-घड़ी करने या इससे भी बुरी हरकतोंके सामने हमें सिर नहीं झुकाना है, भले ही उसके कारण हममें-से कुछको अपनी बेशकीमत जानें गँवानी पड़ें। धमकी-भरे पत्र लिखनेवालोंको यह महसूस करा देना चाहिए कि उनकी धमकियोंकी कोई परवाह नहीं की जायेगी। साथ ही, हमें उनको लगी बीमारीका ठीक-ठीक निदान करके उनका उचित उपचार करना चाहिए। गुंडे भी तो आखिर हमारे समाजके ही अंग हैं और इसलिए उनका उपचार भी पूरी सहृदयता तथा सहानुभूतिके साथ किया जाना चाहिए। आमतौर पर लोग गुंडाशाही इसलिए नही किया करते कि उनको यही पसन्द है। यह वास्तवमें हमारे समाजमें व्याप्त एक किसी गहरे रोगका लक्षण है। हम शासन-तन्त्रमें व्याप्त गुंडाशाहीके साथ अपने सम्बन्धोंपर जिस नियमको लागू करते हैं, ठीक वही नियम समाजकी अन्दरूनी गुंडाशाहीके साथ हमें लागू करना चाहिए। और यदि हमें विश्वास हो गया है कि उस अत्यन्त ही संगठित किस्मकी गुंडाशाहीसे अहिंसक ढंगसे निबटनेकी सामर्थ्य हमारे अन्दर मौजूद है तो अन्दरूनी गुंडाशाहीसे इसी तरीकेसे निबटनेके लिए तो हमें अपने अन्दर कहीं अधिक सामर्थ्य महसूस करनी चाहिए।

इससे यही निष्कर्ष निकलता है कि इस विराम-सन्धिके दौरान हालाँकि कांग्रेसी भी, अन्य सभी नागरिकोंकी भाँति, पुलिसकी सहायता लेनेके लिए स्वतन्त्र हैं, फिर भी हमें इस रोगसे निबटनेके लिए पुलिसकी सहायता नहीं लेनी चाहिए। मैंने जो उपाय सुझाया है वह सुधार, हृदय-परिवर्तन और प्रेमका उपाय है। पुलिसकी सहायता लेना तो दण्ड, भय और यदि सचमुच अश्रद्धा नहीं तो श्रद्धाके अभावका मार्ग तो है ही। इसलिए हम दोनों तरीकोंको एक साथ लेकर नहीं चल सकते। सुधारका मार्ग किसी-न-किसी मंजिलपर कठिन तो लगता है, पर वास्तवमें वह है सबसे अधिक सरल।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ७-५-१९३१

११६. अनुयायियों के लिए

एक मित्र लिखते हैं:

आपके अनुयायी जब राजनैतिक वाद-विवादमें भाग लें, तो उन्हें किस प्रकारका बरताव करना चाहिए। कृपया इस बारेमें कुछ सलाह दें। वह बहुत सहायक होगी। खासकर नीचे लिखी बातोंपर आपकी सलाह जरूरी है:

(१) प्रतिपक्षीकी ऐसी निन्दा करना, जिससे वह लोगोंकी नजरोंसे गिर जाये, उचित है या नहीं?।

(२) प्रतिपक्षीकी कैसी टीका उचित कही जा सकती है?

(३) विरोध किस हदतक किया जाये?

(४) पद और सत्ता प्राप्त करनेका प्रयत्न किया जाये या नहीं?

मैं इन पृष्ठोंमें पहले बतला चुका हूँ कि मैं किसीको अपना अनुयायी नहीं मानता। मैं स्वयं अपना अनुयायी बनूँ, यही काफी है। यही एक पर्याप्त कष्टसाध्य काम है। लेकिन मैं जानता हूँ कि बहुतेरे आदमी अपनेको मेरा अनुयायी बतलाते हैं। इसलिए मेरा उनकी खातिर इन सवालोंका जवाब उचित होगा। यदि वे मेरे अनुयायी बननेके बजाय जिस वस्तुको मैं जीवनमें उतारनेका प्रयत्न कर रहा हूँ, उसके अनुयायी बनेंगे, तो देखेंगे कि सत्य और अहिंसा से इन प्रश्नोंके नीचे लिखे उत्तर निकलते हैं:

(क) विरोधीकी निन्दा कभी की ही नहीं जा सकती। लेकिन इसका यह मतलब नहीं कि उसके कार्योंका सच्चा वर्णन नहीं किया जा सकता। कोई विरोध करनेके कारण ही दुर्जन नहीं हो जाता। हम अपने लिए जितना भला होनेका दावा करते हैं, वह भी उतना ही भला आदमी हो सकता है; और फिर भी यह सम्भव है कि उसके और हमारे बीच महत्वपूर्ण मतभेद हों।

(ख) इसलिए हमारी टीका तो यह होगी कि अगर हम उसे झूठा मानते हैं, तो उसके असत्यका सत्यसे, अविवेकका विवेकसे, उद्दण्डताका शान्तिपूर्ण साहससे, हिंसाका सहनशीलतासे, अहंकारका नम्रतासे और बुराईका भलाईसे सामना करें। 'मेरा अनुयायी' निन्दा करनेकी नहीं, बल्कि हृदय-परिवर्तनकी पूरी कोशिश करेगा।

(ग) यह तो सवाल ही नहीं उठना चाहिए कि विरोध किस हदतक किया जाये। क्योंकि विरोध व्यक्तिके साथ न होकर उसके उन कार्योंके प्रति होना चाहिए जो सदाचार या समाज-हितके विघातक हों।

(घ) पदों और सत्तासे अलग रहना चाहिए। पर यदि यह स्पष्ट दिखता हो कि उनके माध्यमसे अधिक सेवा हो सकेगी, तो उन्हें स्वीकार किया जा सकता है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ७-५-१९३१

११७. फिर विदेशी मिशनरियोंके बारेमें

प्रिय महात्माजी,

. . . मेरे[1] एक मित्रने मुझे 'मद्रास कैथोलिक लीडर'का २६ मार्चका अंक दिया और उसमें आपके द्वारा ये विचार व्यक्त किये जानेके समाचार हैं :–

प्रत्येक राष्ट्रका अपना धर्म अन्य किसी भी राष्ट्रके धर्म जितना ही श्रेष्ठ होता है। निश्चय ही भारतके धर्म उसकी अपनी जनताके लिए पर्याप्त हैं। हमारे यहाँ धर्म-परिवर्तनकी कोई आवश्यकता नही।

मैं एक ईसाई हूँ; निश्चय ही मैं इस बातके तो विरुद्ध हूँ कि ईसाइयतको साम्राज्यवादके प्रसारके एक साधनके रूपमें प्रयुक्त किया जाये। परन्तु कौन है जो प्रेम और भाईचारेके एक सन्देशके रूपमें ईसाइयतको भारतीय जीवनमें स्थान देनेसे इनकार करे? स्वराज्यके इस महान आन्दोलनमें क्या हम स्वतन्त्रताके लिए संघर्ष नहीं कर रहे हैं– अपनी पसन्दके मुताबिक ईश्वरकी आराधना करनेकी स्वतन्त्रता, जो इच्छुक हों अपने उन साथियोंको अपने विचारोंसे सहमत करनेकी स्वतन्त्रता, या जो हमें विश्वास दिला सकते हों, अपने उन साथियोंसे सहमत होनेकी स्वतन्त्रता। . . . क्या भारतीय जनता इतनी धर्मान्ध हो गई है कि वह सोचती है कि संसारकी समूची विभूतियाँ, ज्ञान और मानव-अनुभूतियों का सारा भण्डार उसके अपने ही देशमें है, अन्य कहीं नहीं? . . .

मेरी मान्यता है कि धर्म और सदाचरण सम्बन्धी धारणा व्यक्तिके अपने क्षेत्रका विषय है। धर्म, चिन्तन और व्यक्ति-परक अनुभूतिके उन विराट् व्यापक क्षेत्रमें रमता है जो राष्ट्रों और राष्ट्र-गत सीमाओंसे परे हैं।...

परन्तु मैं जानना चाहूँगा कि आपने यदि वे विचार प्रगट किये हैं तो उनसे आपका आशय क्या है; क्योंकि मैं स्वीकार करता हूँ कि यह बात मेरी समझ नहीं आई है।

मैं समझता हूँ कि इस पत्रके[2] उत्तरमें इतना ही काफी है कि मैं पत्र-लेखकका ध्यान 'यंग इंडिया' में प्रकाशित अपने लेखकी[3] ओर आकर्षित कर दूँ। यहाँ शायद यह बतला देना भी ठीक रहेगा कि भारतके धर्मोंमें हिन्दू धर्म, इस्लाम, पारसी धर्म इत्यादिको गिनाते समय मेरा ऐसा कोई मंशा नहीं है कि मै इनको केवल भारतका धर्म कहूँ या ईसाई धर्मको इनसे अलग कर रखूँ। प्रश्न वास्तवमें इन दो बातोंको

१. जेम्स पी० रत्नम्, सेंट जेवियर्स, नुवारा इलिया, श्रीलंका।
२. ११ अप्रैलको लिखे गये इस पत्रके कुछ ही अंश यहाँ दिये गये हैं।
३. देखिए "विदेशी मिशनरी", २३-४-१९३१।

लेकर है: एक यह दावा है कि ईसाई धर्म ही सच्चा धर्म है और दूसरा यह कि और अन्य सभी धर्म मिथ्या हैं। मैंने इन्हीं बातोंका खण्डन करते हुए कहा था कि भारतमें ईसाई धर्मके अलावा जिन अन्य महान् विश्वव्यापी धर्मोका प्रचार है, वे भी उतने ही सच्चे धर्म हैं। इसलिए ईसाई मिशनरियों और उनके प्रचारकोंके सामने मेरा यह आग्रहपूर्वक कहना न तो संगत था और न आवश्यक ही कि ईसाई धर्म भी एक सच्चा धर्म है। फिर जब सभी जानते हैं कि ईसाका गिरि-शिखरपर दिया गया उपदेश मुझे कितना प्रिय है और मैं बार-बार कह चुका हूँ कि ईसाको मैं मानवताके महानतम शिक्षकोंमें लेखता हूँ, तब मै सोच भी नही सकता कि मुझपर ईसाई धर्मका महत्व कम आँकनेका आरोप भी किसी तरह लगाया जा सकता है। भारतीय ईसाइयोंमें तो मेरे अनेक अच्छे मित्र हैं और मैं जहाँ-जहाँ भी गया हूँ मुझे ईसाई जनताके साथ मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध स्थापित करनेमें कभी कोई कठिनाई नहीं पड़ी। फिर मेरे मनमें विदेशी मिशनरियोंसे अपने सम्बन्ध बिगड़नेका कोई भय भी नहीं है। उनमें मेरे अनेक निजी मित्र हैं। इसलिए मुझे अपने ऊपर इस आक्षेपको देखकर बड़ा आश्चर्य हुआ; विशेषकर इसलिए कि वे वही विचार हैं जो मैं १९१६ से व्यक्त करता आ रहा हूँ। उस समय मैंने अपने विचार बहुत ही सोच-समझकर, सावधानीसे लिखे गये एक भाषणमें केवल मिशनरियोंके बीच मद्रासमें पढ़कर सुनाये थे; और उसके बाद मैं अनेक ईसाई सभाओंमें उनको दोहरा चुका हूँ। हालकी आलोचनाने मेरे मतकी पुष्टि ही की है; क्योंकि मुझे मैत्रीपूर्ण ढंगसे की गई इस आलोचनामें भी असहिष्णुताकी झलक मिली है। मिशनरी लोग जानते हैं कि उनके तरीकोंकी खुली और स्पष्ट आलोचना करनेके बावजूद भारतकी गैर-ईसाई जनतामें मुझसे अच्छा उनका कोई और मित्र नहीं है। अपने आलोचकोंसे मैं कहूँगा कि यदि वे अपने मतसे भिन्न, ईमानदारीसे प्रकट किये गये अन्य किसी मतको सहन तक नहीं कर सकते, तो उनके तरीकोंमें या यदि उनको आपत्ति न हो तो मैं कहूँगा खुद उनमें ही, कहीं कोई दोष जरूर है। मैं निस्सन्देह कह सकता हूँ कि भारतमें स्वराज्य आनेपर विदेशी मिशनरियोंको जैसा मैं मानता हूँ, गलत ढंगसे धर्म-परिवर्तन करानेकी स्वतन्त्रता तो बनी रहेगी, परन्तु उनसे यह भी आशा की जायेगी कि तब मेरी भाँति यदि अन्य लोग कहें कि उनके तरीके गलत हैं तो वे उसको सहन करेंगे, उसे धैर्यपूर्वक सुनेंगे।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ७-५-१९३१

११८. पत्र : एच० डब्ल्यू० एमर्सनको

[स्थायी पता,] साबरमती
७ मई, १९३१

प्रिय श्री एमर्सन,

इसी महीनेकी ३० तारीखके आपके पत्रके[1] लिए धन्यवाद। सर मालकम हेली जो कहते हैं, मैं उसे भली-भाँति समझ सकता हूँ। मेरे लिए इससे बढ़कर खुशखबरी दूसरी हो ही नहीं सकती कि किसानोंको जरूरी राहत मिल जानेके कारण अब सर मालकम हेलीसे मुझे मिलनेकी जरूरत ही नही रही।

मेरे स्वास्थ्यके सम्बन्धमें आपकी जिज्ञासाके लिए मैं आपका आभार मानता हूँ। अब स्वास्थ्यमें कोई खराबी नहीं है। फिर भी थोड़ा आराम जरूरी है। मौजूदा परिस्थितियोंमें, जितना हो सकता है उतना आराम मैं ले रहा हूँ।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

श्री एच० डब्ल्यू० एमर्सन
गृह-सचिव, भारत सरकार
शिमला

[अंग्रेजीसे]

गृह-विभाग, राजनीतिक, फाइल संख्या ३३–११ और के० डब्ल्यू० १९३१
सौजन्य : भारतीय राष्ट्रीय अभिलेखागार

११९. पत्र : आर० एम० मैक्सवेलको

स्थायी पता, साबरमती
७ मई, १९३१

प्रिय श्री मैक्सवेल,

इसी महीनेकी ४ तारीखके आपके पत्रके लिए धन्यवाद। मैं आपके अगले पत्रकी प्रतीक्षा करूँगा। आपको याद दिला दूँ कि संशोधित नोटिस जिसकी प्रतिकी पहुँच आपने अपने पत्रमें दी है, वाइसराय महोदयको केवल एक मामलेको निपटानेमें ही सहायक हो सकती है; जब कि मेरे मूल पत्रमें[2] कई विषयोंकी चर्चा की गई है, जिनमेंसे एक बिना लाइसेंस शराबकी बिक्रीका मामला अब दिनों-दिन फौरी बनता

१. देखिए परिशिष्ट ५।
२. देखिए "पत्र : आर० एम० मैक्सवेलको", २२-४-१९३१।

जा रहा है; क्योंकि लगता है कि इस तरहकी शराबकी बिक्री बढ़ती जा रही है। वाइसराय महोदय शायद इसे स्वीकार करेंगे कि यह तो समझौतेका खुल्लमखुल्ला उल्लंघन है।

मैं एक और मसला उठाना चाहता हूँ। 'यंग इंडिया'का छापाखाना[1] अबतक भी लौटाया नहीं गया है। जिला अधिकारीका सुझाव है कि छापेखानेके प्रबन्धकको उन मशीनोंको जहाँ वे पड़ी हैं वहाँसे उठाकर ले जाना चाहिए। मेरा ख्याल है कि कुछ मशीनें बम्बईमें और कुछ अहमदाबादमें पड़ी भी हैं। खेड़ाके जिला अधिकारीने खेड़ामें ही कही पड़ी मोटर और एक साइकिलके सम्बन्धमें यही विधि सुझाई है। समझौतेकी धारा १६ (क) में यह व्यवस्था स्पष्ट रूपसे रखी गई है कि आन्दोलनके सिलसिलेमें सरकारी कब्जेमें ली गई चल-सम्पत्ति लौटा दी जाये। इसमें यह नहीं कहा गया है कि कब्जेमें ली गई सम्पत्तिको वापस करानेके लिए सम्बन्धित व्यक्ति प्रार्थनापत्र दें; वह तो लौटाई ही जानी है। यदि असंगत न हो तो मैं यह उल्लेख भी करना चाहूँगा कि "लौटाना" शब्द बहस-मुबाहिसेके बाद चुना गया था। मैं यह भी लिख दूँ कि यद्यपि 'यंग इंडिया'के छापेखाने और कब्जेमें ली गई अन्य सम्पत्ति की दशाके बारेमें मुझे कोई जानकारी नहीं है; लेकिन इतना जानता हूँ कि खेड़ामें कब्जेमें ली गई मोटर और बाइसिकल निस्सन्देह खराब हालतमें हैं। और यह तो हम दोनों ही मानते हैं कि कब्जा लेनेके समय वे चालू और अच्छी हालतमें थीं। खेड़ाके जिला अधिकारीने मेरे पत्रके उत्तरमें इन वस्तुओंके बारेमें यह लिखा है:

> **मोटर गाड़ी और साइकिलकी वापसीमें सरकारने आदेश जारी कर दिये हैं कि सामान्यतः अध्यादेशके अन्तर्गत कब्जेमें ली गई सम्पत्तिके मालिकसे उसे वहींसे उठा लेनेके लिए कहा जाये, जहाँ वह पड़ी हो; सरकार उसे यथास्थान पहुँचानेका खर्च नहीं उठा सकती। मेरे पास ऐसी कोई मद नहीं है जिसमें मोटर गाड़ीको ठेलकर पहुँचानेके खर्चकी व्यवस्था की जा सके। मुझे बताया गया है कि मोटर ऐसी हालतमें नहीं है कि उसे चलाकर नडियाद तक ले जाया जा सके। मैं कल खेड़ामें रहूँगा और मेरा सुझाव है कि उसका मालिक उसे मेरे दफ्तरसे उठवा ले। अगर वह समझता है कि उसे इस मोटरको वहाँ पहुँचाने तथा उसकी मरम्मत आदिका खर्च सरकारसे वसूल करनेका अधिकार है, तो वह सरकारके नाम अपना बिल भेज दे और सरकार निस्सन्देह इस पूरी परिस्थितिके बारेमें सम्पूर्ण विवरण प्राप्त करेगी और तभी मामलेमें निर्णय दिया जा सकता है; लेकिन इस समय तो गतिरोध है जिसका परिणाम है कि मोटर गाड़ीकी हालत और भी अधिक खराब होती जा रही है।**

१. इसे सन् १९३० के सविनय अवज्ञा आन्दोलनके दौरान १९१० के प्रेस अधिनियम द्वारा प्रदत्त अधिकारोंको बहाल करनेके लिए दिनाँक २७ अप्रैलको जारी किये अध्यादेशके अन्तर्गत जमानतका पैसा जमा न करानेके कारण सरकारी कब्जेमें ले लिया गया था। देखिए "पत्र: एच० डब्ल्यू० एमर्सनको", २-६-१९३१ भी।

यहाँ मैं यह कहनेकी धृष्टता करता हूँ कि इन वस्तुओंको उसी दशामें लौटाया जाना चाहिए जिस दशामें इन्हें कब्जेमें लिया गया था। मैं नहीं जानता कि सरकारी अधिकारियोंको इन वस्तुओंका उपयोग करनेका कोई अधिकार था या नहीं, लेकिन यदि था भी और यदि उनके उपयोगसे इनमें टूट-फूट हुई है तो लौटाते समय ये वस्तुएँ अच्छी हालतमें तो होनी चाहिए। मैं चाहूँगा कि सरकार इन दो मामलों पर तत्काल ध्यान दे। बिना लाइसेंसके शराबकी बिक्रीके कारण उन लोगोंपर बहुत ही बुरा प्रभाव पड़ रहा है जो धीरे-धीरे शराब पीनेकी आदत छोड़ रहे थे। इसी प्रकार कब्जेमें लिये गये रोजाना इस्तेमालके सामानको रोक रखनेसे उनके मालिकोंको[1] घाटा उठाना पड़ रहा है और असुविधा भी।

हृदयसे आपका,

श्री आर० एम० मैक्सवेल
बम्बईके महामहिम राज्यपालके निजी सचिव
महाबलेश्वर

[अंग्रेजीसे]

अ० भा० कां० कमेटी, फाइल संख्या ४, १९३१, भाग १, पृष्ठ २७–२८।
सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

१. मैक्सवेलने १३ मईके अपने उत्तरमें कहा था: "समझौतेकी धारा १६ (क) में उल्लिखित "लौटाना" शब्दका आपने यह अर्थ लगानेकी बात सुझाई है कि सम्पत्तिको उसी स्थानपर वापस पहुँचाया जाये जहाँ वह कब्जेमें ली गई थी"। खुद समझौतेकी शर्तोंमें इस तरहके स्पष्टीकरणके अभावमें सरकार सम्बन्धित शब्दका सामान्यसे हटाकर कोई अन्य अर्थ लगानेमें असमर्थ है; और सामान्य अर्थ है: "वापस दिया जाये।" सरकार समझौतेपर अमल करनेके लिए हमेशा तैयार होते हुए भी यह बात न्यायसगत नहीं मानती कि कब्जेमें लिये गये सामानको जिन स्थानोंपर वे इस समय हैं, वहाँ से पहलेके स्थानतक ले जानेका खर्च कर-दाताओंपर डाला जाये। मै यह भी उल्लेख कर दूँ कि आपकी यह धारणा समझौतेकी किसी भी धाराके अधीन नहीं आती कि जब्त मालको उसी हालतमें जिसमें उसे कब्जेमें लिया गया था, लौटानेकी जिम्मेदारी सरकारकी है। इसके विपरीत, समझौतेकी धारा १६ (ग) में स्पष्ट रूपसे उल्लेख है कि "बिगाड़ आदिके लिए कोई हर्जाना नहीं दिया जायेगा"। "मैं यह उल्लेख कर दूँ कि १९३० के अध्यादेश ९ की धारा ४ (३) में तो यह भी उल्लेख है कि अगर सम्पत्ति जब्त नहीं हुई है पर कब्जेमें ले ली गई है तो उसका उपयोग भी मजिस्ट्रेटके आदेशानुसार किया जा सकता है। मोटरगाड़ी और साइकिलको तो वस्तुत: जब्त किया गया था और यदि उनको बेचा या नष्ट कर दिया जाता तो उनके पहले मालिकका उसपर कोई अधिकार नहीं रह जाता; क्योंकि समझौतेके खण्ड १६ (क) में कब्जेमें ली गई चल सम्पत्तिको उसी अवस्थामें लौटानेकी व्यवस्था है यदि वह तब भी सरकारके कब्जेमें हो। इसलिए मै आशा करता हूँ कि आप जब्तशुदा सामानको अविलम्ब अपने कब्जेमें लेनेकी व्यवस्था करेंगे, क्योंकि यदि सम्बन्धित व्यक्ति समझौतेकी धारा १६ (क) के अधीन की गई व्यवस्थाका लाभ नहीं उठाते, तो अनिश्चित कालतक इनकी रखवाली करना सरकारके लिए सम्भव नहीं होगा।"

१२०. पत्र : जी० वी० केतकरको[1]

[स्थायी पता,] साबरमती
७ मई, १९३१

प्रिय मित्र,

आपका पत्र मिला। मैं कोई निश्चित राय दे सकूँ, इसके लिए मैं यह अवश्य चाहूँगा कि शंकररावके विचार भी जान लूँ। उनके विचार मालूम होनेतक मुझे आपकी इस बातसे सहमत होनेमें कोई संकोच नहीं कि कांग्रेस कमेटियोंमें परस्पर सहमतिसे सभी दलोंको प्रतिनिधित्व मिलना चाहिए या फिर गलत किस्मकी किसी खींचतानके बिना, बिलकुल खुला, सीधा-सच्चा चुनाव होना चाहिए। आप अपना पत्र और मेरा उत्तर शंकररावको दिखा दें और यदि वे मेरी रायका विरोध करना चाहें तो विरोधमें वे जो भी कहना चाहें, उनको कहने दीजिए। मैं चाहता हूँ कि महाराष्ट्रमें दोनों दलोंके[2] बीच अच्छे सम्बन्ध स्थापित हों, जिससे उनके सम्बन्ध अविच्छिन्न ही न रहें, बल्कि अधिक सशक्त बनते जायें।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

श्री जी० वी० केतकर
केसरी और मराठा कार्यालय
५६८, नारायण पेठ
पूना नगर

अंग्रेजी (जी० एन० ७९६२) की फोटो-नकल तथा सी० डब्ल्यू० ९८१ से भी।
सौजन्य : जी० वी० केतकर

१. लोकमान्य तिलकके नाती।
२. उत्तरदायी सरकारका हामी दल और असहयोगी दल।

१२३. पत्र : एच० डब्ल्यू बी० मोरेनोको

[स्थायी पता,] साबरमती
७ मई, १९३१

प्रिय मित्र,

आपका पत्र मिल गया। जैसा कि आप चाहते हैं, मैं 'यंग इंडिया'[1] के पृष्ठोंमें इस विषयके बारेमें अवश्य लिखूँगा और इसीलिए आपको यहाँ ब्यौरेवार उत्तर लिखनेकी जरूरत नहीं समझता। आपने जिसकी प्रति संलग्न की थी, उसका मूल मेरे पास नहीं पहुँचा।

हृदयसे आपका,

श्री एच० डब्ल्यू० बी० मोरेनो
प्रधान अध्यक्ष, एंग्लो इंडियन लीग
९, मार्सडेन स्ट्रीट, कलकत्ता

अंग्रेजी (एस० एन० १७०६०)की माइक्रोफिल्मसे।

१२४. पत्र : के० एस० नागराजनको

[स्थायी पता,] साबरमती
७ मई, १९३१

प्रिय मित्र,

आपका ११ मार्चका पत्र इतने सप्ताहोंतक मेरी फाइलमें ही रहा, पर उत्तर देनेमें यह विलम्ब अनिवार्य ही था।

आप यदि वास्तवमें पाशविक वृत्तियों — वासनाओंसे मुक्त हैं, तो अपने आपको मुक्त बनाये रखनेका आपको पूरा अधिकार है। आपको अपने विचारों और अपनी मनोदशासे पत्नीको अवगत करा देना चाहिए। और यदि वह अपनी ओरसे अपनी वासनाको संयत नहीं रख सकती, तो उसे यह समझ लेने दें कि विवाहको वैधानिक मान्यता देनेवाले सहवासके अभावमें विवाह ही पूर्णताको प्राप्त नहीं हुआ है और इस कारण वह यह माननेके लिए स्वतन्त्र है कि वर्तमान विवाह तो विवाह ही नहीं है; इस तरह वह अपनी पसन्दका विवाह करनेके लिए बिलकुल स्वतन्त्र है। यदि उसे लोकापवादका भय हो, तो आपको उसे लोकमतकी उपेक्षा करनेमें सहायता देनेका वचन देना और हर तरहसे उसका मार्ग सरल तथा सुगम बनाना चाहिए। मैं इस बातसे बिल-

१. देखिए "आँगल-भारतीय", १४-५-१९३१।

कुल सहमत हूँ कि यदि आपके मनमें वास्तवमें वैसी कोई इच्छा न हो, तो किसी भी स्थितिमें पत्नीके साथ आपका सह-शयन अपेक्षित नहीं है।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत के० एस० नागराजन
२३३, लॉयोला होस्टल
कैथेड्रल डाकखाना, मद्रास

अंग्रेजी (एस० एन० १७०६२)की फोटो-नकलसे।

१२५. पत्र : जयरामदास दौलतरामको

बोरसद
७ मई, १९३१

प्रिय जयरामदास,

यह पत्र[1] आपकी जानकारीके लिए है। यदि आपके पास कहनेको कुछ हो, तो मेरा मार्ग-दर्शन करनेकी कृपा कीजिए।

हृदयसे आपका,
गांधी

संलग्न–१

श्री जयरामदास दौलतराम
स्वराज्य आश्रम, बारडोली

[अंग्रेजीसे]

अ० भा० कां० क० फाइल संख्या २७३, १९३१।
सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

१२६. वक्तव्य : धरनेके बारेमें

बोरसद
८ मई, १९३१

यह जानकर आश्चर्य होता है कि श्री ग्रे[2] जैसे जिम्मेदार अंग्रेज भी वास्तविक परिस्थितिसे कितने अनभिज्ञ हैं। मुझे उनपर अनभिज्ञ होनेका दोष इसलिए लगाना पड़ रहा है कि मैं अपने-आपको यह समझा ही नहीं पाता कि वे जान-बूझकर

१. मीरपुरखास (सिन्ध) जिला कांग्रेस कमेटीके अध्यक्ष वतन जी० गिडवानीसे। उन्होंने किसी ठाकुरदासका उल्लेख किया था, जो अपने-आपको कांग्रेस समितिके मन्त्री बतलाते थे और विदेशी कपड़ोंके बहिष्कारके सिलसिलेमें किये गये कांग्रेसके निर्णयके विरोधमें वस्त्र व्यापारियोंको विद्रोहके लिए भड़का रहे थे।
२. सूतकार और निर्माता संघके कार्यकारी अध्यक्ष।

वास्तविक परिस्थितिको तोड़-मरोड़कर पेश कर रहे हैं। दिल्ली समझौतेमें यह बात बहुत स्पष्ट रूपसे स्वीकार की गई थी कि धरने बिलकुल शान्तिपूर्ण होने ही चाहिए, उनमें किसी भी प्रकारकी धमकी, भय या बल-प्रयोगसे काम नहीं लिया जायेगा। इस बातपर मेरा बड़ा आग्रह था कि इस शर्तका पालन किया ही जाये और अधिकांश मामलोंमें यह हो भी रहा है। अगर आतंक, बल-प्रयोग अथवा धमकानेका कोई प्रामाणिक मामला सामने रखा जाये तो मैं ऐसे हर मामलेमें निःसंकोच धरना स्थगित करनेकी सलाह दूँगा और उसपर आग्रह करूँगा। मैं जानता हूँ कि अपनी दृष्टिसे भी समझौतेको ज्यादा-से-ज्यादा सख्तीके साथ लागू करना कितना महत्व रखता है।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, ९-५-१९३१

१२७. तार : कावसजी जहाँगीर (छोटे)को[1]

बोरसद
८ मई, १९३१

सर कावसजी जहाँगीर (छोटे)
नेपियन सी रोड
बम्बई

विस्तृत तारके लिए धन्यवाद। शीघ्र जाँच-पड़ताल कर रहा हूँ। निश्चित रूपसे आश्वासन दे सकता हूँ, सरदार गरदा या उनके साथियोंको (हानि) नहीं पहुँचाई जायेगी।

गांधी

[अंग्रेजीसे]

अ० भा० कां० क० फाइल संख्या १६-सी, १९३१
सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

१. कावसजी जहाँगीर (छोटे)के तारके उत्तरमें जो इस प्रकार था : "समझौतेके बादसे तंग किये जानेके बारेमें गरदाकी शिकायत। २७ तारीखको वखारियाकी जिन फैक्टरीमें कपास ले जाते समय उसके आदमियोंको गालियाँ दी गईं। २८ तारीखको बावलाके लोगोंने मजदूरोंको डराया और झोंपड़ियों तथा उनमें रहनेवालोंको जला देनेकी धमकियाँ दीं। २९ तारीखको उनके नवसारी स्थित बंगलेके पिछवाड़ेसे पथराव किया गया और ठीक उसी समय एक लारीमें खचाखच भरे हुए व्यक्तियोंने बंगलेके सामने से भी पथराव किया जिससे सिद्ध होता है कि कार्य योजनापूर्वक किया गया था। सरभोणमें उनके पुत्रकी हंसी उड़ाई और तिरस्कार-सूचक आवाजें लगाईं। इससे जाहिर है कि वे लड़ाईपर आमादा थे। और अधिक सुस्पष्ट उदाहरण जुटानेके लिये गरदाको तार दे रहा हूँ। हार्दिक अनुरोध है कि यदि ये आरोप सही हों तो उनको तंग करना तुरन्त बन्द कर दिया जाये। पत्र भी भेज रहा हूँ।"

१२८. पत्र : गंगाबहन वैद्यको

सुबहकी प्रार्थनाके बाद, शुक्रवार [८ मई, १९३१][1]

चि० गंगाबहन,

तुम्हारा पत्र मिला।

काकु[2] का भाई चल बसा, उसका दुःख मत मानना। ऐसा तो संसारमें होता रहेगा। शरीरको चूड़ीकी उपमा ठीक ही दी गई है। जितनी देर चूड़ीको टूटनेमें लगती है, शरीरको टूटनेमें उतनी देर भी नहीं लगती। यत्नपूर्वक रखें तो काँचकी चूड़ी हजारों वर्ष टिक सकती है। किन्तु शरीर तो सौ वर्षसे ज्यादा चलता ही नही। और सौ वर्ष भी कोई-कोई व्यक्ति ही जीता है। काकुका भाई गया किन्तु उसके शरीरमें रहनेवाली आत्मा नहीं गई। उसके तो कोई भाई नही था या उसके सभी भाई थे। इसलिए किसी सम्बन्धीकी मृत्यु हो, तो हम उससे सहिष्णुता, वैराग्य और ज्ञान बढ़ायें, मोहमें न पड़ें। . . .[3] काकु अपने धर्मको भूला, इस बातका उसके भाईकी मौतसे कोई भी सम्बन्ध नहीं। उसे इस बातकी याद मत कराना। अब काकु चाहे तो वही रहे और कमाये। उसकी सेवा-कार्यमें पड़नेकी इच्छा जब हो तभी उसमें पड़े।

मैं सोमवारको शिमला जानेके लिए यहाँसे रवाना होऊँगा। उससे पहले आ जाना। बम्बई जानेकी तो जरूरत नहीं दिखाई देती। किन्तु मन न माने तो हो आना।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]

बापुना पत्रो : ५० स्वा० गंगाबहनने तथा सी० डब्ल्यू० ८७७४ से भी।
सौजन्य : गंगाबहन वैद्य

१. शिमला-यात्राके उल्लेखसे।

२. पुरुषोत्तम डी. सरैया, गंगाबहनका नाती।

३. मूलके अनुसार।

१२९. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

बोरसद शिविर
८ मई, १९३१

प्रिय जवाहरलाल,

तुम्हारा तार मुझे मिल गया था और पिछले महीनेकी ३० तारीखका पत्र भी अब मिल चुका है; लेकिन उससे पहलेका नहीं मिला। निश्चय ही तुम्हारे अविलम्ब लौटनेकी ऐसी कोई जरुरत नहीं है। तुम्हारे तारसे मैंने अनुमान लगा लिया है कि तुमने अपने पत्रमें जिस कड़ी सर्दीका जिक्र किया है, उसके बावजूद तुम सब लोगोंका स्वास्थ्य बहुत ही ठीक रहा। वार्ता भंग होनेके बारेमें तुमने समाचारपत्रोंमें जो देखा, वह बिलकुल ही निराधार नही था; लेकिन अभी इस समय तो गुजरातमें उसके भंग होनेका फौरी खतरा नहीं दिखाई देता। मै अगले सप्ताह कई अनिर्णीत मामलोंके बारेमें श्री एमर्सनसे बातचीत करने शिमला जा रहा हूँ और उन्होंने अपने पत्रमें लिखा है कि संयोगसे उसी समय गोलमेज परिषद्के बारेमें भी सरकारके साथ बातचीत हो जायेगी। वे चाहते है कि १८ तारीखको या इसके आसपास ही मैं नैनीताल भी चला जाऊँ। पता नहीं, इन दिनों संयुक्त प्रान्तमें कैसा-क्या चल रहा है। लेकिन मेरा नैनीताल जाना ठीक ही रहेगा। हिन्दू-मुसलमान समस्याके बारेमें तुमने इतनी स्पष्टवादितासे अपने विचार लिखकर सचमुच बहुत ही ठीक किया। तुम यदि इतनी स्पष्टवादितासे काम न लेते, तो मेरे दिलको ठेस लगती। मैं तुमको गलत न समझ लूँ, ऐसी तनिक-सी भी कोई शंका मनमें रखे बिना अपने विचार व्यक्त कर देनेका तुमको पूरा अधिकार है। जाहिर है कि मै तुम्हारा लगाया गया आरोप स्वीकार नहीं करता। मैंने इस बातका हमेशा काफी एहतियात बरता है कि मैं जो भी कह रहा हूँ, वे मेरे अपने विचार हैं। जबतक हम अपनी एक कोई स्पष्ट नीति तय नहीं कर लेते, तबतक मैं अपने व्यक्तिगत विचार ही तो व्यक्त कर सकता हूँ? लेकिन ऐसे अवसर अनेक नहीं आये। मैं तुम्हारी इस बातसे बिलकुल सहमत हूँ कि डॉ० अन्सारीने अनेक व्यक्तियों द्वारा पंच-फैसला करानेका जो प्रस्ताव सुझाया है, वह बड़ा ही अव्यावहारिक है। और उसका कोई परिणाम भी नहीं निकला। डॉ० महमूदकी शंका नितान्त निराधार है। मैंने उनके कहनेपर नवाब भोपालसे मुलाकात की थी और उनके साथ हिन्दू-मुस्लिम-समस्यापर चर्चा होनेपर मैंने स्वाभाविक तौरपर उनसे कह दिया था कि वे शौकत अली और उनके अन्य मित्रोंको बुला सकते हैं और उनकी रायमें अगर कुछ करनेकी स्थिति हो तो वे मुझे भी भोपाल बुला सकते हैं। मैं उनसे यह नहीं कह सका कि उनको बिलकुल ही कोई काम नहीं करना है। श्रीमती नायडू उसी दिन शौकत अलीको लेकर मणिभवन आई थीं। नवाब भोपालके साथ हुई अपनी बातचीत मैंने उनको

सुना दी थी। इससे आगे कुछ नहीं हुआ। मैंने आगे कोई कार्रवाई नहीं की और इससे अधिक एक पंक्ति भी नहीं लिखी कि मैं प्रार्थना कर रहा हूँ; वह तो मैं सचमुच कर भी रहा हूँ। पिछले हफ्ते जब डॉ० महमूदने शिकायत की[1] कि मैंने चुप बने रहनेका जो समझौता हुआ था, भंग कर दिया है, तब मैंने उनको भी यही बात लिख दी थी। पूरी तरह स्वस्थ होकर तुम्हारे लौटनेपर हमें कार्यसमितिकी बैठक बुलानी चाहिए और यदि हम उसमें सभी कांग्रेसियोंके मार्ग-दर्शनके लिए कोई नीति-सूत्र निश्चित कर सकें तो मेरे लिए उससे बढ़कर प्रसन्नताकी बात और कोई नही होगी। व्यक्तिगत तौरपर फिलहाल मैं इसी निष्कर्षपर पहुँच रहा हूँ कि मेरा वही विचार ज्यादा सही है जो मैंने तुम्हारे रवाना होनेके दिन या उससे एक दिन पहले तुमको बतलाया था। जाहिर है कि तुम बम्बई पहुँचनेपर सबसे पहला काम यही करोगे कि मेरे ठिकानेका पता लगा लो। ज्यादा सम्भावना इसी बातकी है कि उस समय मैं बारडोली या बोरसदमें रहूँगा।

हिन्दू-मुस्लिम एकताके बिना लंदन जाना नही होगा।

तुम सबको प्यार।

बापू

पण्डित जवाहरलाल नेहरू
नुवारा इलिया
श्रीलंका

[अंग्रेजीसे]

गांधी-नेहरू कागजात, १९३१।
सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

१३०. पत्र : सर डार्सी लिंडसेको

[स्थायी पता,] साबरमती
८ मई, १९३१

प्रिय मित्र,

आपके २४ अप्रैलके पत्रके लिए धन्यवाद। आपने जिसका जिक्र किया है, वह एक बहुत ही नाजुक मामला है। भगतसिंहका जीवन रूमानियतकी चादर ओढ़े हुए है। वे बुजदिल नहीं थे। मैंने जितनी भी पूछ-ताछ की है, उससे यही पता चला है कि उनका चरित्र सर्वथा निर्दोष था और वे अपूर्व साहसी थे। कुछ तरुणोंपर उनका प्रभाव बड़ा गहरा था। किसी-न-किसी तरह उनके मनमें यह विश्वास जम गया था कि राजनीतिक हत्याओंकी अपनी उपयोगिता होती है। भगतसिंह और उनके साथियोंकी फाँसीको अनदेखा करना असम्भव था। मैं समझता हूँ कि उन्हें फाँसी

१. देखिए "पत्र: डॉ० महमूदको", ४-५-१९३१।

देना सर्वथा अविवेकपूर्ण था। फाँसीने उनको शहीद बना दिया। मेरे मनमें तनिक भी सन्देह नही है कि फाँसीने उनके जीवनको एक ऐसे आलोकसे मण्डित कर दिया है जो अन्यथा सम्भव नहीं था। इसलिए कांग्रेसके सामने बस एक ही मार्ग रह गया था। कांग्रेस एक ऐसा प्रस्ताव[1] पास करनेपर विवश हो गई थी जिसमें हत्याके प्रयासों और उनपर दी जानेवाली फाँसियोंकी भी निन्दा की जाये और साथ ही उनके ऐसे प्रयासोंको प्रेरणा देनेवाली वीरता और बलिदान सम्बन्धी उनकी भावनाकी सराहना भी की जाये। पर मैं आपकी इस बातसे बिलकुल सहमत हूँ कि इस प्रस्ताव से राजनीतिक हत्याको किसी बड़े पैमानेपर निश्चय ही अविवेकपूर्ण समर्थन मिला है। हममें से अनेक लोग हिंसात्मक क्रान्तिकारी आन्दोलनका बढ़ाव रोकनेके लिए अपनी ओरसे सभी प्रकारकी कोशिश कर रहे है। उसपर हमने काबू भी पा लिया है; लेकिन यह सही है कि जब-तब हिंसात्मक रूपमें फूट पड़नेवाली यह भावना, मैं समझता हूँ, तबतक पूरी तरह दम नही तोड़ेगी जबतक भारत स्वाधीन नहीं हो जाता। मै आपका पत्र प्रकाशित नहीं कर रहा हूँ, क्योंकि इसके प्रकाशनसे उस उद्देश्यको बल नही मिलेगा जिसे लेकर हम दोनों चल रहे हैं।

हृदयसे आपका,

सर डार्सी लिंडसे
मैंडेलियु
केन्स, ए० एम०
[फ्रांस]

अंग्रेजी (एस० एन० १७०६४) की माइक्रोफिल्मसे।

१३१. पत्र : 'लिविंगस्टन ऐंड डौल' को

[स्थायी पता,] साबरमती
८ मई, १९३१

प्रिय महोदय,

मैं आपके गत ३ मार्चके पत्रके सन्दर्भमें श्री डौलके नाम वकालतनामा करके उसे यथाविधि अपने हस्ताक्षरके साथ संलग्न कर रहा हूँ।

आपका,

संलग्न—१

सर्वश्री लिविंगस्टन ऐंड डौल,
सॉलिसिटर ऐंड नोटरीज़
डर्बन, नेटाल

अंग्रेजी (एस० एन० १७०६५) की माइक्रोफिल्मसे।

१. देखिए खण्ड ४५, पृष्ठ. ३८५।

१३२. पत्र : अब्दुर्रज्जाक मलीहाबादीको

[स्थायी पता,] साबरमती
८ मई, १९३१

प्रिय मित्र,

आपका पत्र पाकर बड़ी प्रसन्नता हुई। सचमुच, मेरी कामना है कि मिस्र-वासियोंको पूर्ण स्वाधीनता और अपने प्राचीन तथा उर्वर देशके अनुरूप समृद्धि प्राप्त हो। मिस्रमें चलनेवाले बहिष्कार आन्दोलनके ठीक-ठीक स्वरूपकी मुझे जानकारी नहीं है; इसलिए उसके बारेमें कोई राय देनेकी मेरी असमर्थताके लिए आप मुझे क्षमा करें।

हृदयसे आपका,

अब्दुर्रज्जाक मलीहाबादी साहेब
३०४, न्यु सर्कुलर रोड
कलकत्ता

अंग्रेजी (एस० एन० १७०६६) की माइक्रोफिल्मसे।

१३३. पत्र : कुसुम देसाईको

८ मई, १९३१

चि० कुसुम,

तेरे दो पत्र मिले। जैसे तुझे स्वयं लिखकर सन्तोष नहीं हुआ, वैसे मुझे भी नहीं हुआ। मै समझा नहीं कि तू क्या चाहती थी। परन्तु अब इस विषयको ज्यादा **नहीं** खोदूँगा। थोड़ा-बहुत जितना समझा हूँ उतनेसे सन्तोष कर लूँगा।

अपने धरनेके कामको यन्त्रवत् मत बनाना। मेरा कथन ठीक समझमें आ गया हो, तो उसपर अमल करना। धरनेके द्वारा शराब पीनेवालोंसे घुलना-मिलना। तू यन्त्रवत् काम कब तक करती रहेगी?

[पुनश्च :]

बापूके आशीर्वाद

सोमवारको यहाँसे रवाना होना है।

गुजराती (जी० एन० १८२१) की फोटो-नकलसे।

१३४. पत्र : पन्नालाल झवेरीको

बोरसद
८ मई, १९३१

चि० पन्नालाल,

नानीबहनको लिखा मेरा पत्र मिल गया होगा। मुझे नहीं लगता कि विद्यापीठका पाठ्यक्रम नानीबहन और गंगाबहन [जैसे व्यक्तियों] के लिए है। किन्तु इन दोनों बहनोंको इस मोहसे सन्तोष मिलता हो तो ठीक है। मुझे इसमें कोई दोष नहीं दिखाई देता। अभी दोनोंमें आत्मविश्वास नहीं है। दोनोंको किसी चीजकी और जरूरत है। किस चीजकी, सो दोनों नहीं जानती। इस तरह प्रयत्न करते हुए किसी दिन जान जायेंगी; क्योंकि दोनों निर्मल स्वभावकी हैं। मैं यहाँसे शिमलाके लिए सोमवारको रवाना होऊँगा।

बापूके आशीर्वाद

श्री पन्नालाल
थियोसॉफिकल कॉलोनी
जूहू, सान्ताक्रुज, बम्बई

गुजराती (जी० एन० ३११३) की फोटो-नकलसे।

१३५. पत्र : प्रभावतीको

बोरसद
शुक्रवार, ८ मई, १९३१

चि० प्रभावती,

तुम्हारा पत्र मिला है। तुम्हारे बारेमें जयप्रकाशको लिखनेको जी चाहता है। तुम एक बार पूरी बात जी खोलकर कर लो तो अच्छा है। जबतक तुम्हारा स्वास्थ्य पूरी तरह ठीक नहीं हो जाता तबतक तुम्हें मेरे साथ ही रहना चाहिए। तुम्हारे स्वास्थ्यका तुम्हारी मनोदशासे बहुत निकटका सम्बन्ध है। शायद मेरे साथ रहकर तुम्हारा शरीर और मन दोनों स्थिर हो जायें और तुम जहाँ भी रहना चाहो वहाँ निर्भयतासे रहने लायक बन जाओ। तुम्हें जैसा ठीक लगे वैसा करना।

मैं यहाँसे सोमवारको शिमला जा रहा हूँ। वहाँ पतेकी जरूरत नहीं। मेरा नाम ही लिख दोगी तो पत्र जल्दी-से-जल्दी मिल जायेगा। कांग्रेस कमेटीकी मारफत भेजनेसे थोड़ी देरसे मिलेगा। शिमलामें पाँच दिनतक रहनेकी सम्भावना है।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ३४०९) की फोटो-नकलसे।

१३६. पत्र : नारणदास गांधीको

बोरसद
८ मई, १९३१

चि० नारणदास,

तुम्हारे दो पत्र मिले हैं। लक्ष्मी विषयक सुझाव तुम्हें पसन्द आया है, इससे निश्चिन्त हो गया हूँ। काका और वल्लभभाईकी भी यही राय है। विनोबा और किशोरलालकी राय अभी मिली नहीं है। द्वारकानाथका[1] बिल मुझे जरा भी अच्छा नहीं लगा। मैंने उसे रोक दिया है और द्वारकानाथको कड़ा पत्र लिखा है। उसका पत्र आनेपर तुम्हें लिखूँगा। इसलिए फिलहाल तो इसके बारेमें और कुछ करनेकी जरूरत नहीं रहती। यों बिलके बारेमें तुमने जो सामान्य सुझाव दिया है, उसपर फौरन अमल करनेकी आवश्यकता नहीं है।

शंकरभाईकी बात समझ गया। तुम्हारा निर्णय बिलकुल ठीक लगा है। भगवानजीकी रायकी चिन्ता नहीं है। पंजाबी वैद्यको दवाके लिए ३५ रुपये देने पड़ेंगे। ऐसे लोग इस तरह ही पैसा लेते हैं। सब ठीक हो जायें तो अखरेगा नहीं। फिर भी दवाईके पैसे वे किस तरीकेसे लेते हैं यह जान लेना तो आवश्यक है ही। इसलिए चन्द्रशेखरसे पूछकर ठीक ही किया है। बहुत-से लोगोंकी दवा एक साथ न कराना। हरएक रोगीका इलाज वह किस तरह करते हैं, यह देखते जाओ और आगे बढ़ो। मैं सोमवारको शिमलाके लिए रवाना होऊँगा। वहाँ पतेकी जरूरत नहीं। प्रागजीको जवाब दे दिया है। रुखी[2] और बनारसी[3] आ गये हैं। बनारसी आज ही वापस चला जायेगा। रुखी आज तो रहेगी। शायद कल किसी गाड़ीसे भेज दूँगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती एम० एम० यू० – १से।

१. द्वारकानाथ हरकरे।
२. रुक्मिणी, मगनलाल गांधीकी पुत्री।
३. बनारसीलाला बजाज, रुक्मिणीके पति।

१३७. पत्र : जमनादास गांधीको

बोरसद
८ मई, १९३१

चि० जमनादास,

डाक्टरका तार है कि जमनादास और नानालाल रतिलालकी देखभाल कर रहे हैं, इसलिए जबतक वह ठीक नहीं हो जाता राजकोटमें रह जाये और आश्रम बादमें जाये। चम्पाको मारा-पीटा गया, यह जानकर अफसोस हुआ। तुम और नानालाल देखभाल करते हो, यह बात डॉक्टरने कैसे सोचली होगी। नानालालभाईको भी यह बता देना। शायद वहाँ भी तार दिया हो। चम्पाको मारा-पीटा गया था, इसके बारेमें विस्तारपूर्वक लिखना।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

मैं सोमवार शामको यहाँसे शिमलाके लिए रवाना होऊँगा।

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९३२१) से।
सौजन्य : जमनादास गांधी

१३८. पत्र : जमनालाल बजाजको

बोरसद
८ मई, १९३१

चि० जमनालाल,

कर्नाटकके भाई-बहनोंसे कहो[१] कि उन्होंने युद्धमें तो अच्छा हिस्सा लिया ही है; वैसा ही अब रचनात्मक कार्यमें भी लें। खद्दरमें बहुत करनेको बाकी है, विदेशी वस्त्रका बहिष्कार खद्दर ही के लिए है। यदि बहिष्कार गरीबोंकी सेवा हेतु नहीं है तो कमसे कम मैं तो उसमें ऐसा तन्मय नहीं बन सकता, जैसा आज हूँ।

कर्नाटक एक अलग सूबा बनना चाहिए, इस बारेमें कुछ कर्नाटकी भाई बहुत फिक्र करते हैं। वे क्यों करते हैं? महासभाने तो कन्नड भाषा बोलने वालोंका एक सूबा बना ही रखा है और पूर्ण स्वराज्यमें यही होगा।

लिंगायत इ. सब इक्कठे हुए हैं इसलिए धन्यवाद, और यह होना भी चाहिए।

मोहनदास

पाँचवे पुत्रको बापूके आशीर्वाद

१. जमनालाल बजाजकी अध्यक्षतामें कर्नाटक प्रान्तीय परिषद्का छठा अधिवेशन २६ मई, १९३१ को हुकेरी, जिला बेलगाँवमें हुआ था। सन्देशके लिए देखिए "सन्देश : कर्नाटक प्रान्तीय परिषद्को", १८-५-१९३१।

१३९. भेंट : पत्र-प्रतिनिधियोंको

बोरसद
८ मई, १९३१

बारडोली ताल्लुकेमें सरदार गरदाने जब्तशुदा जमीनें खरीदी थीं। बम्बईके एक पत्रमें समाचार प्रकाशित हुआ था कि सरदार गरदाने उन जमीनोंको लौटानेसे इनकार कर दिया है। इस सिलसिलेमें श्री गांधीसे भेंट करनेपर उन्होंने कहा कि समाचार सही है; लेकिन साथमें यह भी कहा कि जहाँतक मैं जानता हूँ वहाँके लोगोंने उन खेतोंसे फसल उठानेके काममें जान-बूझकर या किसी भी प्रकारसे कोई बाधा नहीं डाली। उनको ऐसी ही हिदायत दी गई थी और इसका सख्तीसे पालन करनेके लिए कहा गया था। मैंने सरदार गरदा द्वारा की गई सभी शिकायतोंकी जाँच करा ली है। मैंने शिकायतके सुस्पष्ट उदाहरण जुटानेके लिए भी कहा था, किन्तु एक भी पेश नहीं किया गया। इसलिए मुझे इस बातपर दुःख और आश्चर्य भी है कि सरदार गरदाने इतने सोच-समझकर किये गये समझौतेसे बच निकलनेकी कोशिश की है या उससे मुकर गये हैं। मैंने समझौतेके मुख्य मध्यस्थ सर कावसजी जहाँगीरका[1] ध्यान इस स्थितिकी ओर आकर्षित कर दिया है।

गांधीजीसे पूछा गया कि क्या सरदार वल्लभभाई पटेलने बारडोलीकी जनताको अनधिकृत बकाया राशि अदा न करनेकी सलाह दी थी। उन्होंने उत्तर दिया कि सवाल श्री वल्लभभाई द्वारा बकाया राशि अदा न करनेकी सलाहका है ही नहीं; असल बात तो यह है कि जनतामें इतनी सामर्थ्य नहीं है कि वह अदायगी कर सके। सच तो यह है कि अनेक लोग तो सचमुच चालू वर्षकी कर-राशि भी मुश्किलसे अदा कर पायेंगे। सूरत और खेड़ा दोनों ही जिलोंके अभावग्रस्त क्षेत्रोंके लोगोंको कहीं-कहीं तो चालू वर्षकी कर-राशिकी अदायगी भी मुलतवी करानेके लिए कहने पर विवश होना पड़ेगा। सबसे मुख्य बात तो यह है कि करोंकी बकाया राशि निर्ममताके साथ वसूल करनेका आग्रह नहीं किया जाना चाहिए। इस बातको उचित महत्व दिया जाना चाहिए कि करोंकी अदायगी बन्द करनेका राजनीतिक आन्दोलन पूरी सदाशयताके साथ खत्म कर दिया गया था; और फिर परिस्थितिके अनुसार लोग जितनी भी अदायगी कर सकते थे, उन्होंने की।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, ९-५-१९३१

१. देखिए "तार: सर कावसजी जहाँगीरको", ६-५-१९३१।

१४०. सन्देश : हिन्दुस्तानी सेवा दलको

[९ मई, १९३१से पूर्व][1]

कांग्रेस स्वयंसेवकोंके शिविरोंके आयोजनका अर्थ यही होना चाहिए कि स्वयं-सेवक अपने कर्त्तव्यके प्रति और अधिक समर्पणकी भावना और अधिक आत्मशुद्धि, दीनोंकी और अधिक सेवा, हाथ-कताई और धुनाईमें और अधिक कौशल तथा कताई, ओटाई, धुनाई, इत्यादिके लिए अपेक्षित विभिन्न यन्त्रोंकी मरम्मत करनेमें और अधिक कौशल प्राप्त करे और इन सबसे बढ़कर सत्य तथा अहिंसापर अपनी और अधिक श्रद्धाका परिचय दें। कांग्रेस स्वयंसेवकके लिए शिविरमें शामिल होनेका अर्थ यही होना चाहिए कि आसपासके गाँवोंमें सफाईका काम जोरशोरसे चले।

मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, ९-५-१९३१

१४१. सन्देश : कराचीके मजदूरोंको

बोरसद

९ मई, १९३१

मेरे तई यह बात बिलकुल साफ है कि श्री गजाधर द्वारा शुरू किया गया आन्दोलन शरारतसे भरा हुआ और अव्यावहारिक है और इसलिए उसे बढ़ावा नहीं दिया जाना चाहिए।[2]

[अंग्रेजीसे]

हिन्दुस्तान टाइम्स, ११-५-१९३१

१. विवरण इसी तिथिको प्रकाशित हुआ था।

१. देखिए "खतरेके बादल", १४-५-१९३१ भी।

१४२. पत्र : चिमनलाल शाहको

बोरसद
९ मई, १९३१

चि० चिमनलाल,

शारदाको कॉड-लिवर ऑयलसे स्पष्ट फायदा हुआ दिखता है क्या यह निश्चय-पूर्वक कहा जा सकता है? क्या उसका वजन आदि देखकर यह बात कही जा सकती है? कॉड-लिवर ऑयलकी महिमा डाक्टरोंसे तो बहुत सुनी है, किन्तु मुझे उसका ऐसा अनुभव नही हुआ है।

जब अन्नपूर्णाको बुलानेका साहस जुटा लो तब उसे बुला लेना। उसके साथ पत्र-व्यवहार बन्द न करना। वह खराब स्वभावकी निकले तो बादमें क्या होगा, डर यही तो है। यह डर होते हुए भी यदि इस समय उसके सुधरनेके प्रमाण मिल रहे हों तो इस भयको निरर्थक मानना। जोखिम तो सभी कामोंमें रहती है। भर्तृहरिने भयहीन वस्तु केवल वैराग्यको ही माना है। गीताका वैराग्य इसी तरहका सच्चा वैराग्य है। यह वैराग्य फलका मोह त्याग देनेसे प्राप्त हो जाता है। यहाँ भी फलके बारेमें डर छोड़कर उसको आने देना कर्त्तव्य हो, तो इस कर्त्तव्यका पालन निर्भयतासे करना।

शकरीबहनके काममें मन लगाने लगेगी, तो अन्तमें उसे शान्ति मिल जायेगी।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (एस० एन० २४३७१) की फोटो-नकलसे।

१४३. चार लाख धारालाओंका सवाल

यह शीर्षक देकर किसीने 'एक धाराला' के छद्म नामसे निम्न पत्र लिखा है:[1]

यों तो यह पूरा पत्र विष-भरा है फिर भी उसमें कुछ वाक्य तो अत्यन्त विषैले थे; उन्हें मैंने निकाल दिया है। इस पत्रकी लिखावट बहुत जमी हुई है और भाषा तो मँजी हुई है ही। इसलिए मेरा अनुमान है कि उक्त पत्र किसी धाराला ठाकुरका लिखा हुआ नही बल्कि पाटीदारोंसे जिसे दुश्मनी है, ऐसे किसी व्यक्तिका है। पत्र चाहे जिसका हो, फिर भी इस पत्रके बहाने कुछ बातोंकी सफाई हो सकती है।

धाराला ठाकुर

यद्यपि पत्रमें पाटीदारोंके प्रति काफी जहर उगला है, फिर भी उसमें लगाये आरापोंमें कुछ सत्य है। जो दोष सारे हिन्दुस्तानमें पाया जाता है, वह पाटीदारोंमें भी है; अधिक पढ़े लिखे और अधिक धनवान लोग अपढ़ और गरीबोंपर

१. यहाँ नहीं दिया जा रहा है।

देश-भरमें हुकूमत करते है, और अपने ज्ञान और धनका दुरुपयोग करते हैं। इसमें ऊँच-नीचका भाव तो है ही। खुशहाल लोग ऐसे लोगोंके रक्षक नहीं बन पाते, जिनकी हालत गिरी हुई है; यह चीज हमारी प्रगति और स्वराज्य-प्राप्तिमें एक बहुत बड़ी रुकावट है। लेकिन पाटीदारोंके विषयमें इस चीजको कबूल करनेके बाद मुझे कहना चाहिए कि इस पत्रमें बहुत अतिशयोक्ति है। कुछ साल पहले करीब पचास हजार धाराला बड़तालमें इकट्ठे हुए थे, इसमें पाटीदारोंका हाथ था। तबसे उन्हें पाटीदार ठाकुर कहने लगे। आज गुजरातमें जहाँ-तहाँ पाटीदार नौजवान ऊँच-नीचकी भावनाको मिटा रहे है। बूढ़े पाटीदारोंमें से बहुतेरे इस काममें मदद करते हैं। युवक पाटीदार अनेक प्रकारके सेवा-कार्योंमें लगे हुए हैं। वे पाटीदारों और अन्य लोगोंमें भेद नहीं करते। और उनके इस कार्य-क्षेत्रकी सीमा पूरा हिन्दुस्तान है।

श्री रेवाशंकरकी सेवा

लेखकको यह कबूल करना पड़ा है कि श्री विट्ठलभाई, दरबार साहब गोपालदास, श्री दादूभाई वगैरा धाराला ठाकुरोंके प्रति समभाव रखते हैं। सरदारके लिए तो सब समान हैं; यह बात एक नन्हा बालक भी जानता है। उन्हें तो निर्धनमात्रकी सेवा करनी है। फिर भले ही वह भंगी हो या ब्राह्मण, गुजराती हो या मद्रासी। राष्ट्रने उनकी इस विशेषताको पहचाना और इसीलिए उन्हें राष्ट्रपति बनाया है। पत्र-लेखक भाई रविशंकरकी सेवाको नाममात्रकी समझते है। यदि यह त्यागकी मूर्ति नामकी ही सेवा करती है तो कामकी सेवा कौन करता है, यह मैं नही जानता।

वल्लभ विद्यालय

इसके बावजूद मैं स्वीकार करता हूँ कि धाराला ठाकुर और ऐसी दूसरी कौमोंके लिए सबके लिए अभी ब त-कुछ करना बाकी है। परन्तु सेवा-वृत्ति तेजीसे बढ़ रही है, इसलिए दिन-ब-दिन सब कौमोंकी एकता भी बढ़ेगी। बोचासणमें जिस पाठशालाकी नींव अभी हालमें ही रखी गई है[1] और जिसका नाम वल्लभ विद्यालय रखा गया है, वह भी धाराला ठाकुरोंके लिए ही है।

इसलिए उक्त पत्र-लेखकको मेरी सलाह है कि वे एक-दूसरेके बीच बैर न बढ़ाकर ऐसे उपाय खोजें और सुझायें, जिनसे आपसमें मित्रता बढ़े। लेखकके लिखनेके ढंगसे मालूम होता है, उनमें शक्ति है। मैं उन्हें उसका सदुपयोग करनेको आमन्त्रित करता हूँ।

पाटीदारोंसे

पाटीदारोंसे भी दो शब्द कहना चाहता हूँ। अपने अन्तर्में गहरे पैठकर जहाँ मैल हो वहाँसे उसे धो डालें। उन्होंने खूब बहादुरी दिखाई है, त्याग किया है। अब वे बाकी बचे हुए दोषोंको सोचें और उन्हें दूर करें।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १०-५-१९३१

१. देखिए "भाषण: बोचासणमें", ६-५-१९३१।

१४४. टिप्पणियाँ

चुनावके दौरान पाखण्ड

बलसाड़में प्रान्तीय समितिका जो चुनाव हुआ, उसमें मुट्ठी-भर मतदाता थे। दलबन्दी हो जानेके कारण चुनाव आवश्यक हो गया था। मतदाताओंको नियमित रूपसे खादीधारी होना चाहिए, परन्तु ये मतदाता कैसे खादीधारी थे, इस बारेमें एक मित्र लिखते हैं:[१]

एक वर्षके प्रचण्ड युद्धके बाद, और विदेशी वस्त्र-बहिष्कारमें खादीका कितना बड़ा स्थान है, यह जाननेके बाद कांग्रेसके साधारण नियम इस प्रकार दिन-दहाड़े तोड़े जायें, तो कांग्रेसकी क्या इज्जत रहेगी? कांग्रेसके ऐसे सदस्य गाढ़े प्रसंगोंपर क्या नाम करेंगे? ऐसे पाखण्डसे कांग्रेसकी उज्ज्वल कीर्तिमें कलंक लगता है। चुनाव ऐसी कहाँकी महत्वपूर्ण चीज है कि उसके लिए मतदाताओंको इस प्रकार नियम-पालनका आडम्बर रचना पड़े; और फिर वह चाहे जितनी महत्वपूर्ण चीज क्यों न हो, असत्याचरण करके महत्वका काम कैसे किया जा सकता है?

मुमकिन है कि गुजरातके अन्य स्थानोंमें और सारे देशमें जहाँ-जहाँ उम्मीदवार ज्यादा रहे होंगे, और कशमकश हुई होगी, वहाँ सभी जगह ऐसी कार्रवाई हुई होगी। यदि कांग्रेसके नियमोंके पालनमें ऐसी शिथिलता हो, ऐसा पाखण्ड हो तो स्वराज्य मिलने पर वह कितना बढ़ जायेगा, इसका आसानीसे हिसाब लगाया जा सकता है। स्वराज्य प्राप्तिके बाद होनेवाले चुनावोंमें अधिक प्रलोभन होंगे; क्योंकि तब तो धन-लाभकी बात भी होगी। मैं तो ऐसे व्यवहारको हमारे लिए शर्मनाक और नुकसान-देह मानता हूँ। इसमें न हमारा भला है, न देशका।

यदि हमें खादी पहननेसे नफरत हो, यदि हम खादीको आवश्यक न मानते हों, तो हम कांग्रेसके नियमोंमें से खादीसे सम्बन्धित नियम निकाल डालनेका आन्दोलन क्यों न करें? पर जबतक वह कायम है, उसपर अमल होना चाहिए। यह नियम पसन्द न हो अथवा इसका पालन करनेके लिए कांग्रेसके अधिकांश सदस्य राजी न हो तो आन्दोलन करके उन्हें इस नियमको रद्द करवानेका प्रयत्न करना चाहिए।

नडियाद देश-सेविका संघ और खादी

नडियाद देश-सेविका-संघकी ओरसे श्रीमती काशीबहन और गंगाबहन नडियाद ताल्लुका समितिके मन्त्रीको लिखती हैं:[२]

१. यहाँ नहीं दिया जा रहा है। उसमें कहा गया था कि विभिन्न मतदाताओंके पास खादीकी पोशाकें इनी-गिनी थीं और उन्होंने उन्हें बारी-बारीसे पहनकर मत दिये थे।

२. नहीं दिया जा रहा है। पत्रमें कहा गया था कि गांधीजीकी **नवजीवन**, २६-४-१९३१ की "स्वयंसेविकाएँ और खादी" टिप्पणीमें प्राप्त सूचनाओंके आधारपर उक्त संस्थाके कुछ दोष गिनाये हैं; वे सूचनाएँ सही नहीं हैं और उसके कारण बड़ी गलतफहमी हुई है।

मेरे लेखसे नडियादकी बहनोंके साथ जो-कुछ अन्याय हुआ हो, उसका परिमार्जन किया जाये। साथ ही मैं एक बातकी ओर ध्यान दिलाता हूँ। इन बहनोंने अपने पत्रमें लिखा है कि पन्द्रह स्वयंसेविकाएँ कांग्रेसका काम करते समय शुद्ध खादी ही पहनती आई हैं, और आज भी पहनती हैं। यदि यह बात है तो प्रश्न उठता है कि कितनी बहनें नियमसे खादी पहनती हैं? खादीमें विश्वास रखनेवालेके लिए खादी सिर्फ सामयिक पोशाक, गणवेश नहीं है, बल्कि रात-दिनकी पोशाक है, और होनी चाहिए। कुछ लोगों द्वारा कुछ समयके लिए खादी पहननेसे स्वराज्य नहीं मिलेगा, उससे भूखोंकी गरीबी दूर न होगी। वह गरीबी तो तभी दूर होगी जब खादी हरएक घरमें अपना स्थान बना लेगी। इसलिए मैं तो आशा रखता हूँ कि नडियाद ही नही, बल्कि दूसरे सब गाँव भी खादी ही पहनेंगे।

चौबीस टोपियाँ और तीन कुर्ते

जो आदमी यह मानता हो कि हिन्दुस्तानके करोड़ों लोग भूखों मरते हैं और उन्हें अर्द्धनग्न रहना पड़ता है; फिर भी यदि वह आदमी अपने सिरपर एक ही समय जैसे-तैसे चौबीस टोपियाँ पहनें और एक-पर-एक तीन कुर्ते बदनपर लाद लें तो उसे क्या कहा जायेगा? वह दयावान हो तो भी उसकी दया निरर्थक है, यह तो कहना ही चाहिए न?

फिर भी हम ऐसे बहुतेरे आदमियोंको देखते हैं। यह वाक्य पढ़कर उतावले पाठक ठठाकर हँसेंगे, कुछ मुझे मूर्ख भी कहेंगे। परन्तु इसमें न हँसनेका कोई कारण है, न मुझे मूर्ख माननेकी कोई वजह।

हम काठियावाड़ी पोशाकको ही ले। काठियावाड़ी, धोती, कुर्ता, अंगरखा और साफा पहनते हैं। वहाँकी आबोहवाके लिहाजसे तो इतने कपड़ोंकी बिलकुल जरूरत नही है। एक अंगरखेके दो कुर्ते आसानीसे बन सकते हैं। बारह गजके एक साफेकी चौबीस टोपियाँ आसानीसे बन सकती हैं। इसलिए ऐसे आदमीके बारेमें यह कहनेमें कि वह तीन कुर्ते और चौबीस टोपियाँ पहनता है, जरा भी अतिशयोक्ति न होगी; यह तो बिलकुल सच बात है। जो चतुर काठियावाड़ी इस सीधी बातको समझते हैं, जिनके दिलमें दया है, वे मेरी इस परेशानीका जवाब दें।

यह प्रश्न राजदरबारियोंके लिए नही है। वे तो अनेक दलीलोंसे मुझे हरानेकी कोशिश करेंगे और 'हमें राजदरबारमें जाना पड़ता है' आदि कहेंगे। न यह प्रश्न 'एजेन्सी' के नौकरोंके लिए है। वे द्रोण और भीष्मकी तरह अपने पेटकी ओर अंगुली दिखायेंगे और भले होंगे तो कवि शामलका छप्पय गाकर सुनायेंगे:

"पेट करावे वेठ, पेट वाजाँ वगडावे"

यह सवाल तो उनके लिए है जो इन बन्धनोंसे मुक्त हैं। वे मुझे सन्तोषजनक जवाब दें, या तेईस टोपियाँ और दो कुर्ते गरीबोंके लिए बचायें।

एक विवाहकी शर्तें

अनाविल जातिमें विवाहके समय कन्याके पिता द्वारा वरके पिताको खासा दहेज़ अर्थात् धन देनेका चलन है। बारडोली स्वराज्य आश्रममें भाई दयालजी गुलाबभाई

नामक एक सज्जन श्री लक्ष्मीदासके मातहत काम करते हैं। उन्होंने शादी की थी, पर फिर पत्नी जाती रही। यह बहुत पहलेकी बात है। उनके कोई सन्तान नहीं है। उन्होंने फिरसे ब्याह करनेका विचार किया। परन्तु उन्होंने सोचा कि [सरकारसे] संघर्षके दिनोंमें विवाह नहीं करना चाहिए। समझौता होनेके बाद मनमें फिर इच्छा उत्पन्न हुई। भाई दयालजीको आठ सौ रुपये दहेज देकर एक सज्जन अपनी कन्या देनेके लिए तैयार हो गये। किन्तु यह विचार देरतक नही टिका और वे आखिर-कार इस लालचसे विमुख होनेमें समर्थ हो गये। अब उनका शान्ताबहन नामक सत्रह वर्षकी कन्यासे विवाह होनेवाला है। इस विवाहकी शर्तें बहुत जानने और अनुकरण करने योग्य जान पड़ी; इसलिए नीचे देता हूँ:

वरको दहेज रुपयोंमें नहीं, सूतके रूपमें दिया जायेगा। सूतका वजन ८। रतल होगा। यह सूत परिवारवालोंका ही काता हुआ होना चाहिए।

कन्याकी ओरसे १५ और वरकी ओरसे १० (पुरुष, स्त्री, बच्चे) यों कुल पच्चीस लोगोंसे ज्यादा नहीं बुलाये जायेंगे और यह आवश्यक है कि वे सब शुद्ध खादी ही पहने हों।

सब एक ही भोजनशालामें जीमेंगे और सो भी दाल-भात और शाकका ही। गर्मीके दिन हैं, अतः मट्ठा लेनेमें हर्ज न होगा। ब्रह्मणोंको घीके साथ सीधा देनेका रिवाज उन्होंने एकदम बन्द कर दिया है।

किसी भी रिश्तेदारका टीका या कन्यादान रुपयोंके रूपमें न होकर कोई धार्मिक पुस्तक हो सकती है।

विवाहके बाद उपस्थित भाइयोंको पान-सुपारीके बजाय फल या शरबत या ऐसी ही कोई चीज देनेमें हर्ज न होगा। चाय-पान मना है।

घर-गिरस्तीके सामानमें चर्खा, पींजन, तकली, जाजम, या आसन और ऐसी ही चीजें दी जायें।

लड्डू-पूड़ी या इस तरहका 'भोजन' कदापि न कराया जाये।

वर-कन्या विवाहके अवसरपर अपने-अपने हाथकी कती खादीके कपड़े पहनेंगे। कपड़े खरीदे नहीं जायेंगे। इसी तरह किसीको कुछ भेंट देना हो, तो वह अपना हाथ-कता सूत ही दे सकेगा।

विवाहके अवसरपर कन्याके शरीरपर सुहाग सूचित करनेवाले एक-एक अलंकारके सिवा और अधिक गहने न होंगे। बादमें कोई देना चाहें तो दे सकते हैं।

आने-जानेके दिन मिलाकर तीन दिनमें सारा काम करके सब अपन-अपने घर जायेंगे।

कंकणके बदले हाथ-कते सूतकी चूड़ी पहनाई जायेगी।

विवाह आश्रमकी पद्धतिसे ही होगा, उसमें गांधीजीके विवाह-सम्बन्धी लेख, उनकी बनाई प्रतिज्ञा और प्रवचन पढ़े जायेंगे। ब्राह्मण भी शुद्ध खादीमें होंगे और दक्षिणा नहीं लेंगे।

बैंड-बाजा न होगा। भजन गाये जा सकेंगे, पर गालियाँ कदापि नहीं गाई जा सकेंगी।

इसपर भाई दयालजी और कन्याके पिताके दस्तखत हैं। १३ तारीखको ब्याह होगा। अनाविल जातिके साधारण ब्याह भी खर्चीले होते हैं, जब कि इस ब्याहमें केवल धर्मविधिको ही स्थान है। वर-कन्या तथा उन्हें आशीर्वाद देनेवाले प्रेक्षकों और पुरोहित ब्राह्मणके लिए खादी अनिवार्य है। यह कोई साधारण निश्चय नहीं है। घर-गिरस्तीका सामान अर्थात् दहेज। दहेजमें कन्याका पिता घर-गिरस्तीकी सब चीजें देता है, जब कि इस ब्याहमें केवल कताईकी चीजें ही दी जा सकती हैं। हम आशा रखें कि ऐसे विवाहका अनुकरण सब जातियोंमें आम रिवाज बन जायेगा और ऐसे शुभ संयोगोंमें ब्याहे जानेवाले दम्पति शुद्ध सेवक और सेविका बनेंगे।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १०-५-१९३१

१४५. खेड़ामें खादी

पेटलाद, नडियादका खादी प्रवृत्ति सम्बन्धी निम्न विवरण श्री गोपालदास पुरुषोत्तम देसाईने भेजा है:[1]

ऊपरकी टिप्पणी और आँकड़ोंमें कुछ सुधारकी आवश्यकता है। जहाँ वस्तुस्थिति बतानी हो और आँकड़े देना सामर्थ्यसे बाहर न हो, वहाँ अनुमानसे कुछ नहीं बताना चाहिए। "लगभग ५० से ७५ चरखे चालू हैं" वाक्यका कुछ भी अर्थ नहीं निकलता। ५० से कम भी हो सकते हैं और ७५ से ज्यादा भी हो सकते हैं। असलमें ५० से शायद कम ही होंगे। इसलिए जहाँ आसानीसे गिनती की जा सकती हो वहाँ बिल्कुल ठीक संख्या ही देनी चाहिए; न एक ज्यादा हो न एक कम। फिर पेटलाद, नडियादमें बनी खादी किस किस्म और कितने अंककी है, यह भी बतलाया जाना चाहिए। बाहरसे कितनी खादी आई है? आजीविकाके लिए काते गये सूतकी तुलनामें कितना सूत स्वावलम्बी होनेकी खातिर काता जाता है? अपनी जरूरतके लिए कातनेवालोंमें कितनी स्त्रियाँ और कितने पुरुष हैं? वे औसतन कितना सूत कातते हैं? वे अपने लिए स्वयं पींजते हैं या नहीं? यह सब बताना चाहिए। कार्यकर्त्ताओंकी संख्या १५१ दी गई है। इसके साथ यह भी बताना चाहिए था कि उनमें से किसने कितना उत्पादन किया और उत्पादनके विभाग भी बताये जाने चाहिए। इन सब तथ्योंके बिना यह विवरण शास्त्रीय नहीं माना जायेगा। इसपरसे कुछ भी अनुमान नहीं लगाया जा सकता।

१. यहाँ नहीं दिया जा रहा है।

ऊपरके आँकड़ोंके बारेमें इतना बता दूँ कि उसमें पेटलादके और नडियादके आँकड़े अलग-अलग दिये गये हैं। सामान्य तौरपर कहा जा सकता है कि नडियादके आँकड़े पेटलादके मुकाबलेमें आधे बैठते हैं। ऐसा क्यों है, इसका जवाब नडियाद ही देगा।

अब लिम्बासीको लेता हूँ। वहाँसे भाई विट्ठलदास यह लिखते हैं:[1]

इसके साथ उन्होंने जिनके यहाँ चरखा चलता है उन व्यक्तियोंके नाम दिये हैं। ऊपरकी आलोचना जहाँतक इस विवरणके बारेमें भी लागू की जा सकती हो वहाँतक लागू करके समझ ली जानी चाहिए। चरखे कम पड़ते हैं इसका उल्लेख हमारे लिए शर्मनाक है। हममें इतनी योग्यता होनी चाहिए कि हम हर जगह चरखे बना सकें। बारडोलीसे एक-दो नमूने मँगाकर वैसे चरखे स्थान-स्थानपर बनने लगने चाहिए। फिर जहाँ आश्रमवासी रहते हों, वहाँ तो यह सलाह और भी अधिक लागू होती है। चरखेके लिए लकड़ी कैसी होनी चाहिए आदि सूचना बारडोलीसे प्राप्त कर लेनी चाहिए। सब लोग याद रखें कि बारडोलीका कारखाना कमाई करनेके लिए नहीं है, बल्कि वह तो शिक्षालय है। इसलिए वहाँसे सभी आवश्यक सूचनाएँ प्राप्त की जा सकती हैं। कभी ऐसा समय आयेगा ही जब घर-घर लोग चरखा और तकली माँगेंगे। यदि हम बारडोलीके सत्याग्रह-आश्रमकी ओर नजर लगाकर बैठे रहें तो काममें बाधा पड़ेगी। बड़े-से-बड़ा कोई भी कारखाना करोड़ों चरखे नहीं बना सकता। बना सके यह जरूरी भी नहीं है; और अगर बना ले तो वह हानिकारक सिद्ध होगा। खादी-प्रवृत्तिका अर्थ और उसकी खूबी यही है कि उसकी प्रत्येक क्रिया हर गाँवमें की जा सकती है। खादी एकका पोषण करनेवाली क्रिया नहीं बल्कि अनेकोंका पोषण करनेवाली है। इसलिए प्रत्येक गाँवमें खादीकी प्रत्येक क्रिया विकसित हो जानी चाहिए।

[गुजरातीसे]
नवजीवन, १०-५-१९३१

१४६. पत्र : शान्ता पटेलको

१० मई, १९३१

चि० शान्ता,

तेरा पत्र मिला। वहाँके नियम और काम तुझे भारी लगते हैं, इससे यह प्रकट होता है कि बाहर तूने नियमोंका पूर्णतया पालन नहीं किया। तू बच्ची बनी रहे यह तो अच्छा है; पर बच्चेका अर्थ आलसी नहीं होता। बच्चेका अर्थ होता है निर्दोष, निर्विकार। तू निर्विकार तो नहीं है। पर क्या तू निर्दोष नहीं है? नहीं है तो बन। तुझे लड़कोंसे मिलना-जुलना बहुत अच्छा लगता है, लड़कियोंके साथ नहीं; यह तो भयंकर बात है। यह बात तुझे किसी दिन नीचे गिरायेगी। तू संसारकी ओर नजर

१. यहाँ नहीं दिया जा रहा है।

घुमा कर देख; जैसा तू चाहती है वैसा ही सब लड़कियाँ करना चाहें तो किसी लड़कीको दूसरी लड़कीका साथ ही न मिले। जिस स्वतन्त्रतासे तू किसी लड़कीके साथ खेलकूद सकती है, क्या उसी स्वतन्त्रताके साथ लड़केके साथ खेलकूद सकती है? ईश्वरने जो मर्यादा बनाई है, उसका तू उल्लंघन करना चाहे तो यह भयंकर बात है। इस पर विचार करना और इसे समझना। प्रेमाबहनको यह पत्र पढ़ाना। उसके साथ सलाह करके मुझे पत्र लिखना। प्रेमाबहनकी आज्ञाका पालन करना और उसकी सहायता करना।

यदि तू न चाहती हो तो कोई तेरा पत्र नही पढ़ेगा। आनन्दी मेरे साथ नहीं आयेगी। वह तो बारडोलीमें ही है।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ४०५९)की फोटो-नकलसे।

१४७. पत्र : गंगाशरण सिंहको

बोरसद
१० मई, १९३१

भाई गंगाशरण सिंहजी,

आपका पत्र मिला। जहाँ राजेन्द्र बाबु प्रमुख हैं वहां कार्यसिद्धि हि हो सकती है। विदेशी वस्त्र बहिष्कार, खद्दर प्रचार और शराब इ० मादक पदार्थोंका बहिष्कार हमारे लिये आज बहोत आवश्यक वस्तु है।

आपका,
मोहनदास गांधी

श्री गंगाशरणसिंह
कांग्रेस कमेटी
अमहरा
पो० निहट्टा, जिला पटना, बिहार

जी० एन० ११००८की फोटो-नकलसे।

१४८. पत्र : लक्ष्मीनारायण गाडोदियाको

१० मई, १९३१

भाई लक्ष्मीनारायणजी,

आपका पत्र मिला।

एलेक्सांडर ड्रुका खत पढ़ा। आपका उत्तर योग्य है। इस नुकसानको मै लाभ हि समजता हुं। कांग्रेस कमेटियोंकी हालत हर जगह बुरी हो रही है।

विदेशी वस्त्रके जहाजकी चोकीमें खतरा काफी है। यदि युद्ध फिर हुआ तो देखा जायगा क्या शक्य और योग्य है। सबसे अच्छा तो जनतामें काम करना हि है।

मै कल (सोमवारको) सीमला तरफ रवाना हुंगा। दिल्लीमें कुछ तीन घंटे ठहरना होगा। जमनालालजी साथ होंगे।

आपका,
मोहनदास

जी० एन० ५६२१ की फोटो-नकलसे।

१४९. पत्र : नाराणदास गांधीको

११ मई, १९३१

चि० नारणदास,

यह पत्र बड़ौदा स्टेशनसे आधी रातके समय लिख रहा हूँ। चम्पा यहीं मिलने आई और चली गई। देखता हूँ कि रतिलाल फिलहाल नहीं आयेगा। मुझे शिमलामें पाँच-एक दिन लग जायेंगे, फिर उतने ही दिन नैनीतालमें। उसके बाद २५ तारीखके आसपास बोरसद पहुँचनेकी आशा है।

बीडजकी जमीन खरीद लेना। हनुमानसिंहकी बात खेदजनक है। वह इस हालततक कैसे पहुँचा, क्या इसके बारेमें कुछ सोच पाते हो? वह सामान्य रीतिसे फलाहार ही ले।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती एम० एम० यू० – १ से।

१५०. पत्र : नारणदास गांधीको

[११ मई, १९३१ या उसके पश्चात्][1]

चि० नारणदास,

तुम्हें कुछ बोझ लगे ऐसी परिस्थिति नहीं है, इसलिए मैं निश्चिन्त ही हूँ। देखता हूँ कि मेहमान तो आते ही रहेंगे। जो आयें उनकी अच्छी तरह खातिर जरूर करना। जो मेरे साथ आना चाहें, उन्हें विरत करना।

श्री मलिक नगरपालिकाके इंजीनियर हैं। वह आजकलमें वहाँ आकर ज्यादा पानी प्राप्त करनेके बारेमें सलाह देंगे। उन्हें चन्द्रभागा भी दिखला देना। मैंने उनसे पारनेरकरकी बात की है। उनसे परिचय बढ़ाना और पारनेरकरसे भी मिलवा देना।

पुरुषोत्तम क्या करता है? क्या वायु-परिवर्तनके लिए जायेगा? उसकी तबीयत अच्छी होती, तो उसे ले ही जाता। मुझसे किसी चीजके बारेमें पूछना हो तो लिखना।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]

बापुना पत्रो ९ : श्री नारणदास गांधीने तथा सी० डब्ल्यू० ८१८९ से भी।
सौजन्य : नारणदास गांधी

१५१. भेंट : पत्र-प्रतिनिधियोंको

१३ मई, १९३१

'एसोसिएटेड प्रेस' के प्रतिनिधिने पूछा : "कोई नई बात ?" गांधीजी बोले :

मोटर गाड़ीमें आप जो फूल और मालाएँ देख रहे हैं, इनके बारेमें लिख सकते हैं।

चुंगीके पास गाड़ी एक मिनटके लिए रुकी और गृह-सचिव श्री एमर्सनका एक पत्र गांधीजीको दिया गया।

'एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडिया' का एक प्रतिनिधि उनकी गाड़ीके पायदानपर खड़ा था। उसके द्वारा पूछाजानेपर गांधीजीने कहा कि उनको वाइसरायकी ओरसे नहीं, गृह-सचिवकी ओरसे आमन्त्रित किया गया है। वे दो या तीन दिनतक या शायद कुछ दिनतक और शिमलामें रुकेंगे और उसके बाद शायद नैनीताल चले जायेंगे।

१. पुरुषोत्तमको साथ ले जानेके उल्लेखसे; अभिप्राय शायद शिमला साथ ले जानेसे है।

प्र०—आप लन्दन जायेंगे?

उ०—मैं अभी कह नहीं सकता।

साम्प्रदायिक समझौता होनेकी कितनी, क्या सम्भावना है?

बोरसदके मामलोंको लेकर मैं इस बीच इतना व्यस्त रहा हूँ कि इस सम्बन्धमें अभी आपको कुछ नहीं बतला सकता।

भोपालमें[1] हुए सम्मेलनकी कार्रवाईकी तो आपको जानकारी होगी?

जी नहीं।

क्या आप संघीय गठन समिति (फेडरल स्ट्रक्चर कमेटी) के भारतीय सदस्योंकी शिमलामें होनेवाली अनौपचारिक बैठकमें शामिल होनेकी उम्मीद करते हैं?

मैं कुछ भी नहीं कह सकता।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १४-५-१९३१

१५२. टिप्पणियाँ

'अरण्य-रोदन'

अपनी फाइलसे एक पत्रका नीचे लिखा वाक्य थोड़े परिवर्तनके साथ यहाँ दे रहा हूँ:

> **देशसे विदेशी कपड़े और विदेशी सूतको दूर रखकर स्वदेशी कपड़ेकी रक्षा करना—यह एक गोलमोल बात है, और इसमें सन्देह करनेकी गुंजाइश पैदा होती है। गाँवोंमें रहनेवाले करोड़ों भूखे लोगोंको भारतीय मिलें रोटी नहीं दे सकतीं। पिछले चार महीनोंसे खादीकी माँग बराबर घटती गई है, और मिलके कपड़ेकी बढ़ती गई है। इसका कारण यह है कि कांग्रेस संस्थाएँ भारतीय मिलोंके कपड़ेका समर्थन कर रही हैं। खादी द्वारा बहिष्कारकी गांधीजीकी पुकार अरण्य-रोदन है। इसलिए खादीके बारेमें कांग्रेसकी नीतिको स्पष्ट करना जरूरी हो गया है।**

ऐसी ही एक शिकायत अन्य जगहसे भी मेरे पास आई है। यह बात सच है कि कांग्रेसवाले सोचते हैं कि कांग्रेस मिल-मालिकोंसे मदद लेती है और उनके साथ बातचीत करती है, इसलिए कांग्रेसवालोंको खादीके बजाय मिलका कपड़ा पहननेकी या कमसे-कम दोमें से किसी एकका उपयोग करनेकी छूट मिल गई है। परन्तु बात ऐसी नही है। इस बारेमें कांग्रेसकी नीतिमें कोई परिवर्तन नहीं हुआ है। कांग्रेस

१. १०-११ मईको नवाब भोपालने "अखिल भारतीय राष्ट्रवादी मुसलमान दल और अखिल भारतीय मुसलमान परिषद्" के नेताओंको चुनाव-क्षेत्रोंके प्रश्नपर दोनोंकी सहमतिसे एक नीति निर्धारित करनेके लिए आमन्त्रित किया था।

हर ऐसे व्यक्तिसे जो उसकी बात मानता है, यह आशा रखती है कि वह दूसरा कपड़ा छोड़कर केवल हाथ-कती, हाथ-बुनी खादी ही पहने। इसके पालनमें थोड़ी भी शिथिलता आनेसे खादीको और इसलिए गाँवोंको अवश्य नुकसान होगा; यही नही, इसकी वजहसे विदेशी कपड़ेके बहिष्कारमें भी शिथिलता आ जायेगी। आगे और पीछे यह साबित हो जायेगा कि आखिर बहिष्कार खादी द्वारा ही सफल हो सकता है। अबतक जो सफलता मिली है, उसका श्रेय खादीको है। इसका यह मतलब नहीं है कि स्वदेशी मिलोंने विदेशी कपड़ेके विरुद्ध आन्दोलनमें कोई भाग नहीं लिया है। परन्तु यह जरूर कहा जा सकता है कि मिलें इसमें तभी शामिल हुईं; जब मिल-मालिकोंने देखा कि खादी अपने उद्देश्यमें सफल हो रही है, उसने रास्ता दिखाया है और जनभावनामें परिवर्तन पैदा कर दिया है। परन्तु सबसे महत्वपूर्ण और याद रखनेकी बात यह है कि यदि विदेशी कपड़ेके बहिष्कारका उद्देश्य केवल कुछ लाख हिस्सेदारोंके लाभांशमें वृद्धि करना ही हो, तो उसके लिए इतनी प्रचण्ड शक्तिका व्यय निरर्थक ही माना जायेगा। यह बहिष्कार राष्ट्रके लिए इसी कारण आवश्यक है कि विदेशी वस्त्रके बहिष्कार द्वारा बचनेवाले करोड़ों रुपये खादी द्वारा लाखों गाँवोंमें बँट जायेंगे। इसलिए खादीके प्रयत्नोंमें शिथिलता न आने देना कांग्रेससे सम्बद्ध स्त्री-पुरुषोंका एक आवश्यक कर्त्तव्य हो जाता है।

अमेरिका जानेकी अफवाह

एक अमेरिकी मित्रने ६ अप्रैलके अपने पत्रमें[1] लिखा है:

> **आज शामको नई दिल्लीसे प्राप्त और 'बोस्टन ट्रान्सक्रिप्ट' में प्रकाशित एसोसिएटेड प्रेसकी एक खबरसे पता चलता है कि महात्मा गांधी संयुक्त राज्य अमेरिका आनेका विचार कर रहे हैं। . . . इस समय भारतकी इस महान आत्माके लिए अमेरिका-यात्राकी अपेक्षा और बड़े-बड़े काम पड़े हुए हैं। . . .**

मैं भारतकी आत्माका प्रतिनिधि हूँ या नहीं, यह विवादास्पद विषय है। लेकिन अमेरिका जानेके बारेमें मेरा वही मत है जो मेरे इस अमेरिकन पत्र-लेखकका है। भारतमें मेरे कामका यदि कुछ आत्मिक मूल्य है, तो उसका अमेरिका और दूसरे देशोंपर, मेरे खुद वहाँ जानेसे भी ज्यादा असर पड़ेगा। सचमुच अगर आत्मा अशरीरी है, तो शरीर प्रायः सहायक बननेकी अपेक्षा उसके पथमें रोड़े अटकानेवाला बन जाता है। जो आत्मा भौतिक पिंजरमें सीमित है उसकी अपेक्षा मुक्त आत्माका अदृश्य प्रभाव लाखों गुना ज्यादा होता है। मन अमेरिका जानेको बहुत करता है, लेकिन भीतरकी आवाज मुझे ऐसा करनेसे रोकती है। यह प्रसन्नताकी बात है कि जिस दिन यह पत्र डाकमें छोड़ा गया, उसी दिन श्रद्धेय होम्स, श्री करबी पेज, डॉ० शेरवुड एडी, और डॉ० वार्ड आदि मित्रोंने भी अमेरिका यात्रा स्थगित रखनेका तार[2] भेजा। उन्होंने सोचा कि इससे इस समय हमारे ध्येयको कोई लाभ नहीं होगा और मेरी

१. अंशत उद्धृत।
२. देखिए "पत्र: बॉयड टुकरको", ५-५-१९३१ भी।

भारी क्षति होगी। मैं भी यह महसूस कर रहा हूँ कि इन मित्रोंका कहना सही है। इसलिए मैं उन मित्रोंसे जो मुझपर वहाँ जानेके लिए जोर डाल रहे हैं, क्षमा माँगता हूँ। अगर उनके महान देशमें मेरा जाना जरूरी ही है, तो वे उसके लिए उपयुक्त समयकी प्रतीक्षा करें। इस बीचमें अगर वे चाहें तो उन गलतफहमियोंको दूर कर सकते हैं, जो भारतके विषयमें वहाँ काफी तादादमें फैली हैं।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १४-५-१९३१

१५३. खतरेके बादल[1]

उस दिन कराचीमें क्या हुआ, सर्वसाधारण इसे नहीं जानते। मध्यप्रान्तके गजाधर साहू नामक एक मेरे-जैसे थोड़े-से सनकी एक आदमीने, जिसे न कोई मध्यप्रान्तमें जानता है, न कराचीमें, कुछ ही दिनोंमें स्वराज्य स्थापित करनेका विचार किया। उसने तमाम बेकारों और दूसरे मजदूरोंको इकट्ठा करके उन्हें दो रुपये रोज देनेका वचन दिया और व्यापारियों और धनवानोंको यह चेतावनी दी कि उन्हें आयात-निर्यातका व्यापार बन्द कर देना चाहिए, मिलका कपड़ा तैयार करनेसे बाज आना चाहिए, और पन्द्रह दिनमें १ करोड़ रुपया इकट्ठा करके बेकारोंको चरखे आदिकी मारफत ऐसा काम देना चाहिए, जिससे उन सबको बराबर-बराबर दो रुपये रोजकी आमदनी, जिसकी उन्हें जरूरत है, होने लगे। इसके लिए सभाएँ की गई और जोरदार प्रस्ताव पास किये गये। तिजोरियोंकी तालियाँ तलब की गईं। कराचीके सतत कर्मशील मेयर इन लोगोंसे मिले और एक शुभ मुहूर्तमें श्री गजाधर ने कहा कि अगर मैं उनके कार्यसे असहमति प्रकट करूँ, तो वे अपना काम बन्द कर देंगे। श्री जमशेद मेहता और उनके मित्रोंके लिए इतना ही काफी था। इसी दरम्यान श्री गजाधर, जो अबतक महात्मा बन चुके थे, मेरे पास आये, और बादमें श्री सिधवा और ईश्वरदास भी आ पहुँचे। मैंने देखा कि श्री गजाधर वही पुराने पत्र-लेखक हैं, जो हमेशा लम्बे-लम्बे पत्र और तारतक भेजकर मेरे और मेरे साथियोंके धैर्यकी परीक्षा करते रहते थे। देखते ही हम एक-दूसरेके मित्र बन गये। मुझे लगभग दो घंटे उनसे बातचीत करनी पड़ी। यह समय मैं बड़ी मुश्किलसे निकाल सका। नतीजा यह हुआ कि उन्होंने अपना काम बन्द कर देनेका वादा किया, हालाँकि मेरी बातसे उन्हें सन्तोष नहीं हुआ। देखें, वे अपना वादा पूरा करते हैं या नहीं। यदि उन्होंने वादा पूरा न किया, तो भी आशा है कि कराचीके कार्यकर्त्ता कोई खतरनाक स्थिति पैदा हो जानेपर उसका सामना सफलताके साथ कर सकेंगे।

परन्तु कराचीकी यह घटना एक अपशुकन है। अगर कांग्रेसवाले अपने काम पूरी दृढ़ता और पूरी सच्चाईसे नहीं करेंगे, तो बहुत मुमकिन है कि कांग्रेस और

१. देखिए "सन्देश : कराचीके मजदूरोंको", ९-५-१९३१ भी।

दूसरे तमाम उपयोगी कार्य अनुशासन-रूपी आवश्यक बन्धनोंके अभावमें इस चढ़ती हुई बाढ़के प्रवाहमें बह जायें। तूफान और बाढ़ें तो हमेशा ही आती रहेंगी। परन्तु तूफान और बाढ़की रोकके लिए जो काम बाँध वगैरासे होता है, अव्यवस्थाको रोकनेमें अनुशासनका वही उपयोग है।

जो लोग अबतक अज्ञान और अनियन्त्रित सत्ताके कारण घोर नींदमें सोये पड़े थे, उन्हीं जनसाधारणकी जागृति आसानीसे व्यवस्था और साथ ही सामाजिक संगठनका सर्वनाश कर सकती है। सामाजिक ढाँचेको सुधारना, बुराइयोंको मिटाना और लोगोंको उनका वह पद दिलानेमें मदद करना, जिससे वे बहुत समयसे वंचित रखे गये हैं; कांग्रेसका काम है, प्रयत्न है।

श्री गजाधर साहूकी सनक-भरी माँगके गर्भमें सत्यका एक अंश मौजूद है। अन्य स्थानोंकी तरह कराचीमें बेकारी थी; अब भी है, हिन्दुस्तानके ७,००,००० गाँवोंमें भी ऐसी ही बेकारी है। जिस समाजमें बेकारोंकी जमात बसती है, या पैदा होती रहती है, वह समाज अधिक कालतक जी नहीं सकता। ऐसे समाजमें कुछ-न-कुछ दोष अवश्य है। काम करनेकी इच्छा रखनेवालोंको हमेशा कोई-न-कोई काम उपलब्ध होना ही चाहिए। कराचीकी उक्त योजनामें चरखेके जरिए काम की माँग की गई थी। दुर्भाग्यसे योजना बनानेवालोंको चरखेका शायद सिर्फ नाम ही मालूम था। पर मैं मानता हूँ कि अपने व्यापक अर्थमें, जिसमें कपास बीननेसे लेकर बुननेतक और फिर रँगाई, और सिलाई तककी कपास सम्बन्धी सब क्रियाएँ शामिल हैं। चरखा शहर और देहातके लोगोंको स्थायी और अखंड काम देनेवाली चीज है। इसका यह मतलब नहीं है कि दूसरे अन्य धन्धे नहीं हैं। पर यह एक ऐसी चीज है, जो यत्र-तत्र-सर्वत्र अपनाई जा सकती है।

हमें एक बातपर बड़ी कड़ी निगाह रखनी चाहिए और वह है, मुफ्तके भोजनालय चलाना। निःशुल्क भोजनालय बड़ी खतरनाक संस्था है, वहाँ मंगतोंकी जमात तैयार हो जाती है। जहाँ आवश्यकता मालूम पड़े, वहाँ सार्वजनिक भोजनालय खोले जा सकते हैं। हरएक आदमी अपना पेट भर लेने योग्य मेहनत कर सकता है और निश्चिन्त होकर साफ-सुथरी जगहमें सस्ता, स्वच्छ भोजन पा सकता है। हमें यह सीख लेना जरूरी है कि जो आदमी थोड़ी भी मेहनतका काम कर सकता है, उसे मुफ्तमें रोटी खिलाना पाप है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १४-५-१९३१

१५४. 'हृदय-परिवर्तन नहीं'

इस शीर्षकका शासकोंके हृदय-परिवर्तनके साथ कोई सम्बन्ध नहीं है। यह तो एक सिन्धी भाईके नीचे लिखे आरोपके[१] अनुसार हममें जिस हृदय-परिवर्तनका अभाव है, उससे सम्बन्धित है:

मै मानता हूँ कि विदेशी वस्त्र विषयक शिकायत काफी हदतक सच है। कम-से-कम शहरोंमें तो लोगोंकी अभिरुचिमें अबतक इतना परिवर्तन नहीं हुआ है कि लोग विलायत, जापान, फ्रांस या दूसरी जगहसे आनेवाले कपड़ेको हाथ न लगायें। बुद्धि विदेशी कपड़ेके त्यागको स्वीकार अवश्य करती है, परन्तु हृदय तो विदेशसे आनेवाले भाँति-भाँतिके कपड़ोंके लिए ही तरसता रहता है। देश-प्रेमकी अपेक्षा या कहो कि करोड़ों अधभूखोंके प्रेमकी अपेक्षा अपना सुख ही अधिक प्रबल सिद्ध होता है।

विदेशी वस्त्रकी दूकानोंपर धरना देनेका उपयोग मर्यादित है। सच्ची बात तो इस सम्बन्धमें जनसमूहकी शिक्षाकी है। शिक्षासे भी बेहतर चीज है, कार्यकर्त्ताओं द्वारा अपना खादी अपनाना और इससे भी बेहतर स्वयं कातकर लोगोंको सस्ती खादीका उत्पादन सिखाना। व्यवहारमें तीनों काम एक साथ होने चाहिए। इसलिए लोगोंको खादी द्वारा बहिष्कारके अर्थशास्त्रका ज्ञान दिया जाना चाहिए। खादीने गाँवोंको किस प्रकार सम्पन्न बनाया है, और वह किस तरह सम्पन्न बना सकती है, भली प्रकार चुने हुए उदाहरणोंसे यह बात लोगोंको समझानी चाहिए। लोगोंको हमेशा खादी ही पहननेवाले सच्चे कार्यकर्त्ताओंके संसर्गमें आना चाहिए और अपने ही गाँवोमें अपने लिए किस प्रकार खादी तैयार हो सकती है, यह बात लोगोंको बताई जानी चाहिए। इसके लिए कांग्रेसके कार्यकर्त्ताओंको बहिष्कार और खादी-साहित्यका अच्छा ज्ञान होना चाहिए, उन्हें सचाईके साथ खादी पहननी चाहिए, और कपासकी तमाम क्रियाएँ भली-भाँति जान लेनी चाहिए, जिससे जो सीखना चाहें, उन्हें वे ओटना, धुनना, कातना और बुनना भी सिखा सकें।

अत: जो समझते हैं कि विदेशी कपड़ेका बहिष्कार और खादीका उत्पादन और खपत आर्थिक दृष्टिसे बहुत बड़ी और स्थायी महत्वकी बातें हैं, वे तो समझौतेका स्वागत करेंगे, क्योंकि समझौतेके कारण उन्हें यह जाननेका मौका मिला है कि लोगों ने राष्ट्रीय आदर्शको किस हदतक अपनाया है। जो काम लोग असाधारण समयमें लोकमतके दबाव या उससे भी बुरे किसी डरके दबावमें आकर करते थे, वही काम यदि वे साधारण समयमें करने लगें तो इसीको हमें अपनी शक्ति समझना चाहिए।

१. यहाँ नहीं दिया जा रहा है। लेखकका कहना था कि विदेशी वस्त्र पहलेकी तरह ही पसन्द किया जाता है और गांधीजीके मनमें भी मिल-मालिकोंके प्रति कोई कोमल भावना पड़ी हुई है। गांधी-इर्विन समझौतेको भी इसका एक कारण बताया गया था। देखिए "विदेशी कपड़ा और दूसरी विलायती चीजें", २३-४-१९३१ भी।

एक शब्द मिलोंके सम्बन्धमें। हमारी मिलोंके बारेमें मेरे मनमें कोमल भावना नहीं है। वे अपनी रक्षा भली-भाँति कर सकती हैं। उन्हें अभी बहुत-सी मर्यादाओंमें से गुजरना है। उन्होंने अभीतक एजेंटों, मालिकों और भागीदारोंके स्वार्थकी अपेक्षा राष्ट्रके हितको बड़ा नही माना है; परन्तु इतना कहनेके बाद मैं चाहता हूँ कि यह पत्र-लेखक इस बातकी सचाईको परख कर देखें कि बहुत कम ही क्यों न हो, उन्होंने इस बार राष्ट्रकी पुकारका जवाब देनेका प्रयत्न किया है। साथ ही आन्दोलनको आर्थिक सहायता देनेकी बात अलग है। यदि उन्होंने दर और उत्पत्तिपर अंकुश न रखा हो, तो मैं उस सहायताका कोई मूल्य नहीं समझूँगा। पर मैं मानता हूँ कि उन्होंने इस दिशामें प्रामाणिक प्रयत्न किया है।

तथापि उन्हें अभी बहुत कुछ करना है। अभी उन्होंने राष्ट्रकी अर्थ-व्यवस्थामें खादीका जो अग्रस्थान है, उसे खुले दिलसे स्वीकार नहीं किया है। उन्होंने अभी विदेशी कपड़ेके व्यापारियोंको अपना व्यापार छोड़कर स्वदेशीका व्यापार करनेके लिए संगठित नहीं किया है। मिल मजदूरों सहित सारे राष्ट्रकी ओरसे अपनेको उसके धनके रक्षक माननेका अपार महत्व वे अबतक समझ नही सके है। परन्तु यदि कांग्रेसी अपना काम भली-भाँति करेंगे, तो यह परिवर्तन हुए बिना न रहेगा। जबर्दस्ती नहीं, बल्कि हृदय-परिवर्तन हमारा ध्येय होना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १४-५-१९३१

१५५. आंग्ल-भारतीय

डाक्टर एच० डब्ल्यू० बी० मोरेनो लिखते है:[१]

मै सिर्फ इतना ही कह सकता हूँ कि स्वराज्यके विधानमें हरएक कौम बराबर होगी। मैं तमाम छोटी कौमोंका ध्यान कांग्रेसके मौलिक अधिकारोंवाले प्रस्तावकी[२] ओर आकर्षित करता हूँ। उस प्रस्ताव द्वारा छोटी कौमोंके अधिकार सुरक्षित रखनेमें जितनी सावधानीसे काम लिया जा सकता था, कार्यसमितिने उतनी खबरदारीसे काम लिया था। प्रस्ताव अधिक जोरदार बनाये जानेके लिए कांग्रेस द्वारा नियुक्त एक समितिको सौंपा गया है। जो कुछ उपयोगी सुझाव देना चाहें, वे अपने सुझाव इस समितिके पास विचारार्थ भेजें।

परन्तु मैं जानता हूँ कि डाक्टर मौरेनो जिस बातके विषयमें सोच रहे हैं, वह यह नही है। वे तो आंग्ल-भारतीयोंको विशिष्ट स्थान देनेकी बातके बारेमें जानना चाहते हैं। मेरा जवाब है कि उनकी लियाकत उन्हें जिस दर्जेतक ले जायेगी, वह दर्जा

१. यहाँ नहीं दिया जा रहा है। पत्र-लेखक जानना चाहता था कि हिन्दुस्तानके नये राज्य-विधानमें आंग्ल-भारतीयोंको कौन-सा स्थान प्राप्त होगा।

२. देखिए खण्ड ४५, मौतिक पृष्ठ ३९२-३।

उन्हें हासिल होगा। ऐसी कोई रुकावट कदापि न होगी जिससे दूसरे किसी भी भारतीयको मिल सकनेवाला ऊँचे-से-ऊँचा स्थान उन्हें न मिल सके। परन्तु हकीकत तो यह है कि आंग्ल-भारतीयोंने एक वर्गकी हैसियतसे राज्यकर्त्ताओंके स्थानका उपभोग किया है, या उसके लिए प्रयत्न किया है। उन्होंने जातिकी हैसियतसे राष्ट्रीय आन्दोलनमें हाथ नहीं बँटाया। अपने प्रति पक्षपातकी स्थितिके कारण वे अकेले पड़ गये हैं। स्वराज्यमें किसीके प्रति पक्षपातको स्थान होगा ही नहीं। इसलिए जिस प्रकार अंग्रेजों का समानताके लिए हाय-तोबा मचानेका अभिप्राय इस पक्षपातकी स्थितिको कायम रखनेके लिए है, उसी प्रकार शायद आंग्ल-भारतीयोंको भी यह दुःख होता होगा कि यदि स्वराज्यमें उनकी आजकी-सी विशिष्ट स्थिति कायम रहनेका आश्वासन न मिला तो वे पिछड़ जायेंगे।

फिर भी मैं आशा करता हूँ कि डाक्टर मोरेनो मनमें ऐसे पक्षपातका ख्याल नहीं रखेंगे। यदि मैंने उन्हें ठीक तरहसे जाना है तो आशा है कि वे [इस पत्रके द्वारा] राष्ट्रके साथ घुल-मिल जानेवाले आंग्ल-भारतीयोंके विषयमें कुछ जानना चाह रहे होंगे। उनके बारेमें मैं विश्वासपूर्वक कह सकता हूँ कि दूसरी कौमोंमें दलित लोगोंके साथ, यदि उनकी कौमके दलित वर्गोंकी स्थिति भी आजकी अपेक्षा न सुधरी, तो मुझे आश्चर्य होगा। चाहे जो हो, कांग्रेसियोंकी काफी संख्या ऐसी है, जो तमाम अन्यायपूर्ण हकोंको और तमाम बनावटी असमानताओंको नाबूद करनेके लिए प्रतिज्ञा-बद्ध है। यदि स्वराज्यमें जनसमूहकी स्थितिमें तेजीके साथ सुधार होता हुआ दीख पड़ेगा, तो उसका पूरा-पूरा हिस्सा गरीब आंग्ल-भारतीयोंको भी अवश्य ही मिलेगा। कांग्रेस किसी एक फिरकेके लिए नहीं, बल्कि तमाम लोगोंके लिए स्वराज्य लेना चाहती है। जबतक यह ध्येय सिद्ध नही होता है, वह बराबर लड़ती ही रहेगी। इसलिए मैं तमाम अल्पसंख्यकोंको राष्ट्रीय आन्दोलनमें शामिल होने और उस शुभ दिनके उदयको निकट लानेके लिए न्यौता देता हूँ। उनमें से किसीके सम्बन्धमें यह न कहा जाये कि देशके कठिन दिनोंमें वे अलग खड़े रहे, और सुख प्राप्त होने पर उसमें हिस्सा लेनेके लिए आ धमके। उस परिस्थितिमें जिस प्रकार जिस व्यक्तिने मेहनत नहीं की है, उसके सामने भोजन रखनेपर भी वह उसमें रुचिका अनुभव नहीं कर पाता, उसी प्रकार अल्पसंख्यकोंको भी उनका हिस्सा तो अवश्य मिलेगा, पर उन्हें उसकी लज्जत न मिलेगी।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १४-५-१९३१

१५६. अपील: इलाहाबाद कांग्रेस, अस्पतालके लिए

गत वर्ष जूनमें पण्डित मोतीलाल नेहरू बम्बई गये थे। वहाँ उन्होंने कांग्रेस अस्पतालका उम्दा काम देखा। उनपर इसका अच्छा असर पड़ा, और इलाहाबाद लौटकर उन्होंने वैसा ही अस्पताल इलाहाबादमें भी खोलनेकी इच्छा प्रकट की। . . . कुछ मित्रोंकी उदारतासे इस अस्पतालके लिए कुछ रुपया और साधन इकट्ठे हुए। पण्डित मोतीलालजीके जेलसे छूटनेपर स्वराज्य भवनके एक हिस्सेमें इस अस्पतालका विधिपूर्वक आरम्भ किया गया। . . . जो थोड़ा द्रव्य इकट्ठा किया था, वह अब खर्च हो चुका है, इसलिए समितिको यह विचार करना पड़ा कि अस्पताल आगे चलाया जाये या नहीं।

. . . इसलिए आर्थिक सहायताके लिए यह अपील इस आशासे प्रकाशित की जाती है कि उदारतापूर्वक आर्थिक सहयोग दिया जायेगा। स्वराज्य भवनमें स्थायी रूप से अस्पताल रखनेके प्रश्नका निर्णय अभी नहीं हुआ है। परन्तु समिति इतना द्रव्य इकट्ठा करना चाहती है, जिससे कम-से-कम तीन साल तक अस्पताल चल सके। वर्तमान मर्यादित रूपमें यदि अस्पताल चलाया जाये, तो उसके खर्चका अन्दाज प्रतिमास एक हजार रुपयेका है। . . .

११ मई, १९३१

कमला नेहरू
मोहनलाल नेहरू
रमाकान्त मालवीय

मैं आशा रखता हूँ कि तुरन्त ही जनताकी ओरसे इस अपीलकी[1] उचित प्रतिक्रिया होगी। अस्पतालकी व्यवस्थाका काम करनेवालोंके अतिरिक्त और किसीने जान-बूझकर ही इसपर दस्तखत नहीं किये हैं, क्योंकि इसे किसी भी रूपमें राष्ट्रीय स्मारक नहीं मानना है। परन्तु इसी कारणसे यह अपील कुछ कम महत्त्वकी नहीं हो जाती। पण्डित मोतीलाल नेहरूकी एक इच्छा पूरी करनेके लिए ३६ हजारकी रकम बहुत मामूली है। इसलिए मैं आशा करता हूँ कि श्रीमती कमला नेहरू और उनके साथियोंकी इस अपीलपर दान देनेमें किसी भी तरहकी ढिलाई या टालमटोल नहीं की जायेगी। पाठक जान लें कि अस्पतालके आरम्भ ही से श्रीमती कमला नेहरू उसकी आत्मा रही हैं। इस अस्पतालको अपीलमें काम-चलाऊ क्यों कहा गया है, इस विषयमें जनताको अवश्य ही आश्चर्य होगा। पहले विचार यह देखनेका है कि संस्था कैसे काम करती है, और अनुभवसे उसको कितने धनकी सच्ची आवश्यकता मालूम पड़ती है। दूसरे, जब कोई भी चीज केवल अपने गढ़े जानेकी अवस्थामें ही हो तब

१. अंशतः उद्धृत।

तक कल्पनाके अनुसार तो दैनिक आवश्यकताकी पूर्ति करके ही सन्तोष माननेमें अधिक बुद्धिमानी है।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, १४-५-१९३१

१५७. दांडीयात्रियोंके लिए

गत १२ मार्च, १९३० को[१] जो साथी दांडी-यात्राके लिए रवाना हुए थे, इस समय वे सब चारों ओर बिखरे हुए हैं और मेरे साथ उनका सतत सम्बन्ध नहीं रह गया है। इसलिए इन पंक्तियों द्वारा उन्हें यह याद दिलाना जरूरी है कि वे आज भी उसी अनुशासनमें हैं और यात्रा शुरू करनेसे पहले और बाद की गई प्रतिज्ञाओंका पालन करनेके लिए बद्ध हैं। इसलिए उनसे आशा की जाती है कि वे प्रतिदिन अपनी ठीक-ठीक दिनचर्या लिखते रहेंगे, दोनों समयकी प्रार्थना करेंगे। अपनी आवश्यकताओंको कम-से-कम रखेंगे, और इसके लिए यथासम्भव सादे-से-सादा भोजन करेंगे और प्रतिदिन यज्ञार्थ सूत कातेंगे। जो गाँवोंमें रह रहे हैं वे ग्राम-पाठशाला चला सकते हैं, और बच्चोंको लिखना, पढ़ना, हिसाब-किताब सिखानेके सिवा कताई और कपासकी अन्य क्रियाएँ सिखा सकते हैं। बच्चोंसे साफ-सुथरे रहने, गाँवके खेल खेलने और कसरत करनेका आग्रह कर सकते हैं। स्वयं गाँवकी सफाईका काम कर सकते हैं, साथ ही गाँववालों और उनके बच्चोंकी मदद भी ले सकते हैं और गाँव-वालोंके सम्बन्धमें तमाम आवश्यक बातोंके आँकड़े इकट्ठा करके उनकी सारिणियाँ तैयार कर सकते हैं। कार्यकर्त्तागण दूसरा काम यह करें कि जो लोग विदेशी कपड़ा, शराब और नशीली चीजोंका उपयोग करते हैं, उनका पता लगायें और उनके घर जाकर, उनसे मित्रभावसे मिलकर उनकी ये दोनों आदतें छुड़ायें और इस सम्बन्धमें गाँवोंमें लोकमत भी तैयार करें। जहाँ मुमकिन और जरूरी हो, वहाँ वे शान्तिपूर्ण धरनेका भी प्रबन्ध करें। अस्पृश्यताको मिटानेका प्रयत्न तो वे करेंगे ही। कार्यकर्त्ताओं को हर महीने अपने कामकी रिपोर्ट, अपनी डायरीके सारांशके साथ श्री छगनलाल जोशीके पास भेजनी चाहिए। यहाँ यह कहनेकी तो आवश्यकता न होनी चाहिए कि वे जो पैसा बाहर भेजें और जो प्राप्त करें, उसकी पाई-पाईका ठीक-ठीक हिसाब रखें।

यद्यपि ये सूचनाएँ मूल यात्रियोंके लिए हैं और अनिवार्य हैं, तथापि गाँवों और शहरोंके राष्ट्रीय कार्यकर्त्ताओंके लिए भी ये मार्गदर्शक हो सकती हैं। शहरोंमें स्वभावतः कुछ परिवर्तन जरूरी होगा। गाँवोंमें हिन्दू-मुस्लिम झगड़ोंका नाम नहीं है, परन्तु शहरोंके राष्ट्रीय कार्यकर्त्ताओंको यह महत्त्वकी सेवा भी अपने कार्यक्रममें शामिल कर लेनी होगी।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, १४-५-१९३१

१. देखिए खण्ड ४३, पृष्ठ ४७५।

१५८. उनको कैसी शिक्षा दी जाती है

उत्तरी कैरोलीनाके विल्मिंगटनसे, अपना नाम और पता देते हुए, एक पत्र-लेखकने अपने पत्रमें लिखा है:[1]

> **समाचारपत्रोंसे उन सब प्रयासोंका पता चलता रहता है जो आप अपने अन्य अनेक देशभाइयोंके साथ मिलकर अपने राष्ट्रको पूर्ण स्वाधीनता दिलानेके लिए कर रहे हैं। यह अपने-आपमें एक अच्छी चीज है। परन्तु समाचार-पत्रोंमें भारतीय जन-जीवनका विवरण भी रहता है और उससे पता चलता है कि स्वाधीनता वास्तवमें क्या है और आरम्भमें उसकी आधार-शिला क्या होती है — इसकी समझ आप लोगोंको नहीं है। . . .**
>
> **भारत अपने इस अभियानके जरिए ईश्वरीय शासनसे, साथ ही एक ईसाई राष्ट्रके शासनसे स्वाधीन होनेकी कोशिश कर रहा है, जब कि भारतका सबसे बड़ा शत्रु भारतीयोंका अपना विशाल समुदाय ही है, जो न तो ईश्वरकी पवित्र इच्छाको और न अपने ईसाई पड़ोसी इंग्लैंडको ही भली-भाँति समझता है।**
>
> **जिस प्रकार कि मेरे और आपके भी पतित और पथभ्रष्ट पूर्वजोंको ईश्वरने अपनी उदारता तथा सद्भावनाके कारण ही वस्त्रोंसे भरा-पूरा रखा, इसी प्रकार इंग्लैंड और अन्य राष्ट्र केवल अपनी ईसाई उदारता और सद्-भावनाके वशीभूत होकर ही भारतके लिए अधिक वस्त्र जुटानेका प्रयत्न कर रहे हैं। . . .**
>
> **भारतको सबसे पहले तो ईश्वरकी पवित्र इच्छाके अनुरूप स्वाधीनताकी आधारशिलाके रूपमें वस्त्रों और शिक्षाकी प्रचुरता प्राप्त करनेका ही प्रयास करना चाहिए। पवित्र ग्रन्थ बाइबिलमें इसीको स्वाधीनताकी आधारशिला बतलाया गया है। . . .**
>
> **भारत जिस शोषण और जिन यन्त्रणाओंका शिकार बन रहा है उसकी अधिकांश जिम्मेदारी इंग्लैंडपर नहीं बल्कि भारतके सबसे बड़े शत्रु — आपके और आपकी जनताके अज्ञान — पर ही है।**

पत्रके पाठको पठनकी दृष्टिसे सरल बनानेके लिए मैंने इसमें शायद दो स्थानों पर थोड़ा फेरफार किया है। पत्र-लेखकने मुझे "ईसामसीहके सम्बन्धसे प्रिय मित्र" कहकर सम्बोधित किया है। उनके हृदयकी सच्चाई, उनकी ईमानदारी उतनी ही साफ दिखाई पड़ती है जितना कि उनका अज्ञान। मैं इस पत्रको यह दिखानेके लिए ही

१. अंशतः उद्धृत।

प्रकाशित कर रहा हूँ कि प्रबुद्ध पाश्चात्य देशोंकी जनताको भी कैसे उल्टी पट्टी पढ़ाई जा सकती है। इस पत्रसे इतिहासका अज्ञान और मैं तो यह कहनेकी भी धृष्टता कर सकता हूँ कि बाइबिल तकका घोर अज्ञान टपकता है। यह पत्र एक प्रकारकी [विकृत] शिक्षाका नमूना है।

अभी उस दिन न्यूयार्कसे एक पत्र-लेखकने पत्र-पत्रिकाओंकी कुछ कतरनें मेरे पास यह दिखानेके लिए भेजी थी कि भारतमें होनेवाली घटनाओंको वहाँ किस तरह तोड़-मरोड़ कर गलत ढंगसे पेश किया जाता है। पत्र-लेखकने मुझे चेतावनी दी थी कि अमेरिकी पत्रकार इस देशमें मेरी ओर जितना ध्यान देते हैं उससे मुझे इस भ्रममें नहीं पड़ना चाहिए कि अमेरिकाकी समूची जनतामें हमारे प्रति अपार उत्साह और दिलचस्पी है। उनका इशारा था कि वहाँ प्रकाशित होनेवाले प्रत्येक सहानुभूति-पूर्ण सन्देश या लेखके पीछे लगभग निन्यानवे लेख या विवरण ऐसे प्रकाशित होते रहते हैं जिनमें भारत सम्बन्धी हर बातकी खिल्ली उड़ाई जाती है।

रेजिनाल्ड रेनॉल्ड्सने एक तीसरे प्रकारकी शिक्षाका उदाहरण पेश किया है। उनका ख्याल है कि अंग्रेजोंको तो बचपनसे ही भारतके बारेमें सत्यको जानने-समझने का कोई अवसर नही मिल पाता। बालक-बालिकाओंके सामने इतिहासका गलत रूप बार-बार प्रस्तुत किया जाता है। घरोंमें चलनेवाली गपशपमें भी भारतकी उतनी ही गलत तसवीर सामने आती रहती है। इस प्रकारकी शिक्षाका तो हमें भी थोड़ा अनुभव है। हम जानते है कि स्कूलोंमें हमें किस प्रकारका इतिहास पढ़ना पड़ता है और हमारे अनुभवसे वह बादमें किस तरह पग-पगपर झूठ सिद्ध होता चलता है। हमको स्कूलोंमें ब्रिटिश शासनके लाभ और उसकी अच्छाइयोंकी कल्पना करना सिखाया जाता है, लेकिन बड़े होनेपर हम पाते हैं कि वस्तु-स्थिति सर्वथा विपरीत है। इस-लिए हमारा सबसे बड़ा शत्रु है वह अज्ञान, जो बहुधा जानबूझकर हमारे दिमाग खराब करनेके लिए हमारे बीच फैलाया जाता है। यह तो सही है कि हमें भी अपने मस्तिष्क, अपने विचारोको झाड़ने-बुहारनेकी जरूरत है, परन्तु उस ढंगसे नहीं जो विलमिंगटनके पत्र-लेखकने सुझाया है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १४-५-१९३१

१५९. लिंच-न्यायाधीशका निर्णय[1]

एक पत्र-लेखक लिखते हैं:

मैं 'लिटरेरी डाइजेस्ट' से ली गई एक छोटी-सी कतरन संलग्न करनेकी धृष्टता कर रहा हूँ। खुद कतरनसे ही पूरी बात स्पष्ट हो जाती है। इस पूरे शर्मनाक काण्डके बारेमें आपके विचारोंका मै अनुमान-भर लगा सकता हूँ। इतना मैं जरूर कहता हूँ कि आपके पास ऐसे कई अमेरिकी अतिथि या भेंटकर्ता आते रहते हैं, जो आपसे अक्सर अपने देशके नाम सन्देश माँगते हैं या आपको वहाँ आनेके लिए आमन्त्रित करते हैं। क्या आपसे ऐसा अनुरोध करना कोई ज्यादती करना होगा कि आप उनको यह सन्देश दें कि वे एक अभागी और अश्वेत जातिपर होनेवाले नरमेध जैसे अत्याचारोंको बन्द करायें।

उन्होंने जिस कतरनका उल्लेख किया है उसका शीर्षक वही है जो ऊपर दिया गया है और उसका पाठ इस प्रकार है:[2]

इसको पढ़कर मन अवसादसे भर आता है। यदि हमें सर्वोच्च ईश्वरीय न्याय पर कोई आस्था न होती, तो कहीं कोई आशा दिखाई ही न देती। मेरे मनमें आस्था है और इसीलिए मुझे आशा है कि ऐसे नरमेध बन्द हो जायेंगे और न्यायपूर्ण व्यवस्था स्थापित होकर रहेगी। पत्र-लेखकने अमेरिकी लोकमतपर मेरा जितना प्रभाव माना है, मैं नहीं समझता कि मेरा उतना प्रभाव है; मै ऐसा कोई दावा नहीं कर सकता हूँ। पर मुझे इस बातमें तनिक भी सन्देह नहीं है कि अमेरिकी जनता इस बुराईके प्रति पूरी तरह जागरूक है और अमेरिकी जन-जीवनके इस कलंकको दूर करनेकी भरसक कोशिश कर रही है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १४-५-१९३१

१. स्वनिर्मित गैरकानूनी अदालत जिसमें व्यक्तिपर किसी संगीन अपराधका आरोप लगाकर फौरन प्राण-दण्ड दे दिया जाता है। ऐसी कार्यवाहीको अमेरिकाके कैप्टन विलियम लिंचके कारण लिंच कानून नाम दिया गया है।

२. यहाँ उद्धृत नहीं किया जा रहा है। उसमें एक नीग्रोको जीवित जला देनेका वर्णन है।

१६०. पत्र : सैयद अजमतुल्लाको

१४ मई, १९३१

प्रिय मित्र,

आपके पत्रके[1] लिए धन्यवाद। मैं आपको अपनी ओरसे यही आश्वासन दे सकता हूँ कि मैं हिन्दू-मुस्लिम एकता बढ़ानेके लिए भरसक प्रयत्न करूँगा। मेरा लक्ष्य हृदयोंकी एकता है। पर इससे सम्बन्धित संवैधानिक प्रश्न हल करनेकी बात तो मेरे नहीं, अन्य कई लोगोंके हाथोंमें है।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजी (एस० एन० १७०३४) की फोटो-नकलसे।

१६१. पत्र : हेनरी नीलको[2]

१४ मई, १९३१

प्रिय मित्र,

आपका विशिष्ट पत्र मिला।[3] पर मैं अभी हालमें अमेरिका नहीं जा रहा हूँ।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजी (एस० एन० १७०७२) की फोटो-नकलसे।

१. सैयद अजमतुल्लाने लिखा था: "आप यदि मुसलमानोंको इतना जतला दें कि यदि पृथक निर्वाचक मण्डलकी माँग त्याग दी जाये तो आप श्री जिन्ना द्वारा रखे गये अन्य तेरह मुद्दोंको स्वीकार कर लेंगे, फिर मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि मुसलमान लोग अधिक उदारतापूर्ण दृष्टिकोण अपना लेंगे और संयुक्त निर्वाचन मण्डल रखनेके लिये सहमत हो जायेंगे। . . ."

२. न्यायाधीश हेनरी नील, "सेंटेनेरियन क्लब" के संस्थापक।

३. हेनरी नीलने लिखा था: "मैं आपके स्वाधीनता अभियानमें उपयोगी बनना चाहूँगा; विशेषकर आपके यहाँ आनेपर"।

१६२. पत्र : एस० रंगूरामको

स्थायी पता, साबरमती
१४ मई, १९३१

प्रिय मित्र,

आपका पत्र मिला। मेरा लन्दन जाना अभी बिलकुल भी निश्चित नही है। अधिक सम्भावना यही दिखती है कि नही जाऊँगा। लेकिन यदि गया तब अपने लिए तो मैं कुमारी म्यूरियल लिस्टरका आग्रह स्वीकार करना चाहूँगा। ईस्ट ऐंण्डमें कही उनकी एक अपनी संस्था भी है। लेकिन चूँकि मुझे हर बातकी पूरी-पूरी जानकारी नही है, इसलिए मैंने फैसला श्री सी० एफ० एन्ड्रयूज पर ही छोड़ दिया है, क्योंकि सौभाग्यवश वे अभी वही हैं और मेरे बारेमें सब-कुछ जानते हैं। सचमुच आपका आमन्त्रण भी स्वीकार करनेकी मेरे मनमें बड़ी चाह है, लेकिन मैं कुमारी लेस्टरसे पहले ही कह चुका हूँ। यदि राजनीतिक कारणोंसे कोई बाधा न पड़ी और वहाँ बनाई जानेवाली स्वागत-समिति आड़े न आई तो फिर कार्यक्रमका चुनाव मेरे ही हाथमें रहेगा, और मैं उनकी संस्थामें अवश्य ठहरूँगा। और मेरी पसन्द तो आप जानते ही हैं। आप जो भी करना चाहें श्री सी० एफ० एन्ड्रयूज या वहाँ बननेवाली स्वागत-समितिके परामर्शसे ही करें।

अपनी पत्रिकाके लिए कुछ लिखनेका आग्रह मुझसे मत कीजिए; फिर चाहे कारण यही मान लीजिए कि पत्रिकाके स्वरूपके बारेमें मुझे कोई जानकारी नही है। लेकिन मुझे इस कारण भी क्षमा कीजिएगा कि नित्यप्रतिके पत्र-व्यवहार तकके लिए मुझे समय नही मिल पाता। इसीलिए मैं छोटे-छोटे काम भी अपने ऊपर नही लेता, वे भी नही जिनमें चन्द ही मिनट लगते हों, क्योंकि चन्द मिनटोंसे मिलकर ही तो समयका पूरा चक्र बनता है।

हृदयसे आपका,

श्री एस० रंगूराम
इंडियन स्टूडेंट्स सेंट्रल एसोसिएशन
लन्दन, साउथ-वेस्ट ३

अंग्रेजी (१७०७३)की फोटो-नकलसे।

१६४. भाषण: सार्वजनिक सभा, शिमलामें

१४ मई, १९३१

आप जानना चाहेंगे कि मैं शिमला क्यों आया हूँ और सरकारके साथ मेरी क्या बात चल रही है। मैं आपको सभी बातें तो नहीं बतला सकता, पर इतना जरूर बतला सकता हूँ कि मैं लॉर्ड इर्विन और कांग्रेसके बीच हुए समझौतेसे सम्बन्धित अपनी और सरकारकी भी शिकायतोंके बारेमें बातचीत करने आया हूँ। बातचीत अभी चल ही रही है। मैं जोर इस बातपर देना चाहता हूँ कि यदि आप कांग्रेसके स्वयंसेवक हैं और हिन्दुस्तानकी सेवा करना चाहते हैं तो आपका यह कर्त्तव्य है कि भले ही सरकार पालन न करे, आप समझौतेका पालन अवश्य करें।

अपना दायित्व निभा चुकनेके बाद यदि यह देखा जाये कि सरकारने अपना दायित्व नहीं निभाया तो उस स्थितिमें हम अपना मन चाहा कदम उठा सकते हैं। हम जानते है कि जो भी समझौता हुआ है, उसके साथ कुछ शर्तें जुड़ी हुई हैं और यदि हम समझौतेका उपयोग कुछ काम करनेके लिए कर सकें, तो हमें अवश्य वैसा करना चाहिए।

यदि किसी समझौतेके फलस्वरूप हमें सेवा करनेका अवसर मिलता हो तो एक सत्याग्रहीके नाते हमें उसका स्वागत करना चाहिए। इस समझौतेने आपको ऐसा ही एक अवसर दिया है।

कराची कांग्रेसने लगभग सर्वसम्मतिसे उसे स्वीकार किया था। अब हमारा क्या कर्त्तव्य है, यह मैं आपको बतला ही चुका हूँ। ऐसा मत सोचिए कि इस समझौतेके बाद हम लड़ाईमें कूदना चाहते है। बल्कि इसके विपरीत हमारी तो पूरी कोशिश इसी दिशामें होनी चाहिए कि हमें लड़ाईमें न पड़ना पड़े और यह समझौता स्थायी बन जाये जिससे कि हम पूर्ण स्वराज्य हासिल कर सकें।

गोलमेज परिषद्में शामिल होनेके लिए लन्दन जानेवाले आपके प्रतिनिधियोंपर कांग्रेसने जो शर्तें लगाई हैं, वे आपको मालूम ही हैं। लेकिन यदि इस समझौतेके फलस्वरूप हम पूर्ण स्वराज्य हासिल न कर सकें, तो यह हमारा दुर्भाग्य ही होगा और यदि कोई स्थायी समझौता करनेके हमारे प्रयत्न निष्फल हो गये तो हमें एक नई लड़ाईके लिए तैयार रहना चाहिए।

परन्तु मैं इस समझौतेके अलावा दो और बातोंपर भी जोर देना चाहता हूँ। यदि हम गोलमेज परिषद्में अपना अभीष्ट प्राप्त करना चाहते हैं तो हमें अपने अस्त्रसे भली-भाँति लैस होना चाहिए। हमारा अस्त्र यही है कि हिन्दुस्तानकी सारी जनता, इस देशमें जन्म लेने और इसे अपना घर बना लेनेवाले सभी लोग — हिन्दू, मुसल-मान, सिख, ईसाई, पारसी और अन्य सभी लोग एक होकर, एक स्वरसे स्वराज्यकी माँग करें। हम जबतक अपने बीच ऐसी पारस्परिक समझदारी पैदा नहीं कर लेते,

तबतक मेरे लन्दन जानेसे कोई लाभ नहीं। इसलिए हम सभीको इस देशकी सभी जातियोंमें एकता पैदा करनेके यथा सम्भव सभी प्रयत्न करने चाहिए।

परन्तु मैं कागजपर लिखे समझौतेकी शाब्दिक एकता-भर नहीं चाहता। कागजपर समझौतेका मसौदा लिखकर दस्तखत-भर कर देनेसे एकता पैदा नहीं हो जाती। मैं जो एकता चाहता हूँ वह हार्दिक एकता, दिलोंकी एकता है और ऐसी ही एकताके लिए मैं ईश्वरसे सदा प्रार्थना करता हूँ। और ऐसी एकता पैदा होनेपर आपके अन्दर इतनी शक्ति पैदा हो जायेगी कि हमें सफलता मिल जायेगी।

मुझे लग रहा है कि शायद मेरी आवाज आप तक नहीं पहुँच पा रही है और आप लोग बारिशसे परेशान हैं। ईश्वरसे मेरी यही प्रार्थना है कि वह हमें दूसरी लड़ाईमें कूदनेकी जरूरतसे बचाये और यह समझौता ही हमें अन्तिम सफलता तक पहुँचा दे।

जहाँतक कामका सवाल है, कांग्रेसका प्रस्ताव आपके सामने है और खद्दरके प्रचार तथा शराबके बहिष्कारके सम्बन्धमें आपके सामने एक व्यापक कार्यक्षेत्र पड़ा हुआ है। मैं आप सबका आभारी हूँ।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दुस्तान टाइम्स, १६-५-१९३१

१६५. श्रद्धांजलि : के० टी० पॉलको

शिमला
१५ मई, १९३१

मुझे श्री के० टी० पॉलसे परिचय प्राप्त करनेका सौभाग्य मिला था। मैं उनके जितने निकट गया मेरे हृदयमें उनके लिए उतना ही सम्मान बढ़ता गया। मुझे लगा कि उनकी ईसाइयत उदार और सहिष्णुतापूर्ण थी। इतना ही नही कि वह कभी उनकी राष्ट्रवादिताके आड़े नहीं आई, बल्कि लगता तो यह था कि ईसाइयतने उनकी राष्ट्रवादिताको और अधिक गहराई दे दी थी। दिवंगतको इस बातका श्रेय है और राष्ट्रवादी विचारोंके लोग सदा इसे याद करेंगे कि श्री पॉलने आगामी संविधानमें भारतीय ईसाइयोंको कुछ खास रियायतें देनेकी माँगका विरोध किया था। और यह इसलिए कि उनका विश्वास था कि चारित्रिक खरेपन और सद्गुणोंको केवल सद्व्यवहार ही नहीं, बल्कि सदा उचित सम्मान भी मिलेगा। विशेषकर राष्ट्रके जीवनके वर्तमान दौरमें उनके उठ जानेसे देशको स्पष्ट ही एक बड़ी हानि पहुँची है।

अंग्रेजी (एस० एन० १७०७५) की फोटो-नकलसे।

१६६. तार : 'ईवनिंग स्टैंडर्ड' को

[१५ मई, १९३१][1]

'आप लन्दन आ रहे हैं या नहीं?'—'ईवनिंग स्टार' के इस प्रश्नके उत्तरमें श्री गांधीने तार दिया है कि वह कुछ बातों पर निर्भर करता है, जिनमें से दो ये हैं: समझौतेकी सन्तोषप्रद कार्यान्विति और साम्प्रदायिक समस्याका समाधान।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २१-५-१९३१ और हिन्दू, १६-५-१९३१

१६७. भेंट : पत्र-प्रतिनिधियोंको

शिमला
१५ मई, १९३१

महात्मा गांधीने कहा कि बातचीत लाभदायक और अच्छी रही; वे शिमलामें वाइसरायसे अब और नहीं मिलेंगे; तथा गृह-सचिव श्री एमर्सनसे कल एक बार फिर भेंट[2] करके रविवार, १७ तारीखको निश्चित तौरपर शिमलासे नैनीतालके लिए चल देंगे।

महात्मा गांधीने इस प्रश्नका उत्तर देनेसे इनकार कर दिया कि क्या अब उनके लन्दन जानेकी आशा और बढ़ गई है। उन्होंने यह भी कहा :

इसके बारेमें अधिक जानकारी प्राप्त करनेके लिए आपको वाइसराय-भवन जाना चाहिए।

सर फजल हुसैनके निवासकी ओर पैदल जाते समय उनसे पूछा गया कि वे क्या स्वराज्य-सरकारका मुख्य कार्यालय शिमलामें रखना पसन्द करेंगे? उन्होंने उत्तर दिया :

इतनी ऊँचाईसे बहुत काफी नीचे उतरकर हमें मैदानी भागमें जाना होगा, क्योंकि सरकार तो जनताके बीचमें और जनताके लिए ही होनी चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दुस्तान टाइम्स, १७-५-१९३१

१. विवरण लन्दनमें इस तिथिको छपा था।

२. देखिए परिशिष्ट ६।

१६८. तार : वल्लभभाई पटेलको

शिमला
१६ मई, १९३१

सरदार वल्लभभाई
बारडोली

जवाहरलालका सन्देश मिल गया हो तो मेरा सुझाव है कि आप नौ तारीखको बारडोलीमें या जहाँ ठीक समझें वहाँ बैठक रखें। कल नैनी-ताल जा रहा हूँ।

बापू

[अंग्रेजीसे]

अ० भा० कां० क०, फाइल संख्या २७३, १९३१।
सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

१६९. पत्र : खानचन्द देवको

स्थायी पता, साबरमती
१६ मई, १९३१

प्रिय डॉ० खानचन्द,

आपका विस्तृत पत्र पाकर मुझे खुशी हुई। और वह मिला भी मुझे बड़े ठीक समयपर। शेष बन्दियोंकी रिहाईके सिलसिलेमें कोई अड़चन नहीं पड़ेगी। अब मैं चाहता हूँ कि यदि किसी तरह हो सके तो आप मुझे हर मुकदमेके फैसले और सबूतकी एक-एक नकल पहुँचा दें या फिर हर मुकदमेका एक संक्षिप्त ब्योरा तैयार कर दें जिसमें यह भी बताया गया हो कि आप उससे सम्बन्धित बन्दीकी रिहाई समझौतेके अन्तर्गत उचित क्यों मानते हैं। विचाराधीन मुकदमोंका एक पूरा विवरण भी आप मुझे भेज दीजिए।

हृदयसे आपका,

डॉ० खानचन्द देव
ब्रेडलॉ हॉल, लाहौर

अंग्रेजी (एस० एन० १७०८२)की माइक्रोफिल्मसे।

१७०. पत्र : सतीशचन्द्र दासगुप्तको

स्थायी पता, साबरमती
१६ मई, १९३१

प्रिय सतीशबाबू,

आपके दोनों पत्र मिल गये। हेमप्रभा देवीकी हालतके बारेमें मैं चिन्तित हो गया हूँ। कृपया मुझे सूचित करते रहिए।

वहाँके झगड़ोंका[1] आपका विवरण पढ़कर मन खिन्न हो जाता है और सुभाषबाबूके बारेमें आपकी राय पढ़कर तो खिन्नता और बढ़ जाती है। मुझे इस बातकी खुशी है कि आप अपनेको दलगत मामलोंसे बिलकुल ही अलग रख रहे हैं। 'मुसलमान'की कतरनसे मुझे सन्तोष नहीं हुआ। 'राष्ट्रवाणी'के अनुवाद अच्छे हैं। मेरा ख्याल है कि आपको अपने भोजनमें नमक भी शामिल कर लेना चाहिए। समझौतेके सिलसिलेमें उठनेवाले मामलोंको लेकर मैंने यहाँ अधिकारियोंसे कई बार देर-देर तक बातचीत की थी। वे काफी हदतक सन्तोषप्रद रहीं। अब मैं नैनीताल जा रहा हूँ और इस महीनेके अन्ततक बोरसद पहुँचूंगा।

श्री सतीशचन्द्र दासगुप्त
खादी प्रतिष्ठान
सौदपुर (बंगाल)

अंग्रेजी (एस० एन० १७०८३) की फोटो-नकलसे।

१७१. पत्र : ए० फेन्नर ब्रॉकवेको

स्थायी पता, साबरमती
१६ मई, १९३१

प्रिय मित्र,

मेरे इस पतेपर पुनःप्रेषित आपके तारके लिए धन्यवाद। मैं उसका उत्तर तार द्वारा इसलिए नहीं दे रहा हूँ कि मेरी राय अब भी वही है जो मैंने अपने पिछले पत्रमें आपको बतलाई थी। लन्दन जानेसे रोकनेवाला एक ही कारण मैंने आपको बतलाया था। लेकिन मुझे दूसरा कारण भी बतला देना चाहिए था। वह है समझौतेसे सम्बन्धित कार्योंपर अमल। हालाँकि केन्द्रीय सरकार मेरी सहायता

१. बंगाल प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीके मामलोंको लेकर सुभाषचन्द्र बोस और जे० एम० सेनगुप्तके बीच; देखिए "तार: जे० एम० सेनगुप्तको", ४-६-१९३१ की पाद-टिप्पणी भी।

कर रही है, पर प्रान्तीय अधिकारी लोग समझौतेकी कार्यान्वितिके सिलसिलेमें अनेक कठिनाइयाँ पैदा कर रहे हैं और दोष स्थानीय कांग्रेसियोंको दे रहे हैं कि वे समझौता-भंग करते हैं। मेरे पास काफी सबूत मौजूद हैं; और व्यक्तियों द्वारा समझौतेके विरुद्ध किये गये आचरणकी हर शिकायतकी मैं अलग-अलग जाँच कर रहा हूँ। लेकिन एक बहुत बड़ी संख्या ऐसे कांग्रेसियोंकी है जिन्होंने समझौतेपर पूरा-पूरा अमल किया है। अधिकारियोंके साथ चूँकि मेरी बातचीत चल रही है इसलिए उनकी ओरसे की गई समझौता-भंगकी कार्रवाइयोंका मैं अभी कोई भी उल्लेख नहीं कर रहा हूँ। यह इस आशासे कि निकट भविष्यमें हालात ठीक पटरीपर आ जायेंगे। लेकिन इसी एक काममें मेरा लगभग सारा समय लग जाता है; और यह काम मुझे भारतमें ही रहनेपर मजबूर कर रहा है।

हृदयसे आपका,

श्री फेन्नर ब्रॉकवे
रिकमैन्सवर्थ, हर्ट्स (इंग्लैंड)

अंग्रेजी (एस० एन० १७०८४) की फोटो-नकलसे।

१७२. पत्र : रामलाल सिंहको

स्थायी पता, साबरमती
१६ मई, १९३१

प्रिय मित्र,

आपका पत्र मिला। आपको शायद इस बातकी जानकारी नहीं है कि मैंने यह प्रतिज्ञा[1] की है कि जबतक पूरी तौरपर समझौता और भारतको उसका अभीष्ट नहीं मिल जाता, मैं आश्रममें नहीं रहूँगा। यदि आप इस तथ्यके बावजूद आश्रममें ठहरना चाहते हों तो मैं चाहूँगा कि आप आश्रमके प्रबन्धकको लिखें और मुझे भरोसा है कि वह आपको कुछ सप्ताह ठहरनेकी अनुमति अवश्य दे देंगे।

श्री विट्ठलभाई पटेलका पता है: मारफत टॉमस कुक ऐंड सन्स, लन्दन।

हृदयसे आपका,

ठाकुर रामलाल सिंह
केन्टिट एस्टेट
डाकखाना बीजइपुर (मिर्जापुर)

अंग्रेजी (एस० एन० १७०८५) की माइक्रोफिल्मसे।

१. देखिए खण्ड ४३, पृष्ठ ४९-५१।

१७३. पत्र : के० नटराजनको

स्थायी पता, साबरमती
१६ मई, १९३१

प्रिय श्री नटराजन,

आपके पत्रकी प्राप्ति-सूचना भेजनेमें विलम्ब हुआ। कृपया क्षमा करें। कारण आप जानते ही हैं। मेरा नाम जिस वक्तव्यके साथ जोड़ा जा रहा है, वह बिलकुल ही मनगढ़न्त है। ब्रिटिश शासन एक बुरी चीज है—इस निष्कर्षपर हम बड़े अध्यवसायपूर्ण अध्ययन और मननके बाद पहुँचे हैं और हमारे पीड़ाजनक अनुभवोंने उनकी पुष्टि की है। 'हिन्द स्वराज्य' और 'सत्यके प्रयोग' में मैंने इसकी पूरी प्रक्रिया बतलाई है। श्री बिटमैनने यह बड़ा अच्छा किया कि जाँचे-परखे बिना विवरणपर विश्वास करनेसे इनकार कर दिया। मैं इतना और कह दूँ कि बिशप अजारियाके साथ मुलाकातकी बात मुझे यादतक नहीं है। मै श्री बिटमैनका पत्र लौटा रहा हूँ।

हृदयसे आपका,

संलग्न : १

श्री के० नटराजन
कार्यालय 'इडियन सोशल रिफॉर्मर'
बम्बई

अंग्रेजी (एस० एन० १७०८६) की फोटो-नकलसे।

१७४. टिप्पणियाँ

अन्धकार कैसे मिटे?

एक स्नातक पूछते हैं :[1]

यह पत्र अर्धसत्य ही सामने रखता है। इसीके साथ मेरे सामने दूसरा भी एक पत्र है। कहा गया है : "हमारे यहाँ मृत्यु-भोज बन्द हो गया है, मृत्युके बादका रोना-पीटना कम हो गया है तथा विवाह सादे और कम खर्चीले होते जाते हैं।" इसमें आश्चर्यकी बात नहीं है। किसी भी महाबलिदानके परिणामस्वरूप ऐसे सुधार होने ही चाहिए। आश्चर्य तो इस बातका है कि बलिदानोंके बावजूद और स्थितिको समझते

१. यहाँ नहीं दिया जा रहा है। पत्र-लेखकको शिकायत थी कि जिसके लिए पूरे वर्ष-भर बलिदान दिये गये फिर भी अँधेरेमें वे प्रकाशकी किरणें नजर नहीं आतीं।

हुए भी अस्पृश्यताका नाश जड़मूलसे नहीं हुआ। अस्पृश्योंको कुएँसे पानी लेनेकी मनाही आज भी कई गाँवोंमें है। तमाम सार्वजनिक पाठशालाओंमें उनके बालक स्वतन्त्रतापूर्वक नहीं जा पाते। जाति-भेद और ऊँच-नीचका विचार अभी प्रचलित है। आपसमें झगड़े होते रहते हैं। लड़कियाँ आज भी बेची जाती हैं; लड़कीके बापसे नौजवान अभीतक पैसेकी आशा रखते हैं।

इसकी वजह क्या है?

हमारा ध्यान बाहरकी ओर है, हम अन्तर्मुख नहीं बने। सरकारके खिलाफ लड़नेमें हमें मजा आता है। यह लड़ाई लड़ते हुए या लड़नेके लिए जो सुधार बहुत ही आवश्यक होते हैं, वे हम कर लेते हैं। परन्तु हमें अपनेसे लड़नेमें, समाजके साथ युद्ध करनेमें मजा नहीं आता, या कम आता है।

इस ढिलाईका सामना कौन करे?

स्वयंसेवक, स्नातक, स्वयंसेविका, वानर-सेना। "लेकिन नमकका खारापन ही गायब हो जाये तो उसे कहाँसे खारा बनायें?" स्वयंसेवकों और स्वयंसेविकाओंको यह काम नीरस मालूम होता है। वे यह नहीं समझ पाते कि यदि ये काम न हुए, तो स्वराज्य नहीं मिलेगा और यदि मिल भी गया तो वह टिक नहीं सकेगा। जनताके सब अंगोंका विकास ही स्वराज्य है, यह बात अभी दिनकी भाँति साफ नहीं हुई है। इसलिए यदि अब ग्राम-सेवक बड़ी संख्यामें मिल जायें, और जो हैं वे ऐसे काम शान्ति, दृढ़ता और लगनके साथ करें तो अन्धकार मिटे और प्रभात हो।

भगिनी-सेवा-संघ

बम्बईके भाई करसनदास चितालियाने श्री० सूरजबहन मणिलालके साथ मिलकर उक्त नामका संघ कायम करनेका निश्चय किया है। भाई करसनदासके प्रयत्नसे विलेपारलेमें भगिनी-सेवा-मन्दिर बन गया है और वह खुल भी चुका है। अब संघकी स्थापनाके विचारसे उन्होंने एक पत्रिका छपवाई है जो इसे पूरी पढ़ना चाहें, वे भाई करसनदाससे मँगा लें। उसमें संघके सम्बन्धमें नीचे लिखी बातें दी गई हैं।[१]

सेविकाकी प्रतिज्ञा नीचे लिखे अनुसार है:[२]

नीचे लिखी योग्यतावाली बहनें प्रवेश पा सकेंगी:[३]

पत्रिकाका उपसंहार इस प्रकार है:[४]

मैं भाई करसनदासके इस प्रयत्नकी सफलता चाहता हूँ।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १७-५-१९३१

१, २, ३, ४. यहाँ नहीं दिये जा रहे हैं।

१७५. फिर भी वही राय

श्री मथुरादास देवराम "बीसवीं सदीकी सती"[१] सम्बन्धी लेखके बारेमें लिखते हैं :[२]

न्यायकी खातिर मैंने यह पत्र छापा है। ये सब बातें जाननेके बाद भी मैं अपनी रायपर कायम हूँ। जो तथ्य प्रकाशित हुए थे वे अक्षरशः सच हैं, यह जानकर मेरा दुःख और बढ़ जाता है और मेरी राय अधिक वजनदार हो जाती है। यह उदाहरण प्रेमका नहीं, बल्कि आवेशका है। आवेशमें आकर आदमी क्या नहीं करता? यही बहन अगर जीवित होती तो अपने जीवन द्वारा अपने पतिकी स्मृतिको स्थायी बना पाती। मरकर पतिके साथ नहीं गई। देह नष्ट होनेके साथ ही सम्बन्ध टूट जाता है, यह मानना ही भूल है। परन्तु कदाचित् यह सच हो तो भी वह इस सम्बन्धकी रक्षा न कर सकी। पतिके देहकी राखके साथ उसकी देह भी राख हो गई अर्थात् एकके जानेपर दूसरा भी चला गया। इस करुण घटनामें मुझे कहीं कोई बात स्तुति-योग्य नहीं जान पड़ती। मैं चाहता हूँ कि इस बहनके सगे-सम्बन्धी भी इस आत्महत्याको सतीत्वका नाम न दें। स्त्रियोंको अन्ध पति-प्रेम सिखानेकी अपेक्षा हम उन्हें स्वतन्त्र बनायें और अपने आचरण द्वारा उन्हें यह समझा दें कि उनकी आत्माके अधिकार भी पुरुषकी देहमें रहनेवाली आत्माके समान ही हैं।

अब श्री मथुरादासके अन्तिम प्रश्नके बारेमें "सती स्त्री मर्यादाके भीतर रहकर सन्तानोत्पत्तिके कार्यमें भाग लेगी" इस वाक्यमें 'सती स्त्री' शब्द सौभाग्यवती और शीलवती स्त्रीके लिए प्रयुक्त हुआ है। मेरा आदर्श तो यह है कि पति-पत्नी पूर्ण ब्रह्मचर्यका पालन करें। यदि ऐसा करना सम्भव न हो तो मैं यह कहना चाहता हूँ कि वे दोनों मर्यादाके भीतर रहते हुए सन्तानोत्पत्तिमें भाग लें। अर्थात् एक-दूसरेका शारीरिक स्पर्श, देह-संग सन्तानोत्पत्तिके लिए ही हो और सो भी दोनों जितनी सन्तानकी इच्छा करें, उसके भीतर करने-भरके लिए हो। मेरे विचारसे इसीका नाम मर्यादित संयम है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १७-५-१९३१

१. ३-५-१९३१ का।

२. यहाँ नहीं दिया जा रहा है। पत्रमें एक महिलाके सती होनेका विवरण देते हुए उसका समर्थन किया गया था।

१७६. सार्वजनिक खर्च

अन्य सब प्रान्तोंके मुकाबले गुजरातको खर्चके बारेमें सबसे अधिक सुविधा मिली है। प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीका भण्डार कभी खाली रहा ही नहीं। जिलों और तहसीलों को भी द्रव्य मिलता ही रहा है। वर्षों पहलेसे मेरी यह राय बन चुकी है कि इतनी अधिक सुविधाएँ किसी भी संस्थाके लिए लाभदायी नही होती। जिस संस्थाने प्रतिष्ठा प्राप्त कर ली है, उसे ऐसी सुविधाएँ तो मिलेंगी ही। लेकिन अगर उपर्युक्त नियम सही हो तो ऐसी संस्थाको खुद ही कंजूस बनकर रहना चाहिए और जरूरतसे ज्यादा एक कौड़ी भी खर्च नहीं करनी चाहिए। यह कोई जरूरी बात नहीं है कि अनुदान मिलते ही उसे खर्च कर डाला जाये। जरूरी यह है कि आवश्यकता पड़े तो करोड़ों की माँग और खर्च करें और आवश्यकता न हो तो करोड़ों मिलनेपर भी कुछ खर्च न किया जाये।

मुझे डर है कि गुजरातने हमेशा इस नियमका अनुसरण नहीं किया है। बल्कि खर्चके बारेमें गुजरातने कुछ लापरवाही तक बरती हो तो आश्चर्य नहीं। हर गाँव, तहसील और जिलेको अपने हिसाबकी जाँच करनी चाहिए और जहाँ आवश्यक हो वहाँ काट-छाँट करनी चाहिए। यदि झोंपड़ीसे काम चलता हो तो महल न चिना जाये, पैदल जाया जा सकता हो तो गाड़ीका उपयोग न किया जाये और गाड़ीसे काम चल जाता हो तो मोटरका उपयोग न किया जाये। भोजन-खर्चपर खूब नियन्त्रण रखनेकी आवश्यकता मालूम होती है। उत्तम मार्ग यह है कि सब समितियाँ ऐसे अनुभवीसे अपने हिसाब-किताबकी जाँच करायें और उससे आलोचनात्मक सुझाव माँगें, जो जनताके धनका सदुपयोग करनेके लिए मशहूर हो।

दस साल पहले गुजरातमें एक स्वर्णिम नियम था कि सब जिलों और सब तहसीलोंको अपने खर्च लायक कम-से-कम धन इकट्ठा करके प्रान्तीय समितिमें जमा करना चाहिए। कुछ वर्षोंतक इस नियमका पालन किया गया। फिर शिथिलता आ गई। अब तमाम जिलोंका खर्च प्रान्तीय समिति देती है। इस स्थितिको मैं बहुत भयानक समझता हूँ। यह माननेकी कोई वजह नही कि प्रान्तीय समितिका कोष हमेशा भरा-पूरा ही रहेगा। प्रान्तीय समितिके लिए ऐसा लोभ करना उचित भी न होगा। इसलिए हमें फिरसे पुराने नियमको चालू करना चाहिए। एक बार ऐसा निश्चय हो जानेपर, जहाँ काम होता होगा, वहींसे पैसे मिलते रहेंगे। हमें अपनेमें इतना आत्मविश्वास पैदा कर लेना चाहिए। यहाँ मैं यह बताये देता हूँ कि कांग्रेसका नियम क्या है। कांग्रेस प्रान्तोंको द्रव्य नहीं देती। प्रान्त कांग्रेसको दसवाँ हिस्सा देते हैं; और यही नियम प्रान्तोंमें जिलोंके लिए होना चाहिए। जिले प्रान्तको दसवाँ हिस्सा अर्थात् उचित भाग दें। प्रान्त जिलोंका पोषण करें, इसका तो यह मतलब हुआ कि हमने पैरोंसे चलनेके बजाय नटकी तरह सिरके बल चलना आरम्भ किया है। यह उलटा न्याय कबतक टिक सकता है?

परन्तु जब लड़ाई चल रही हो तब क्या किया जाये? मेरा जवाब यह है कि तब भी यही नियम लागू होगा या यों कहिये कि तब यह नियम और भी सख्तीसे लागू होगा। मैं किसी अपवादकी कल्पना कर सकता हूँ। परन्तु अपवाद नियमको सिद्ध करता है। अपवाद नियम नही बन सकता। भगवान् न करे, यदि हमें फिरसे लड़ना पड़ा तो हममें बिना पैसे या कम-से-कम पैसेसे लड़नेकी शक्ति होनी चाहिए। सत्याग्रहका यह सिद्धान्त है। जालिम हमारे तन और धनका मालिक बन सकता है, किन्तु मनका मालिक कभी नहीं बन सकता। मन स्वतन्त्र रह सकता है और इसी ज्ञानके आधारपर सत्याग्रह-शास्त्रका जन्म हुआ है। शुद्धतम सत्याग्रहमें गाड़ीके किराये की जरूरत नहीं होनी चाहिए, हिजरतकी भी आवश्यकता नहीं पड़नी चाहिए और यदि आवश्यकता पड़े ही तो पैदल जाना चाहिए। खानेको मिले तो भी ठीक, न मिले तो भी वाह-वाह। जहाँ ऐसी निश्चिन्तता होती है, वहाँ आदमी बहुतेरी झंझटोंसे बच जाता है। स्वतन्त्रता हमारे आँगनमें आकर नाचती है। निश्चिन्त अन्ततक भूखों नहीं भटकता। उसे चबैना मिल ही जाता है। भगवान् चींटीको कण और हाथीको मन प्रतिदिन देता ही है। मनुष्यने घमण्डमें आकर माना कि — "मैं करता हूँ, मैं कमाता हूँ, मैं बनाता हूँ, मैं बिगाड़ता हूँ।" ईश्वर इस घमण्डको रोज चूर करता है, परन्तु मनुष्य अपनी ऐंठ नही छोड़ता। सत्याग्रह इस मदको दूर करनेवाली चीज है। हम इतनी मंजिल तय कर चुके हैं, कि मैंने ऊपर जो-कुछ लिखा है उसे मानने या तदनुसार चलनेमें अब संकोच या अविश्वास नहीं होना चाहिए।

[गुजरातीसे]
नवजीवन, १७-५-१९३१

१७७. पत्र : भूपेन्द्रनारायण सेनको

स्थायी पता, साबरमती
१७ मई, १९३१

प्रिय भूपेन,

तुम्हारा पत्र मिल गया। देखना कि हाबूकी माँके बारेमें तुम्हारे उल्लेखका मैंने क्या उपयोग किया है।[1] तुमने उनका नाम क्यों नही पूछा? तुमको उनकी अवस्थाके बारेमें मालूम होना चाहिए और उनका एक फोटो भी खिंचवा लेना चाहिए था। पता नहीं, मैं बारडोली कब जा पाऊँगा। लेकिन किसी भी स्थानपर कुछ थोड़े समयतक जमनेका मेरा कार्यक्रम निश्चित होते ही तुम दोनों निश्चय ही आकर मेरे साथ ठहर सकते हो।

हृदयसे तुम्हारा,

श्री भूपेन्द्रनारायण सेन
खादी मण्डल, कलकत्ता

अंग्रेजी (एस० एन० १७०८७)की माइक्रोफिल्मसे।

१. देखिए "एक नारीका आत्मत्याग", २१-५-१९३१।

१७८. पत्र : ए० सुब्बैयाको

स्थायी पता, साबरमती
१७ मई, १९३१

प्रिय सुब्बैया,

बोरसदसे ऐन रवाना होते समय आपका पत्र मिला था। उसके बादसे अबतक समय ही नहीं मिल पाया। आपकी कठिनाइयाँ मैं समझता हूँ। इसलिए मैं आपका पत्र राजाजीके पास भेज रहा हूँ, इस हिदायतके साथ कि जितनी जल्दी हो सके, आपको छुट्टी दे दें। बात दुर्भाग्यपूर्ण तो है, पर अनिवार्य है। मैं आपकी इस बातसे सहमत हूँ कि आपको शेषन्के साथ ही रहना चाहिए और फिर ललिताके प्रति भी आपका कुछ कर्तव्य है ही। आपके स्वास्थ्यकी नरमी भी आपको छुट्टी दे देनेका अतिरिक्त कारण है। मैं इस महीनेके अन्ततक बोरसद पहुँचूँगा। हम आज दोपहर बाद नैनीतालके लिए शिमलासे चल रहे हैं और वहाँ कल सोमवारको पहुँच जायेंगे। अगर आपका स्वास्थ्य इजाजत दे तो आप राजाजीके यहाँसे तबतक काम न छोड़ें जबतक वे उसे सब तरहसे उपयुक्त न मानने लगें। आपको उनके पाससे इस इरादेसे आना चाहिए कि आप सब बातोंसे फारिग होनेपर और जरूरत पड़नेपर फिर उनके पास लौट जायेंगे।

श्री ए० सुब्बैया
गांधी आश्रम
तिरुचेन्गोडु (दक्षिण भारत)

अंग्रेजी (१७०८९) की माइक्रोफिल्मसे।

१७९. पत्र : च० राजगोपालाचारीको

स्थायी पता, साबरमती
१७ मई, १९३१

सुब्बैयाका एक पत्र साथमें रख रहा हूँ। मेरा ख्याल है कि आपको उसे जितनी जल्दी हो सके छुटकारा दे देना चाहिए। अब प्रश्न यह है कि आप फिर क्या करेंगे।

किसीने आपके छपे हुए अनुदेश-पत्रकी प्रति श्री एमर्सनको भेज दी थी। उन्होंने उसके बारेमें बहुत उत्साह दिखाया और मुझसे कहा है कि मैं उनकी ओरसे आपको बधाई दे दूँ। मैं यहाँ अत्यधिक व्यस्त रहा। व्यस्तता लाभदायक भी रही, लेकिन बेहद थका देनेवाली। प्रान्तीय सरकारोंने एक सीमातक ही योग दिया है। जाहिर है कि उनको

समझौता पसन्द नहीं है। इसलिए उनसे समझौतेपर अमल कराना अत्यन्त ही दुष्कर है, शेरकी दाढ़ निकालने-जैसा। इसलिए इस काममें अब शोभा नहीं है।

लॉर्ड विलिंग्डनके साथ हमने औपचारिक ढंगसे सौजन्यपूर्ण बातचीत की, पुरानी जान-पहचान ताजा की और अपना काम खत्म करके अब मैं संयुक्त प्रान्तके झगड़ोंके बारेमें सर मालकम हेलीसे मिलने नैनीताल जा रहा हूँ। यदि महादेवके साथ आपका पत्र-व्यवहार है तो इस सम्बन्धमें और अधिक जानकारी वही देगा। आपको समय मिले तो पत्र लिखिएगा, अन्यथा नहीं।

संलग्न: १

श्री च० राजगोपालाचारी
गांधी आश्रम
तिरुचेन्गोडु (दक्षिण भारत)

अंग्रेजी (एस० एन० १७०९०)की माइक्रोफिल्मसे।

१८०. भेंट: पत्र-प्रतिनिधियोंको

१७ मई, १९३१

महात्मा गांधीने कहा कि कुल मिलाकर वे अपनी यात्रासे सन्तुष्ट थे और उन्होंने समझ लिया था कि केन्द्रीय सरकार अपनी ओरसे दिल्ली समझौतेकी शर्तोंको क्रियान्वित करनेकी कोशिश कर रही है। उन्होंने अपना दृष्टिकोण फिर दोहराया कि वे लन्दन सम्मेलनमें भाग लेने तभी जायेंगे जब साम्प्रदायिक समस्याका हल निकल आयेगा और जब समूचे भारतमें समझौतेपर सन्तोषप्रद ढंगसे अमल होने लगेगा।

जहाँतक साम्प्रदायिक समस्याका सम्बन्ध है, महात्मा गांधीने स्वीकार किया कि लोगोंमें बहुत काफी अविश्वास मौजूद है, पर भोपालमें हुई चर्चाके बाद अब वे पहलेसे अधिक आशावादी हो गये हैं।

प्रश्न: मान लीजिए कि आप या कांग्रेस गोलमेज परिषद्में शामिल नहीं होते और परिषद् एक ऐसा संविधान तैयार कर देती है जिसे ब्रिटिश संसदका अनुमोदन प्राप्त हो, तो उसके प्रति कांग्रेसका क्या रुख होगा?

उत्तर: मैं कांग्रेसकी ओरसे कह सकता हूँ कि उस योजनाके सभी पहलुओंपर विचार किया जायेगा और यदि वह ठीक पाई जायेगी तो अवश्य ही उसपर अमल किया जायेगा।

प्रश्न: आप आत्म-निर्णयके सिद्धान्तमें विश्वास करते हैं?

उत्तर: जी, हाँ।

प्रश्न: क्या आप किसी प्रान्तको आत्म-निर्णयके अधिकारका प्रयोग करते हुए भारतसे पृथक् होनेकी अनुमति देंगे?

उत्तर: मैं उसके साथ तर्क करके उसे मनानेकी कोशिश तो करूँगा, पर शस्त्रोंके बलपर अपनी इच्छा उसपर नहीं थोपूँगा।

साम्प्रदायिक समस्याके बारेमें विचार प्रकट करनेका आग्रह करनेपर उन्होंने अपना मत फिर दोहराया कि यदि सिख और मुसलमान परस्पर सहमतिसे अपनी माँगें पेश करें तो वे बिना किसी हिचकके उनको मान लेंगे।[1] उनसे पूछा गया कि क्या यह दुःखकी बात नहीं कि प्रान्तीय समझौतोंमें विलम्ब होनेके कारण समूचे देशकी प्रगति भी रुकी रहे? उन्होंने कहा:

बात यह है कि यदि हम छोटी बातोंकी देख-भाल ठीक-ठीक कर सकते हैं तो फिर बड़ी बातोंकी भी कर ही सकते हैं। मैं इस चीजपर आग्रह क्यों कर रहा हूँ? ये प्रान्तीय समझौते असलमें ऐसे तिनके हैं जिनसे पता चलता है कि हवाका रुख क्या है; और हवा तो गोलमेज परिषद्तक के मौसमका रुख बदल सकती है — यहाँतक कि शायद उसे बिलकुल ही अनुकूल बना दे सकती है।

प्रश्न: 'बॉम्बे क्रॉनिकल' कहता है: 'क्या हमें यह बात दोहरानेकी आवश्यकता है कि गोलमेज परिषद्के काममें तेजी लाने और उसे पूर्णतः सफल बनानेका सबसे कारगर तरीका यही है कि विदेशी वस्त्रोंके बहिष्कार आन्दोलनको और अधिक तीव्र बनाया जाये?' — स्पष्ट ही, इसका अर्थ होता है कि 'बॉम्बे क्रॉनिकल' बहिष्कारको एक राजनीतिक अस्त्र मानता है और अस्त्र भी ऐसा जिसका प्रयोग सभी अन्य देशोंके विरुद्ध समान रूपसे नहीं किया जाना है; क्योंकि जापानी वस्त्रके बहिष्कारसे तो गोलमेज परिषद्के कार्यमें कोई तेजी नहीं लाई जा सकती। क्या आपके विचारसे इस प्रकारकी बात करना दिल्ली समझौतेके शाब्दिक अर्थ और उसकी भावनाके विरुद्ध नहीं है?

आपने जिस लेखसे उद्धरण दिया है मैंने वह देखा नहीं। पर मैं मोटे तौरपर कह सकता हूँ कि विदेशी वस्त्र बहिष्कार-आन्दोलनको एक राजनीतिक अस्त्र मानना निश्चय ही समझौतेके शाब्दिक अर्थ और उसकी भावनासे मेल नहीं खाता। विदेशी वस्त्रोंमें जापानी वस्त्र भी इस समय यदि अधिक नहीं तो उतने ही शामिल हैं जितने कि ब्रिटिश वस्त्र। इसका सीधा-सा कारण यही है कि आज ब्रिटिश वस्त्रोंके मुकाबले जापानी वस्त्र कहीं कारगर ढंगसे खादी और भारतीय मिलों द्वारा तैयार किये गये वस्त्रोंको बाजारसे खदेड़ रहे हैं। उसके बहिष्कारके लिए अत्यन्त ही पर्याप्त आर्थिक और सामाजिक कारण मौजूद हैं।

ब्रिटेनके कंजर्वेटिव दलको संरक्षणोंकी जो चिन्ता है, आप किस हदतक उसकी गुंजाइश रखनेके लिए तैयार हैं?

भारतके अपने हितों और प्रतिष्ठाको बरकरार रखते हुए यथासम्भव अधिक-से-अधिक सीमातक।

१. इसके बादका अंश **स्टेट्समैन**से लिया गया है।

प्रश्न पूछा गया कि क्या उनके विचारसे समझौतेके आड़े आनेवाली कठिनाइयाँ जुलाईतक दूर हो सकेंगी। गांधीजी ने उत्तर दिया:

यह मैं नहीं बतला सकता। लेकिन हाँ, मुझे ऐसी आशा है, और मुझे उम्मीद है कठिनाइयाँ दूर हो जायेंगी।

और हिन्दू-मुस्लिम समस्या? भोपालमें हुई मुसलमानोंकी बैठकोंमें जो कदम उठाये गये थे उनके बारेमें आपका क्या विचार है?

वे उत्साहवर्धक हैं। मुसलमानोंके दोनों ही दल अपने बीच एकता स्थापित करनेके लिए स्पष्ट ही भरसक चेष्टा कर रहे हैं। लेकिन मैं जब भी हिन्दू-मुस्लिम समस्याका जिक्र करता हूँ तो मेरा मतलब समूची साम्प्रदायिक समस्यासे होता है। उदाहरणके तौरपर, इस समस्याका हिन्दू-मुस्लिम पक्ष सामने आनेपर, सिख भी अपनी बात मनवायेंगे। कठिनाइयाँ तो सामने आयेंगी ही। पर मुझे उम्मीद है कि कठिनाइयाँ ऐसी नहीं होंगी जिनसे हम पार न पा सकें।

तो फिर इन दोनों समस्याओंके हल होते ही आप देर-सबेर गोलमेज परिषद्में शामिल होने सचमुच जायेंगे ही?

जी हाँ, अवश्य। और मुझे उससे बड़ी प्रसन्नता होगी, इसलिए कि मुझे आशा है कि मैं इंग्लैड पहुँचूँगा तो ब्रिटिश जनता मेरे विचारोंके प्रति उदासीन नहीं रहेगी और मैं जो कहूँगा उसे वह बिना किसी पूर्वग्रहके सुनेगी-समझेगी। या यदि हालात बदतर हुए, तो भी मुझे आशा है कि मैं उनको इतनी बात तो समझा ही सकूँगा कि मैं एक ऐसा सिरफिरा आदमी हूँ जो किसीको नुकसान नहीं पहुँचा सकता।

और लॉर्ड रोथेरमेर?

हाँ; हाँ, . . . मैं लॉर्ड रोथेरमेरको भी इतना तो समझा ही सकूंगा।

[अंग्रेजीसे]

स्टेट्समैन, १९-५-१९३१, **तथा हिन्दुस्तान टाइम्स,** २०-५-१९३१

१८१. सन्देश: कर्नाटक प्रान्तीय कांग्रेस सम्मेलनको[1]

[१८ मई, १९३१][2]

मूलभूत अधिकारोंसे सम्बन्धित प्रस्ताव ही कांग्रेसका सबसे महत्वपूर्ण प्रस्ताव है। उसमें दरसाया गया है कि कांग्रेस किस प्रकारका स्वराज्य हासिल करना चाहती है। वह स्वराज्य गरीबोंका स्वराज्य या राम-राज्य ही है। राम न्याय और न्याय-संगति या औचित्यके प्रतीक हैं, राम सत्य और औदार्य या दीन-वत्सलताके प्रतीक हैं।

१. देखिए "पत्र: जमनालाल बजाजको", ८-५-१९३१ भी।

२. महादेव देसाईके अनुसार "गांधीजी ने यह सन्देश पिछले सोमवारको लिखा था"। सोमवार १८ मईको पड़ा था।

प्रस्ताव धार्मिक सहिष्णुतापर आग्रह करता है जिसका अर्थ है कि किसी भी व्यक्तिको धार्मिक दायित्वोंका निर्वाह करनेसे नहीं रोका जायेगा; और राज्य किसी भी धर्मके साथ पक्षपात नहीं करेगा।

न्याय और न्याय-संगतिका अर्थ है पूँजी और श्रम, जमींदार और किसानके बीच उचित तथा न्याय-संगत सम्बन्ध स्थापित करना। जमींदार और पूँजीपति लोग किसानों और मजदूरोंका शोषण नही करेंगे बल्कि उनके हितोंकी रक्षाके लिए कृतसंकल्प रहेंगे।

यह नहीं कि हमारे हाथोंमें सत्ता आते ही ये सभी चीजें अपने-आप सहज ही आ जायेंगी। मैं सिर्फ यही कहना चाहता हूँ कि यदि स्वराज्य सत्य और अहिंसात्मक साधनोंके जरिये हासिल किया जायेगा तो ये चीजें उसके स्वाभाविक परिणामके रूपमें अपने-आप सामने आती जायेंगी। अब प्रश्न है कि क्या हम सत्य और अहिंसा का पालन कर रहे हैं। सत्य और अहिंसाको यदि कुछ समयके लिए कार्य-साधकताकी दृष्टिसे या मात्र नीतिके रूपमें प्रयुक्त किया जाये तो राम-राज्य हासिल नहीं किया जा सकेगा। राम-राज्य तो तभी हासिल किया जा सकता है जब सत्य और अहिंसाका पालन एक सैद्धान्तिक विश्वासके रूपमें किया जाये। क्या कभी कोई पुत्र अपने पुत्रोचित कर्त्तव्योंका पालन एक नीतिके रूपमें कर सकता है? नीति तो सारतः एक अस्थायी कार्य-साधकता ही होती है, जो परिस्थिति बदलनेपर बदली जा सकती है। त्याग या कष्ट-सहनकी नौबत आये बिना सत्य और अहिंसाका पालन करना काफी सरल होता है; लेकिन एक सैद्धान्तिक विश्वासके रूपमें इनका पालन करने-वाला तो सभी परिस्थितियोंमें अपनी जानकी बाजी लगाकर भी अडिग बना रहता है। अब समय आ गया है कि हम कांग्रेसी लोग सत्य और अहिंसाको नीतिके नहीं, बल्कि एक सैद्धान्तिक विश्वासके रूपमें अंगीकार कर लें।

इसलिए, आइए हम यह सोचें कि प्रस्तावके किन-किन अंशोंपर हम इस समय अमल कर सकते हैं। आज जिन अंशोंको प्रभावी बनाया जा सकता है, यदि हम उनपर अमल नहीं करेंगे तो स्वराज्य अर्थहीन हो जायेगा। क्योंकि जिन बातोंपर हम आज अमल कर सकते हैं यदि उनपर अमल नहीं करेंगें, तो स्वराज्यके बाद हम उनको एकाएक ही नहीं करने लग जायेंगे।

प्रस्तावमें कहा गया है कि स्वराज्यके संविधानके अन्तर्गत अस्पृश्यता नहीं रहेगी। तो क्या हमने अस्पृश्यताके रोगका निवारण कर लिया है? प्रस्ताव कहता है कि स्वराज्यके संविधानके अन्तर्गत शराब और मादक द्रव्योंकी दूकानोंके परवाने जारी करनेके लिए किसी भी प्रकारकी सुविधाएँ नहीं दी जायेंगी। तो क्या हमने अपने बीचसे मादक द्रव्योंके सेवन और शराबखोरीकी बुराईको उखाड़ फेंका है? प्रस्ताव आगे कहता है कि स्वराज्यके अन्तर्गत भारतमें सभी विदेशी वस्त्रोंके आयात पर प्रतिबन्ध लगा दिया जायेगा। लेकिन क्या हमने विदेशी वस्त्रोंका शौक छोड़ दिया है और क्या हम खद्दरधारी बन गये हैं? इसी प्रकार, इस प्रस्तावके अनुसार हिन्दू, मुसलमान और ईसाई सगे भाइयोंकी तरह मेलजोलसे रहेंगे, तो क्या हमने अपने हृदयोंसे एक-दूसरेके प्रति अविश्वास और सन्देहको दूर कर दिया है?

प्रस्तावमें स्वराज्यकी जो तसवीर पेश की गई है उसमें अमीर और गरीबके बीच घृणा या वैमनस्यकी कोई भावना नहीं रहेगी। क्या हमारे देशके धनी लोगोंने अपने आपको गरीबोंके साथ एकात्म कर लिया है, और क्या गरीबोंने अमीरोंके प्रति अपना वैमनस्य दूर कर दिया है? स्वराज्यके संविधानके अन्तर्गत हम चाहते हैं कि अधिकारियोंका अधिकतम वेतन ५०० रुपये माहवारसे ज्यादा न रहे। लेकिन क्या आज इससे ज्यादा वेतन पानेवाले अधिकारी बकाया राशि धर्म और सेवाके कामोंमें लगा रहे हैं? क्या हमारे देशके करोड़पति लोग अपना रहन-सहन इस वेतनके लायक बना रहे हैं?

आज इन प्रश्नोंका कोई निश्चित उत्तर दे पाना कठिन है। आज हम धीरे-धीरे रामराज्य या न्यायराज्यके अपने आदर्शकी ओर बढ़नेका मार्ग टटोल रहे हैं। इस प्रस्तावका मन्शा यही है कि हमारा यह लक्ष्य कभी आँखोंसे आझोल न हो पाये और उसे प्राप्त करनेके हमारे प्रयत्नोंको निरन्तर प्रेरणा मिलती रहे।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २८-५-१९३१

१८२. पत्र : प्रभाशंकर पट्टणीको

१८ मई, १९३१

सुज्ञ भाईश्री,

आपका पत्र मिला। आपकी शिकायत बिलकुल ठीक है। मैंने भाई फूलचन्दको लिखा है। आपको मिलनेका समय देनेकी क्या जरूरत है? आप आते ही कहाँ हैं? जहाँ भी होऊँ, वहाँ जब भी आप चाहें तब आनेका अधिकार आपको है। आज यहाँसे नैनीताल जा रहा हूँ। वहाँसे बोरसद जाऊँगा। बोरसद २७ तारीखतक पहुँच जाऊँगा। वहाँ आइए। जलवायु अच्छी है और रहनेकी व्यवस्था भी अच्छी ही कही जा सकती है।

मोहनदासके वन्देमातरम्

गुजराती (जी० एन० ५९१६) की फोटो-नकल तथा सी० डब्ल्यू० ३२३१ से भी।
सौजन्य : महेश पट्टणी

१८३. पत्र : शारदाबहन चि० शाहको

१८ मई, १९३१

चि० शारदा,

तेरा पत्र मिला। अपनी लिखावटको बिगाड़ मत। अक्षरोंके बारेमें रामदास स्वामीकी एक कविताका जो अनुवाद मैंने तुझे भेजा था, उसे पढ़ना। उसकी प्रति मुझे भेजना। मैं उसे कभी 'नवजीवन' में प्रकाशित करूँगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९९०१) से।
सौजन्य : शारदाबहन जी० चोखावाला

१८४. तार : वल्लभभाई पटेलको[1]

नैनीताल
१८ मई, १९३१

सरदार वल्लभभाई
बारडोली

मेरा सुझाव कि तुम कलक्टर और कमिश्नरसे भी मुलाकात करो। शिमला तार दे रहा हूँ। पच्चीस तारीखके लगभग बोरसद पहुँचनेकी आशा है।

बापू

[अंग्रेजीसे]
अ० भा० कां० क०, फाइल संख्या २७३, १९३१।
सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

१. सरदार वल्लभभाई पटेलके तारके उत्तरमें। तार इस प्रकार था : "वालोद महलके किसानोंको परेशान करना जारी है। विचाराधीन मुकदमें अब तक वापस नहीं लिये गये हैं। चालू वर्षकी लगान-अदायगीके लिए राजी होनेपर भी जब्तशुदा जमीनें वापस नहीं की गई। कल किसानोंको खेतोंमें दाखिल होनेसे रोकनेके लिए अनेक स्थानोंपर पुलिस तैनात की गई। कार्यक्रम तार द्वारा सूचित करें।"

१८५. पत्र : जमनादास गांधीको

नैनीताल
१८ मई, १९३१

चि० जमनादास,

हम अभी यहाँ पहुँचे हैं। प्रभुदास और धीरू साथ आये हैं। तुम्हारा तार मिल गया है। प्रभाशंकर रतिलालका भार ले और रतिलाल राजी हो तो मुझसे पूछनेकी जरूरत ही क्या है? उसके खर्चके बारेमें विचार जरूर करना होगा। नानालालके साथ विचार करके मुझे लिखना। चम्पाने जो कहा है उससे ऐसा लगा है कि आजकल वह सब खर्च नानालालसे ले रही है। क्या तुमने डाक्टरको ब्योरेवार पत्र लिखा है? यह मामला उलझता जा रहा है। रतिलाल और प्रभाशंकरके साथ बात करके मुझे लिखना। २५ तारीखके आसपास बोरसद पहुँचनेकी उम्मीद है।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९३२२)से।
सौजन्य : जमनादास गांधी

१८६. पत्र : वी० ए० सुन्दरम्‌को

नैनीताल
१८ मई, १९३१

प्रिय सुन्दरम्,

मुझे इतना समय ही नही मिला कि तुम्हें आस्ट्रियाई मित्रोंके लिए पत्र दे पाता। पत्र अब भेज रहा हूँ। साथमें जमनालालजी की बम्बईकी पेढ़ीके नाम एक हजार रुपयेकी हुंडी भी है। तुम यदि बम्बई न जाओ तो उसे कही भी भुना सकते हो। तुम्हें उसपर कोई बट्टा देनेकी जरूरत नही और यदि तुमसे बट्टा माँगा जाये तो तुम हुंडी मुझे लौटा देना और लिखना कि तुम रुपये कहाँ मँगाना चाहते हो।

तुम कब जा रहे हो? यह राशि यूरोप-यात्राके लिए ही अंकित है; इसे किसी दूसरी मदमें नहीं लगाया जा सकता।

बापू

अंग्रेजी (जी० एन० ३२०३)की फोटो-नकलसे।

१८७. पत्र : दूधाभाईको

नैनीताल
१८ मई, १९३१

भाई दूधाभाई,

मेरा विचार लक्ष्मीका सम्बन्ध किसी अन्त्यजेतर लड़केसे करनेका है। मुझे लगता है कि मुझे ऐसा कदम उठाना ही चाहिए। अपना विचार लिखना। जवाब आश्रम लिख भेजोगे, तो चलेगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ३२४३) की फोटो-नकलसे।

१८८. पत्र : महावीर गिरिको

१८ मई, १९३१

चि० महावीर,

तुम्हारा पत्र मिला। तुमने इरादा बदलकर अच्छा ही किया है। वहीं रहकर अध्ययन करनेकी आदत डालना ठीक होगा। जब भी हो सके शिवाभाई आदिसे मदद लेना। मुझे पत्र लिखते रहना। अध्ययनकी क्या व्यवस्था की है, यह लिखना। अपने-आप अध्ययन करनेकी योग्यता होनी ही चाहिए। जिसमें ज्ञान-वृद्धिका शौक होता है उसे क्या पढ़ें, कैसे पढ़ेंका पता अपने-आप चल जाता है।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ६२२९)की फोटो-नकलसे।

१८९. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

नैनीताल
१८ मई, १९३१

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मुझे बहुत अच्छा लगा। मैं देखता हूँ कि तूने इस यात्राके दौरान चीजोंको भली-भाँति देखा-परखा है। मैं चाहता हूँ कि किसन भी अपने अनुभव भेजे। वह अंग्रेजी या मराठीमें लिखे।

लक्ष्मीपर खूब ध्यान देना। उसका विवाह किसी सवर्णके साथ करनेका विचार है। उसे उस घरके योग्य बनना चाहिए। उसे रसोई बनानी आनी चाहिए। घर-गृहस्थी चलाना आना चाहिए। हिसाब रखना जानना चाहिए। थोड़ी-बहुत संस्कृत जान ले तो अच्छा हो। संस्कृत न जाने तो भी प्रार्थनाके श्लोकों और 'गीता' का शुद्ध उच्चारण करना तो उसे सीख ही लेना चाहिए।

इतना ज्ञान सभी लड़कियोंको प्राप्त कर लेना चाहिए। यह आवश्यक है कि लड़कियोंकी पढ़ाई की ओर ध्यान देना हम न भूलें। मुझे विस्तारसे लिखना। लक्ष्मीके बारेमें तू अपना अनुभव लिखना।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० १०२५४) की फोटो-नकल तथा सी० डब्ल्यू० ६७०२से भी।
सौजन्य : प्रेमाबहन कंटक

१९०. पत्र : वसुमती पण्डितको

१८ मई, १९३१

चि० वसुमती,

तुम्हारा पत्र नहीं आया। फिर भी आज मौनवार है, इसलिए लिख रहा हूँ। नागरवाड़ा आदि स्थानोंमें जाना शुरू कर दिया है क्या? चौकीपर अब एक ही बार जाना पड़ता होगा। मुझे २५ तारीखके आसपास बोरसद पहुँचनेकी आशा है।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (एस० एन० ९३२३) की फोटो-नकल तथा सी० डब्ल्यू० ५३९से भी।
सौजन्य : वसुमती पण्डित

१९१. पत्र : फूलचन्द के० शाहको

नैनीताल
१८ मई, १९३१

भाई फूलचन्द,

पट्टणी साहब लिखते हैं कि भावनगरमें तुमने जामनगरकी नीतिके बारेमें प्रस्ताव पास कराये और आलोचना भी की। यह हमारी नीतिके विरुद्ध माना जायेगा। यदि तुम इससे सहमत हो तो पट्टणीजी को लिख देना। भावनगरकी तरफसे हमें काफी सुविधाएँ मिलती हैं। मैं चाहता हूँ कि उनका दुरुपयोग न हो।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० २८४३)की फोटो-नकलसे।
सौजन्य : शारदाबहन शाह

१९२. तार : जयरामदास दौलतरामको[1]

नैनीताल
१८ मई, १९३१

जयरामदास दौलतराम
हैदराबाद (सिंध)

पहलेकी दूकानोंपर बिलकुल शान्तिपूर्ण धरना जारी रह सकता है, लेकिन जुर्माना-वसूलीके लिए नहीं।

गांधी

अंग्रेजी (एस० एन० १७१०३) की फोटो-नकलसे।

१. जयरामदास दौलतरामके तारके उत्तरमें। तारमें उन्होंने बतलाया था कि मीरपुरखासमें सीलें तोड़कर विदेशी वस्त्रोंका नया स्टाक बाजारमें चोरी-छिपे बेचा जा रहा है; और फिर इस सम्बन्धमें यह आदेश तार द्वारा ही माँगा गया कि उक्त परिस्थितिमें यदि जुर्माना-वसूलीके लिए धरना देनेकी अनुमति हो तो क्या पहले निश्चित की गई सभी दुकानोंपर धरना दिया जाये। देखिए "पत्र : जयरामदास दौलतरामको", ७-५-१९३१।

१९३. पत्र : नारायणदास रत्नमल मलकानीको

स्थायी पता, साबरमती
१९ मई, १९३१

प्रिय मलकानी,

तुम्हारा पत्र मिल गया। तुमको अ० भा० च० सं० की सिन्ध शाखाका मन्त्री नियुक्त करनेके प्रस्तावके बारेमें मुझे कोई जानकारी नहीं है। शंकरलाल संघके काम-काजको लेकर मुझे तंग नहीं करता। उसे जब भी मेरी रायकी जरूरत महसूस होती है, वह लिखकर पूछ लेता है। मुझे खुशी हुई कि तुमने हैदराबाद खादी-भण्डारकी काया-पलट कर दी है। कराचीमें एक केन्द्रीय भण्डार खोलनेकी बात मेरी समझमें नहीं आई। क्या वहाँ दो या तीन इस समय भी नहीं चल रहे हैं, जिनमें से एक मेरठ आश्रमकी ओरसे कीकीबहन द्वारा संचालित भण्डार भी है? यदि ये सभी भण्डार वहाँ चल रहे हैं, तो क्या केन्द्रीय भण्डार खोलना मौजूदा भण्डारोंके काममें हस्तक्षेप करना नहीं होगा? तुम शंकरलालकी रायके मुताबिक ही काम करना। कराचीकी योजना क्रियान्वित हो या न भी हो, तुम्हारे बारेमें तो मैं यही चाहूँगा कि तुम किसी गाँवमें बस जाओ। गाँवके कामको मैं शहरोंके कामसे ज्यादा अहमियत देता हूँ। लेकिन गाँवमें तुम्हारा बसना तभी हो सकता है जब चोइथराम और जयरामदास भी उससे सहमत हों। मैं हमेशासे महसूस करता आया हूँ कि यदि घर-घर व्यवस्थित रूपसे लगातार प्रचार किया जाये तो वह धरनेसे कहीं अधिक कारगर सिद्ध होगा। बड़ी इच्छा है कि मैं तुम्हारा अनुवाद पढ़ और समझ सकूँ।

बापू

श्री नारायणदास र० मलकानी
मार्फत सिन्ध प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी
हैदराबाद (सिन्ध)

अंग्रेजी (जी० एन० ८९८) की फोटो-नकलसे।

१९४. पत्र : कमर अहमदको[1]

स्थायी पता, साबरमती
१९ मई, १९३१

प्रिय मित्र,

आपके पत्रके लिए धन्यवाद। वर्तमान गतिरोधको दूर कर सकनेवाले हर कदमका मैं स्वागत करूँगा। लेकिन मैं देख रहा हूँ कि इसे दिलसे नहीं किया जा रहा है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजी (जी० एन० ५११९) की फोटो-नकलसे।

१९५. पत्र : डेनिस सी० ट्रॉथको[2]

नैनीताल
१९ मई, १९३१

प्रिय मित्र,

आपका पत्र मिला, धन्यवाद। मुझे आपको यह सूचित करते हुए खेद हो रहा है कि आप जो लेख चाहते हैं, उसे लिखने लायक समय मैं नहीं निकाल पाऊँगा।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजी (एस० एन० १७००३)की माइक्रोफिल्मसे।

१. प्रापकका नाम जी० एन० रजिस्टरसे दिया गया है।
२. पैन्सिल्वानिया (अमेरिका) के स्टेट कालेजमें शिक्षा एवं मनोविज्ञानके प्राध्यापक।

१९६. पत्र : शैलेन्द्रनाथ घोषको

नैनीताल
१९ मई [१९३१][1]

प्रिय मित्र,

आपके पत्रके लिए मेरी ओरसे धन्यवाद।[2] मैं आपकी इस उत्कट इच्छाकी कद्र करता हूँ कि मैं अमेरिका जाऊँ। परन्तु मैं अबतक अपने अन्दर उस यात्राके लायक साहस नहीं बटोर पाया हूँ और आपने देखा ही होगा कि अनेक मित्र मुझे इस यात्रासे विरत कर रहे हैं। आपको मालूम ही होगा कि अबतक तो मेरी लन्दन-यात्रा तक अनिश्चित है।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजी (एस० एन० १७०१३)की फोटो-नकलसे।

१९७. पत्र : दुर्गाप्रसन्न चटर्जीको

नैनीताल
१९ मई, १९३१

प्रिय मित्र,

आपका पत्र मिला।[3] आपने जिस मामलेका उल्लेख किया है, उसमें मैं कोई भी सहायता करनेमें समर्थ नहीं हूँ। लेकिन मैं कहना चाहता हूँ कि बंगालकी संकटपूर्ण आर्थिक स्थितिसे निबटनेका एकमात्र तरीका निस्सन्देह प्रतिनिधित्व हासिल करना ही नहीं है।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजी (एस० एन० १७०७१)की माइक्रोफिल्मसे।

१ और २. शैलेन्द्रनाथ घोषके लिखे पत्रसे वर्ष निश्चित किया गया है। पत्र-लेखकने लिखा था: "ब्रिटिश प्रधान-मन्त्री और आपकी आगामी वार्त्ताओंके लिए अमेरिकाका क्या महत्त्व हो सकता है, यह आप इस देशमें आनेपर ही समझ पायेंगे। अमेरिकाके महत्वका अनुमान आप इस तथ्यसे कर सकते हैं कि ब्रिटेनके बड़ेसे-बड़े नेता — चर्चिल, बॉल्डविन और अनेक अपेक्षाकृत कम बड़े लोग — भारतके सम्बन्धमें भाषण करने अगले शरद्कालमें इस देशमें आ रहे हैं। . . . आपकी वार्त्ताओंकी सफलताके लिए — भारतके हितके लिए — यह नितान्त वांछनीय है कि आप लन्दन परिषद्के बाद इस देशमें आनेका विचार पक्का कर लें। . . ."

३. दुर्गाप्रसन्न चटर्जीने लिखा था: "हिदायत कीजिए कि आगे अमलमें लाये जानेवाले भारतीय संवैधानिक सुधार विधानों, मताधिकार समिति और दूसरी गोलमेज परिषद्के सिलसिलेमें बेचारे बंगाली दूकानदारोंकी नितान्त असहायतापूर्ण स्थितिमें उनके लिए कौन-सा मार्ग अपनाना सर्वोत्तम रहेगा। . . ." मुझे लगता है कि "आर्थिक मन्दीके बढ़ते हुए बोझके बारेमें आवाज उठाने लायक सक्षम प्रतिनिधियोंके न होनेके कारण बंगाली व्यावसायिकोंकी स्थिति क्षोभजनक बन गई है। . . ."

१९८. पत्र : गुलशन रायको

नैनीताल
१९ मई [१९३१][1]

प्रिय मित्र,

आपके पत्र और कतरनोंके[2] लिए धन्यवाद। मैं उनको ध्यानपूर्वक देख लूँगा।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजी (एस० एन० १७०७६)की फोटो-नकलसे।

१९९. पत्र : डॉ० गोपीचन्द भार्गवको

नैनीताल
१९ मई, १९३१

प्रिय डॉ० गोपीचन्द,

आपका इस महीनेकी १६ तारीखका पत्र[3] मिल गया। मुझे श्री एमर्सनसे ऐसे एक और मामलेपर भी बात करनी है। मैंने देख लिया है कि अध्यादेश ९ के मातहत

१. वर्षका अनुमान गुलशन रायके पत्रके आधारपर किया गया है। उसपर तिथि १५-५-१९३१ पड़ी है।

२. गुलशन रायने बर्माको पृथक् करने, पंजाबके विभाजन और अल्पसंख्यक या साम्प्रदायिक समस्याके सम्बन्धमें **ट्रिब्यून**में प्रकाशित अपने लेख गांधीजी के विचारार्थ संलग्न किये थे। उन्होंने लिखा था: "मेरा विश्वास है कि जबतक पंजाब और बंगालमें मुसलमानोंको एक कारगर बहुमत बनाये रखनेका आश्वासन नहीं दिया जायेगा, तबतक इन दोनों प्रान्तोंकी साम्प्रदायिक समस्या कभी हल नहीं होगी। इन परिस्थितियोंमें बंगालके चटगाँव, ढाका और राजशाही डिवीजनोंको लेकर एक पृथक् प्रान्त गठित करना ज्यादा अच्छा रहेगा। उस सूरतमें पूर्वी बंगालमें मुसलमान लगभग ७० प्रतिशत होंगे और पश्चिमी बंगालमें हिन्दुओंका बहुमत रहेगा। इसी प्रकार यदि पंजाबसे अम्बाला डिवीजनको पृथक् कर दिया जाये, तो शेष पंजाबमें मुसलमान जन-संख्या ५६ से बढ़कर ६५ प्रतिशत हो जायेगी। और यदि पंजाब और पूर्वी बंगालके नव-गठित प्रान्तोंमें मुसलमानोंको कारगर बहुमत मिल जाये तो मुझे पूरा यकीन है कि संयुक्त निर्वाचक मण्डलोंको स्वीकार करनेमें उनको कोई कठिनाई नहीं होगी।"

३. डॉ० गोपीचन्द भार्गवने खादी-भण्डार, पेशावरके प्रबन्धकसे मिली यह सूचना गांधीजी के पास भेजी थी कि सरकारने १९३० में उक्त प्रबन्धकका सारा माल, बहियाँ और १९८ रुपये सहित रोकड़की पेटी और प्रबन्धकके निजी इस्तेमालकी चीजें जब्त कर ली थीं। और अब समझौता होनेके बाद भी केवल एक चौथाई माल और टूटी हुई हालतमें रोकड़की पेटी लौटाई गई है। उन्होंने गांधीजी से अनुरोध किया था कि श्री एमर्सनके साथ इस मामलेपर बातचीत की जाये।

हर्जानेका कोई सवाल नहीं उठाया जा सकता। इसलिए हर्जाना पानेकी मुझे कोई गुँजाइश नहीं दिखाई पड़ती।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजी (एस० एन० १७०७८)की माइक्रोफिल्मसे।

२००. पत्र : बोधराजको

स्थायी पता, साबरमती
१९ मई, १९३१

प्रिय लाला बोधराज,[१]

लाला लोकनाथके बारेमें आपका पत्र[२] मिला। क्या आप उनके मुकदमेके पूरे विवरणकी एक प्रति मुझे भेज सकेंगे? तब मैं सोचूँगा कि क्या किया जा सकता है।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजी (एस० एन० १७०७९)की माइक्रोफिल्मसे।

२०१. पत्र : एम० आई० डेविडको

स्थायी पता, साबरमती
१९ मई, १९३१

प्रिय श्री डेविड,

आपका १४ तारीखका पत्र मुझे मिल गया। देख रहा हूँ कि आप सद्भावनाके अपने कार्यक्रमको आगे बढ़ानेमें लगे हैं। आप जानते हैं कि मुझे आपके इस सराहनीय प्रयत्नके प्रति पूरी सहानुभूति है और अभी मुझे लगता है कि हम दोनोंके इस समान उद्देश्यको मैं ज्यादा-से-ज्यादा बल इसी तरह पहुँचा सकता हूँ कि मैं 'यंग इंडिया' में उसके बारेमें कोई ऐसी बात न लिखूँ जो आपके आड़े आती हो। मैं लज्जाके साथ यह स्वीकार करता हूँ कि मैंने यूरोपीय युवकों द्वारा लॉर्ड इर्विनके नाम लिखा गया पत्र अबतक नहीं देखा है। इसलिए उसकी एक प्रति भेजनेकी कृपाके लिए मैं आपका आभारी हूँ। निस्सन्देह, वह एक बड़ा अच्छा पत्र है। लॉर्ड इर्विनका उत्तर योग्य ही है।

१. अध्यक्ष, मुलतान नगर, कांग्रेस कमेटी।

२. बोधराजने गांधीजी को सूचित किया था कि नेकचलनीका जाती मुचलका देनेसे इनकार करनेवाले मुलतानके लाल लोकनाथको समझौतेके बाद भी जेलमें रखा जा रहा है, जब कि उसी तरहके एक मुकदमेमें सजा पाये शामदासको रिहा कर दिया गया है।

मैं समझता हूँ कि प्रस्तावित घोषणापत्र अबतक एक निजी दस्तावेज ही बना हुआ है। उचित व्यापार और रहन-सहनकी परिस्थितियोंके सम्बन्धमें किये गये उल्लेख की और गहराईसे जाँच करनेकी जरूरत है। मेरा ख्याल है कि आपको मालूम होगा कि घोषणापत्रमें ग्रेट ब्रिटेनवासी भारतीयोंके जो अधिकार गिनाये गये हैं वे वहाँ उनको प्राप्त नहीं हैं। दक्षिण आफ्रिकामें की जानेवाली भारतीयोंकी माँगों और भारतमें यूरोपीयों द्वारा उठाई जानेवाली माँगोंमें कोई साम्य नहीं है। दक्षिण आफ्रिकामें भारतीय सामाजिक, व्यावसायिक और वैधानिक निर्योग्यताओंसे पीड़ित हैं और वहाँ उनको हीन प्राणी समझा जाता है। इसलिए वहाँके भारतीय समानताके दर्जे पर प्रतिष्ठित किये जानेकी माँग करते हैं; जब कि भारतमें यूरोपीयोंको जीवनके प्रत्येक क्षेत्रमें विशेषाधिकार प्राप्त हैं और उनकी ओरसे समानताके दर्जेकी माँग करनेका अर्थ होगा कि उनके विशेषाधिकारोंको बरकरार रखा जाये। इसलिए जब भारतमें उसका अपना राज्य बनेगा, तो यूरोपीयोंको असुविधाजनक लगेगा ही; क्योंकि न्यायपूर्ण यही होगा कि उनके विशेषाधिकार वापस ले लिये जायें। इस बातके अलावा, स्वतन्त्र भारतमें यूरोपीयोंको किसी हानिका कोई भय नहीं होगा, इतना ही नहीं उनकी सूझबूझ और उनकी योग्यताके कारण वे सदा ही राज्यके लिए बड़े उपयोगी नागरिक बने रहेंगे।

हृदयसे आपका,

श्री एम० आई० डेविड
फोर्ट, बम्बई

अंग्रेजी (एस० एन० १७०९५)की फोटो-नकलसे।

२०२. पत्र : सुखेन्दुविकास चौधुरीको

स्थायी पता, साबरमती
१९ मई, १९३१

क्या मैं आपके पत्रको सार्वजनिक रूपसे प्रकाशित कर सकता हूँ? क्या उसमें उल्लिखित तथ्योंको आप सिद्ध कर सकते हैं?

श्रीयुत सुखेन्दुविकास चौधुरी
पाटिया, जिला चटगाँव

अंग्रेजी (एस० एन० १७०९६)की माइक्रोफिल्मसे।

२०३. पत्र : सी० विजयराघवाचारियरको

स्थायी पता, साबरमती
१९ मई, १९३१

प्रिय मित्र,

आपके पत्रके 'पुनश्च' में लिखा तो था कि अपने सबसे बादके पत्रकी प्राप्ति-स्वीकृति पानेका आपको कोई आग्रह नहीं, पर मुझे थोड़ा समय मिल गया है और मैं आपको बतलाना चाहता हूँ कि स्वयं मेरी ओरसे या कार्य-समितिके अन्य सदस्योंकी ओरसे आपके प्रति समुचित सम्मान न दिखानेकी अपनी किसी भी आशंकासे आपको बिलकुल भी दुखी नहीं होना चाहिए। बात दरअसल यह है कि देशकी जनताके दिमागको परेशान करनेवाले आजकलके मसलोंके बारेमें आपसे उनका मतभेद है। और जिनके साथ आपका मतभेद है, भले ही वे आपके साथ मतैक्यके इच्छुक हों, उनको आप कोई दोष कैसे दे सकते हैं।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

श्री सी० विजयराघवाचारियर
फेयरीफाल्स व्यू
डाकखाना-कोडाईकनाल आब्जर्वेटरी

अंग्रेजी (एस० एन० १७०९८)की फोटो-नकलसे।

२०४. पत्र : किर्बी पेजको

स्थायी पता, साबरमती
१९ मई, १९३१

प्रिय मित्र,

आपके पत्रके लिए धन्यवाद। आप और अन्य मित्रोंने जो तार भेजा है, मैं उसकी दिलसे कद्र करता हूँ। तार न आता तो भी अमेरिका जानेका फिलहाल मेरा कोई विचार नहीं था।[1] लेकिन हाँ, उसके बाद आपके तार और अन्य पत्रोंने सिद्ध कर दिया है कि मेरी अनिच्छाका आधार काफी पुष्ट था।

हृदयसे आपका,

श्री किर्बी पेज
न्यूयार्क (अमेरिका)

अंग्रेजी (एस० एन० १७०९९)की फोटो-नकलसे।

२०५. पत्र : बॉयड टुकरको

स्थायी पता, साबरमती
१९ मई, १९३१

प्रिय बॉयड,

आपका पत्र मिल गया। अब मैं ज्यादा अच्छी तरह समझ पाया हूँ कि मेरी प्रस्तावित लन्दन-यात्रामें आप मेरे साथ क्यों जाना चाहते हैं। लेकिन अभीतक मेरे न तो लन्दन जानेकी कोई सम्भावना दिखती है और न अमेरिका जानेकी ही। अमेरिका-यात्राकी सम्भावना तो और भी कम है। मिशनरियोंके कार्य-कलापके सम्बन्धमें आपका पत्र[2] मैं निश्चय ही प्रकाशित करूँगा।

श्री बॉयड टुकर
मार्फत पोस्टमास्टर
श्रीनगर (कश्मीर)

अंग्रेजी (एस० एन० १७१००)की फोटो-नकलसे।

१. देखिए "टिप्पणियाँ", १४-५-१९३१ का उपशीर्षक "अमेरिका जानेकी अफवाह"।
२. देखिए "ईसाई मिशन", २८-५-१९३१।

२०६. पत्र : के० टी० मैथ्यूको

स्थायी पता, साबरमती
१९ मई, १९३१

प्रिय मित्र,

आपके पत्रके लिए धन्यवाद। आपने जिन पत्रों और कागजातका उल्लेख किया है, वे मुझे मिले थे — यह मुझे याद है। मैंने कोई भौतिक सुझाव नहीं दिया था। दोनों प्रतिस्पर्धी संस्थाओंके सदस्य मुझसे मिले थे और मैंने उन दोनोंको एक कर देनेके विचारका निश्चय ही अनुमोदन भी किया था। मिलकर बना हुआ नया संगठन कांग्रेसके तत्वावधानमें रहे या नहीं — इसका निर्णय एकीकरण समितिपर छोड़ दिया गया था। आपके पत्रमें मुझे ऐसी कोई बात नहीं दिखती, जिसके आधारपर राय बदलनेकी जरूरत हो।

हृदयसे आपका,

श्री के० टी० मैथ्यू
महामन्त्री
अखिल भारतीय राज्य प्रजा-परिषद्
कुन्नमकुलम (कोचीन राज्य)

अंग्रेजी (एस० एन० १७१०१)की माइक्रोफिल्मसे।

२०७. पत्र : निरंजन पटनायकको

स्थायी पता, साबरमती
१९ मई, १९३१

प्रिय निरंजन,

तुम्हारा पत्र मिला। आशा है तुम शीघ्र ही पैसोंकी परेशानीसे छुटकारा पा लोगे।

अभी इस समय तो मेरे लन्दन जानेके कोई आसार ही नहीं दिखते; फिर वहाँ सचिवालय बनानेकी तो बात ही नहीं उठती। मैंने अभीतक इसपर सोचा ही नहीं है कि मैं अपने साथ कितने सचिव ले जाऊँगा। तुमने जिस उक्तिको मेरी कहकर उद्धृत किया है, उसकी मुझे याद नहीं पड़ती। अगर मैंने यह कहा भी होगा तो अधिक सम्भावना यही है कि विनोदमें कहा होगा, अन्य किसी रूपमें नहीं।

लन्दनमें उत्कल-सचिवका क्या काम होगा? विभाजनका वास्तविक कार्य तो यहीं होगा, लन्दनमें नहीं।

हृदयसे तुम्हारा,

श्री निरंजन पटनायक
मार्फत उद्योग मन्दिर
बरहमपुर, बी० एन० रेलवे

अंग्रेजी (एस० एन० १७१०२)की माइक्रोफिल्मसे।

२०८. पत्र: एच० डब्ल्यू० एमर्सनको

नैनीताल
१७ मई, १९३१

प्रिय श्री एमर्सन,

लुधियानामें हुए लाठी-चार्ज[१]का संलग्न विवरण लुधियाना कांग्रेस कमेटीके एक सदस्यने भेजा है। जाहिर है, उसे प्रकाशनके लिए ही मेरे पास भेजा गया है। वैसे समझौतेसे उस घटनाका सीधा सम्बन्ध तो नहीं है, पर मुझे लगता है कि समझौते की भावना ऐसे काण्डोंको रोकनेमें कारगर होनी चाहिए। यदि आप मेरी बातसे सहमत हों, तो उसकी जाँच करानेकी कृपा करें। आपका उत्तर मिलनेके बाद ही मैं उसका ब्योरा प्रकाशित करूँगा। पूरे काण्डका आँखों देखा हाल बतलानेके लिए ही एक व्यक्ति लुधियानासे कालका तक आया था।

हृदयसे आपका,

संलग्न: १

श्री एच० डब्ल्यू० एमर्सन
शिमला

[अंग्रेजीसे]

अ० भा० कां० क०, फाइल संख्या, १६-बी, १९३१।
सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

१. मईकी १६ तारीखको हुए; देखिए खण्ड ४७, 'क्या समझौता ढह रहा है?", ९-७-१९३१।

२०९. पत्र : नारणदास गांधीको

नैनीताल
१८/१९ मई, १९३१

चि० नारणदास,

अभी नैनीताल पहुँचे हैं। किन्तु मौनके कारण शान्ति है। इसलिए कुछ डाक निबटानेका प्रयत्न कर रहा हूँ। पुरुषोत्तमका पत्र पढ़ा। वकील कौन है यह मालूम होना चाहिए। उनके साथ सम्बन्ध तोड़नेमें जल्दबाजी तो नही हुई? यहाँ दूर बैठे होनेसे कुछ समझमें नही आता। पुरुषोत्तमकी माँगोंका प्रबन्ध तो कर ही दिया होगा।

पंजाबी वैद्यकी सफलता-असफलताकी खबर देना।

मुझे लगता है कि हम २५ के आसपास बोरसद पहुँच जायेंगे। बुधवारको और अच्छी तरह मालूम हो जायेगा।

प्रभुदास और धीरू आ गये हैं। रामभाऊ अभी आनेवाला है।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :][1]

रामभाऊ कल शामको आ गया।

[गुजरातीसे]

बापुना पत्रो : श्री नारणदास गांधीने तथा सी० डब्ल्यू० ८१६१ से भी।
सौजन्य : नारणदास गांधी

२१०. पत्र : माधवजी वी० ठक्करको

२० मई, १९३१

चि० माधवजी,

तुम्हारा पत्र मिला है और सुरेन्द्रका भी। समाचार दुःखद है, पर ऐसी जागृतिके समय इस तरहकी घटनाएँ होती रहेंगी। हम नाम नही दे सकते क्योंकि हो सकता है कि निर्दोष मारे जायें। नाम देनेसे विश्वासघात भी होता है और विश्वासघात करनेसे कभी भी धर्मका पालन हुआ हो, ऐसा कोई उदाहरण मेरे ख्यालमें तो नहीं आता। हमपर विश्वास करके कोई व्यक्ति अपना दोष कबूल कर जाये, यह एक बात है। पर किसी भी मनुष्यके अपराधकी खबर हमें परोक्ष रीतिसे मालूम हो, यह दूसरी

१. यह १९ मईको जोड़ा गया था।

बात है। परोक्ष रूपसे प्राप्त खबरका उपयोग कई प्रसंगोंमें धर्म हो सकता है, किन्तु यहाँ तो ऐसा करना धर्म है ही नहीं। इसलिए तुम्हारा कर्त्तव्य तो जिस तरह हो सके उस तरह अभी उपद्रव करनेवालोंमें सुधार करना ही बच रहता है।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

यहाँसे दो-तीन दिनमें या कल ही गुजरातके लिए रवाना हो जायेंगे।

गुजराती (जी० एन० ६८१५)की फोटो-नकलसे।

२११. भाषण : नैनीतालमें

२० मई, १९३१

महात्माजी ने मानपत्रके उत्तरमें गवर्नरके[1] साथ हुई अपनी भेंटका उल्लेख करते हुए कहा कि उस जैसी परिस्थितिमें उनकी जैसी स्थितिवाला व्यक्ति ज्यादा कुछ नहीं बतला सकता; हालाँकि जनता उनसे बहुत-कुछ जानना चाहती होगी। उन्होंने आगे कहा कि कांग्रेस जबतक दूसरी कोई नीति तय नहीं करती, तबतक अहिंसाका पालन करते रहना ही जनताका कर्त्तव्य है। उन्होंने नागरिकोंसे पूछा कि दो वर्ष पूर्व दिया गया खद्दरके प्रचार-कार्यका अपना वचन पूरा करनेके लिए उन लोगोंने क्या किया है। उन्होंने खद्दरका महत्त्व समझाते हुए बताया कि वह स्वराज्य-प्राप्तिमें किस तरहसे सहायक हो सकता है और कहा कि उसके बिना देशको स्वतन्त्र करना सम्भव नहीं होगा। उन्होंने जनताको समझाया कि गोलमेज परिषद्में जाकर बैठ जाने-भरसे वह सब-कुछ हासिल नहीं किया जा सकेगा जिसके लिए कांग्रेस लड़ रही है, वह तो तभी होगा जब लोग स्वराज्य-प्राप्तिकी सबसे पहली शर्त पूरी कर दिखायें, अर्थात् अपने कर्त्तव्यसे किंचित् भी न डिगें।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दुस्तान टाइम्स, २२-५-१९३१

१. देखिए परिशिष्ट ७।

२१२. कांग्रेसका मतदाता

एक भाई पूछते हैं :-

कांग्रेस कमेटियोंके चुनावके मौकेपर

१. क्या कांग्रेसका उम्मीदवार कांग्रेसके नये सदस्य बनाकर उनकी ओर से चार आनेका चन्दा खुद दे सकता है?

२. क्या मत प्राप्त करनेके लिए उम्मीदवार अपने खर्चसे मतदाताओंके लिए सवारी भेज सकता है?

३. क्या मतदाताओंको प्रसन्न करनेके लिए उम्मीदवार उनकी मेजबानी कर सकता है?

४. क्या आदतन खादी न पहननेवाला कोई मतदाता मत दे सकता है?

ये बड़े उपयोगी और सामयिक प्रश्न हैं। पहले तीन प्रश्नोंपर मेरा यह जवाब है कि यह है तो बड़ी ही निन्दनीय प्रथा है, फिर भी मुझे लगता है कि इसे कांग्रेसके संगठनमें या उपनियमोंमें रोकनेका कोई प्रबन्ध नहीं है। चौथे प्रश्नके उत्तरमें मैं साफ 'नहीं' कहता हूँ। यानी, यदि उम्मीदवार चाहे तो सदस्योंकी ओरसे स्वयं चन्दा दे सकता है, उनके लिए सवारी भेज सकता है, और उन्हें यह समझानेके लिए कि वे उसीको मत दें, उनकी मेजबानी कर सकता है, परन्तु मैं यह आशा अवश्य रखता हूँ कि उम्मीदवार अपनी खातिर, और कांग्रेस और देशकी खातिर रिश्वत या अनुचित समझी या मानी जानेवाली किसी बातका आश्रय नहीं लेंगे। कांग्रेस कमेटियोंके सदस्य बननेकी सनकको मैं कभी समझ नहीं सका; क्योंकि इस प्रकार बनी हुई कांग्रेस कमेटियाँ सेवाका साधन बननेके बजाय सहज ही उपद्रव और असेवाके साधन बन सकती हैं। सदा खादी पहननेके सम्बन्धमें तो इस नियमका पालन कम और उसका भंग ही अकसर होता है, इसमें शक नहीं। यह एक अजीब बात है कि सदा खादी पहननेवाले – जो हजारोंकी संख्यामें हैं – कांग्रेसका सदस्य बननेकी परवाह नहीं करते और जो कांग्रेसके सदस्य हैं वे खादी पहननेका कष्ट नहीं उठाते। इस ढिलाईका कारण यह है कि जुदा-जुदा पक्षोंकी ओरसे अन्तिम क्षणतक सदस्य बनानेके लिए आदमी लाये जाते हैं, जो चुनाव खत्म होनेके बाद फौरन ही गायब हो जाते हैं। नये चुनाव या उपचुनावके लिए भी नई फेहरिस्त बनाई जाती है। इस दुःखद स्थितिके रहते हुए भी कांग्रेसकी शक्ति दिन-ब-दिन बढ़ती जा रही है। वह अधिकाधिक लोकप्रिय बनती जा रही है। वह अधिकाधिक जन-समूहोंको अपनी ओर आकर्षित करती है। उसकी आज्ञाओंका पालन जनताका एक बड़ा भाग तत्परताके साथ करता है। इस स्थितिके कारणकी जाँच करनेसे यही मानना पड़ेगा कि कांग्रेसके प्रतिनिधि भले लापरवाह हों, फिर भी किसी भी तरह क्यों न हो, कांग्रेस जनसाधारण की आवश्यकताओं और आकांक्षाओंका समर्थन करती है, और वाणी द्वारा उसे प्रकट

करती है। इन आम लोगोंपर ऐसे प्रतिनिधियोंके बेजा बरतावका कोई असर नहीं पड़ता। वे तो अपने प्रतिनिधियोंकी लियाकतकी जाँच किये बिना या उस ओर ध्यान दिये बिना कांग्रेसका, उसके ध्येयके खातिर ही, समर्थन करते हैं। यदि मेरा यह विश्लेषण सच हो, तो इससे जो नसीहत मिलती है, वह स्पष्ट है। इन पत्र-लेखकने जिन निन्दनीय प्रथाओंका जिक्र किया है, यदि ये और ऐसी प्रथाएँ बन्द न हुईं तो कांग्रेसकी जो शक्ति आज है, वह कायम न रहेगी। कांग्रेसके कार्यकर्त्तागण इसके प्रति सदा उदासीन नहीं रह सकते।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २१-५-१९३१

२१३. टिप्पणियाँ

धरने

कांग्रेसवालोंको जानना चाहिए कि भारत सरकारके पास प्रान्तीय सरकारोंकी ओरसे इस तरहकी शिकायतें आती रहती हैं कि धरना हमेशा शान्तिपूर्ण नहीं होता। मैं नही जानता कि ये शिकायतें कहाँतक सच हैं। परन्तु सरकार खुद समझौतेकी बातोंका किस तरह पालन करती है, इसका विचार किये बिना जो बातें हमसे सम्बन्धित हैं, हमें उनके पालनमें अधिक-से-अधिक सख्ती बरतनी चाहिए। हमें यह समझ लेना चाहिए कि हम जितने अधिक सख्त बनेंगे उतनी ही हमारी प्रतिष्ठा और शक्ति बढ़ेगी। इसलिए जो बातें मैं पहले कह चुका हूँ[1] फिर दोहराए देता हूँ:

१. प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष किसी तरहकी भी जोर-जबर्दस्ती नही होनी चाहिए।

२. धमकीका आभास भी नहीं होना चाहिए; इसलिए एक जगह पर एक समयमें पाँचसे अधिक धरनेवाले नहीं रहने चाहिए।

३. विनम्र अनुरोध करने और प्रचार-साहित्य बाँटनेके अतिरिक्त और कुछ नहीं होना चाहिए।

४. विदेशी कपड़ेके व्यापारियों द्वारा वादाखिलाफी किये जानेपर कांग्रेस कमेटियोंको उनपर जुर्माना नहीं करना चाहिए।

५. विदेशी कपड़ा खरीदनेवालोंपर आवाजें नहीं कसनी चाहिए।

६. खरीदारोंके चारों ओर घेरा बाँधकर खड़े नहीं होना चाहिए।

७. विदेशी कपड़ा ले जानेवाले ग्राहकों या गाड़ियोंका रास्ता रुके, इस ढंगसे रास्तेमें नहीं लेटना चाहिए।

जिनका यह खयाल हो कि इस तरहके मर्यादित धरनेसे कोई लाभ नहीं होगा, वे धरना देना छोड़ दें, और अपनी आँखोंके सामने विदेशी कपड़ा बिकने देनेकी जोखिम उठायें। विदेशी कपड़ेकी बिक्री रोकनेके लिए यदि हमें समझौतेके शब्दार्थ

१. देखिए खण्ड, ४५, "टिप्पणियाँ", १५-३-१९३१ का उप-शीर्षक "धरना देनेवालोंसे"।

या भावार्थको भंग करना पड़े तो इससे बेहतर तो यह होगा कि विदेशी कपड़ा बिकने दिया जाये।

विदेशी कपड़ेका बहिष्कार आखिर तभी सफल होगा, जब कांग्रेसका सन्देश जन-साधारणतक पहुँचेगा और खादीकी भावना उनमें व्यापेगी। प्रचार और उत्पादन का असली काम तो गाँवोंमें पड़ा है।

हमें याद रखना चाहिए कि हम विदेशी कपड़ेका बहिष्कार उसके अत्यन्त महत्व-पूण आर्थिक और सामाजिक परिणामोंके लिए करते हैं! फिर ब्रिटिश कपड़े या सूतके बहिष्कारकी जितनी आवश्यकता है, उतनी ही जापानी या इटालियन कपड़े और सूतके बहिष्कारकी भी है। सच पूछा जाये तो जापानी कपड़ेके बहिष्कारकी अधिक आवश्यकता है, क्योंकि उसकी खादी और स्वदेशी मिलोंके कपड़ेके साथ अधिक होड़ रहती है। हमें जापानसे द्वेष नहीं है। हम विदेशी कपड़ेका बहिष्कार इसलिए करते हैं कि यह हमारे राष्ट्रकी एक आर्थिक आवश्यकता है।

ऊपर जो बातें मैंने धरनोंके सम्बन्धमें कही हैं, वे शराबकी दूकानोंके धरनों पर भी उसी तरह लागू होती है। उसकी अन्तिम सफलता इसपर निर्भर करती है कि कांग्रेसका सन्देश शराब पीनेवालोंके घरतक पहुँचे।

समझौता और कैदी

बहुतेरे प्रान्तोंसे मेरे पास शिकायतें आ रही हैं कि इर्विन-गांधी समझौतेके अनु-सार जिन कैदियोंकी रिहाई होनी चाहिए थी, उनकी अभीतक रिहाई होना बाकी है। उन प्रान्तोंकी सरकारें कहती हैं कि उनपर समझौतेकी शर्तें लागू नहीं होतीं। ऐसे मामलोंमें राहत पानेका एकमात्र उपाय यह है कि हर मुकदमेकी कार्रवाईका अलग-अलग अध्ययन किया जाये। इसलिए जिन समितियोंने मेरे पास फेहरिस्तें भेजी हैं, उन सबसे मैं कहूँगा कि वे स्वयं मुकदमोंकी जाँच करें और जहाँ उन्हें सन्तोष हो जाये कि कागज-पत्रोंसे जहाँ हिंसा (न कि केवल कानूनी शब्दार्थके अनुसार हिंसा या वैसी हिंसाके लिए भड़काना) सिद्ध होती है, उन मामलोंको फिलहाल अलग रखें। जहाँ स्थानीय जाँचसे यह मालूम हो कि हिंसा या हिंसाके लिए भड़काना सिद्ध नहीं होता है, उनके कागज-पत्र मेरे पास भेजे जायें, मैं स्वयं उनकी जाँच करूँगा और जहाँ जरूरत होगी, उनकी रिहाईके लिए किसी सेवाभावी वकील और समाचारपत्रोंकी सहायता लूँगा। जानकारोंको किसी खास कैदीकी निर्दोषताके बारेमें विश्वास हो, तो भी इतना याद रखना चाहिए कि समझौतेकी इस सम्बन्धकी शर्तके अर्थानुसार हम केवल मुकदमेके कागज-पत्रोंका ही सहारा ले सकते हैं। जिनके विरुद्ध कार्रवाईके कागज-पत्रोंसे हिंसा सिद्ध नहीं होती, उनकी रिहाईकी माँग हम पेश कर सकते हैं। श्री राजवाडेका मामला ऐसा ही था।

दूसरे कैदी और उनके मित्र इस आश्वासनपर ही सन्तोष करें कि यदि अन्तिम समझौता हुआ तो उनकी रिहाई अवश्य होगी, और यदि सब तरहकी कोशिशें करने पर भी समझौता टूट गया तो उनके पुराने साथी फिरसे उनके बीच पहुँच जायेंगे। परिणामकी प्रतीक्षा उन्हें अधिक समयतक नहीं करनी पड़ेगी।

आप सहज ही समझ सकते हैं कि आपके यहाँ आनेपर भारतके साथ सहज सहानुभूति व्यक्त किये जानेपर भी लन्दनमें जो प्रतिक्रिया होगी, वह आपके काफी आड़े आ सकती है।

"गुड फ्राइडे" उन्होंने कैसे मनाया?

फादर एल्विनने मीरा बहनको लिखा है:

मैंने सोचा कि मैं तुमको बतला दूं कि मैंने "गुड फ्राइडे" के तीन घंटे कैसे बिताये। गिरजेमें मैं नहीं गया बल्कि अपनी कोठरीमें बैठकर कताई करता रहा। उसमें से जरा-सा सूत मैं भेज रहा हूँ — बहुत घटिया किस्मका है, मैं जानता हूँ — किन्तु यह एक प्रतीकके रूपमें है। कताई करते समय ईसाके क्रूसारोहण पर चिन्तन करता रहा। — शोषणकी सूलीपर खिंचे ईश्वरके उन दीनोंकी असहाय युग-युगकी पुकार, पुकार "भूखा हूँ, प्यासा हूँ" और जिनको चरखेका प्रेमसंदेश राहत दे सकता है, उन गरीबोंके आश्चर्यजनक अपार धैर्यका नाद "परम पिता उनको क्षमादान दो क्योंकि वे नहीं जानते कि वे क्या कर रहे हैं" — इन सबके साथ ईसाका क्रूसारोहण अत्यन्त सुसंगत जान पड़ा और तब लगने लगा कि चरखा हमारे गरीबोंके साथ और हमारे ईश्वरके साथकी एकात्मकताका दुहरा प्रतीक बन गया है। कितना अच्छा हो कि लोग आम तौरपर "गुड फ्राइडे" इसी तरह मनाने लगें। आत्मशुद्धिकी यह एक सच्ची अनुभूति थी।

फादर एल्विन द्वारा भेजा गया सूत मैंने देख लिया है। उसकी किस्म उतनी घटिया नहीं, जितनी कि वे समझते हैं। उसे बुना जा सकता है। वह लगभग २० नम्बरका सूत है। फिर भी मैं यह मानता हूँ कि इस त्यागपूर्ण कर्मके पीछे प्रेम और समर्पणकी जो उत्कट भावना है, उसे देखते हुए किस्म घटिया ही है। परन्तु एक लम्बे अर्सेतक निरन्तर और नियमित अभ्यासका अभाव एक ऐसी चीज है जिसकी पूर्ति प्रेम और निष्ठासे ही नहीं की जा सकती, भले ही वह अत्यन्त उत्कट ही क्यों हो। इसलिए मैं फादर एल्विनकी आत्म-भर्त्सनाभरी इस उक्तिसे यदि सहमत भी हुआ हूँ तो आलोचकके नाते नहीं, बल्कि सिर्फ इसी ख्यालसे कि मैं चरखा अपनानेके लिए प्रेरित होनेवाले लोगोंसे कहना चाहता हूँ कि उनको धागा निकालने-भरसे सन्तोष नहीं कर लेना चाहिए; क्योंकि इस प्रकार निकाला हुआ धागा उसी तरह सूत नहीं होगा जैसे खींचा हुआ प्रत्येक कोण समकोण नहीं होता। समकोण तभी हो सकता है जब वह ९० अंशका हो, इसी प्रकार सूत इकसार और इतने कसवाला होना चाहिए कि उसे आसानीसे बुना जा सके; नम्बर उसका कोई भी हो। इकसार और ठीक कसवाला सूत कातनेवाला अपने-आप कम-से-कम छः नम्बरका सूत तो निकालेगा ही और यदि उसका तकुआ बिलकुल सीधा और ठीक नुकीला होगा तो वह बिना किसी कठिनाईके १० से २० नम्बर तकका सूत निकाल लेगा। मैं भारतकी आधे-

पेट रहनेवाली करोड़ों जनताके साथ एकात्मता महसूस करनेवाले उसके सभी प्रेमियोंसे अनुरोध करता हूँ कि वे फादर एल्विनकी इस अनुभूतिको समझें-गुनें।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २१-५-१९३१

२१४. अठारह सौ अट्ठाईसमें

खादी प्रतिष्ठानके श्री सतीशचन्द्र दासगुप्त 'राष्ट्रवाणी' नामक एक बंगला पत्र निकालते हैं। उन्होंने हालमें ही 'समाचार दर्पण' के सम्पादकके नाम भेजी गई एक चिट्ठी खोज निकाली है। यह समाचारपत्र उन्नीसवीं सदीके दूसरे दशकमें बंगलामें प्रकाशित होता था। चिट्ठी बड़े महत्वकी है क्योंकि उससे जाहिर होता है कि चरखेको कैसे धीरे-धीरे नष्ट किया जा रहा था और उन दिनोंमें स्त्रियाँ उसे कितना मूल्यवान मानती थीं। इसीलिए उन्होंने उसे अपने पत्रमें छापा है और मेरे पास उसका अनुवाद भेजा है। मुझे विश्वास है कि जिनकी खादी आन्दोलनमें दिलचस्पी है वे सब इसे ध्यानसे पढ़ेंगे। चिट्ठी यह है:

एक कत्तिनका निवेदन

सेवामें:

सम्पादक महोदय, 'समाचार' 'समाचार दर्पण'

मैं एक कत्तिन हूँ। बहुत कष्ट उठानेके बाद यह पत्र लिख रही हूँ। कृपया अपने पत्रमें इसे प्रकाशित कीजिए।

जब मेरी उम्र २२ वर्षकी थी, तब मैं विधवा हो गई। मेरे तीन लड़कियाँ थीं। मरते समय मेरे पति कुछ नहीं छोड़ गये, उनके श्राद्धके लिए मैंने अपना जेवर बेच दिया। अन्तमें जब हमारे भूखों मरनेकी नौबत आ गई, तब ईश्वरने मुझे एक उपाय सुझाया और हम अपनेको बचा सके। मैं तकली और चरखेपर कातने लगी।

प्रातःकाल मैं अपने घरकी झाड़-बुहारका मामूली काम कर लिया करती थी और फिर दोपहरतक चरखेपर बैठ जाती थी। खाना बनाकर और अपने बूढ़े सास, ससुर तथा लड़कियोंको खिलाकर मैं खुद खाती थी और तकलीपर बारीक सूत कातने बैठ जाती थी। इस प्रकार मैं लगभग एक तोला कात लेती थी। जुलाहे हमारे घरपर आते और तीन तोला फी रुपएके भावसे चरखेका सूत खरीद लेते थे। जुलाहोंसे मुझे जो पेशगी रकम चाहिए होती, सो कहते ही मिल जाती थी। इससे हम खाने-पहननेकी चिन्ताओंसे मुक्त रहते थे। . . .

कुछ वर्षोंमें मैंने सात गंडे अर्थात् २८ रुपए इकट्ठे कर लिये। इससे मैंने एक लड़कीकी शादी कर ली और इसी प्रकार तीनों लड़कियोंके विवाह

हो गये। जब मेरे ससुरका देहान्त हुआ तो उनके श्राद्धपर मैंने ग्यारह गंड़े अर्थात् ४४ रुपए खर्च किये। यह रुपया मुझे जुलाहोंने उधार दिया था, जो मैंने डेढ़ सालमें वापिस चुका दिया। यह सब चरखेकी कृपा थी।

अब तीन सालसे मेरी सास और मैं खाने-पीनेके अभावसे त्रस्त हैं। जुलाहे सूत खरीदने हमारे घरपर नहीं आते। इतना ही नहीं, अगर सूत बाजारमें भेजा जाता है तो पुराने भावसे चौथाई कीमतपर भी नहीं बिकता। पता नहीं यह कैसे हो गया। मैंने इसके बारेमें बहुतों-से पूछा। वे कहते हैं कि बाहरसे विलायती सूत बहुत आ रहा है। जुलाहे उस सूतको खरीदकर बुनते हैं। मुझे गर्व था कि विलायती सूत मेरे सूतकी बराबरी नहीं कर सकता। लेकिन जब मैंने विलायती सूत देखा, तो पाया कि वह मेरे सूतसे अच्छा है। मैंने सुना कि उसका भाव तीन चार रुपये सेर है। मैंने अपना सिर पीट लिया और कहा, "हे प्रभु, मुझसे भी अधिक दुखिया बहनें हैं! मैंने समझ रखा था कि विलायतके सब लोग मालदार हैं, लेकिन अब मैं समझती हूँ कि वहाँ मुझसे भी अधिक गरीब बहनें पड़ी हैं।" मैंने पक्की तरह समझ लिया कि गरीबीके कारण ही उन गरीब बहनोंको कातनेकी प्रेरणा हुई है। उन्होंने अपनी इतनी कड़ी मेहनतका फल यहाँ भेज दिया, क्योंकि उसे वे वहाँ बेच नहीं सकीं। वह सूत यहाँ अच्छे भावपर बिकता तो भी एक बात थी। मगर उससे हमारी तो बर्बादी ही हो गई है। लोग उस सूतके कपड़ेको दो महीने भी काममें नहीं ला पाते। वह जल्दी ही फट जाता है। इसलिए मैं वहाँकी कत्तिनोंसे प्रार्थना करती हूं कि अगर वे इस निवेदनपर विचार करेंगी तो वे निर्णय कर सकेंगी कि सूत यहाँ भेजना न्याय है या नहीं।

शान्तिपुर

एक दुखिया कत्तिन

पाठक लेखिकाकी उदात्तताको देखे बिना नहीं रहेंगे। बेचारी अपने अज्ञानमें यही समझ रही थी कि सूत उससे भी गरीब विलायती बहनोंके हाथका कता हुआ है और इसलिए उनके साथ उसे सहानुभूतिका अनुभव हुआ। अफसोस है कि उसका विश्वास निराधार था। अगर विदेशी सूत हाथ-कता होता तो वह टिकी रह सकती थी। वह विदेशी सूतके मुकाबलेमें भी टिकी रह सकती थी, बशर्ते कि उसके पीछे भारतीय व्यापारको हथियाने और इस राष्ट्रीय ग्रामोद्योगको नष्ट करनेके संकल्पकी नीति न होती।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २१-५-१९३१

२१५. एक नारीका त्याग

पिछले वर्षकी अद्भुत नारी-जागृतिके कालमें ऐसी वीराँगनाएँ सामने आई हैं जिनकी मूक साधनाको देश कभी जान ही नही पायेगा। फिर भी गाँवोंसे ऐसे समाचार जब-तब मिलते रहते हैं। एक मित्रने ऐसा ही एक यह उदाहरण लिख भेजा है:

> **हमारे कांग्रेस शिविरके गैरकानूनी घोषित हो जानेके बाद जब उसपर पुलिसने ताला डाल दिया था, तब हम लोग महिषि जातिकी एक गरीब महिला — बाराडोंगलके हाबूकी[1] माता — की झोंपड़ीमें चले गये। गोर्कीका उपन्यास "माँ" हमने पढ़ रखा था। हाबूकी मातामें हमने उसके साक्षात् दर्शन किये। वह हम कार्यकर्त्ताओंके लिए दिन-रात खाना पकाती, बीमारोंकी तीमारदारी करती और व्यथित हृदयोंको सान्त्वना देती रहती थी। इस प्रकार वह हमारी सच्ची माता बन गई; नहीं तो हम लोग अपने-आपको मातृविहीन ही महसूस करते। हम लोगोंमें कई ग्रेजुएट और एम० ए० की डिग्रियाँ हासिल किये हुए थे और उनको अपनी शैक्षणिक योग्यताओंपर बड़ा नाज था, फिर भी हम सभी अपनी आन्तरिक प्रेरणासे पुकारने लगे थे हाबूकी माताको माँ अपने-आप कहकर। उनका त्याग और उनकी अपार कर्त्तव्य-निष्ठाने हमें श्रद्धानत कर दिया था।**

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २१-५-१९३१

२१६. तार: चम्पाबहनको

थाकुला, नैनीताल
२१ मई, १९३१

चम्पाबहन
मारफत राष्ट्रीय शाला
राजकोट

रतिलालके बारेमें बहुत दुःखी। राजकोट जाकर रतिलालको देखनेके लिए विशेषज्ञका प्रबन्ध कर रहा हूँ।

अंग्रेजी (एस० एन० १७१०८)की माइक्रोफिल्मसे।

१. देखिए "पत्र: भूपेन्द्रनारायण सेनको", १७-५-१९३१।

२१७. तार : डॉ० मेहताको

नैनीताल
२१ मई, १९३१

डॉ० मेहता
मारफत सर मनुभाई
शिमला

रंगूनके डॉ० मेहताका पुत्र रतिलाल पूर्णतः विक्षिप्त चीखता-चिल्लाता काबूसे बाहर। बाँधकर रखना पड़ता है। राजकोटमें है। आप किसी विशेषज्ञको जानते हों और ठीक समझें तो कृपया उसे राजकोट जाकर रतिलालकी जाँच करनेको कहें। उनकी फीस दी जायेगी। तार द्वारा उत्तर नैनीताल भेजें।

गांधी

अंग्रेजी (एस० एन० १७११५)की माइक्रोफिल्मसे।

२१८. तार : मन्त्री, कांग्रेस कमेटी, चटगाँवको

नैनीताल
२१ मई, १९३१

मन्त्री,
कांग्रेस कमेटी

पूरे तथ्य जाने बिना राय देना नामुमकिन।

गांधी

अंग्रेजी (एस० एन० १७११६)की माइक्रोफिल्मसे।

२१९. पत्र : डॉ० सैयद महमूदको

नैनीताल शिविर
स्थायी पता, साबरमती
२१ मई, १९३१

प्रिय डॉ० महमूद,

मैं जानता हूँ कि आप बहुत ही अधिक उपयोगी काममें लगे हुए हैं। मैं आपके साथ इसपर बहस नहीं करूँगा कि जनतामें काम करनेका सबसे अच्छा तरीका क्या है, भले ही इसका कारण सिर्फ यही हो कि पत्र-व्यवहारके लिए मैं मुश्किलसे चन्द मिनट ही निकाल पाता हूँ। इसलिए मैं इस चर्चाको अपनी मुलाकाततक के लिए मुल्तवी रखता हूँ।

आप देखेंगे कि मैं यह नैनीतालसे लिख रहा हूँ। यहाँ मैंने कल गवर्नरसे मुलाकात की थी। राजस्व सम्बन्धी मामलोंके बारेमें हम किसी भी अन्तिम निष्कर्षपर नही पहुँचे।

अधिक जल्दी नहीं तो दो या तीन दिनमें मैं गुजरात चल दूँगा। मेरा ख्याल है कि हमारी मुलाकात जल्द-से-जल्द अगले महीनेके शुरूमें कार्य-समितिकी बैठकके समय ही हो पायेगी। फिर भी आप चाहें तो और जल्दी भी हो सकती है; [याने] आप जब भी चाहें मिल सकते हैं। आपको पहलेसे समय निश्चित करनेकी तो कोई जरूरत नहीं है; या है ऐसी जरूरत?

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

डॉ० सैयद महमूद
बार-एट-लॉ
छपरा (जिला सारन)
बिहार

अंग्रेजी (जी० एन० ५१०९)की फोटो-नकलसे।

२२०. पत्र : मुहम्मद इस्माइल खाँको

स्थायी पता, साबरमती
२१ मई, १९३१

प्रिय नवाब साहब,

इसी महीनेकी १९ तारीखके आपके पत्रके लिए धन्यवाद। आपने पत्रमें जिस प्रतिवेदनका उल्लेख किया है, उसे मैंने नहीं देखा। लेकिन मेरा अपना दृष्टिकोण यह है:

मेरी अपनी बात तो यह है कि कुल मिलाकर मेरे मुसलमान मित्र जो भी हल पेश करेंगे, मैं बिना किसी संकोचके उसकी ताईद कर दूँगा, लेकिन उसीसे तो हमारी सारी कठिनाइयाँ हल नहीं हो जायेंगी। हमारी कठिनाइयाँ तो तभी हल हो पायेंगी जब हिन्दू और मुसलमान दोनों सिखोंके साथ या फिर हिन्दू लोग मुसलमानों और सिखों दोनोंके साथ बैठकर आपसमें मसले तय कर लें। लेकिन सिखों और मुसलमानों दोनोंके दावोंमें कोई टकराव या विरोध हो तो दोनोंमें से किसीके भी दावेकी मेरी ताईदका कोई महत्व नहीं रह जायेगा। मैं इसीलिए यह मानकर चला हूँ कि मुसलमान मित्रों या सिख मित्रोंकी ओरसे जो भी चीज उनके अपने अन्तिम दावेके रूपमें पेश की जायेगी, उसमें एक-दूसरे पक्षका ख्याल रखा जायेगा। मैं सिर्फ इतना ही चाहता हूँ कि एक ऐसा सम्मानप्रद समझौता हो जाये जो मुसलमानों तथा सिखोंके साथ ही साम्प्रदायिक समझौतेके इच्छुक अन्य सम्प्रदायोंको भी पूर्णतः सन्तुष्ट कर सके।

आपके दूसरे प्रश्नका उत्तर यह है कि यदि भावी संविधान बननेतक मैं जीवित रहा और उसे अमलमें लानेमें मेरा कोई हाथ रहा, तो मैं एक बिलकुल ही राष्ट्रीय हलके अलावा दूसरे किसी हलको स्वीकार नहीं करूँगा और मैं संविधान पर इस ढंगसे अमल करूँगा जिससे लोगोंके सभी सन्देह दूर हो जायें।

यूरोपीयोंकी हदतक सवाल अल्पसंख्यकोंके नाते उनके विशेषाधिकार निश्चित करनेका नहीं, बल्कि यह है कि वे हमारे साथ बराबरीके दर्जेपर आनेके लिए अपने कौन-से विशेषाधिकार छोड़नेके लिए तैयार होंगे। क्या मेरा आशय स्पष्ट है?

आपसे मेरा आग्रह है कि आप विश्वास रखें कि मैं अब भी वही व्यक्ति हूँ जिसे आपने उन दिनों मेरठमें अपना मेहमान बनानेकी कृपा की थी जिन दिनों हम कुछ दिनोंके लिए ही सही अपनेको एक ही माँके बेटे समझने लगे थे, हमारी अभिलाषाएँ समान थीं और हमें एक-दूसरेपर पूरा भरोसा था।

हृदयसे आपका,

नवाब मुहम्मद इस्माइल खाँ साहब
मुस्तफा महल, मेरठ

अंग्रेजी (एस० एन० १७१०७)की फोटो-नकलसे।

२२१. पत्र : महाराजकुमार विजयनगरम्‌को

स्थायी पता, साबरमती
२१ मई, १९३१

प्रिय मित्र,

आपके पत्रके लिए धन्यवाद। मैं 'यंग इंडिया' के पृष्ठोंमें इस विषयकी चर्चा करनेकी बात सोच रहा हूँ; इसलिए आपको ब्यौरेवार उत्तर भेजनेकी जरूरत नही है।

हृदयसे आपका,

महाराजकुमार साहब विजयनगरम्
विजयनगर महल, बनारस

अंग्रेजी (एस० एन० १७१०८-अ)की माइक्रोफिल्मसे।

२२२. पत्र : मन्त्री, कांग्रेस कमेटी, चटगाँवको

स्थायी पता, साबरमती
२१ मई, १९३१

मन्त्री
कांग्रेस कमेटी
चटगाँव

प्रिय महोदय,

मैंने आपके तारके उत्तरमें निम्नलिखित तार भेजा है:

"पूरे तथ्य जाने बिना राय देना नामुमकिन।"[1]

मैं कह सकता हूँ कि समझौतेके बादके कालमें की गई किसी भी कार्रवाईके सिलसिलेमें कोई जुर्माना करना समझौतेका उल्लंघन नहीं होगा और न ऐसा जुर्माना अदा करनेसे इनकार करना ही समझौतेका उल्लंघन होगा। मैं यह राय अबतककी जानकारीके आधारपर दे रहा हूँ; बादमें पूरे तथ्य मिलनेपर इसे बदलना भी जरूरी हो सकता है। लेकिन कर अदा न करनेका आन्दोलन छेड़नेवालोंको हर पहलू पर पूरी तरह विचार करनेके बाद ही और वह भी पूरी तरह अपनी ही जिम्मेदारी पर ऐसा कदम उठाना चाहिए।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजी (एस० एन० १७१०९)की माइक्रोफिल्मसे।

१. देखिए शीर्षक २१८।

२२३. पत्र : एस० जी० वझेको

स्थायी पता, साबरमती
२१ मई, १९३१

प्रिय वझे,

वार्षिकीके अवसरपर आप कभी एक बार भी मुझे आमन्त्रित करनेसे नहीं चूके और मैं हूँ कि एक बार भी समारोहमें शामिल नहीं हो सका। लेकिन मुझे विश्वास है कि एक बार भी शामिल न हो सकनेके इस तथ्यका कोई भी सदस्य यह अर्थ नही लगायेगा कि मैं अपने-आपको आप लोगोंमें शुमार नहीं करता। हमारे विचार चाहे एक-दूसरेसे सर्वथा भिन्न हों, चाहे हम एक ही मंचपर साथ-साथ काम करते न दिखाई पड़ते हों, पर मुझे हमेशा यही लगता रहा है कि हमारे दिल एक हैं, क्योंकि हम एक ही गुरुके शिष्य हैं।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत एस० जी० वझे
सर्वेंट्स ऑफ इंडिया सोसाइटी
पूना

अंग्रेजी (एस० एन० १७१११)की फोटो-नकलसे।

२२४. पत्र : कृष्णदासको

स्थायी पता, साबरमती
२१ मई, १९३१

प्रिय कृष्णदास,

मैं तुम्हारी लिखावटसे चिर परिचित हूँ और इसलिए कह सकता हूँ कि तुमने उल्लेखनीय प्रगति कर ली है। पहले-जैसी शक्ति फिर हासिल करनेमें जल्दबाजी मत करना। बुखार एकदम खत्म हो जाना चाहिए। इस भयंकर बीमारीके बाद तुमको पहलेसे अधिक शक्तिशाली बन जाना चाहिए। नियमित रूपसे मुझे लिखते रहना। हम सब ज्यादा-से-ज्यादा रविवारतक यहाँसे बोरसदके लिए चल देंगे।

श्री कृष्णदास
शक्ति आश्रम
डाकखाना राजपुर
(जिला देहरादून)

अंग्रेजी (एस० एन० १७११२)की माइक्रोफिल्मसे।

२२५. पत्र : जयरामदास दौलतरामको

स्थायी पता, बोरसद
२१ मई, १९३१

प्रिय जयरामदास,

संलग्न पत्र देखिए। आवश्यक कार्रवाई कीजिए और मुझे बताइए कि इसका लिखनेवाला कौन है। क्या ये आरोप सही हो सकते हैं?

श्री जयरामदास दौलतराम
स्वराज्य आश्रम
बारडोली।

अंग्रेजी (एस० एन० १७११३)की माइक्रोफिल्मसे।

२२६. पत्र : ए० फेनर ब्रॉकवेको

स्थायी पता, साबरमती
२१ मई, १९३१

प्रिय श्री ब्रॉकवे,

स्पष्ट है कि आपने अपने मनमें निश्चित कर लिया है कि मैं लन्दन आ रहा हूँ। लेकिन मुझे अबतक ऐसा कोई लक्षण दिखाई नहीं दे रहा है जिसके आधार पर मैं आशा भी कर सकूं कि आपसे शीघ्र ही मुलाकात होगी। हाँ, यदि आया तो सचमुच मुझे आपकी संस्थाके सदस्योंसे मिलकर अनौपचारिक रूपसे दिल खोलकर बात करनेपर बड़ी प्रसन्नता होगी।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

श्री ए० फैनर ब्रॉकवे
१२६, शेफर्ड्स बुश रोड
लन्दन वेस्ट–६

अंग्रेजी (एस० एन० १७११४)की फोटो-नकलसे।

२२७. भाषण : राजनीतिक पीड़ितोंके सम्मेलनमें

कुमायूँ
[२१ मई, १९३१][१]

आपने मूलभूत अधिकारोंके सम्बन्धमें कांग्रेस द्वारा स्वीकृत प्रस्ताव देख लिया होगा।[२] उसमें सेना-सम्बन्धी व्ययको घटाकर आधा करने-जैसी चन्द बातें ऐसी भी हैं जिनको स्वराज्यके बाद ही हासिल किया जा सकता है; लेकिन अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा, विदेशी वस्त्रोंपर प्रतिबन्ध, अधिकारों और अवसरोंके मामलेमें समानता जैसी कुछ अन्य चीजें हैं जिनको पूरा करनेके लिए हमें स्वराज्य-प्राप्तितक नहीं रुकना पड़ेगा। ये परिस्थितियाँ हमें आज ही पैदा करनी चाहिए; इससे हमें स्वराज्यके ओर निकट पहुँचनेमें सहायता मिलेगी। हम प्रत्येक गाँवमें पाठशालाएँ खोल सकते हैं, खद्दर तैयार कर सकते हैं, उसे बढ़ावा दे सकते हैं और अस्पृश्यताके विरुद्ध संघर्ष कर सकते हैं।

(यहाँ गांधीजीने 'यंग इंडिया' के एक पुराने अंकमें प्रकाशित अधिकारपत्रको सामने रखकर क्रमसे उसके एक-एक मुद्देका उल्लेख किया।)

सरकारी अधिकारियोंके अधिकतम-वेतनका उल्लेख करते हुए महात्माजीने कहा :

यह मत समझिए कि यह कोई कोरा कागजी प्रस्ताव है और इसपर अमल नहीं होना है। स्वराज्य मिलनेपर इसे प्रभावी बनाया जायेगा। पूरी तरह विचार करनेके बाद ही इसे अधिकार-पत्रमें जोड़ा गया था। मैं बूढ़ा हूँ, पर मेरे न रहने पर भी जवाहरलाल इसपर अवश्य अमल करेगा। लेकिन यह मानकर चलना न्यायपूर्ण नहीं कि बूढ़े लोग युवकोंसे पहले मर ही जाते हैं, क्योंकि यह ईश्वरीय नियम नहीं है। मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि इसे लागू किया जायेगा। जापान एक स्वतन्त्र देश है। वहाँ सरकारी अधिकारियोंका अधिकतम वेतन पाँच-सौ रुपये निश्चित कर दिया गया है।

हमारे देशमें प्रतिव्यक्ति औसत आय लगभग चालीस रुपए है और इसमें हजारों करोड़पतियोंकी आय भी शामिल है। इसलिए पाँच सौ रुपएसे अधिक खर्च करनेवाला व्यक्ति लूटके धनपर जीता है। यह राशि हमें अपर्याप्त इसलिए लगती है कि विदेशियोंके शोषण और उनके रहन-सहनको देखकर हम उनकी नकल करना चाहते हैं।

१. **हिन्दू**, २१-५-१९३१ से।

२. देखिए खण्ड ४५, पृष्ठ ३९४-९५।

कहा गया है कि वकील और उद्योगपति पाँच-सौ रुपए मासिकसे अधिक कमायेंगे। मैं कहता हूँ कि उनको पाँच-सौसे अधिक नहीं कमाना चाहिए। इस देशमें अगर वे पाँच-सौसे अधिक कमाते हैं, तो वे लूटपर जीवित रहते हैं। वह अतिरिक्त राशि उनको देशको लौटा देनी चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दुस्तान टाइम्स, ३१-५-१९३१

२२८. तार: वाइसरायको

[२२ मई, १९३१ को या उसके पूर्व][1]

महत्त्वपूर्ण

संयुक्त प्रान्तके गवर्नर महोदयके जरिए और बादमें सीधे आपकी ओरसे मिले आपके २१ तारीखके तारके लिए मैं आभारी हूँ। इस विषयके सिलसिलेमें और जिम्मेदार राजनीतिज्ञोंके सामने यह स्पष्टीकरण करनेके लिए भी मुझे लन्दन जानेमें . . .[2] . . . होना चाहिए कि कांग्रेस भारतकी स्वतन्त्रताके लिए आग्रह करनेके साथ यह भी चाहती है कि इंग्लैंडकी जनताके साथ उसके सम्बन्ध अधिक-से-अधिक मैत्रीपूर्ण रहे। लेकिन आपको जो कारण बतलाये जा चुके हैं, उनके ख्यालसे मैं गोलमेज परिषद्में भाग लेनेमें असमर्थ हूँ। दूसरोंके विचार सुनने और माननेके लिए तैयार होते हुए भी मेरी अब भी यही राय है कि साम्प्रदायिक समझौता हुए बिना मेरा परिषद्की बैठकमें भाग लेना उपयोगी नहीं होगा। और फिर सरकार तथा कांग्रेसके बीच समझौता सम्पन्न करानेकी सीधी जिम्मेदारी जब मुझपर ही है तब उसकी कार्यान्वितिके सिलसिलेमें इतनी झंझटें होते हुए मैं भारतसे बाहर कदम कैसे रख सकता हूँ? कांग्रेस की ओरसे अब भी एकमात्र प्रतिनिधि मैं ही हूँ।

गांधी

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ९३६७)की फोटो-नकलसे।
सौजन्य: इंडिया ऑफिस लाइब्रेरी

१. भारत-मन्त्रीके नाम वाइसरायके २२ मई, १९३१ के तारसे उद्धृत।
२. साधन सूत्रमें यह स्थान रिक्त है।

२२९. तार: जमनादास गांधीको

थाकुला, नैनीताल
२२ मई, १९३१

जमनादास गांधी
राजकोट

थानांके डाक्टर कदम राजकोट पहुँचेंगे। रतिलालकी जाँच करके आवश्यक चिकित्सा करेंगे। उनसे सम्पर्क करना।

बापू

अंग्रेजी (एस० एन० १७१२२)की माइक्रोफिल्मसे।

२३०. तार: रामभरोसेलालको

थाकुला, नैनीताल
२२ मई, १९३१

रामभरोसेलाल
मारफत अरथधर
बर्दवान

पण्डित गोविन्दवल्लभ पन्तके पास पूरा ब्योरा भेज दीजिए।

गांधी

अंग्रेजी (एस० एन० १७१२३)की माइक्रोफिल्मसे।

२३१. तार : मोहनलाल सक्सेनाको

थाकुला, नैनीताल
२२ मई, १९३१

मोहनलाल सक्सेना
मारफत कांग्रेस
लखनऊ

भूख-हड़ताल बिलकुल ही अनावश्यक लगती है। उच्च समितियोंके निर्णयों का, फिर वे सही हों या गलत, पालन होना चाहिए।

गांधी

अंग्रेजी (एस० एन० १७१२५) की माइक्रोफिल्मसे।

२३२. भेंट : पत्र-प्रतिनिधियोंको

नैनीताल
२२ मई, १९३१

महात्मा गांधीने आज एसोसिएटेड प्रेसके प्रतिनिधिसे भेंटके दौरान कहा कि लन्दन जानेकी अपनी योजनाके बारेमें वे अभी कोई बयान देनेमें असमर्थ हैं। लन्दनमें २९ जूनको होनेवाली संघीय गठन समिति[1] (फेडरल स्ट्रक्चर कमेटी) की बैठकके सम्बन्धमें वे अपने विचार भारत सरकारको बतला ही चुके हैं, और बात अभी वहीं तक है।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दुस्तान टाइम्स, २४-५-१९३१

१. राजाओं समेत अन्य प्रतिनिधि १३-६-१९३१ को रवाना होनेको राजी हो गये थे।

२३३. तार: वी० एस० श्रीनिवास शास्त्रीको[1]

थाकुला, नैनीताल
२३ मई, १९३१

शास्त्री
मारफत कैलोफ[2]
लन्दन

संयुक्त रूपसे भेजा आपका कृपापूर्ण तार। देशमे साम्प्रदायिक समस्याका कोई हल न पाकर गोलमेज परिषद्में शामिल होने लायक आत्मविश्वास नहीं। फिर समझौतेके प्रति कुछ प्रान्तीय सरकारोके रुखके कारण मेरा भारतसे जाना यदि असम्भव नही, कठिन तो हो ही गया है; लेकिन सन्तोषप्रद कामचलाऊ समझौता हो सके और मुझे चर्चा तथा कांग्रेसकी नीतिका स्पष्टीकरण करनेके लिए आमन्त्रित किया जाये तो मैं अल्पकालीन सूचना पर भी खुशीसे जहाज पकड़नेको तैयार हूँ।

गांधी

[अंग्रेजीसे]

अ० भा० कां० क० फाइल संख्या २७३, १९३१।
सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

२३४. पत्र: सर मॉल्कम हेलीको

थाकुला, नैनीताल
२३ मई, १९३१

प्रिय मित्र,

मैंने अब अपनी फौरी जाँच पूरी कर ली है। नैनीताल आ सकनेवाले ताल्लुके-दारोंसे मशविरा लेनेका भी फायदा मुझे मिल गया था। मुझे लगता है और आप

१. वी० एस० श्रीनिवास शास्त्री, सी० एफ० एन्ड्रयूज और एच० एस० एल० पोलक द्वारा संयुक्त रूपसे भेजे गये तारके उत्तरमें। तार इस प्रकार था: "...यदि अल्पसंख्यक जातियोंकी समस्याका भारतमें तुरन्त कोई समाधान नहीं निकलता, तो हमारा सुझाव है कि उसपर यहाँ अधिक अच्छे वातावरणमें विचार किया जाये। यदि सभी उपाय निष्फल सिद्ध हो जायें तो अन्तिम उपायके तौरपर निष्पक्ष मध्यस्थताका अवलम्बन अब भी सम्भव। इसलिए हमारा पूर्ण विश्वास है कि यहाँ शीघ्रातिशीघ्र पहुँचनेके आपके निर्णयकी तुरन्त घोषणा कर देना अनिवार्य हो गया है।..."

२. हेनरी पोलकका तारका पता।

भी मेरी इस बातसे शायद सहमत होंगे कि किसानोंका कुछ मार्ग-दर्शन तो मुझे करना ही चाहिए। सरकार उनको जितनी राहत देनेकी बात कह रही है, उसे काफी मान लेनेके लिए तो उनसे मै कह नहीं सका। मैंने जितनी भी जाँच की है, उससे यही पता चलता है कि किसानोंकी इस असाधारण स्थितिको देखते हुए यह राहत बिलकुल ही नाकाफी है। इसलिए मै अब वह कदम उठाना चाहता हूँ जो मैं समझता हूँ कि समुचित राहतके अभावमें अन्य सभी बातोंसे अच्छा रहेगा। चूँकि सरकारने मेरे प्रस्तावोंमें से किसीपर भी अमल नहीं किया है, इसलिए मैं अब किसानोंसे यही कहने जा रहा हूँ कि कमसे-कम जितनी अदायगी मैं ठीक मानता हूँ, उतनी अदायगी तो वे जरूर कर दें, और अगर किसीके पास गुंजाइश हो और वह चाहे तो उससे ज्यादा अदायगी भी कर सकता है। इसीके अनुरूप मैंने एक घोषणापत्र[1] तैयार किया है। उसकी एक प्रति मै संलग्न कर रहा हूँ। यदि आप समझें कि इसके प्रकाशनसे सरकारको कोई परेशानी होगी और यदि आप मुझे कोई और अच्छा मार्ग सुझा सकें, और उसे अपनाना मेरे लिए सम्भव हुआ तो मै बड़ी खुशीसे उसे अपना लूँगा या यदि आप इस सिलसिलेमें मुझे मुलाकातके लिए बुलाना चाहें, तो मैं बड़ी खुशीसे आ जाऊँगा।

यदि आपका कोई और प्रस्ताव न हो, तो मैं आज दोपहर बाद ३ बजे नैनीतालसे चल दूँगा।[2]

मैं हूँ,
हृदयसे आपका,

संलग्न : १

महामहिम सर मॉल्कम हैली
गवर्नर संयुक्त प्रान्त, नैनीताल

[अंग्रेजीसे]

अ० भा० कां० क० फाइल-संख्या १६-ई, १९३१
सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

१. देखिए अगला शीर्षक।
२. सर मॉल्कम हेलीके उत्तरके लिए देखिए परिशिष्ट ८।

२३५. संयुक्त प्रान्तके किसानोंसे

नैनीताल
२३ मई, १९३१

गत संघर्षमें पूर्ण स्वराज्यकी प्राप्तिके लिए सविनय अवज्ञाके अंगरूप कुछ जिलोंमें करबन्दी आन्दोलन शुरू किया गया था। पर सरकार और कांग्रेसके बीच समझौता हो जानेके कारण सत्याग्रह और फलतः करबन्दी भी स्थगित कर दी गई।

उस समय आप लोग घोर आर्थिक कष्टमें थे। यों तो आपकी हालत साधारण समयमें भी कठिन ही रहा करती है, परन्तु इस वर्ष वह अत्यधिक खराब हो गई है, क्योंकि जो फसल आप हर साल बोते है, उसकी दर इस बार असाधारण रूपसे घट गई है। कांग्रेसी कार्यकर्त्ताओंने मुझे लिखा कि आपमे से बहुतेरे पूरा लगान चुकानेमें बिलकुल असमर्थ है। कई जिलोंमें कुछ सौ गाँवोंमें जाँच की गई, जिससे पता चला कि स्थिति भयावह है। यह पाया गया कि आपकी कुछ पैदावारके दाम इतने घट गये हैं कि उसकी बिक्रीसे लगान अदा करने जितनी रकम भी नहीं मिल सकती। इसी सिलसिलेमें मैं गवर्नरसे मिलने नैनीताल आया था। उन्होंने धैर्यपूर्वक मेरी बातें सुनी और हमने परिस्थितिपर पूरी तरह चर्चा की। उनका रुख सहानुभूतिपूर्ण था। मैंने उनसे कहा कि कुछ कांग्रेसी कार्यकर्त्ताओंने मुझे विश्वास दिलाया है कि इधर सरकारने किसानोंके साथ रियायतें करनेकी जो सूचनाएँ निकाली हैं, वे उनके वास्तविक कष्टको दूर करनेके लिए काफी नही हैं। मैंने उनके सामने कुछ प्रस्ताव रखे, जिनपर उन्होंने विचार करनेका वचन दिया।

इस दरम्यान मेरा यह कर्त्तव्य था कि मैं आपको अपनी शक्तिके अनुसार कुछ सलाह दूँ। कई साथियोंके साथ स्थितिकी चर्चा करते हुए मैंने घंटों इसी चिन्तामें बिताये हैं। मुझे उन कुछ प्रमुख ताल्लुकेदारोंसे निःसंकोच भावसे साफ-साफ बातें करनेका भी लाभ मिला, जिन्होंने मेरा निमन्त्रण पाकर आनेकी कृपा की थी। मुझे यह कहते हुए हर्ष होता है कि जो सुझाव नीचे दिये जाते हैं, साधारणतया वे उनसे सहमत थे।

अन्य जिलोंके अलावा नीचे लिखे जिलोंमें संगठित काम किया गया था: आगरा, मथुरा, इलाहाबाद, रायबरेली, गोरखपुर, कानपुर, लखनऊ, प्रतापगढ़, और इटावा। इन जिलोंके सम्बन्धमें यह पाया गया है कि फसली सन् १३३८ में हयाती और गैर-दखीलकार काश्तकारोंको रुपयेमें आठ आने और दखीलकार काश्तकारोंको रुपयेमें चार आनेकी माफी मिलनी चाहिए। इस साधारण नियममें स्थानीय परिस्थितिके अनुसार आवश्यक हेरफेर किये जा सकते हैं।

मुझसे कहा गया है कि कुछ जिलोंमें काश्तकारोंकी स्थिति ऐसी है कि वे कम माफीसे भी काम चला सकते हैं। कुछ जिलोंमें स्थानीय आपत्तिके कारण परिस्थिति

और भी बिगड़ गई है। इसलिए प्रस्तावित माफीकी शर्त स्वभावतः उन जिलोंपर लागू नही होगी, जो बताई हुई रकमसे अधिक दे सकते हैं, और न उन्ही जिलोंमें लागू होगी, जिनकी स्थिति उपर्युक्त जिलोंसे भी बदतर है। अवश्य ही, जिन जिलोंका ऊपर जिक्र किया गया है, उनमें भी आपमें से जो अधिक चुका सकते हों, उन्हें अवश्य चुकाना चाहिए। कांग्रेस आशा रखती है कि हरएक काश्तकार अपनी शक्ति-भर लगान जल्दी से-जल्दी अदा कर देगा, और साधारण नियमानुसार कोई भी रुपयेमें अठन्नी या चवन्नीसे,[1] जैसी भी स्थिति हो, कम अदा न करेगा। परन्तु जिस तरह एक ही जिलेमें ऐसे स्थान हो सकते हैं, जहाँ अधिक लगान चुकाया जा सकता है, उसी तरह यह भी सम्भव है कि कुछ स्थान ऐसे भी होंगे, जहाँ रुपयेमें अठन्नी या चवन्नीसे[2] भी कम ही अदा किया जा सकता है। मुझे आशा है कि ऐसे मामलोंमें जमींदार काश्तकारोंके साथ उदारतापूर्वक व्यवहार करेंगे।

हर हालतमें आप इसका ध्यान रखें कि जितना आप दें, चालू सालके लिए उतनेकी आपको चुकता रसीद मिल जाये। मुझे पता चला है कि संघर्षके दौरान कई काश्तकार बेदखल कर दिये गये थे और कुछ बादमें भी बेदखल किये गये हैं। यदि उन्हें उनकी जमीनें वापस न दी गई तो परिणाम स्पष्ट ही उस वातावरणके विपरीत होगा, जो समझौतेके अनुसार पैदा किया जा रहा है। अतएव मुझे पूरी आशा है कि यहाँ बताये हुए हिसाबसे लगान अदा कर देनेपर बेदखल काश्तकारोंको बिना किसी प्रकारके जुर्मानेके उनकी जमीनें वापस दे दी जायेंगी।

मुझे आशा है कि आप लोग तुरन्त लगान अदा करना आरम्भ कर देंगे। आप पूरा आठ आना लगान इसी समय न दे सकते हों, तो आपका लगान मुल्तवी हो जायेगा, और अगली फसल तक बाकी रकम या करकी वसूलीके लिए आपके साथ किसी तरहकी सख्ती न की जायेगी।

मैं सरकारको यह सलाह देना चाहता हूँ कि आप लोगोंसे पूरा लगान न मिलनेके कारण जमींदारोंकी आमदनीमें जो कमी हो जायेगी, उसके विचारसे वह उनसे ली जानेवाली मालगुजारी भी उसी अनुपातमें घटा दे।

अन्तमें मैं आपको एक सलाहके बारेमें सावधान कर देना चाहता हूँ; यदि आपको ऐसी सलाह मिली हो कि अब आपको जमीदारको लगान देनेकी जरूरत ही नही तो मुझे आशा है कि आपको कोई भी यह सलाह क्यों न दे, आप उसपर ध्यान न देंगे। कांग्रेसवाले तो ऐसी सलाह दे ही नही सकते। हम जमीदारोंको नुकसान पहुँचाना नहीं चाहते। सम्पत्तिका नाश हमारा उद्देश्य नहीं है, हम केवल यह चाहते हैं कि उसका न्यायसंगत उपभोग किया जाये।

मुझसे कहा गया है कि आप कांग्रेसकी बात तभी मानेंगे, जब कांग्रेसवाले आप को बिलकुल लगान न देनेकी सलाह देंगे और यदि कांग्रेसने आपको अपनी शक्तिके

१ और २. यहाँ बारह आने होना चाहिए था। देखिए "भूल सुधार", ११-६-१९३१

अनुसार लगान देनेकी सलाह दी, तो आप उसपर ध्यान नही देंगे। यह ऐसा समय है, जब आप अपने बारेमें फैले हुए इस अपवादको झूठा साबित करें।

आपने कुछ जमींदारों द्वारा या उनकी ओरसे किये गये कठोर व्यवहारकी शिकायत की है। कांग्रेस आपकी सब शिकायतोंके बारेमें जाँच-पड़ताल करनेकी कोशिश कर रही है, और बराबर करेगी, और जमींदारोंसे आपकी वकालत भी करेगी, और जहाँ कानूनी राहत अनिवार्य जान पड़ेगी, वहाँ उसकी सिफारिश भी करेगी। पर यह बात भी स्वीकार करनी होगी कि कभी-कभी कुछ किसान भी गलत रास्तेपर चले गये हैं, और घातक आक्रमण कर बैठे हैं। ऐसी कार्रवाइयोंसे किसानोंकी विमल कीर्तिको कलंक लगता है, उनके कार्यको हानि पहुँचती है, और सेवाके लिए कांग्रेसकी उपयोगिता कम होती है। क्योंकि अन्तमें तो आप लोग ही कांग्रेस हैं। कांग्रेस जब तक आपकी अधूरी प्रतिनिधि है, वह अपूर्ण ही रहेगी।

कृपा कर याद रखिये कि कांग्रेस सत्य और अहिंसा द्वारा पूर्ण स्वराज्य प्राप्त करना चाहती है। जिस हदतक किसान इन दो मुख्य सिद्धान्तोंके पालनमें पीछे रहेंगे, उसी हदतक कांग्रेस भी असफल होगी। आप लाखोंकी तादादमें हैं। जब लाखों व्यक्ति झूठे और हिंसक बन जाते है, तो आत्मनाश निकट आ जाता है। अतएव आप बिना हाथ उठाये चोट सह लें। शायद अबतक आप यह तो सीख चुके होंगे कि चोटका प्रतिकार करनेका सबसे अच्छा उपाय चोट करनेवाले को कभी चोट न पहुँचाना है; हाँ, उसकी अनुचित आज्ञाका पालन करनेसे हमें हमेशा इनकार करना चाहिए; फिर वैसा करनेसे हमें कितना ही कष्ट क्यों न सहना पड़े।

आपका मित्र और सेवक,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, २८-५-१९३१

२३६. पत्र : सर मॉल्कम हेलीको

२३ मई, १९३१

प्रिय श्री हेली,

इटावाके मामलेमें, जिसके सन्दर्भमें कहा गया था कि कांग्रेसके मन्त्रीने समझौते की घोषणा की तिथिके बाद किसानोंके नाम एक गश्ती-चिट्ठी जारी की थी कि वे लगानकी कोई भी अदायगी न करें, मैंने पूरी जाँच कर ली है। पता लगा है कि ऐसी एक गश्ती-चिट्ठी पिछली फरवरीमें घुमाई गई थी, समझौतेके बाद ऐसा कुछ भी जारी नही किया गया। बल्कि इसके विपरीत, प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीकी ओरसे प्रान्त-भरमें एक आम सूचना जारी की गई थी कि कर अदा न करनेका आन्दोलन वापस ले लिया गया है। मुख्य सचिवने इस मामलेकी ओर पण्डित गोविन्दवल्लभ पन्तका ध्यान आकर्षित किया था और उन्होंने सूचना मिलते ही उसी दिन जाँच-

पड़ताल की थी। कांग्रेस मन्त्री बाबू गयाप्रसादने उत्तरमें उपर्युक्त जानकारी तुरन्त भेज दी थी। और अब तो वे इटावाकी स्थानीय समितिके महामन्त्रीके पदपर हैं भी नहीं। यह पता लगाना सचमुच बड़ा दिलचस्प रहेगा कि वैसी चिट्ठी पुलिसके हाथों कैसे लगी और उससे पुलिसने यह निष्कर्ष कैसे निकाल लिया कि उसे समझौते की तिथिके बाद घुमाया जा रहा था।[1]

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

अ० भा० कां० क० फाइल संख्या १६-ई, १९३१।
सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

२३७. भाषण: जमींदारोंकी सभा, नैनीतालमें[2]

[२३ मई, १९३१][3]

निश्चय ही कांग्रेस आपका साथ देगी। पर आपको भी अपना जीवन अपने चारों ओरके वातावरणके अनुरूप बनाना पड़ेगा। कुछ वर्ष पहले मैं बंगालके एक जमीदारका मेहमान बना था। वे मुझे सोनेके गिलासों और तश्तरियोंमें दूध और फल परोसा करते थे। जाहिर है, मेरे भले मेजबानका यही ख्याल था कि वे अपनी सबसे कीमती तश्तरियोंमें भोजन परोसकर मुझे बड़ेसे-बड़ा सम्मान दे रहे थे। उनको नहीं मालूम था कि उस समय मैं क्या सोच रहा था। 'इनको सोनेकी तश्तरियाँ मिली कहाँसे?'— मैंने अपने-आपसे पूछा और मुझे उत्तर यही मिला — 'रैयतकी सम्पत्तिसे।' तब फिर उन बेशकीमती विलास-वस्तुओंके साथ मैं अपनी पटरी कैसे बैठा सकता था? अगर आपकी रैयत चाँदीकी तश्तरियाँ इस्तेमाल करने लायक हो तो सोनेकी तश्तरियोंके आपके इस्तेमालपर मुझे कोई आपत्ति न होती, लेकिन जब उनका जीवन कष्टोंकी एक लम्बी कहानी बनकर रह गया है, तब आप ऐसी विलास-वस्तुओंका इस्तेमाल करनेकी हिम्मत ही कैसे कर सकते हैं? आपको याद होगा कि पन्द्रह वर्ष पहले हिन्दू विश्वविद्यालयके उद्घाटनके अवसरपर मैंने राजा-महाराजाओंकी शान-शौकतका जिक्र किया था और उससे उनको कितनी ठेस पहुँची थी; और उससे पूरा हंगामा ही मच गया था।[4] मेरे विचार आज भी वही हैं। हाँ,

१. सर मॉल्कम हेलीने दिनांक २९-५-१९३१ के अपने पत्रमें इन तथ्योंकी पुष्टि की और गलत समाचारके कारण हुई असुविधाके लिए खेद प्रकट किया था।

२. महादेव देसाईकी "साप्ताहिक चिट्ठी" से उद्धृत।

३. **हिन्दुस्तान टाइम्स**, २५-५-१९३१ से।

४. देखिए खण्ड १३, पृष्ठ २१३-१६।

दीन-हीनोंके बीच रहने और उनके जीवनका अनुभव प्राप्त करनेसे मेरे उन विचारोंमें और अधिक दृढ़ता अवश्य आ गई है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २८-५-१९३१

२३८. पत्र : वी० एस० श्रीनिवास शास्त्रीको

[२३ मई, १९३१ के पश्चात्][१]

प्रिय भाई,

आपका मर्मस्पर्शी तार मिला था। आपकी उद्विग्नता कम करनेके लिए मैं एक उत्तर भेज चुका हूँ। मैं गोलमेज परिषद्से कतरा नहीं रहा हूँ, पर मेरे सामने जो कठिनाइयाँ हैं उनको पत्रके माध्यमसे आपको समझाना मुमकिन नहीं है। प्रान्तीय सरकारें समझौतेको पैरों तले रौंद रही हैं। दमनकी नोक फिर चुभने लगी है। यदि आप 'यंग इंडिया' के पृष्ठोंको गौरसे देखें तो मेरा तात्पर्य कुछ हदतक स्पष्ट हो जायेगा। यहाँ जो भी कुछ हो रहा है, उसका दशमांश भी मैंने अभी प्रकाशित नहीं किया है। तब प्रश्न उठता है: यहाँ संकटके बादल मँडरा रहे हैं, उस समय क्या मैं भारत छोड़कर जा सकता हूँ? पर शिमलासे मैं सम्पर्क बनाये हुए हूँ।

[अंग्रेजीसे]

लेटर्स ऑफ श्रीनिवास शास्त्री

२३९. टिप्पणियाँ

धरनेके बारेमें

दो पत्रोंमें से नीचे लिखे प्रश्न चुनकर दिये जा रहे हैं:

१. क्या मोहरबन्द कपड़ेकी मोहर तोड़नेवालेके यहाँ धरना देकर उपवास किया जा सकता है?

२. क्या शान्तिपूर्ण धरनेमें उपवासको स्थान है?

३. जिनके यहाँ शान्तिपूर्ण धरना दिया जाता है, वे न मानें, तो क्या उनका सामाजिक बहिष्कार किया जा सकता है?

४. व्यापारी नया विदेशी कपड़ा न मँगानेकी प्रतिज्ञा करे और पुराना बिक चुका हो, तो क्या धरना उठा लिया जाये?

१. प्रेषितीके तारके उत्तरके उल्लेखसे; देखिए "तार: वी० एस० श्रीनिवास शास्त्रीको", २३-५-१९३१।

५. जो विदेशी और देशी दोनों तरहके कपड़े बेचते हों, क्या उनके यहाँ धरना दिया जा सकता है?

६. जिन्होंने अपने विदेशी कपड़ेपर मोहर लगवाई है और मोहर तोड़नेपर कोई निश्चित जुर्माना देना स्वीकार किया है, यदि अब वे मोहर तोड़ें, और जुर्माना न दें, तो क्या उनके यहाँ धरना दिया जाये और उनका बहिष्कार किया जाये?

इनके जवाब ये हो सकते हैं:

१. उपवास उन्हींके प्रति किया जा सकता है, जिनका धरनादेनेवालों के साथ निकटका सम्बन्ध है, जिन्होंने इस सम्बन्धके प्रेमको मानकर प्रतिज्ञा की हो, और फिर उसे तोड़ा हो।

२. पहली बातमें इसका जवाब भी आ जाता है।

३. सामाजिक बहिष्कारका अर्थ अगर धोबी, नाई, वैद्य वगैरा बन्द करना हो तो वह नहीं किया जा सकता। परन्तु विवाहादिके अवसरपर उनके घर दावत वगैरामें जाना बन्द किया जा सकता है; और करना चाहिए। सारांश यह है कि उन्हें कष्ट न दिया जाये। हम उनके यहाँ खाने न जायें, इससे उन्हें दुःख हो तो वह कष्ट नहीं माना जा सकता।

४. उनकी प्रतिज्ञाके विषयमें विश्वास हो तो धरना उठा लेना धर्म है।

५. अवश्य।

६. जुर्माना न देनेपर धरना न दिया जाये, परन्तु विदेशी वस्तु बेचनेपर धरना दिया जाना चाहिए। बहिष्कारके बारेमें चौथा[1] जवाब देखिए। धरना अर्थात् दुराग्रह नही किया जा सकता।

बहिष्कारका एक लाभ

प्राप्त पत्रोंमें से नीचे एक उद्धरण दे रहा हूँ:[2]

मै आशा रखता हूँ कि ये बहनें विदेशी छोड़कर खादी पहनने लगी होंगी। वे ऐसा करने लगी हों या न करने लगी हों, मुद्देकी बात तो यह है कि विदेशीके बहिष्कारके साथ ही इन बहनोंमें सादगी आ गई। सबका अनुभव है कि विदेशी वस्तुओंके उपयोगके साथ ही विलासकी प्रवृत्ति बढ़ जाती है, और यह ख्याल बनने लगता है कि कपड़े शरीर ढकनेके लिए नहीं बल्कि शोभाके लिए हैं। हमारे अखबार अभी "फैशन"से भरे नहीं होते, परन्तु अंग्रेजी अखबारोंको देखें तो मालूम होगा कि उनमें "फैशन" शीर्षकसे नित नये प्रकारकी पोशाकोंके चित्र और उनके मनोरंजक वर्णन दिये जाते हैं।

१. यहाँ शायद 'तीसरा' होना चाहिए था।

२. नहीं दिया जा रहा है। इसमें घरकी स्त्रियोंके स्वदेशीको अपनानेके कारण घरका जो खर्च बच रहा था, उसका विवरण था।

विदेशी वस्त्रके त्यागके साथ ही झूठी शोभाका मोह दूर होता है, और इस कारण खादी महँगी होते हुए भी सस्ती पड़ती है। घरमें पहननेकी, घूमने जानेकी, मुलाकातकी, देव-दर्शनकी, यों रोज पहननेकी चार-पाँच साड़ियाँ रखनेवाली कोई बहन जब खादीकी एक साडीसे काम चला लेती है, तो सहज ही बहुत बचत हो जाती है। मलमलका १२ गजी साफा बाँधनेवाला जब आधे गजकी खादीकी टोपी पहनने लगता है तो खादीके चाहे जितनी महँगी होने पर भी वह आसानीसे बचत कर लेता है।

व्यापारियोंका मिथ्याचार

एक अनुभवी सज्जन शिकायत करते हैं :

> **किसी भी तरह विदेशी कपड़ा बेचनेकी गरजसे व्यापारी लोग विदेशी मालको मिलोंमें रँगवाते हैं, छपवाते हैं, और देशी मालके नामसे बेचते हैं। आप इसका मुकाबला कैसे करेंगे?**

यह कोई नयी बात नहीं। यदि व्यापारियोंने देश-हितका ही विचार किया होता तो वे विदेशी कपड़ा कभी मँगवाते ही नही। व्यापार-मात्रमें अधिकतर झूठका सहारा लिया जाता है। कपड़ेके व्यापारी हमारी नजरमें आ जाते हैं, क्योंकि उनका व्यापार व्यापक है और एक भारी भयावने अजगरकी तरह हिन्दुस्तानसे लिपटा हुआ वह धीरे-धीरे, उसे कुचले डाल रहा है। इस फन्देसे कोई बच नही सकता। हमारी पसलियाँ किस तरह टूट रही हैं, इसका अब हमें अनुमान हो गया है, इसी कारण हम विदेशी वस्त्रके व्यापारीकी आलोचना करने लगे हैं; और यह उचित ही है। इस जागृतिमें उपर्युक्त और ऐसे ही अन्य मिथ्याचारोंका उपाय मौजूद है। धरना इसकी एक प्राथमिक दवा है। सच्ची सेवा तो ग्राम-प्रवेश है। यह कपड़ा स्वदेशी है या विदेशी, सस्ता है या महँगा, स्वीकृत मिलका है या बहिष्कृत मिलका, इस खादीमें मिलका ताना है या हाथका इत्यादि तमाम प्रश्नोंकी उस दिन जरूरत न रहेगी, जब गाँववाले अपने घरोंमें सूत कातकर अपने ही जुलाहोंके यहाँ उसे बुनवा लेंगे, और वही खादी पहनने लगेंगे। इसीलिए मैं हजारवीं बार यह कह रहा हूँ कि तमाम दगा-फरेब और ठगीकी दवा अपने ही सूतकी बुनी हुई खादी है। जिस प्रकार जितना गुड़ डालें उतना ही मीठा होता है, उसी प्रकार जितना महीन कातेंगे, हमें उतनी ही महीन और सस्ती खादी मिलेगी — ऐसी सस्ती कि उससे सस्ता कपड़ा हो ही नही सकता, और हो भी तो वह गरीबोंके खूनसे सना होनेके कारण त्याज्य होगा।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २४-५-१९३१

२४०. पत्र : एच० डब्ल्यू० एमर्सनको

स्थायी पता, साबरमती
२४ मई, १९३१

प्रिय श्री एमर्सन,

मै अभी-अभी मथुरा पहुँचा हूँ और फ्रंटियर मेल पकड़नेके लिए मुझे लगभग पाँच घंटे इन्तज़ार करना है। यहाँके लोगोंने मुझे मथुराके पास स्थित बिझारी नामक गाँवमें इस महीनेकी २० तारीखको घटी घटनाका वृत्तान्त दिया है। उनके दिये बयानकी एक नकल मैं पत्रके साथ भेज रहा हूँ। वारंटपर १८ व्यक्ति गिरफ्तार किये गये थे। पर शिकायतकी सबसे अहम बात यह है कि पुलिस अपने अधिकार-क्षेत्रसे काफी आगे बढ़ गई। वारंटसे तो कोई शिकायत है ही नहीं। यदि उन लोगोंने कुछ ऐसा किया जो पुलिसकी निगाहमें गलत या गैरकानूनी था, तो उनको गिरफ्तार करना अधिकारियोंके लिए सर्वथा उचित था।

मैं बारडोली जा रहा हूँ और मैं वहाँ यथासम्भव कम-से-कम दो-तीन दिन तो रहूँगा ही।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

संलग्न : १

श्री एच० डब्ल्यू० एमर्सन
गृह-सचिव, भारत सरकार
शिमला

[अंग्रेजीसे]

गृह-विभाग, राजनीतिक फाइल संख्या ३३/९, १९३१।
सौजन्य : भारतीय राष्ट्रीय अभिलेखागार

२४१. पत्र : एच० डब्ल्यू० एमर्सनको[1]

स्थायी पता, साबरमती
२४ मई, १९३१

प्रिय श्री एमर्सन,

मैं अम्बालाके लाला दुनीचन्द – उस इलाकेके एक जाने-माने वकील – द्वारा भेजे गये प्रतिवेदनकी एक प्रति[2] संलग्न कर रहा हूँ। आप चाहे तार द्वारा ही इस सम्बन्धमें एक ही पंक्तिका सन्देश भेजकर यह बतला दें कि इस मामलेमें आप कोई कार्रवाई करनेकी सोच रहे हैं या नही तो मैं आभार मानूँगा। कर्त्तव्यका शायद यही तकाजा है कि यदि आप इस मामलेमें कोई राहत न दिला पायें तो मुझे न्यायाधीशके इस कार्यकी सार्वजनिक रूपसे चर्चा करनी ही चाहिए। यदि लाला दुनीचन्द द्वारा बतलाये गये तथ्य सही हैं, तो इन तथ्योंसे यही प्रकट होता है कि न्यायाधीश द्वारा की गई कार्रवाई निश्चय ही शान्तिकी भावनाके विरुद्ध है जब कि समझौतेका मुख्य उद्देश्य शान्ति स्थापित करना ही था।

हृदयसे आपका,

संलग्न : १

श्री एच० डब्ल्यू० एमर्सन
शिमला

[अंग्रेजीसे]

अ० भा० कां० क० फाइल संख्या १६ बी, १९३१।
सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

१. देखिए "पत्र : एच० डब्ल्यू० एमर्सनको", १९-५-१९३१ भी।

२. प्रतिवेदनमें दुनीचन्दने लिखा था : ". . . मैं १६ मईकी उन घटनाओंकी जाँच करने १८ मई, १९३१ को दोपहर बाद लुधियानाके लिए रवाना हुआ, जिसका समाचार आपको कालकामें दिया गया था। . . . मुझे यह कहते हुए दुःख है कि शायद लुधियानाके अधिकांश सरकारी कर्मचारी गांधी-इर्विन समझौतेको महत्वहीन कागज-मात्र मानते हैं। . . . मेरी राय है कि लुधियानामें होनेवाली घटनाओंकी सरकार और जनताकी ओरसे स्वतन्त्र जांच तो होनी ही चाहिए साथ ही अभी तक स्थानीय अधिकारी जिस नीतिसे काम लेते रहे हैं उसकी भी जाँच की जानी चाहिए . . .।"

२४२. पत्र : एच० डब्ल्यू० एमर्सनको

स्थायी पता, साबरमती
२४ मई, १९३१

प्रिय श्री एमर्सन,

सूरत, असम और संयुक्त प्रान्तसे प्राप्त विवरणोंके उद्धरणोंके साथ आपके तीन पत्र मुझे मिल गये। उनपर विचार हो रहा है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

श्री एच० डब्ल्यू० एमर्सन

[अंग्रेजीसे]

गृह विभाग, राजनीतिक फाइल संख्या ३३/९, १९३१।
सौजन्य: भारतीय राष्ट्रीय अभिलेखागार

२४३. पत्र : गोसीबहन कैप्टेनको

स्थायी पता, साबरमती
२४ मई, १९३१

मैं बारडोली पहुँचनेके लिए मथुरा जंकशनपर सूरत ले जानेवाली फ्रंटियर मेलका इन्तजार कर रहा हूँ। आपका पत्र मुझे यहीं मिला है। क्या मैंने कहा था कि सिले-सिलाये वस्त्र भी लिये जायेंगे? टुकड़ोंके बारेमें तो मुझे याद है कि मैंने कहा था। मुझे बताइए कि कुल कितने लोग टुकड़ों या सिले-सिलायें कपड़ोंसे छुटकारा पाना चाहते हैं। साथमे वस्त्रोंकी तादाद और बाजारमें उनकी कीमत भी बताइए।

जानकर प्रसन्नता हुई कि दोनों बहनें थोड़े विश्राम और स्वच्छ वायुके लिए आखिर पंचगनी चली गईं। और आपके जानेका क्या हुआ?

मैं कल दोपहर बारडोली पहुँच रहा हूँ।

श्रीमती गोसीबहन कैप्टेन
७८, नैपियन सी रोड
मलाबार हिल, बम्बई

अंग्रेजी (एस० एन० १७१३८)की माइक्रोफिल्मसे।

२४४. पत्र : होरेस जी० एलेक्जैंडरको

स्थायी पता, साबरमती
२४ मई, १९३१

प्रिय मित्र,

आपका पत्र मिल गया, धन्यवाद। असलमें मैंने आपका तार मिलते ही उसे खान अब्दुल गफ्फार खाँके पास भेज दिया था। अब चूँकि आपका आशय मेरे लिए ज्यादा स्पष्ट हो गया है, इसलिए आप भरोसा रखिए मैं भरसक प्रयत्न करूँगा। एक काम मैं यह करने जा रहा हूँ कि कैप्टन बार्न्सके साथ पत्र-व्यवहार शुरू कर दूँ।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

प्रो० होरेस जी० एलेक्जैंडर
१४४, ओकट्री लेन
बरमिंघम

अंग्रेजी (जी० एन० १४१०)की फोटो-नकलसे।

२४५. पत्र : सतीशचन्द्र दासगुप्तको

स्थायी पता, साबरमती
२४ मई, १९३१

प्रिय सतीश बाबू,

भोलानाथ सेनके[१] बारेमें आपका दुःखपूर्ण पत्र मिला। मैं हत्याकाण्डके बारेमें सब-कुछ पढ़ चुका हूँ। मैं जानता था कि चित्र और कृति दोनों ही बिलकुल आपत्ति-जनक नहीं थे। परन्तु लोगोंकी शिकायत यह रही कि पैगम्बरका कोई भी चित्र प्रकाशित ही क्यों किया गया। शिकायत तो स्पष्ट ही मूढ़तापूर्ण है। लेकिन सीधे-सादे पठानोंको किसी भी चीजपर उत्तेजित किया जा सकता है। ऐसे दुःखद काण्डोंके सिलसिलेमें जब हमें कोई भी निश्चित इलाज न सूझता हो, तब सबसे कारगर उपाय मुझे यही लगता है कि हम प्रार्थना करें और एकदम मौन धारण कर लें। यदि हिन्दुओंके हृदय [भी] पिघल सकें तो काम आसान हो जायेगा। पर वह तभी

१. एक पुस्तक-विक्रेता, जिसकी कलकत्तामें ७-५-१९३१ को **प्राचीन कहानी** नामक पुस्तककी बिक्रीके सिलसिलेमे हत्या कर दी गई थी।

होगा जब आप और मैं और शायद हमारे जैसे हजारों लोग अपने प्राण उत्सर्ग कर देंगे और उसे शुद्ध बलिदान बनानेके लिए हमें दिन-दिन अधिक शुद्ध बनने, या यह कहना ज्यादा अच्छा रहेगा कि दिन-दिन कम अशुद्ध बननेका प्रयत्न करते रहना पड़ेगा। बंगालकी आपने जो हालत बताई है वह भी दुखी ही करती है। मैं आज मथुरामें हूँ। सूरत जानेके लिए फ्रंटियर मेलका इन्तजार कर रहा हूँ। अधिक सम्भावना यही है कि सुभाष बाबू सूरत तक ही जायेंगे। मैं अबतक उनसे मिल नही पाया हूँ। यह पत्र स्टेशन पर बोलकर लिखा रहा हूँ। मै सरदारके आदेश पर बारडोली जा रहा हूँ। मंजिल तो बोरसद है, पर कह नहीं सकता वहाँ कब पहुँच पाऊँगा।

ट्रेनमें सुभाष बाबू मेरे साथ है?[1]

सप्रेम,

बापू

श्रीयुत सतीशचन्द्र दासगुप्त
खादी प्रतिष्ठान
सोदपुर (कलकत्ताके पास)

अंग्रेजी (जी० एन० ८०३३)की फोटो-नकलसे।

२४६. पत्र : कैप्टन बार्न्सको

स्थायी पता, साबरमती
२४ मई, १९३१

प्रिय मित्र,

प्रोफसर होरेस एक्लेजैंडरने मुझे एक विस्तृत पत्र लिखा है। उन्होंने बतलाया है कि आपको पेशावरमें काम करनेमें किन-किन कठिनाइयोंका सामना करना पड़ रहा है। प्रोफेसर एलेक्जैंडरने लिखा है कि आप और श्रीमती बार्न्स दोनों भारतके सच्चे मित्र हैं। लेकिन आपके जिलेमें कुछ ऐसी चीजें चलती रहती हैं जो बिलकुल ही नही चलनी चाहिए। मैं चाहूँगा कि आप यदि ठीक समझें तो मुझे निजी तौर पर अपनी जानकारीके मुताबिक सब-कुछ बतला दीजिए। वह सब प्रकाशनके लिए नही, मेरे निजी इस्तेमाल और मार्ग-दर्शनके लिए ही रहेगा। आप मेरे इस वचन पर विश्वास कीजिए कि मेरे सारे प्रयत्नोंका लक्ष्य एक ही है – उस प्रदेशमें सच्ची शान्ति स्थापित करना और लोगोंके दिमागमें यह बैठाना कि प्रगति उपद्रवों और

१. यह पंक्ति गांधीजी के स्वाक्षरोंमें है।

हिंसासे नहीं, बल्कि शान्त रहकर काम करने और अहिंसाका अवलम्बन करनेसे होती है।[1]

हृदयसे आपका,

कैप्टन बार्न्स
पेशावर

[अंग्रेजीसे]

अ० भा० कां० क० फाइल संख्या १६-सी, १९३१।
सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

२४७. पत्र : निरंजन पटनायकको[2]

२४ मई, १९३१

प्रिय निरंजन,

श्री नरसिंह साहूके बारेमें तुम्हारा तार मिला। उनके बारेमें पूरा ब्योरा मुकदमेके रिकार्डके साथ मेरे पास अवश्य भेज दो।

अंग्रेजी (एस० एन० १७१०५) की माइक्रोफिल्मसे।

२४८. पत्र : पर्सी लैसीको

स्थायी पता, साबरमती
२४ मई, १९३१

प्रिय मित्र,

मथुरा पहुँचनेपर आपका सन्देश मिला; उसके लिए मेरा धन्यवाद। मैंने आपको जान-बूझकर तार नहीं दिया। क्योंकि आपको लिखनेकी कोई जल्दी नहीं थी। यदि मैं लन्दन गया तो लंकाशायर भी अवश्य जाऊँगा और लंकाशायरकी जनता पर प्रकट कर दूँगा कि व्यक्तिगत तौरपर मेरे और कांग्रेसके मनमें लंकाशायरके प्रति किसी भी तरह कोई दुर्भावना नही है और कांग्रेस लंकाशायरकी भरसक सहायता करेगी। इसलिए स्वाभाविक है कि मैं लंकाशायरमे अपना काम सुविधापूर्ण बनानेके लिए 'मैन्चेस्टर गार्जियन'की सशक्त सहायता अवश्य लूँगा और यह पसन्द भी

१. देखिए खण्ड ४७, "पत्र : कैप्टन बार्न्सको", १९-६-१९३१ भी।
२. निरंजन पटनायकके तारके उत्तरमें। तार इस प्रकार था : राजमहेन्द्री जेलमें विजगापट्टम एजेन्सी राजके बन्दी नरसिंह साहूकी रिहाईके बाद बिमलिपट्टम एजेन्सी विनियमके अन्तर्गत फिर गिरफ्तारी।"

करूँगा। आप कृपया इस पत्रको समाचारपत्रोंमें प्रकाशनके लिए न दें। हाँ, आप इसे मित्रोंको दिखा सकते हैं और 'मैन्चेस्टर गार्जियन'को तो दे ही सकते हैं।

हृदयसे आपका,

श्री पर्सी लैसी
होटल सेसिल
शिमला

अंग्रेजी (एस० एन० १७१२८) की फोटो-नकलसे।

२४९. पत्र : प्रेमनाथ बजाजको

स्थायी पता, साबरमती
२४ मई, १९३१

प्रिय मित्र,

आपका पत्र मिला। युवक इस मामलेमें यह कर सकते हैं कि वे केवल विधवाओंसे ही विवाह करनेका संकल्प कर लें और यदि पण्डितोंमें उनको विधवाएँ न मिल सकें तो चाहे सत्याग्रहके रूपमें ही हो, उनको अन्य जातियोंकी विधवाएँ देखनी चाहिए। लेकिन यदि वे अपने-आपको अपनी ही जातितक मर्यादित रखना चाहते हों तो उनको अपनी जातिके बड़े-बूढ़ोंसे बात करनी चाहिए और उनको सूचित कर देना चाहिए कि यदि विधवाओंको पुनर्विवाह करनेके लिए अनुमति-भर ही नहीं बल्कि प्रोत्साहित नहीं किया गया, तो युवक जातिसे बाहर विवाह करनेपर विवश हो जायेंगे।

हृदयसे आपका,

पण्डित प्रेमनाथ बजाज
चोंधपुरा
श्रीनगर (कश्मीर)

अंग्रेजी (एस० एन० १७१२९) की फोटो-नकलसे।

२५०. पत्र : वाल्टर बी० फॉलेको

स्थायी पता, साबरमती
२४ मई, १९३१

प्रिय मित्र,

आपके पत्र और दो लेखोंके लिए धन्यवाद।

यदि आप अपनी सुविधानुसार किसी प्रकार सूरत या आनन्दतक आनेका मौका निकाल सकें तो उसे आपसे मिलकर सचमुच बड़ी प्रसन्नता होगी। मैं आम तौरपर आनन्दके पास बोरसदमें या सूरतके पास बारडोलीमें रहता हूँ। अभी इस समय मैं बारडोली ही जा रहा हूँ। आपका पत्र मुझे मथुरा जंकशनपर सूरतकी गाड़ीका इन्तजार करते समय ही मिला था। अगले महीनेके दौरान लाहौर और कलकत्ताके बीच किसी भी जगह मेरे आने-जानेकी सम्भावना नही है।

हृदयसे आपका,

श्री वाल्टर बी० फॉले[1]
३, मिडिलटन स्ट्रीट
कलकत्ता

अंग्रेजी (एस० एन० १७१३०)की माइक्रोफिल्मसे।

२५१. पत्र : च० राजगोपालाचारीको

स्थायी पता, साबरमती
२४ मई, १९३१

आपके पढ़ने और आवश्यक कार्रवाईके लिए एक और पत्र भेज रहा हूँ। मैं चाहता हूँ कि आप सीधे इसका उत्तर दे दें। मैंने इसकी प्राप्ति-सूचना नहीं भेजी है। कृपया लिखिए कि इस कथनमें कोई सचाई है या नहीं।

संलग्न : १

श्री च० राजगोपालाचारी
गांधी आश्रम
तिरुचेन्गोडु (द० भारत)

अंग्रेजी (एस० एन० १७१३१)की माइक्रोफिल्मसे।

१. मैथोडिस्ट एपिस्कोपल चर्च, कलकत्ताके सम्पादकीय सचिव।

२५२. पत्र : जॉन बिटमैनको

स्थायी पता, साबरमती
२४ मई, १९३१

प्रिय मित्र,

आपके पत्रके लिए मेरा धन्यवाद। यदि लन्दन गया तो मैं डेनमार्क और अन्य स्थानोंकी भी यात्रा जरूर करना चाहूँगा, लेकिन ठीक कह नहीं सकता कि कब कर पाऊँगा। मेननकी विपत्तियोंकी बात सुनकर बड़ा दुःख हुआ। परन्तु ऐस्थरको उनकी असफलताओंको लेकर चिन्तित नहीं होना चाहिए। उसे मेरी ओरसे स्नेह दीजिए और कहिए कि मै उससे कही अधिक आस्था और इसीलिए कहीं अधिक जीवटकी आशा करता हूँ। कृपया उससे कहिए कि मुझे पत्र लिखे।

हृदयसे आपका,

श्री जॉन बिटमैन
पीटी० ५५, ग्रोंडलसवैज
कोपेनहेगन

अंग्रेजी (एस० एन० १७१३२)की फोटो-नकलसे।

२५३. पत्र : अतुलप्रताप सिन्हाको

स्थायी पता, साबरमती
२४ मई, १९३१

प्रिय सिन्हा,

आपके पत्रके लिए धन्यवाद। आपने उसमें प्रस्ताव किया है कि मेरे लन्दन आनेपर आप मुझे अपनी सेवाका लाभ देनेको तैयार हैं। अभी इस समय मुझे वहाँ आनेकी कोई सूरत नही दिखाई पड़ती; लेकिन यदि मैं आया तो आप मेरा पता चला ही लेंगे। पत्रमें आपने जिस घटनाका जिक्र किया है, खेद है वह मुझे याद नही पड़ती।

हृदयसे आपका,

श्री अतुलप्रताप सिन्हा
उपाध्यक्ष, इंडियन स्टूडेंट्स सेन्ट्रल एसोसिएशन
ब्रोमप्टन रोड, लन्दन साउथ वेस्ट-३

अंग्रेजी (एस० एन० १७१३३)की फोटो-नकलसे।

२५४. पत्र : कार्ल जे० ब्रन्सकॉगको

स्थायी पता, साबरमती
२४ मई, १९३१

प्रिय मित्र,

आपके प्रश्नका उत्तर है :

विश्व-शान्तिके प्रसारका एक तरीका यह है कि भारतको सत्य और अहिंसाके बलपर स्वराज्य हासिल करनेमें सहायता दी जाये।

हृदयसे आपका,

कार्ल जे० ब्रन्सकॉग
लिल्ला नीग्यताँ ४
स्टॉकहोम

अंग्रेजी (एस० एन० १७१३४)की फोटो-नकलसे।

२५५. पत्र : जे० एन० साहनीको

स्थायी पता, साबरमती
२४ मई, १९३१

प्रिय साहनी,

मैंने सुना कि आपने भेंटका विवरण प्रकाशित कर दिया था। स्वीकार करना पड़ेगा कि उससे मुझे पीड़ा पहुँची। सच तो यह है कि आपको मालवीयजी या अनसूयाबहनसे न तो उनकी अनुमति लेनी चाहिए थी और न उसका उपयोग ही करना चाहिए था : इसलिए कि यह मामला ऐसा था जिसमें प्रकाशनके सम्बन्धमें निर्णय करनेका अधिकार मुझ अकेलेको ही था। मेरा ख्याल है कि कोई बहुत बड़ा नुकसान तो नहीं हुआ; लेकिन ये छोटी-मोटी भूलें इतने सारे समाचारपत्र बार-बार करते रहते हैं कि सबको मिलाकर देखनेपर यह चूक बहुत भारी लगने लगती है और इससे कुरुचि झलकती है। घरेलू किस्मकी ऐसी बातचीत समाचारपत्रोंमें छापनेकी चीज नहीं होती। विवरण प्रकाशित करनेसे इनकी अहमियत और इनका असर जाता रहता है। अनसूयाबहनने भी मुझे उसके बारेमें लिखा है। उनको हार्दिक क्लेश पहुँचा है और उनका कहना है कि उसमें कई भूलें भी हैं। पर मैं समझता हूँ कि भूल-सुधार छापनेसे भी अब कोई विशेष लाभ नहीं होगा। इसलिए सबसे अच्छा यही है कि उसके बारेमें सब-कुछ बिलकुल भुला दिया जाये और आप अपनी औरसे भूल-सुधार इसी

तरह कर सकते हैं कि आगेसे ऐसी गलती मेरे ही नहीं, किसीके भी बारेमें न दोहरायें। मैंने जो बात समझानेकी कोशिश की है, यदि आप उसे स्पष्टतः समझ गये हों तो मैं मानूँगा कि भूलका नतीजा अच्छा ही निकला।

हृदयसे आपका,

श्री जे० एन० साहनी
हिन्दुस्तान टाइम्स, दिल्ली

अंग्रेजी (एस० एन० १७१३६)की माइक्रोफिल्मसे।

२५६. पत्र : ईश्वरदास नैयरको

स्थायी पता, साबरमती
२४ मई, १९३१

प्रिय मित्र,

आपका पत्र मिला। चूँकि मैं लगातार यात्राएँ कर रहा हूँ, इसलिए मुझसे मिलनेके लिए मैं आपको प्रोत्साहित नहीं कर सकता। मेरे साथ आपके रह पानेका तो सवाल ही नही उठता। हाँ, आश्रममें आप कुछ दिन रहकर वहाँ अपना मार्ग निश्चित कर सकते हैं। यदि मेरा सुझाव आपको मंजूर हो तो आप वहाँ जानेसे पहले प्रबन्धकको लिखकर उनकी अनुमति प्राप्त कर लें।

हृदयसे आपका,

श्री ईश्वरदास नैयर
हाउस प्रोप्राइटर
पुराना बाजार
गुजरात[1]

अंग्रेजी (एस० एन० १७१३७)की माइक्रोफिल्मसे।

१. पश्चिमी पंजाब (पाकिस्तान)का एक कस्बा।

२५७. पत्र : शान्ता पटेलको

बारडोली
२५ मई, १९३१

चि० शान्ता,

तेरा पत्र मिला। तूने मुझे जो बताया है, मैंने भी वही बात समझी है। किन्तु अब भी मैं तुझे यही सलाह दूँगा कि तू लड़कियोंके साथ रहना सीख और उनके ही साथ खेलकर सन्तोष किया कर। प्रेमाबहन-जैसे लोगोंके साथ रहना सीख और उससे प्रमाण-पत्र प्राप्त कर। छोटी बहनोंकी सेवा कर, उन्हें सिखा-पढ़ा। पुष्पाकी खुराकका ध्यान रख। उसे भात थोड़ा ही खाना चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ४०६०)की फोटो-नकलसे।

२५८. पत्र : नारणदास गांधीको

बारडोली
२५ मई, १९३१

चि० नारणदास,

आज सुबह बारडोली पहुँच गया। जाना तो बोरसद था, पर आ यहाँ गया। लेकिन दूसरोंका चाकर कर भी क्या सकता है? साथमें भगवानजी का जो पत्र भेज रहा हूँ, शायद वह तुमने न पढ़ा हो। हरियोमलकी शिकायत क्या है? हम चोरको तो नहीं पहचान सके न? गाँवोंमें गये ही नही, इसलिए पहचानते भी तो कैसे? जब चोरोंका उपद्रव होता है, तभी ग्राम-प्रवेशका अभाव खटकता है। लगता है, कुसुम आदिको पंजाबी वैद्यकी दवा माफिक नही आई।

रतिलालको थाना ले जानेके लिए राजकोट तार भेजा है। थोड़े दिन तो यहाँ रहूँगा ही।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

क्या वालजी अभी बम्बईमें ही हैं? और अस्पतालमें हैं?

गुजराती एम० एम० यू० – १ से।

२५९. पत्र : प्रबन्धक, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, बम्बईको

स्थायी पता, साबरमती
२६ मई, १९३१

प्रिय महोदय,

यात्रा और व्यस्तताओंके कारण मैं आपके ७ मईके पत्रका उत्तर और पहले नहीं दे पाया। आपने पत्रमें जो सुझाव रखे हैं, मुझे पसन्द आये। मैंने व्यक्तिगत तौरपर अभीतक अपने किसी भी प्रकाशनका कापीराइट कभी नही लिया। यह काम मैंने श्री एन्ड्रयूजकी मर्जी पर ही पूरी तरह छोड़ रखा था कि वे अपने तैयार किये संक्षिप्त संस्करणोंका जैसा चाहें करें। लेकिन यदि श्री एन्ड्रयूज या उनके प्रकाशकोंसे कोई अनुमति लेनेकी आवश्यकता हो तो कृपया आप उनसे ले लें। रायल्टीके बारेमें आपने जो लिखा मैंने देख लिया है। अपने पत्रमें उल्लिखित शर्तोंके अनुसार जब भी आप प्रस्तावित पुस्तक प्रकाशित करनेका निर्णय करें, मुझे आशा है आप उसकी पाण्डुलिपि मेरे पास आवश्यक पुनर्निरीक्षण और परीक्षणके लिए अवश्य भेजेंगे।

हृदयसे आपका,

श्री आर० ई० हॉकिन्स
प्रबन्धक, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस
निकॉल रोड, बम्बई

अंग्रेजी (जी० एन० ५६८६)की फोटो-नकलसे।

२६०. पत्र : कावसजी जहाँगीरको[1]

स्थायी पता, साबरमती
२६ मई, १९३१

प्रिय श्री कावसजी,

और पहले उत्तर न भेज सकनेके लिए आप मुझे क्षमा करनेकी कृपा करेंगे। मै नैनीतालसे कल ही बारडोली लौटा हूँ। मै नैनीताल और शिमलामें वहींके कार्योंमें इतना व्यस्त रहा कि आपको या सरदार गरदाको उत्तर[2] लिखनेका समय निकाल ही नहीं पाया। सरदार गरदाको भेजे उत्तरकी एक प्रति मैं आपके पास भेज रहा

१. कावसजी जहाँगीरके पत्रके उत्तरमें। पत्रमें सरदार गरदा द्वारा की गई कुछ खास शिकायतोंका उल्लेख करते हुए गांधीजी से अनुरोध किया गया था : "परेशान करना तुरन्त बन्द करा दिया जाये।"

२. देखिए अगला शीर्षक।

हूँ, जो अपने-आपमें पूर्ण है; इसलिए उसके बारेमें कुछ कहनेकी जरूरत नहीं। अपने नाम उनके पत्रकी एक प्रति भी मैं आपको भेज रहा हूँ। बहुत ही उदार दृष्टि अपनाई जाये तो भी कमसे-कम इतना तो कहना ही पड़ेगा कि उनके आरोप अस्पष्ट हैं और जनता वास्तवमें उनको भी स्वीकार करनेको तैयार नहीं है। लेकिन उनकी सबसे उचित शिकायत उन घटनाओंको लेकर ही हो सकती थी, जो भूमि वापस करनेके उनके वचनके बाद हुई हों; अर्थात् वे सब रावबहादुर भीमभाईका पत्र मिलनेके बाद या २५ अप्रैलको हमारी पहली बातचीतके बाद की ही हो सकती थीं। यदि आप २५ अप्रैलकी तिथिको सीमा मानें तो आप देखेंगे कि उसके बादकी घटनाओंके बारेमें सिर्फ एक ही पैरा लिखा गया है। उसमें कहा गया है: "२८ अप्रैलको बाबलाकी जनताने फिर मेरे टापूसे काम करने आये मजदूरों और गाड़ीवानोंको और इसी महीनेकी ३ तारीखको एक राजपूत परिवारने डराया-धमकाया। धमकियोंमें यह भी धमकी दी गई कि उनके झोंपड़ोंको उनमें रहनेवाले लोगोंके साथ ही जला दिया जायेगा।"

मैंने बड़ी सतर्कतापूर्वक इन आरोपोंकी जाँच कर ली है और मैंने सम्बन्धित लोगोंके हलफिया बयान ले लिये हैं, जिनमें इनका प्रतिवाद किया गया है। लेकिन यदि आपको इस जाँच-पड़तालसे सन्तोष न हो तो मैं इसके लिए बिलकुल तैयार हूँ कि आप इन दो शिकायतोंकी जाँच करनेके लिए अपनी ओरसे किसीको भी नामजद कर दें।

कहा जाता है कि भीकाभाईने अपना बँगला लेनेसे इनकार कर दिया है। पर मैंने सुना है कि उनका कहना है कि उन्होंने ऐसी कोई बात नहीं कही। यदि बँगला न देनेकी बात कही भी हो, तो हम ऐसे मामलोंमें कोई दखल कैसे दे सकते हैं?

आपके पत्रमें उल्लिखित एक अन्य शिकायतमें यह वाक्य पढ़कर मुझे आश्चर्य हुआ और दुःख भी: "मैं आपका ध्यान पारसियोंको तंग करनेवाली अन्य उन घटनाओंकी ओर आकर्षित करना चाहता हूँ जो मुझे बतलाई गई हैं।" इससे तो लगता है कि आप यह मानकर चलते हैं कि सरदार गरदाको तो तंग किया ही गया है और आपने अबतक बिलकुल ही अप्रमाणित दो घटनाओंके आधारपर एक सामान्य निष्कर्ष निकालते हुए यह आरोप लगा दिया है कि पारसियोंके पूरे समाजको ही पारसी होनेके नाते तंग किया जा रहा है। सच तो यह है कि पिछले बारह वर्षोंमें राजनीतिक कार्यकी इतनी सरगर्मीके दौरान कांग्रेस और पारसियोंके सम्बन्ध बहुत ही अच्छे रहे हैं। तब फिर पारसियोंको तंग करनेकी कोई बात उठती ही कहाँ है? और यदि यह सिद्ध भी किया जा सके तो क्या आपने जिसका उल्लेख किया है उस महिलाको[1] तंग किये जानेकी घटनाका सरदार गरदाके इस वचनपर कोई प्रभाव पड़ना चाहिए कि वे उनके अपने कहे मुताबिक कौड़ीके मोल खरीदी उस भूमिको लौटा देंगे? फिर भी मैं आपको इस बातका पक्का भरोसा दिलाना चाहता हूँ कि कांग्रेसका ऐसा कोई

१. श्रीमती कान्ट्रैक्टर, जिनकी थाना और घाटकोपरमें विदेशी और देसी शराबकी दो दुकानें चलती थीं।

सच तो यह है कि न्यायालयोंमें चल रहे मुकदमोंको समझौतेके बाद वापस लेनेका काम तो आपको ही करना था। इसलिए मुझे यह कहनेपर विवश होना पड़ता है कि अपने वचनसे फिर जानेका आपने बिलकुल भी कोई कारण नहीं बतलाया। जो भी हो, मेरा सुझाव है कि भूमि लौटानेका वचन दे चुकनेके बाद यदि आपको लगा था कि आपके साथ कोई अन्याय हुआ है तो आपके लिए उचित यही था कि आप किसीकी मध्यस्थताका सहारा लेते या फिर ऐसा ही कोई दूसरा तरीका अपनाते, लेकिन पूरे सोच-विचारके बाद दिये गये अपने वचनसे आपको फिरना तो नहीं चाहिए था।

हृदयसे आपका,

सरदार फ्रॉमरोज गरदा
नवसारी

[अंग्रेजीसे]

अ० भा० कां० क० फाइल संख्या १६-सी, १९३१
सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

२६२. पत्र : यू० गोपाल मेननको

स्थायी पता, साबरमती
२६ मई, १९३१

प्रिय गोपाल मेनन,

आपका पत्र मिला। एम० पी० नारायण मेननके मामलेकी मुझे पूरी जानकारी है। किसी मिशनरी मित्रने मुझे लॉर्ड इर्विनके नाम एक पत्र उनतक पहुँचा देनेके विचारसे दिया था। मैंने खुशीसे वह पत्र लॉर्ड इर्विनको दे दिया था और उनसे नारायण मेननकी रिहाईके लिए कोशिश करनेको कहा था। उस मामलेके न्यायके सम्बन्धमें मुझे तनिक भी सन्देह नही। दुर्भाग्यसे लॉर्ड इर्विनसे मेरी भेंट दिल्लीसे उनके प्रस्थानके दो दिन पहले ही हुई थी। इसलिए अधिक सम्भावना इसी बात की है कि वे शायद कुछ न कर पाये हों। अब तो यही है कि आप सर सी० पी० रामस्वामी अय्यरका द्वार ही बार-बार खटखटाते रहें, क्योंकि आपका ही कहना है कि उनको मामलेकी अच्छी जानकारी है।

मन्दिर-प्रवेश-सम्बन्धी प्रस्तावित सत्याग्रहके बारेमें मैं दूसरे पक्षकी पूरी बात सुननेके बाद ही कोई निश्चित राय दे सकूँगा। आपने जो आपत्ति उठाई है वह विचारणीय अवश्य है। मुझे लगता है कि इससे अधिक कुछ कहना ठीक नहीं होगा।

हृदयसे आपका,

श्री यू० गोपाल मेनन, बी० ए०, बी० एल०
कालीकट

अंग्रेजी (एस० एन० १७१४३)की माइक्रोफिल्मसे।

२६३. पत्र : जुगलकिशोरको

स्थायी पता, साबरमती
२६ मई, १९३१

प्रिय जुगलकिशोर,

आपका इसी महीनेकी १४ तारीखका पत्र मिला। बारडोलीसे लौटते समय मुझे लगभग पाँच घंटे मथुरामें रुकना पड़ा। तब मैं आपके साथ आये उन मित्रसे मिला था। उनका नाम क्या है? परस्पर चर्चाके बाद वह और मैं दोनों ही इस बातपर सहमत हो गये थे कि जबतक आप निकट ही किसी निश्चित तिथितक महाविद्यालयको आत्मनिर्भर बना देनेका एक कार्यक्रम तैयार न कर लें, तबतक मुझे आपकी अपीलपर सार्वजनिक तौरपर कोई ध्यान नहीं देना चाहिए। लेकिन मैंने उनको पहले की गई चर्चाकी शर्तोंके अनुसार न्यासियोंके नाम एक पत्र दे दिया था।

मथुरामें आपकी बड़ी याद आई।

आचार्य जुगलकिशोर
प्रेम महाविद्यालय
वृन्दावन

अंग्रेजी (एस० एन० १७१४४)की माइक्रोफिल्मसे।

२६४. पत्र : मगन्ती बापी नीडूको

स्थायी पता, साबरमती
२६ मई, १९३१

प्रिय नीडू,

तुम्हारा मर्मस्पर्शी पत्र मिला। इतना निराश होनेकी तो जरूरत नहीं। निराश और पस्त होनेकी तो कोई बात ही नहीं। मैं समझता था कि तुम्हें अपने माता-पिता और बच्चेका भरण-पोषण करना पड़ेगा। मैंने इसीलिए तुम्हारे साबरमती आश्रम जानेकी बात कही है। तुम्हें इन आश्रितोंके लिए तीस रुपये प्रति माह दिये जायेंगे। आश्रममें रहने और खानेका तुम्हें कुछ भी नहीं देना पड़ेगा। आश्रमका रहन-सहन अपना लेनेपर तुम्हारी समस्या आसानीसे हल हो जायेगी, और सचमुच तुम्हारा आश्रममें रहना देश-सेवाका काम भी होगा; कारण सीधा है कि आश्रमका सारा काम राष्ट्रीय कार्य ही है। तुम्हें आश्रमके जीवनकी यदि बिलकुल जानकारी न हो

तो नारायण राजूसे पूछ सकते हो। मेरा ख्याल है, वह यहाँ शायद साल-भर रह चुका है। आन्ध्र देशके इतने सारे लोग अक्सर आश्रममें आकर रहते रहे हैं।

हृदयसे आपका,

श्री मगन्ती बापी नीडू,
एल्लौर (पश्चिमी गोदावरी जिला)

अंग्रेजी (एस० एन० १७१४५)की माइक्रोफिल्मसे।

२६५. पत्र : सुभाषचन्द्र बोसको

स्थायी पता, साबरमती
२६ मई, १९३१

चटगाँव जिलेके पेटियासे आया हुआ एक पत्र संलग्न है। मैंने लेखकको तार[1] देकर पूछा था कि क्या मै उनका नाम दे सकता हूँ और क्या वे इन तथ्योंको प्रमाणित करनेको तैयार हैं। पता पूरा न होनेके कारण तार उनको मिल नहीं सका। मैंने उनको पत्र भी लिखा था,[2] पर अबतक उत्तर नहीं आया है। यदि पत्रमें उल्लिखित तथ्य सही हैं, तो मामला सचमुच गम्भीर है। लेकिन तुम जाँच करके आवश्यक कार्रवाई कर सकते हो। आशा है अहमदाबादमें तुम्हारा समय काफी अच्छा गुजरा होगा।

श्री सुभाषचन्द्र बोस
मारफत बंगाल प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी
कलकत्ता

अंग्रेजी (एस० एन० १७१४६)की फोटो-नकलसे।

२६६. पत्र : एल० आर० गुरुस्वामी नायडूको

स्थायी पता, साबरमती
२६ मई, १९३१

प्रिय गुरुस्वामी,

आपका पत्र मिला। आपने उसमें धरनेसे सम्बन्धित कठिनाइयोंका विवरण दिया है। आप जिस प्रकार धरना दे रहे हैं, यदि उसका आपने सही-सही ब्योरा दिया है तो मुझे उसमें कोई गलती नहीं दिखाई पड़ती और अधिकारियोंका कार्य समझौते की शर्तोंके विरुद्ध ही नहीं, बल्कि मेरी रायमें तो गैरकानूनी भी था। आगेकी प्रगति

१. देखिए "तार : मन्त्री, कांग्रेस कमेटी, चटगाँवको", २१-५-१९३१।
२. देखिए "पत्र : मन्त्री, कांग्रेस कमेटी, चटगाँवको", २१-५-१९३१।

के बारेमें कृपया मुझे बराबर सूचित करते रहिए। मैं चाहता हूँ कि आप श्री राजगोपालाचारीसे भी सम्पर्क बनाये रहें। आपका पत्र मैंने उनके पास भेज दिया है।

हृदयसे आपका,

श्री एल० आर० गुरुस्वामी नायडू
अध्यक्ष, ताल्लुका कांग्रेस कमेटी
कोइलपट्टि (मद्रास प्रेसीडेंसी)

अंग्रेजी (एस० एन० १७१४७)की माइक्रोफिल्मसे।

२६७. पत्र : च० राजगोपालाचारीको

स्थायी पता, साबरमती
२६ मई, १९३१

कोइलपट्टि ताल्लुका कांग्रेस कमेटीके एल० आर० गुरुस्वामी नायडूका पत्र भेज रहा हूँ। उनके नाम अपने पत्रकी[1] एक प्रति भी संलग्न कर रहा हूँ। यदि गुरुस्वामीके पत्रमें वर्णित तथ्य सही हों, तो आपको इस मामलेमें मुस्तैदीसे कार्रवाई करनी चाहिए।

आशा है ९ तारीखको बम्बईमें आपसे मुलाकात होगी।

श्रीयुत च० राजगोपालाचारी
गांधी आश्रम
तिरुचेन्गोडु (दक्षिण भारत)

अंग्रेजी (एस० एन० १७१४८)की माइक्रोफिल्मसे।

२६८. पत्र : शंकरलाल बैंकरको

स्थायी पता, साबरमती
२६ मई, १९३१

प्रिय शंकरलाल,

मसुलीपट्टममें भूमि और इमारत खरीदनेकी डॉ० पट्टाभि सीतारमैयाकी सलाहके बारेमें यदि खरीदकी कीमत पाँचसे छः हजार रुपयोंके बीच तय हो जाये, तो मैं प्रस्तावसे सहमत हूँ।

श्रीयुत शंकरलाल बैंकर
मिर्जापुर, अहमदाबाद

अंग्रेजी (एस० एन० १७१४९)की माइक्रोफिल्मसे।

१. देखिए पिछला शीर्षक।

२६९. पत्र : डॉ० मु० अ० अन्सारीको

स्थायी पता, साबरमती
२६ मई, १९३१

प्रिय डॉ० अन्सारी,

आपका तार मिल गया। मै तो सोचता था कि आप इस बातसे सहमत हैं कि यदि साम्प्रदायिक समस्या हल न हो पाये तो कांग्रेसको गोलमेज परिषद्में शामिल नहीं होना चाहिए। अब आप शास्त्री[1], एन्ड्रयूज और पोलक द्वारा रखे सुझावसे क्यों सहमत हो गये? पर आप इससे सहमत हों या न हों, आपको इस बातपर तो विचार करना ही होगा कि यदि मैं कोई हल निकले बिना ही वहाँ जाऊँगा तो मेरे अन्दर जितना चाहिए उतना आत्मविश्वास नही रहेगा। यदि मेरे अपने ही देशमें यहाँ परस्पर फूट रहेगी तो मै क्या माँगें रख पाऊँगा और राष्ट्रीय माँगको बहुत दृढ़ताके साथ कैसे पेश कर पाऊँगा? लेकिन तारका जो उत्तर मैंने दिया है उसमें यही कहा है कि यदि मुझे गोलमेज परिषद्के अतिरिक्त अन्य विषयोंपर चर्चा करनेके लिए लन्दनमें आमन्त्रित किया गया तो मै प्रसन्नताके साथ तो तभी जा सकूँगा, जब मुझे विश्वास हो जायेगा कि समझौतेपर ठीक-ठीक अमल हो रहा है।

क्या आपने मौलवी मुहम्मद याकूब द्वारा की गई घोषणा देख ली है? किसी भी भावी हलमें सिखोंके शामिल होनेकी आवश्यकताके सम्बन्धमें दिये गये मेरे वक्तव्य के बारेमें समाचारपत्रोंमें क्या आया है, इसकी मुझे कोई जानकारी नहीं है। क्या उससे बचनेकी कोई सूरत आपको दिखाई पड़ती है?

शिमला-वार्त्तामें अनेक विषयों पर बात ही नहीं हो पाई थी। मैं ९ जूनके इन्तजारमें हूँ। उस समय हम बातचीत फिर शुरू करनेकी स्थितिमें होंगे।

डॉ० मु० अ० अन्सारी
१, दरियागंज
दिल्ली

अंग्रेजी (एस० एन० १७१५०)की फोटो-नकलसे।

१. देखिए "तार: वी० एस० श्रीनिवास शास्त्रीको", २३-५-१९३१।

२७०. पत्र : अब्बास तैयबजीको

स्थायी पता, साबरमती
२६ मई, १९३१

आपका आह्लादपूर्ण पत्र मिला। मैं सरदारके आदेशपर कल ही बारडोली लौटा हूँ और उनके आदेशके मुताबिक कम-से-कम कुछ दिन यहीं रहूँगा। यदि अचानक कही औरसे बुलावा नही आ गया तो ३ या ४ जूनके आसपास भी मैं यहाँ या बोरसदमें रहूँगा। आप जानते ही हैं कि मेरा समय मेरे अपने हाथमें नहीं है। एक सरदार तो मौजूद है ही; फिर एक सरकार भी है—इन दोनोंकी सेवामें मेरी चैनसे गुजर रही है।

महाराजाके नाम अपने पत्रकी मुझे प्राप्ति-स्वीकृति तक प्राप्त नहीं हुई। क्या आपका ख्याल है कि मुझे उनको फिरसे लिखना चाहिए? यदि हाँ, तो कृपया उनका पता मुझे लिख दीजिए। आप दीवानसे स्वयं क्यों नहीं मिल लेते? पढ़कर खुशी हुई कि रेहाना माथेरान गई है। आराम लेनेसे उसे लाभ पहुँचना चाहिए।

श्रीयुत अब्बास तैयबजी
बड़ौदा शिविर

अंग्रेजी (एस० एन० १७१५१) की फोटो-नकलसे।

२७१. पत्र : मन्त्री, इंडियन एसोसिएशन, ईराकको

स्थायी पता, साबरमती
२६ मई, १९३१

प्रिय मित्र,

आपका पिछली २८ अप्रैलका छपा हुआ पत्र मिला। पिछले पत्रोंकी मुझे कोई जानकारी नही। वे शायद मेरे जेल-प्रवासके दिनोंमें आये होंगे। मैं सभी तरह आपकी संस्थाकी सफलताकी कामना करता हूँ। क्या आप मुझे ईराकमें बसनेवाले भारतीयोंकी तादाद और उनके पेशेके बारेमें थोड़ी-बहुत जानकारी देंगे और क्या आप मुझे यह भी बतलायेंगे कि अरबों और आपके बीच पूर्णतः मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध है या नहीं?

हृदयसे आपका,

मन्त्री
इंडियन एसोसिएशन, ईराक
पो० बा० संख्या ७१, रेजीडेंसी रोड
बगदाद

अंग्रेजी (एस० एन० १७१५२)की माइक्रोफिल्मसे।

२७२. पत्र : हरदयाल नागको

स्थायी पता, साबरमती
२६ मई, १९३१

प्रिय बाबू हरदयाल नाग,

आप कांग्रेसके शायद सबसे पुराने सदस्य हैं, फिर भी आप मुझे जब-तब पत्र लिखकर अपना युवकोचित उत्साह प्रकट करते रहते हैं। आपका सबसे हालका पत्र मैं प्रकाशित नही कर रहा हूँ। हम चाहें या न चाहें, साम्प्रदायिक समस्या तो सामने है ही। और यदि हम उसे हल नही कर पाये तो मैं राष्ट्रीय माँगको उतनी दृढ़तासे पेश नहीं कर पाऊँगा जितनी दृढ़तासे उसे साम्प्रदायिक समस्या हल हो जानेके बाद पेश कर सकता हूँ। गोलमेज परिषद्में कांग्रेसके शामिल होनेके सिलसिलेमें क्या आप यह आधारभूत आपत्ति नही देख रहे हैं? यदि स्वराज्यका संविधान बनना है तो साम्प्रदायिक समस्याका हल निकालना ही पड़ेगा।

आशा है अब भी आपका तेज पहले जैसा ही बना हुआ हैं।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत हरदयाल नाग
चाँदपुर (बंगाल)

अंग्रेजी (एस० एन० १७१५४)की फोटो-नकलसे।

२७३. पत्र : एल० जे० बर्गेसको

स्थायी पता, साबरमती
२६ मई, १९३१

प्रिय मित्र,

आपके पत्रके लिए आभारी हूँ। हालाँकि तीसरी प्रस्थापनाको मुझे शायद कुछ भिन्न शब्दोंमें रखना चाहिए, फिर भी मैं तीनों प्रस्थापनाओंके सामान्य आशयका निस्संकोच अनुमोदन करता हूँ। मैंने यह कभी नहीं कहा कि किसी भी जातिका धर्म अन्य किसी भी धर्मके जितना ही अच्छा है। मैं आपको 'यंग इंडिया' के वे दो अंक भेजनेकी कोशिश कर रहा हूँ जिनमें इस प्रश्नसे सम्बन्धित मेरे विचार

दिये गये हैं। मेरी तरफसे धार्मिक स्वतन्त्रतामें कानूनी हस्तक्षेप करनेकी कोई बात कभी उठी ही नहीं।

हृदयसे आपका,

एल० जे० बर्गेस महोदय
सॉल्ट हिल
दार्जिलिंग

अंग्रेजी (एस० एन० १७१५५)की फोटो-नकलसे।

२७४. पत्र : रघुवीरसिंहको

स्थायी पता, साबरमती
२६ मई, १९३१

प्रिय मित्र,

आपका पत्र मिला। आपके पहले प्रश्नका उत्तर यह है कि यदि आपके मनमें उपाधियाँ (डिग्रियाँ) प्राप्त करने या कालेजोंके पाठ्यक्रमों द्वारा भौतिकीका ज्ञान हासिल करनेकी सचमुच उत्कट लालसा है, तो आप कालेजमें फिरसे दाखिला जरूर ले लें।

आपके अपने मित्रोंकी सहायताके बारेमें मेरा ख्याल है कि वे यदि भूखों मर रहे हों तो उनकी सहायता करनेका आपको अधिकार है ही; बल्कि वह तो आपका कर्त्तव्य है। लेकिन उनके उद्देश्योंको आगे बढ़ानेमें योग देनेका आपको अधिकार नहीं हैं। और उनके नाम तो पुलिसको किसी भी हालतमें नहीं बतलाये जा सकते।

हृदयसे आपका,

श्री रघुवीरसिंह
मारफत बंगाली सारेम
कलेक्टरका कार्यालय
मेरठ

अंग्रेजी (एस० एन० १७१५६)की माइक्रोफिल्मसे।

२७५. पत्र : एम० जी० दातारको

स्थायी पता, साबरमती
२६ मई, १९३१

प्रिय मित्र,

आपका पत्र मिला। अहमदाबादके अपने भाषणमें तिलक विद्यालयका उल्लेख यदि सचमुच रह गया है, तो वह निश्चय ही जान-बूझकर नहीं छोड़ा गया।[1] मुझे जैसे-जैसे नाम याद आते गये, मैं गिनाता गया था। नागपुर तिलक विद्यालयने कितना अधिक योगदान किया है यह मैं जानता हूँ। मेरा मंशा किसी एक राष्ट्रीय संगठन-विशेषके बारेमें कुछ कहनेका नहीं था। मैं तो इस एक तथ्य पर जोर देना चाहता था कि राष्ट्रीय शैक्षणिक संगठन ही वास्तवमें हमारी आवश्यकताकी पूर्ति कर सकते हैं।

हृदयसे आपका,

श्री एम० जी० दातार
प्रधानाध्यापक, तिलक विद्यालय
नागपुर

अंग्रेजी (एस० एन० १७१५७)की माइक्रोफिल्मसे।

२७६. पत्र : सुरेन्द्रसिंहको

स्थायी पता, साबरमती
२६ मई, १९३१

प्रिय सरदार सुरेन्द्रसिंह,

३० अप्रैलके आपके पत्रकी प्राप्ति-सूचना इससे पहले न दे पानेकी मेरी असमर्थता के लिए मुझे क्षमा कीजिएगा। आप मुझे इस बात पर पूर्णतः सहमत तो काफी कठिनाईसे ही कर पायेंगे कि संकट-कालमें वर्त्तमान प्रशासन सचमुच ही सुरक्षाकी प्रतीति देता है। राष्ट्रके जीवनमें आई आध्यात्मिक भावनाके ह्रासकी आपकी भर्त्सनासे मैं सहमत हूँ और मैं आपके इस कथनसे भी बिलकुल सहमत हूँ कि बहुत अधिक त्याग

१. देखिए खण्ड ४७, "राष्ट्रीय विश्वविद्यालय", १८-६-१९३१।

या अनुशासनकी हम आशा नही कर सकते। इनको लानेके लिए ही मैं इतना अधिक प्रयत्न कर रहा हूँ।

हृदयसे आपका,

सरदार सुरेन्द्रसिंह
लाहौर

अंग्रेजी (एस० एन० १७१५८)की फोटो-नकलसे।

२७७. पत्र : मनमोहनदास पी० गांधीको

२६ मई, १९३१

भाई मनमोहनदास,

क्या करूँ? तुम्हारी पुस्तिका[1] उठाकर भी नहीं देख सका। एक तो यह मुसाफिरी और उसपर काम?

१. विदेशसे बारीक कामोंके लिए कितनी कपास आती है?

२. क्या उसकी सचमुच जरूरत है?

३. क्या उससे देशी कपासको नुकसान होता है?

४. कपासकी फसलसे जमीनको फायदा होता है या नुकसान?

५. कपासके बदले क्या सचमुच अनाजकी फसल पैदा करना ज्यादा अच्छा है?

६. क्या उससे सचमुच जमीन ज्यादा अच्छी हो जाती है?

इनपर विचार करके जवाब देना।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० १३)की फोटो-नकलसे।

१. **परदेशी कापड़नी सामे हरीफाई केम करवी;** अपनी अंग्रेजी पुस्तिकाका लेखक द्वारा गुजराती अनुवाद किया गया अंग्रेजी पुस्तिकाके सम्बन्धमें। देखिए खण्ड ४५, पृष्ठ २३६।

२७८. पत्र : प्रभावतीको

बारडोली
२६ मई, १९३१

चि० प्रभावती,

मैं तुझे नैनीतालसे पत्र नही लिख सका। तेरा पत्र तो मिल गया था। मैं कठिनाई समझता हूँ। ससुरजीकी क्या सेवा करती है? वे तुझे सेवामें लगाये रहें तो यह अच्छा ही रहे। तेरा मन उसमें लग जाये तो दौरे पड़ना बन्द हो जाये और शायद शरीर भी सुधर जाये। तुझे रुपये भेजनेके बारेमें तो मैं लिखना भूल ही गया; यों नारणदासको मालूम तो है ही। क्या इससे कुछ परेशानी हुई? जितनेकी जरूरत हो, नारणदाससे मँगा लेना। अभी तो बारडोलीमें ही रहूँगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ३४१३) की फोटो-नकलसे।

२७९. पत्र : वसुमती पण्डितको

बारडोली
२६ मई, १९३१

चि० वसुमती,

तुम्हारा पत्र मिला। वैद्यकी दवाका क्या असर हुआ है सो लिखना। कौन-सी दवा क्या दी जा रही है? मैत्रीका किस बातका इलाज हो रहा है? महावीर और मैत्रीसे लिखनेके लिए कहना। गंगाबहन कब आयेगी? मुझे तो फिलहाल यहीं रहना पड़ेगा। रामदास और नीमू अलमोड़ा पहुँच गये हैं। रामभाऊ आश्रम आ गया है।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (एस० एन० ९३२४)की फोटो-नकल तथा सी० डब्ल्यू० ५७० से भी। सौजन्य : वसुमती पण्डित

२८०. पत्र : लक्ष्मीबहन खरेको

बारडोली
२६ मई, १९३१

चि० लक्ष्मीबहन,

रामभाऊ वहाँ पहुँच गया होगा। उसपर खीझकर या मार-पीटकर उससे काम न लेना। जैसा उसे ठीक लगे, वैसा करने देना। पढ़ना अच्छा न लगे तो कुछ हाथ का काम करे। कोई उद्योग सीख ले। चाहे संगीतमें ही ध्यान लगाये। उसकी इच्छा जानकर जैसा वह करना चाहे, करने देना। तुमसे ज्यादा अच्छी तरह उसकी देख-भाल कोई और नही कर सकता, न उसको कोई दूसरा सुधार ही सकता है। धीरजसे काम लेना। वह जो निश्चय करे, वह मुझे लिखना।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० २७८)की फोटो-नकलसे।
सौजन्य : लक्ष्मीबहन खरे

२८१. पत्र : फीरोजाबहन तलयारखाँको

बारडोली
२६ मई, १९३१

प्रिय बहन,

मैं कल ही यहाँ पहुँचा। तुम्हारा पत्र मिल गया है। जब तुम्हारी इच्छा हो तब आ जाना। थोड़ा समय निकाल लूँगा।

मोहनदास गांधीके वन्देमातरम्

[पुनश्च :]

सूरतसे बारडोलीके लिए गाड़ी मिल सकती है।

श्रीमती फीरोजाबहन तलयारखाँ
कंबालिया हिल
बम्बई

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९७७४) से।

२८२. तार : प्रभाशंकर पट्टणीको

बारडोली
२७ मई, १९३१

सर प्रभाशंकर पट्टणी
भावनगर

तारके लिए आभारी। जब चाहें, बारडोली आ जायें।

गांधी

अंग्रेजी (जी० एन० ५९१५)की फोटो-नकल तथा सी० डब्ल्यू० ३२३०से भी।
सौजन्य : महेश पट्टणी

२८३. पत्र : नारणदास गांधीको

बम्बई
मौनवार [२८ मई, १९३१ के पूर्व][1]

चि० नारणदास,

मौनवारको पत्र लिखूँ तुम्हारी यह माँग याद है, इसीलिए यह लिख रहा हूँ। वैसे समय तो नहीं है।

सभी आश्रमवासियोंसे कहना कि मैं लिखूँ या न लिखूँ उनके लिए दोनों बातें एक-सी होनी चाहिए। मैंने बहुत-कुछ कहा है, जो-कुछ हो सका है, वह किया है। उसमें से वे जो-कुछ अपना सकते हों अपना लें। हमारे पास तो वही 'अनासक्तियोग', 'भजनावलि' और 'रामायण' रूपी तीन ढालें हैं। उनका पारायण मेरे पत्रसे या सहवाससे भी ज्यादा शक्तिप्रद है। ऐसा मेरा विश्वास है और मैं चाहता हूँ कि यही दूसरे सब लोग भी मानें।

पंजाबी वैद्यकी दवा यमुना और कुसुमको माफिक आये तो यह एक नई प्राप्ति मानी जायेगी। सचमुचमें ऐसा ही हो तो राधा और आनन्दीका भी उन्हींसे इलाज करवायें।

सन्तोक अब कैसी है?

स्वदेशी व्रतपर लिखनेके लिए अभीतक समय नहीं निकाल पाया।

बापूके आशीर्वाद

१. स्वदेशी-व्रत सम्बन्धी लेखके उल्लेखसे। उक्त लेख २८ मईको भेजा गया था। देखिए "पत्र : नारणदास गांधीको", २९-५-१९३१।

[पुनश्च :]

राजकोटमें रतिलालकी देख रेखके लिए किसी साथीकी माँग की गई है। तुम्हारी दृष्टिमें क्या ऐसा कोई व्यक्ति है जिसे वहाँ भेजा जा सके? उसे वेतन तो अच्छा देंगे ही।

आज बोरसद जा रहा हूँ, इसलिए अब पत्र वहीं लिखना।

बापू

[गुजरातीसे]

बापुना पत्रो–:९ श्री नारणदास गांधीने

२८४. संयुक्त प्रान्तके जमींदारोंसे

संयुक्त प्रान्तके किसानोंके लिए मेरी विज्ञप्ति[1] आपने इस अंकमें अन्यत्र होगी। मैं जानता हूँ कि जहाँतक संयुक्त प्रान्तकी सरकार द्वारा दी गई रियायतका सम्बन्ध है मेरी विज्ञप्ति उससे कुछ आगे जाती है, और उस हदतक वह गवर्नर साहबको पूरी तरह पसन्द नही है। परन्तु उस विज्ञप्तिमें किसानोंको जो सलाह दी गई है, उसमें उनकी लगान अदा करनेकी शक्ति बतानेका प्रामाणिक प्रयत्न किया गया है। इसलिए मै आशा रखता हूँ कि उस की सूचनाके अनुसार यदि किसान लगान अदा करें, तो जमींदार और सरकार उसे लेकर किसानोंको दायित्वसे पूरी तरह मुक्त कर देंगे। परन्तु संयुक्त प्रान्तमें प्रचलित मालगुजारी-पद्धतिके अनुसार अधिकांश बोझ पहले जमींदारोंपर पड़ेगा। मैं यह आशा लगाये हूँ कि जो जमींदार किसानोंकी शर्तें स्वीकार करेंगे, उनके साथ सरकार उस हिसाबसे रियायत करेगी।

जमींदारोंको मैं विश्वास दिला सकता हूँ कि मुझसे जितना हो सकता है, मैंने देहातकी स्थितिका अध्ययन करनेका प्रयत्न किया है। मुझे जो विश्वस्त आँकड़े मिले हैं, उन्हें देखनेके बाद और अधिक अच्छी शर्तें रखना शक्य न था। नीचे भावों की दो तालिकाएँ देता हूँ :

सन् १८७३ के भावोंको १०० मानकर (गेहूँ, चना, ज्वार, धान और बाजरा आदि) मुख्य अनाजोंके भावोंके सांकेतिक आँकड़े :

वर्ष	कीमत	वर्ष	कीमत
१८८०	११८	१९०६–१०	१९५
१८८१–८५	१००	१९११–१५	१९४
१८८६–९०	११९	१९१६–२०	२७२
१८९१–९५	१२८	१९२१–२५	२९४
१८९६–१९००	१६६	१९२६	३००
१९०१–०५	१३६	१९३१ (मई, संयुक्त प्रांत)	१३२

१. देखिए "संयुक्त प्रान्तके किसानोंसे", २३-५-१९३१।

तालिका—२

वर्ष	मनकी दर रुपयोंमें	वर्ष	मनकी दर रुपयोंमें
१८८०	१.५	१९०६—१०	३.५६
१८८१—८५	१.६८	१९११—१५	३.३१
१८८६—९०	२.०८	१९१६—२०	४.६३
१८९१—९५	२.२२	१९२१—२५	४.७३
१८९६—१९००	२.७५	१९२६—२८	४.९
१९०१—०५	२.३४	१९३१ मई	२.३

इन आँकड़ोंसे पता चलता है कि सन् १९१५से मुख्य वस्तुओंके भाव ५० फीसदी घटे है। दाम १८८६के बराबर हैं। इसका मतलब यह हुआ कि दर आज जितनी कम है, उतनी कम होनेकी बात मौजूदा पीढ़ीमें किसीको याद नही है। यदि उस समयके लगानका विचार करें, तो मेरी विज्ञप्तिके अनुसार किसानोंको रुपयेमें जो आठ आने या बारह आने देने है, वे उससे बहुत कमके देनदार निकलेंगे। यह तो सब कबूल करते हैं कि इधर कुछ वर्षोंसे किसानोंकी हालत कभी अच्छी थी ही नहीं। वस्तुतः संयुक्त प्रान्तके पूर्वी विभागके तीन सौसे अधिक गाँवोंमें की गई जाँचसे भी पता चलता है कि मौजूदा दरके अनुसार फसलके जो दाम खड़े होते हैं, वे लगानकी रकमके बराबर भी नहीं हो पाते। इसमें से खेतीका खर्च नहीं घटाया गया है। मैं मानता हूँ कि यह जाँच विशेषज्ञोंने नही की थी। इसलिए उसमें वैज्ञानिक यथार्थताका अभाव है। परन्तु जैसी है, उसी रूपमें इतनी स्पष्ट तो अवश्य है कि वह हमें विचार करने पर बाध्य करे।

कहा जाता है कि मि० हूपरने जो किसी समयके सेटलमेंट अफसर थे, संयुक्त प्रान्तके किसानोंकी जमींदार जो व्याख्या करते हैं, वह इस प्रकार दी है:

> **किसान वह है, जो रोज एक जून खाकर जीनेको तैयार हो, जो जमीनका अधिकसे-अधिक लगान देनेके लिए या गँवारू भाषामें कहें तो, स्त्री-बच्चोंको बेचनेके लिए तैयार हो; जमींदार जो मनमाने कर आदि माँगें सो सब देनेको तैयार हो, जो जमींदारके लिए बेगार करने, उसके लिए अदालतमें गवाही देने और साधारणतया उससे जो-जो कहा जाये, वह सब काम करनेको हमेशा राजी हो।**

यह वर्णन ऐसा नहीं है जिसपर कोई जमींदार गौरवका अनुभव कर सके। परन्तु मि० हूपरके कालके बाद जमीदारोंके विचारोंमें क्रान्ति हो गई है। उनमें से बहुतेरे अपने काश्तकारोंके प्रति समभाव रखते हैं। वे उनके सुख-दुःखमें भाग लेनेका प्रयत्न करते हैं। परन्तु यह काम जिस गतिसे हो रहा है, उससे कहीं अधिक तेजीके साथ होनेकी जरूरत है। किसानोंमें जो महान् जागृति हुई है, उसके साथ उनमें अपनी स्थितिके बारेमें असन्तोषका पैदा होना और उनका अपने हकोंके बारेमें अधिक आग्रह करना अनिवार्य है।

मैं चाहता हूँ कि जमींदार काश्तकारोंकी स्थितिकी सत्यताको पहचानें और अपनी दृष्टिमें इतना परिवर्तन कर डालें। मौजूदा कठिनाई तो किसी-न-किसी तरह दूर हो जायेगी। लेकिन उसके दूर होते ही सो जाना गलत होगा।

जमींदार पहले ही से प्रबन्ध कर रखें तो अच्छी बात है। वे सिर्फ लगानकी वसूली करनेवाले ही न बने रहें। वे अपने काश्तकारोंके रक्षक और विश्वासपात्र मित्र बनें। वे अपने निजी खजानेपर अंकुश रखें। वे विवाह वगैराके अवसरोंपर जबर्दस्ती भेंटके रूपमें, या एक किसानकी जमीन दूसरेके कब्जेमें जानेपर या लगान अदा न करनेके लिए किसानको बेदखल कर चुकनेके बाद उसे फिरसे जमीन लौटाते वक्त नजरानेके रूपमें, लगानके सिवा जो अनुचित कर वसूल करते हैं, वह वसूल करना छोड़ दें। वे किसानोंको लगान देनेकी अवधि ठहरा दें, उनकी भलाईके कामोंमें पूरी-पूरी दिलचस्पी लें, उनके बालकोंके लिए सुव्यवस्थित शालाएँ, बड़ी उम्रके स्त्री-पुरुषोंके लिए रात्रिशालाएँ, बीमारोंके लिए अस्पताल और दवाखाने स्थापित करें, गाँवोंकी सफाईका ख्याल रखें और अनेक रीतिसे उनमें ये भाव पैदा करें कि जमींदार उनके सच्चे मित्र हैं और अपनी विविध सेवाओंके बदलेमें निश्चत किया हुआ मेहनताना ही लेते हैं। थोड़ेमें, उन्हें अपने पदकी योग्यता सिद्ध करनी चाहिए। उन्हें कांग्रेसके लोगोंपर विश्वास रखना चाहिए। वे स्वयं भी कांग्रेसमें शामिल हों और समझ लें कि कांग्रेस प्रजा और सरकारके बीचका एक पुल है। जिनके दिलमें सचमुच ही रैयतके हितका ध्यान है, वे सब कांग्रेसकी सेवाका उपयोग कर सकते हैं। कांग्रेसी अपनी तरफसे इतनी फिक्र रखें कि किसान जमींदारोंके साथ किये गये वादोंको धर्म-भावसे पूरा करें। मेरा यह आशय नहीं है कि वे कानून-सम्मत वादोंका ही पालन करें, बल्कि जो वादे उन्होंने उचित समझकर किये हों उन सबका पालन करें। वे उस सिद्धान्तको न मानें कि उनकी जमीन अकेले उन्हींकी है और जमींदारोंका उसमें कोई हक नही है। ख्याल यह होना चाहिए कि वे एक संयुक्त परिवारके सदस्य हैं, या उन्हें ऐसा होना चाहिए; और जमीदार उस परिवारका बुजुर्ग है, और उनके अधिकारोंका संरक्षण करता है। कानून कुछ भी कहे, जमींदारी जबतक संयुक्त परिवारकी स्थितिके निकट नही पहुँचेगी, उसको स्वीकृत नहीं किया जा सकेगा।

राम और जनकका आदर्श मुझे पसन्द है। उनके पास प्रजाकी इच्छाके विरोधमें कोई सम्पत्ति न थी। वे स्वयं और उनका सर्वस्व जनताका था। वे लोगोंमें उनके जीवनसे ऊपर नहीं, बल्कि उनसे मिलती-जुलती स्थितिमें रहते थे। परन्तु शायद कोई उन्हें ऐतिहासिक व्यक्ति न माने, तो महान खलीफा उमरका दृष्टान्त लीजिए। वे अपने प्रौढ़ बुद्धि-कौशल और आश्चर्यजनक उद्योगसे अर्जित विशाल साम्राज्यके बादशाह थे; फिर भी वे एक फकीर-जैसा जीवन बिताते थे, और अपनेको कभी चरणोंके सामने पड़ी हुई अनन्त समृद्धिका स्वामी नहीं मानते थे। लोगोंके धनको विलासमें उड़ा डालनेवाले अधिकारी उनके भयसे काँपते रहते थे।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २८-५-१९३१

२८५. टिप्पणियाँ

महमूदाबादके महाराजा साहब

महमूदाबादके महाराजा साहबकी असामयिक मृत्यु[1] से एक ऐसा व्यक्ति हमारे बीचसे उठ गया है, जिनकी सूझ-बूझकी राष्ट्रीय जीवनकी इस नाजुक घड़ीमें आवश्यकता थी। वे हिन्दू-मुस्लिम एकताको बढ़ानेके लिए सच्चे हृदयसे चिन्तित थे और राष्ट्रीय मामलोंमें उनकी नेक सलाह हमेशा उपयोगी रहती थी। मैं महाराजा साहबके परिवारके प्रति सादर अपनी सहानुभूति प्रकट करता हूँ।

विषैली पत्रकारिता

अखबारोंकी नफरत पैदा करनेवाली बातोंसे भरी हुई कुछ कतरनें मेरे सामने पड़ी हैं। इनमें साम्प्रदायिक उत्तेजना, सफेद झूठ और खून-खराबीके लिए उकसानेवाली राजनीतिक हिंसाके लिए प्रेरित करनेवाली बातें हैं। निःसन्देह, सरकारके लिए मुकदमे चलाना या दमनकारी अध्यादेश जारी करना बिलकुल आसान है। पर ये उपाय क्षणिक सफलताके सिवाय अपने लक्ष्यमें निष्फल ही रहते हैं, और ऐसे लेखकोंका हृदय-परिवर्तन तो कतई नहीं करते, क्योंकि जब उनसे अखबारोंका प्रकट क्षेत्र छीन लिया जाता है तो वे बहुधा गुप्त प्रचार-कार्यका सहारा लेते हैं।

इसका वास्तविक इलाज तो वह स्वस्थ लोकमत है, जो विषैले समाचारपत्रोंको प्रश्रय देनेसे इनकार करता है। हमारे यहाँ पत्रकार संघ है। वह एक ऐसा विभाग क्यों न खोले, जिसका काम विभिन्न समाचारपत्रोंको देखना और आपत्तिजनक लेख मिलनेपर उन पत्रोंके सम्पादकोंका ध्यान उस ओर आकर्षित करना हो? दोषी समाचारपत्रोंके साथ सम्पर्क स्थापित करना और जहाँ ऐसे सम्पर्कसे इच्छित सुधार न हो सके, वहाँ उन आपत्तिजनक लेखोंकी प्रकट आलोचना करना ही इस विभागका काम होगा। समाचारपत्रोंकी स्वतन्त्रता एक बहुमूल्य अधिकार है और कोई भी देश इस अधिकारको छोड़ नहीं सकता। परन्तु यदि इसकी रोकथामकी कोई सख्त कानूनी व्यवस्था न हो, केवल बहुत नरम किस्मकी ही कानूनी व्यवस्था हो, जैसा कि उचित भी है, तो भी मैंने जैसा सुझाया है, रोकथामकी एक आन्तरिक व्यवस्था करना असम्भव नहीं होना चाहिए और उसपर लोगोंको नाराज भी नहीं होना चाहिए।

नौजवान भारत सभा

इस सभाके एक सदस्यने मथुरा जंकशनपर मुझसे पूछा कि क्या मैंने कभी यह कहा है कि कांग्रेसके किसी भी सदस्यको इस सभाका, या सभाके किसी भी सदस्यको कांग्रेसका, सदस्य नहीं बनना चाहिए। मैंने उनसे कहा कि जहाँतक मुझे याद है, मैंने ऐसी राय कभी नहीं दी। उन्होंने तुरन्त ही प्लेटफार्मपर खड़े हुए

१. एक प्रमुख राष्ट्रवादी मुस्लिम नेता, जिनकी मृत्यु २३ मईको हुई थी।

नौजवानोंको मेरे जवाबका भावार्थ कह सुनाया, और कहा कि किसी कांग्रेसी सदस्यने झूठमूठ ही इसे मेरी राय बताया है। यह बात झूठ है और अब हरएक कांग्रेस-सदस्य सभामें शामिल होने और सभाका हरएक सदस्य कांग्रेसमें शामिल होनेको स्वतन्त्र है। जिस रायका सम्बन्ध मेरे नामके साथ जोड़ा जाता था, वह मैंने जाहिर नहीं की थी, पर इसका अर्थ यह तो नहीं होता कि सभी कांग्रेस-सदस्य सभामें शामिल होनेको स्वतन्त्र हैं, या उन्हें सभामें शामिल होना चाहिए। हरएक सभाके अपने नियम होते हैं। इसलिए यदि कांग्रेस-सदस्य यह जाने बिना किसी भी सभा या अन्य संस्थाके सदस्य बनते हैं कि उसकी सदस्यताके नियम क्या हैं, उसमें काम करनेवाले कौन हैं, और उसके कामके तरीके क्या हैं, तो मुझे इससे दुःख होगा। किसीको भी किसी संस्थामें जबर्दस्ती तो शामिल किया नही जा सकता। 'नौजवान भारत सभा' की उन्नति तभी होगी जब वह अपने खातेमें राष्ट्रकी रचनात्मक सेवाका हिसाब दिखा सकेगी, अन्यथा नहीं।

प्रतिद्वन्द्वी कांग्रेस-कमेटियाँ

नैनीतालमें मैंने संयुक्त प्रान्त और अन्य प्रान्तोंमें बनी कुछ प्रतिद्वन्द्वी कांग्रेस-कमेटियोंकी बात सुनी थी। मैंने अनेक स्थानोंपर चुनावोंको लेकर चलनेवाले विवादों की बात भी सुनी थी। यह बुरा लक्षण है। इस प्रकारकी अस्वस्थ प्रतिद्वन्द्विता जहाँजहाँ भी है, वहाँ कोई-न-कोई खराबी जरूर होगी। कांग्रेस कमेटियोंमें पदोंके लिए छीना-झपटी होना भी एक बहुत ही अशोभनीय लक्षण है। कांग्रेसके किसी भी पदका आधार तो सेवाको ही माना जाना चाहिए। और जहाँ सेवा ही मुख्य लक्षण हो, वहाँ कोई अस्वस्थ कही जा सकनेवाली प्रतिद्वन्द्विता हो ही नहीं सकती। कोई भी स्त्री या पुरुष पदोंकी छीना-झपटीमें पड़े बिना बड़ी आसानीसे सेवा-कार्य कर सकता है। राष्ट्रके बुद्धिमान सेवक स्वयं अनुभव करेंगे कि इस प्रकारकी अस्वस्थ होड़में पड़नेकी अपेक्षा उससे अपनेको अलग रखना उनके लिए कहीं लाभप्रद रहेगा। और सेवाके लिए किसीको अलगसे कोई संगठन बनानेकी आवश्यकता नहीं होती। उदाहरणके लिए यदि मैं अपने गाँव या इलाकेके बच्चोंको पढ़ाना या वहाँ सफाई करना चाहूँ, या अपने पड़ोसियोंकी सेवा-शुश्रूषा या खादीका प्रचार या इसी प्रकारके कुछ ऐसे सेवा-कार्य करना चाहूँ जिनसे देशकी उन्नतिमें सहायता मिलती है और जिनमें मेरा सारा समय खप सकता है, तो इनके लिए मुझे कोई संगठन बनानेकी कोई जरूरत क्यों पड़ेगी?

कांग्रेस और साम्प्रदायिकता

एक संवाददाता पूछते हैं कि जो कांग्रेस-सदस्य प्रकट रूपसे साम्प्रदायिक सम्मेलनों और दूसरे साम्प्रदायिक प्रचार-कार्यमें भाग लेता है, क्या वह कांग्रेस-संस्थाका पदाधिकारी बन सकता है?

मेरे खयालसे ऐसा कोई नियम नही है जिससे साम्प्रदायिकताके कारण किसी कांग्रेस-सदस्यका किसी पदके लिए चुनाव निषिद्ध ठहरता हो। परन्तु यदि कांग्रेसको एक विशुद्ध राष्ट्रीय संस्था रहना है, सबके साथ न्याय करना है और अल्पसंख्यकोंकी

रक्षा करनी है तो कांग्रेस उन लोगोंको कभी न चुनेगी जिनके साम्प्रदायिक पूर्वग्रह या झुकाव काफी स्पष्ट दिखते हैं।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, २८-५-१९३१

२८६. ईसाई मिशन

रेवरेंड बी० डब्ल्यू० टुकरके पत्रके निम्नलिखित अंश प्रकाशित करते हुए मुझे बड़ी प्रसन्नता हो रही है:[१]

> शिक्षा, रोगोंका इलाज और इसी प्रकारके अन्य तरीकोंके जरिए लोगोंको अपने धर्ममें दीक्षित करनेकी कोशिशोंके दौरान ईसाई मिशनरियोंकी गतिविधियों का आपने विरोध किया है। मैं इससे पूर्णतया सहमत हूँ। जब शिक्षाका इस्ते-माल ऐसे प्रयोजनके लिए किया जाता है तो वह शिक्षा रह ही नहीं जाती; बल्कि वह शिक्षाके स्थानपर सरकार द्वारा जारी की गई वर्तमान प्रणालीको स्थायी बनानेकी एक कोशिश-भर बनकर रह जाती है, और उसे कोई भी ऐसा ईमानदार मिशनरी एक क्षणके लिए भी बर्दाश्त नहीं करेगा जिसे उसके अपने देशके शैक्षणिक प्रयोगोंकी थोड़ी भी जानकारी हो और जिसकी बुनियादी दिलचस्पी शिक्षामें ही हो, धर्म-परिवर्तनमें नहीं। यह तो ठीक है कि रोगसे छुटकारा पानेका रोगियोंका अधिकार है, लेकिन साथ ही यह अनुमान करना भी शायद नितान्त अनुचित नहीं होगा कि मिशनरी चिकित्सकोंका अपने चिकित्सालयोंमें तुरन्त लाभ पहुँचानेवाली दवाओंपर विशेष जोर देने और रोगोंकी रोक-थाम करनेवाली दवाओं तथा स्वास्थ्य-शिक्षाकी उपेक्षा करनेके पीछे उनकी बुद्धिहीनता नहीं, बल्कि लोगोंको तुरन्त लाभ पहुँचाकर उनको अपने धर्ममें दीक्षित करनेका उत्साह ही रहा है। यदि जनताका कल्याण और उनके व्यक्तित्वका विकास ही जन-सेवाका एकमात्र उद्देश्य नहीं रहेगा तो सभी मानवीयतापूर्ण सेवा कार्योंपर इसका दुष्प्रभाव पड़ना अनिवार्य है। और यदि व्यक्तियोंको किसी अन्य सामा-जिक या धार्मिक समुदायमें शामिल करनेकी दृष्टिसे ही कोई सेवा-कार्य किया जायेगा, तो फिर जनसेवाके उद्देश्यका निर्वाह नहीं किया जा सकता।
>
> . . . इस युगमें यही भावना प्रधान है कि धर्म और ईश्वरके प्रति निष्ठा तुरन्त ही फलवती होनी चाहिए और उसके कारण व्यक्तिकी भौतिक समृद्धिमें तुरन्त वृद्धि होनी ही चाहिए। यह भावना सभी आध्यात्मिक धर्मोंका निषेध है, उनकी अस्वीकृति है। . . . सचमुच इस प्रकारकी भावनाने समूचे ईसाई सम्प्रदायके चरित्रमें विकृति पैदा कर दी है। . . . वैसे तो जीवनके

१. साधन-सूत्रसे प्राप्त पाठसे अंशतः उद्धृत।

किसी भी क्षेत्रमें इस सिद्धान्तको उचित नहीं ठहराया जा सकता कि शुद्ध लक्ष्य प्राप्त करनेके लिए कैसे भी साधनों, अशुद्ध साधनों तकका प्रयोग उचित है, परन्तु धर्मके क्षेत्रमें जहाँ हृदयकी शुद्धिको ही सर्वोपरि रहना चाहिए, इस सिद्धान्तका कोई भी औचित्य नहीं।

. . . ईसा सामाजिक समताके उत्कट अभिलाषी थे; हिन्दू धर्मके सर्वोत्कृष्ट कालमें यह उसकी भी विशेषता रही है। स्वयं एक कट्टर यहूदी होते हुए भी, उनमें कभी साम्प्रदायिकता नहीं आई और उन्होंने ऐसी हरएक प्रवृत्ति का सख्त विरोध किया जो सार्वभौम भ्रातृत्वकी भावना पैदा होनेमें बाधक बनती थी। तत्कालीन राष्ट्रवादका विरोध उन्होंने इसी कारण ठीक उसी तरह किया था जैसा कि आप आज भारतमें पृथकतावादी प्रवृत्तियाँ पैदा करनेवाले राष्ट्रवादका कर रहे हैं। मेरा अपना विश्वास है कि यदि आधुनिक ईसाई मिशनरी अपने ईश्वर और प्रभुके प्रति सच्चे रहना चाहते हैं तो उन्हें लोगोंको अपने धर्ममें दीक्षित करनेकी सभी कोशिशें एकदम बन्द कर देनी चाहिए; क्योंकि ऐसा करके वे उन लोगोंको एक प्रतिष्ठित सामाजिक व्यवस्थासे अलग करते हैं और इस प्रकार उस सामाजिक व्यवस्थाके उत्थानके प्रति उन लोगोंमें दायित्वहीनताकी भावना पैदा करते हैं।

. . . इस सरकारने गैर-ब्रिटिश मिशनरियोंपर यह शर्त लगा दी है कि वे इस देशकी आर्थिक और राजनीतिक बुराइयों-जैसे परम महत्त्वपूर्ण मामलों में बिलकुल तटस्थता बनाये रखें और इतना ही नहीं, सरकारने उनको एक प्रतिज्ञा करनेपर भी विवश किया है जिसका अर्थ सरकार यह लगाती है कि मिशनरी लोग सरकारको सक्रिय समर्थन देंगे। . . . मेरे अपने मामलेमें तो सरकारने मेरे राजनीतिक सभाओंमें दर्शककी हैसियतसे जानेमें भी आपत्ति की है, और सो भी तब जब वह बिलकुल स्पष्ट रूपसे मानती है कि मेरे ऊपर किसी भी नैतिक कलंकका कोई आरोप नहीं है। लेकिन मैंने सरकारको जो वचन दिया है, सरकार उसकी यही व्याख्या करती है कि मुझे यह अधिकार भी नहीं है। भारतके ईसाई मिशनरियों और संसारकी एक सबसे अधिक संगठित बुराई — साम्राज्यवाद — के बीच साठ-गाँठ हो जाने और मिशनरियोंके उसके हाथमें खेलनेका यह एक अत्यन्त ही स्पष्ट प्रमाण है।

इसीलिए मुझे इसकी बड़ी खुशी है कि आपने स्पष्ट कर दिया है कि स्वराज्य सरकारके अन्तर्गत आप इस बुराईको बरकरार नहीं रखेंगे; और आप ऐसी कोई कानूनी व्यवस्था नहीं करेंगे कि यदि मिशनरी लोगोंको अपने धर्ममें दीक्षित करना नहीं छोड़ देंगे तो उनको अपने देश वापस लौटनेके लिए विवश किया जाये। कोई भी सरकार इस प्रकार धार्मिक स्वतन्त्रताको सीमित करनेकी धृष्टता नहीं कर सकती। . . .

श्रेष्ठतर धर्म होनेके ईसाई धर्मके विशिष्ट दावेकी आपने जो आलोचना की है, उसके प्रति तो मुझे पूरी सहानुभूति है, पर आपके इस कथनसे निकलनेवाले निष्कर्षोंका तो मुझे विरोध करना ही पड़ेगा कि भारतके धर्म उसके लिए पर्याप्त हैं। . . .

इस पत्रमें मुझे अपनी ओरसे कुछ भी नही जोड़ना है। लेकिन मुझे अपने उस कथनपर आग्रह करते रहना पड़ेगा जिसपर रेवरेंड टुकरने आपत्ति की है: कथन यह है: "भारतके धर्म उसके लिए पर्याप्त है।" निश्चय ही इसका अर्थ इससे अधिक कुछ नहीं है कि भारतको अपने धर्म बदलने या नये धर्म अपनानेकी कोई जरूरत ही नहीं। पर यह बात जिस लेखमें कही गई है, उसके सन्दर्भसे स्पष्ट हो जाता है कि उसका यह अर्थ बिलकुल ही नहीं होता कि विभिन्न धार्मिक मतोंके व्याख्याताओं को अन्य धर्मोसे कुछ सीखना ही नही है। यदि विभिन्न धार्मिक मतोंके बीच सहानुभूतिपूर्ण सम्पर्क स्थापित हो जाये और एक-दूसरेसे कुचक्रोंकी कोई आशंका न हो, तो प्रत्येक धर्म शेष अन्य धर्मोंसे बहुत-कुछ सीख सकता है। विरोध तो केवल इस बातका किया गया है कि लोगोंको अपने धर्ममें दीक्षित करना ही एक लक्ष्य हो और उसके लिए भी सदा उचित तथा शुद्ध साधन न अपनाये जायें।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, २८-५-१९३१

२८७. पंचायतें

पंचायत नाममें एक पुरानी सुगन्ध है; यह एक अच्छा शब्द है। इसका शाब्दिक अर्थ है गाँववालों द्वारा चुने गये पाँच आदमियोंकी सभा। यह उस पद्धतिका सूचक है, जिसके द्वारा भारतके ग्रामीण प्रजातन्त्रोंका शासन चलता था। परन्तु अंग्रेज सरकारने अपनी अत्यन्त निर्दय लगान-वसूलकी पद्धतिसे इन पुराने प्रजातन्त्रोंको प्रायः नष्ट कर डाला; ये लगान-वसूलीके इस आघातको सह न सके। गाँवके बड़े-बूढ़ोंको दीवानी और फौजदारीके हक देकर कांग्रेसवाले इस प्रथाको पुनः जीवन देनेका प्राथमिक प्रयत्न कर रहे हैं। १९२१में पहली बार ऐसा प्रयत्न किया गया था पर वह असफल रहा। अब फिरसे यह किया जा रहा है, परन्तु यदि यह किसी निश्चित पद्धतिके अनुसार उचित ढंगसे नहीं किया गया — मैं शास्त्रीय पद्धतिकी बात नहीं कहता — तो यह फिर असफल हो जायेगा।

मुझसे नैनीतालमें कहा गया था कि संयुक्त प्रान्तके कुछ स्थानोंमें बलात्कार-जैसे फौजदारी मामलोंकी पेशी भी इन तथाकथित पंचायतोंमें हुई। मैंने कुछ नासमझ या स्वार्थी पंचायतोंके मनमाने फैसलोंके किस्से भी सुने हैं। ठेठ असमसे मेरे पास यह रिपोर्ट आई है:

निश्चित रूपसे पता चला है कि चापरमुखकी कांग्रेस कमेटीने वहाँ एक प्रकारकी द्वैध-शासन प्रणाली शुरू कर दी है, जिसके द्वारा दीवानी और

फौजदारी मामलोंका फैसला किया जाता है। चापरमुखके पड़ोसमें कुछ शाखा-कार्यालय भी हैं, जहाँ इसी प्रकारकी कार्रवाई होती है। चापरमुखके दफ्तरमें दीवानी और फौजदारी मामलोंके रजिस्टर भी रखे जाते हैं। कहा जाता है कि फौजदारी मामलोंमें जुर्माने किये जाते हैं और दीवानी मुकदमोंमें डिग्रियाँ जारी की जाती हैं, और कुछ मामलोंमें डिग्रीके अनुसार जायदाद जब्त की गई है, या जब्त करनेकी कोशिश हुई है।

अगर यह सच हो, तो यह बहुत बुरी बात है। ऐसी अनियमित पंचायतें अपने ही असह्य बोझके नीचे दबकर चूर-चूर हो जायेंगी। इसलिए ग्राम्य कार्यकर्त्ताओंकी रहनुमाईके लिए नीचे कुछ नियम दिये देता हूँ:

१. प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीकी लिखित स्वीकृतिके बिना कोई भी पंचायत कायम न की जाये;

२. पंचायतका पहला चुनाव ढिंढोरा पीटकर सार्वजनिक सभाकी सूचना देकर उस सभामें किया जाना चाहिए;

३. तहसील कमेटी द्वारा उसकी सिफारिश की जानी चाहिए;

४. ऐसी पंचायतको फौजदारीके हक नही होने चाहिए;

५. यदि दोनों फरीक पंचायतके सामने अपनी शिकायतें पेश करें तो वे दीवानी मामलोंका विचार कर सकती हैं;

६. पंचायतमें अपने मामलेका विचार करानेके लिए किसीपर दबाव न डाला जाये;

७. किसी पंचायतको जुर्माना करनेका अधिकार नही होना चाहिए; नैतिक अधिकार, कठोर पक्षपातहीनता और दोनों पक्षोंका स्वेच्छापूर्वक आज्ञा-पालन ही उसकी दीवानी डिग्रियोंकी स्वीकृतिका आधार होना चाहिए;

८. फिलहाल सामाजिक या अन्य किसी तरहका बहिष्कार नहीं किया जाना चाहिए;

९. हरएक पंचायतसे यह आशा रखी जायेगी कि

(क) वह गाँवके बालक-बालिकाओंकी शिक्षाका प्रबन्ध करे;

(ख) सफाईकी व्यवस्था करे;

(ग) औषध आदिका इंतजाम करे;

(घ) गाँवके तालाब और कुओंकी मरम्मत तथा सफाईका ख्याल रखे;

(ङ) तथाकथित अन्त्यजोंकी उन्नति और उनकी दैनिक आवश्यकताओंका ध्यान रखे;

१०. बिना किसी उचित कारणके जो पंचायत चुनावके छः महीनोंके अन्दर ९ वें नियममें उल्लिखित आवश्यकताओंका प्रबन्ध करनेमें असफल रहे, या दूसरी तरह गाँववालोंका विश्वास सम्पादन न कर सके, या ऐसे किसी कारणसे — जो प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीके विचारमें पर्याप्त हो — स्वयं निन्दित ठहरे, तो उसे तोड़कर उसके स्थानमें नई पंचायत चुनी जा सकती है।

आरम्भिक अवस्थाओंमें आवश्यक है कि पंचायतोंको जुर्माना करने या सामाजिक बहिष्कार करनेका अधिकार न दिया जाये। गाँव सिद्धान्तहीन मनुष्योंके हाथोंमें पड़कर सामाजिक बहिष्कार एक भयंकर हथियार सिद्ध हुआ है। जुर्मानेका नतीजा भी बुरा हो सकता है और वह उसके उद्देश्यको ही विफल बना सकता है। जो पंचायत वास्तवमें लोकप्रिय है और नवें नियमके अनुसार रचनात्मक काम करके अपनी लोकप्रियताको बढ़ाती है, अपनी नैतिक महत्ताके फलस्वरूप लोग उसके फैसलों और अधिकारोंका सम्मान आप ही करने लगेंगे। यह किसीको प्राप्य या किसीसे छीना जा सकनेवाला एक बड़े-से-बड़ा अधिकार है।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, २८-५-१९३१

२८८. नमक

शिमलासे नीचे लिखी अभिनन्दनीय विज्ञप्ति प्रकाशित की गई है:

लॉर्ड इर्विन और श्री गांधीके बीच जबसे समझौता हुआ है, भारत सरकार समझौतेकी २० वीं धारापर अमल करनेके लिए भिन्न-भिन्न जिलोंकी व्यवस्था और नियमादिकी तफसील निश्चित करनेमें लगी हुई है। इस धाराका सम्बन्ध उन स्थानोंके निवासियों द्वारा, उनके बिलकुल पासकी जगहोंमें, जहाँ नमक इकट्ठा किया या बनाया जा सकता है, वहाँ नमक बटोरने और बनानेसे हैं। ये तफसीलकी बातें अब प्रायः सब जगह तय हो चुकी हैं, और साधारणतया जिस प्रकार इस व्यवस्थापर अमल किया जाना चाहिए, वह नीचे दिया जाता है:

१. समझौतेकी २० वीं धारा गरीबोंके हितके लिए रखी गई है। नमकके क्षेत्रके आसपासके गाँववाले निजी खर्चके लिए और गाँवमें बेचनेके लिए भी नमक बटोर या बना सकते हैं।

इसमें निजी खर्चमें खादके लिए, मवेशीके लिए और मछलीको सड़नेसे बचानेके लिए खर्च होनेवाला नमक भी शामिल है।

२. नमक बटोरने या बनानेके लिए गाँववाले नमक-क्षेत्रमें गड्ढे खोद सकते हैं या घेरकर जमीन छेक सकते हैं।

३. गाँवके बाहर व्यापार नहीं किया जा सकता। बटोरा और बनाया हुआ नमक लोग खुद उठाकर ले जायेंगे, गाड़ी वगैरापर लादकर नहीं ले जा सकते।

४. जहाँ इस प्रकार नमक बनाया जायेगा, वहाँ सरकारी अफसर किसी तरहकी दस्तन्दाजी नहीं करेंगे, और वहाँसे सरकारी पहरा भी हटा लिया जायेगा।

५. जिस गाँवमें इस अधिकारका दुरुपयोग होगा वहाँ निवासियोंसे नमक बनानेका अधिकार छीन लिया जायेगा। यदि किसी गाँवके लोग जरूरतसे ज्यादा नमक इकट्ठा कर रखेंगे तो समझा जायेगा कि उस गाँवने अधिकारका दुरुपयोग किया है।

मैं आशा रखता हूँ कि कार्यकर्त्ता इन सूचनाओंको समझेंगे और सावधानीके साथ गाँववालोंको समझा देंगे, जिससे मर्यादाका कहीं उल्लंघन न होने पाये।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, २८-५-१९३१

२८९. देश-सेविकाओंसे

२८ मई, १९३१

जब मैं बम्बईमें था तब देश-सेविकाओंसे मिलनेकी इच्छा थी। मैंने मिलनेका समय निकालनेका प्रयत्न किया परन्तु सब बहनोंसे नहीं मिल सका था। अन्तमें सब बहनोंने अपने हस्ताक्षरसे पत्र लिखकर सन्तोष मान लिया था। उनका आभार मानते हुए आजतक मैं उन्हें दो पंक्तियाँ भी न लिख सका। इसका एक कारण यह था कि सफरमें वक्त नहीं मिलता, परन्तु दूसरा और मुख्य कारण तो यह है कि मैं लिखते समय बराबर इसे भूलता ही गया। आशा है, बहनें मुझे माफ करेंगी। सेविकाओंके कामका कुछ-न-कुछ वर्णन तो अखबारोंमें छपा ही करता था, और जेलमें मुझे दो-तीन अखबार भी मिलते थे, जिससे मुझे उनके कामकी जानकारी हो सकती थी। बहनोंकी सतत सेवा और उनकी निडरता देखकर मेरा हृदय खुशीसे उछल पड़ता था। मुझे आशा है कि बहनें इसी हौसलेके साथ आगेका अधिक कठिन और रचनात्मक कार्य भी करेंगी और अपना तथा देशका गौरव बढ़ायेंगी। हिन्दुस्तानकी स्त्रियोंने पिछले बारह महीनोंमें जो किया है, उससे दुनियाको आश्चर्य तो हुआ ही है; परन्तु इसीसे बहनोंके कार्यकी इतिश्री नहीं हो जाती। यह तो श्रीगणेश ही हुआ है।

[गुजरातीसे]
नवजीवन, ३१-५-१९३१

२९०. पत्र : प्रभावतीको

२८ मई, १९३१

चि० प्रभा,

पत्र मिला। यदि विवाह जून मासके अन्ततक न हो सकता हो तो तुम वापस आजाओ; बादमें विवाहके समय एक सप्ताहके लिए वहाँ चली जाना। ठीक तो यही होगा। मेरी दृष्टिसे तो विवाहके लिए सारे दिन शुभ हैं। किन्तु यदि यह बात न मानी जा सके और माता-पिता खुशीसे आनेकी आज्ञा दे दें तो तू फौरन आ जाना। यदि उन्हें बुरा लगे तो जूनका पूरा महीना वहीं बिता दें। सीताबदियारा भी जाकर रह सकती है और कुटुम्बके प्रति कुछ ऋण अदा कर सकती है। यदि वहाँ रहना पड़ता है तो काकाजी,[1] बाबाजी तथा विनोबाको लिख देना और उनकी आज्ञा ले लेना। मैं तो कह ही दूँगा। वहाँ रहनेके बारेमें पूरी स्थिति तो तुझे ही मालूम है इसलिए तुझे जैसा ठीक लगे वही करना।

जयप्रकाशको उसके दर्दके बारेमें कड़ाईसे लिखना। वहाँ रहे तो उससे मिलनेका अवसर निकालना।

थोड़ा बहुत अध्ययन भी करते रहना।

गंगाबहनके लड़की हुई थी। एक दिन रहकर चल बसी।

अमतुस्सलाम दुखी रहती है। कह नहीं सकता कि तेरे वापस लौटनेतक रहेगी या चली जायेगी।

तूने पूनियाँ क्यों मँगाई हैं? यहाँसे भेज तो देंगे, किन्तु तुझे खुद पींज लेना चाहिए। तेरा हाथ दुखे तो दूसरोंको सिखा देना चाहिए। क्या छपरामें भी कोई नहीं कातता? जो कातते हैं वे पींजते नही हैं? हम जहाँ भी जायें पूनियाँ वहींसे प्राप्त करनेका आग्रह रखना चाहिए।

तेरा वजन कैसा है?

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

२९ को निकलकर तीन जूनको वापस आऊँगा।

गुजराती (जी० एन० ३४१२)की फोटो-नकलसे।

१. बापुना पत्रो-१०: श्री प्रभावती बहेननेके अनुसार जमनालाल बजाज।

२९१. पत्र : नारणदास गांधीको

बारडोली
२८ मई, १९३१

चि० नारणदास,

तुम्हारा पत्र मिला। हनुमानसिंहके सम्बन्धियोंको लिखना कि मुझे उसकी मृत्युसे दुख भी हुआ है और सुख भी। उसकी देह जीर्ण हो गई थी इसलिए उसका न रहना ही अच्छा हुआ। शरीरमें स्थित आत्मा तो अमर है ही। आपसी सम्बन्धके कारण दुख तो होता ही है, पर उसे दबा देना ही उचित है। इसलिए मुझे क्षणिक ही दुख हुआ। सम्बन्धियोंको भी ऐसा ही लगा। इसका हिन्दी अनुवाद भेज देना और साथमें गुजराती भी। जिसे साँपने डसा है यह शंकरराव कौन है? अब कैसा है? साँपने किस तरह काट लिया? नदीमें वह पाँवके नीचे आ गया था या उसने यों ही जान-बूझकर डस लिया।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती एम० एम० यू० – १ से।

२९२. पत्र : वालजी गोविन्दजी देसाईको

बारडोली
२८ मई, १९३१

भाईश्री वालजी,

अस्पतालमें रहनेसे कुछ फायदा हुआ है या तबीयत जैसीकी तैसी ही बनी है। कब्ज मत रहने देना। इस पत्रके मिलते ही चले आओ तो कब्जके कांटेको निकाल दूर करें।

तुम्हारे लेखके बारेमें भाई मोहनलालको लिखा है।

पहली प्रस्तावना तो नही मिली। यह दूसरी भेज रहा हूँ :

"ये ग्यारह मुद्दे इस तरह लिखे गये हैं कि सब उन्हें समझ सकें। उन्हें समझकर पाठक जितने मुद्दोंपर हो सकें, उतनोंपर अमल आज आजसे ही शुरू कर दें तो स्वराज्य कितना पास आ जायेगा?

मोहनदास गांधी"

यह प्रस्तावना भेज तो रहा हूँ पर मन कहता है कि अब तो ग्यारहके बजाय बीस मुद्दे हो गये माने जायेंगे न? इसलिए उनपर नही लिखोगे? किन्तु इसकी तो तुम्हें ही ज्यादा खबर है।

बापू

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ७४१४)की फोटो-नकलसे।
सौजन्य: वा० गो० देसाई

२९३. पत्र : जमनादास गांधीको

बारडोली
२८ मई, १९३१

चि० जमनादास,

तुम्हारा २२ तारीखका पत्र मिला है। उसके पहलेका लिखा हुआ तो अभी तक नही मिला। तुम डाक्टरको पत्र नही लिख सकते, यह बात समझमें नही आती। जो है उसे लिखनेमें संकोच क्यों। रतिलालको थाना ले जाते हुए लल्लूभाईको साथ ले जानेकी इच्छाके विषयमें मुझे कोई विचित्रता नहीं लगती। पासमें पैसा हो और फिर भी जरूरतके समय उसे खर्च न करे, ऐसा तो विरला ही मनुष्य होगा। इसके सिवा पैसा बचाया भी किसलिए जाता है? अन्नाके बारेमें मुझे तार तो मिला ही था। वह नही आ सकता, मैंने तो ऐसा लिख दिया था। किन्तु हो सकता है कि वह अपने मनसे आ गया हो।

वहाँका राज्यतन्त्र कैसा चल रहा है? शराबके बारेमें उस अर्जीका क्या हुआ?

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च:]

फिलहाल तो यहीपर हूँ।

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९३२३)से।
सौजन्य: जमनादास गांधी

२९४. भेंट : पत्र-प्रतिनिधियोंको

बारडोली
२८ मई, १९३१

बारडोलीमें और उसके आसपास फिरसे हालात बिगड़नेके बारेमें बम्बईके एक पत्रमें प्रकाशित समाचारके सिलसिलेमें ली गई भेंटमें गांधीजी ने कहा :

जनतासे मेरा अनुरोध है कि वह सभी सनसनीखेज बयानोंपर अविश्वास ही करे और उनके कारण अशान्त न हो। मैंने तो यह पहली बार सुना है कि किसान लोग लगान अदा नही करना चाहते। मैं पक्की तौरपर जानता हूँ कि किसान सदा से सामर्थ्य-भर लगान अदा करते रहे हैं और अब भी कर रहे हैं। मैं यह दिखानेके लिए शीघ्र ही एक सार्वजनिक वक्तव्य जारी करनेकी सोच रहा हूँ कि दिल्ली-समझौतेकी एक-एक चीजको भी कार्यान्वित करनेके मामलेमें सरदार वल्लभभाई पटेल और अन्य असहयोगी कार्यकर्त्ता कितनी निष्ठा और लगनके साथ सक्रिय रहे हैं।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दुस्तान टाइम्स, ३०-५-१९३१

२९५. पत्र : आर० एम० मैक्सवेलको

बारडोली
२९ मई, १९३१

प्रिय श्री मैक्सवेल,

आपके कई पत्र आ चुके हैं। उनके लिए धन्यवाद। जैसे-जैसे समय मिलता जायेगा, मैं जल्द-से-जल्द उनके उत्तर निबटाता चलूँगा। लेकिन आपके सबसे बादके पत्र और उससे पहलेके एक पत्र अर्थात् इस महीनेकी २५ और २४ तारीखके पत्रों का उत्तर देनेमें तो मुझे कुछ अधिक समय लगेगा ही।

मेरी समझमें नहीं आता कि प्रभातफेरियोंपर किसीको क्या आपत्ति हो सकती है। यह ठीक है कि प्रभातफेरियोंकी शुरुआत असहयोग आन्दोलनके दौरान ही हुई थी लेकिन वे अपने आपमें तो सर्वथा निर्दोष हैं। मेरी समझमें नहीं आता कि उनसे नागरिकोंकी कितनी शान्ति भंग होती है। मैंने अपनी हालकी यात्राओंके दौरान देखा है कि अन्य शहरोंमें भी उनका काफी प्रचलन है। हाँ, भड़कानेवाले गीतोंपर प्रतिबन्ध लगानेकी बात मैं समझ सकता हूँ। लेकिन मैं यह समझनेमें सर्वथा असमर्थ रहा हूँ कि नागरिकोंको बड़े सुबह ही सृष्टाके प्रति उनके कर्त्तव्यकी याद दिलानेवाली इस निर्दोष और सुन्दर प्रथामें कोई हस्तक्षेप करना सरकारके लिए कैसे उचित होगा।

सेवादलके लोग जो अभ्यास किया करते हैं, वह भी कोई नई बात तो नहीं है। वर्षोंसे वे ऐसा करते आ रहे हैं और कभी कोई हस्तक्षेप नहीं किया गया। यदि उसमें किसी खास चीजपर कोई आपत्ति हो, तो चाहूँगा कि उसे स्पष्ट किया जाये। और अधिक जानकारी मिले बिना, मैं आपके इस मतकी ताईद नहीं कर सकता कि ये शिविर समझौतेकी भावनाको पूरी तौरपर प्रदर्शित नहीं करते और वे सामान्य स्थिति तथा भावनाओंको पुनः प्रतिष्ठित करनेमें कुछ विघ्न डालनेकी दृष्टिसे ही आयोजित किये जाते हैं।

और आपका शराबकी बिक्रीसे सम्बन्धित दूसरा पत्र देखकर तो मुझे आश्चर्य और दुःखका अनुभव हुआ।

शराबकी दूकानोंपर धरना देना सरकार वैध मानती है। लेकिन यदि सरकार यह माननेके बाद भी उसे बन्द करानेके लिए तरह-तरहके तरीके, यहाँतक कि अवैध माने जानेवाले तरीके अपनाती रहे और साथमें यह भी दुहाई दे कि ऐसी कार्रवाई समझौतेको भंग नही करती तो फिर मुझे कहना ही पड़ेगा कि सरकार चाहे जो क्यों करे उसे समझौता भंग करनेवाली कार्रवाई माना ही नहीं जा सकता।

आपके पत्रसे मुझे [पहलीबार] पता चला है कि बिक्रीके लिए नियत समयके अलावा और बिक्रीके लिए निश्चित स्थानके अलावा भी शराबकी बिक्री करना सर्वथा वैध है। मैं स्वीकार करता हूँ कि यह सचमुच एक ऐसी नई जानकारी है जिसके बारेमें मैंने कल्पना भी नही की थी। इसका मतलब तो यह हुआ कि क्लेकटरोंके सामने ऐसे कोई भी वैधानिक प्रतिबन्ध या विनियम मौजूद नहीं हैं जिनके आधारपर वे निर्णय करें और जिनकी जानकारी जनताको देना उनके लिए जरूरी हो। सचमुच यदि शराब सम्बन्धी कानूनकी यही दशा है, या यों कहें कि क्लेक्टरोंकी अपनी मर्जी को छोड़कर और कोई भी कानून शराबकी बिक्रीपर लागू नहीं होता, तो फिर जनताको यह जानकारी जितनी जल्द करा दी जाये उतना ही अच्छा रहेगा। तब यह एक बड़ा गम्भीर मसला हो जायेगा और इसपर कांग्रेस कार्यसमितिको विचार करना ही पड़ेगा।

महामहिम मुझे यह कहनेकी अनुमति दें कि स्पष्टतः उनको इस तथ्यकी जानकारी नहीं है कि इससे पहलेके जिला अधिकारी और पुलिस सुपरिंटेंडेंटने अहमदाबाद में चलनेवाले धरनेको सर्वथा शान्तिपूर्ण और आपत्तिहीन मान लिया था। स्पष्ट ही महामहिमको इस तथ्यकी भी जानकारी नहीं है कि धरने तो असहयोग आन्दोलनकी शुरुआतसे कहीं पहले मजदूर-संघ द्वारा मजदूरोंके हितमें शुरू किये गये थे। और पाश्चात्य देशोंसे अहमदाबाद आनेवाले नवागन्तुकोंने धरनेके तरीके की सराहना भी की थी।

महामहिम मुझे यह कहनेके लिए भी क्षमा करें कि आपके पत्रके अन्तिम अनुच्छेद के प्रारम्भिक वाक्योंसे स्पष्ट है कि अहमदाबादमें चलनेवाले धरनोंके तौर-तरीकोंके बारेमें आपकी अनभिज्ञता देखकर आश्चर्य होता है। मैं इनके विषयमें यहाँ बतला दूँ कि ऐसी निगरानी रखनेके लिए मजदूर-संघ और शराबी लोग भी धरना देनेवालोंके

कृतज्ञ हैं, और इसका सारा खर्च मजदूर-संघने ही उठाया है। निश्चय ही महामहिमका यह कर्त्तव्य था कि एक प्रतिष्ठित संस्थाके कामके तरीकोंके बारेमें ऐसे अवांछनीय विचार प्रकट करनेसे पहले वे यह देख लेते कि उन्होंने जिन तथ्योंको आधार बनाया है वे अपने-आपमें पूरी तरह सही हैं या नहीं।

अन्तिम वाक्यमें यह मत प्रकट किया गया है कि इस प्रकारके धरने शान्तिपूर्ण हो ही नहीं सकते। इसे तो समझौता सम्पन्न करानेवाले लॉर्ड इर्विनपर एक छिपा हुआ कटाक्ष माना जा सकता है। पर मुझे पूरा भरोसा है कि महामहिम कभी ऐसा कटाक्ष करनेकी बात सोचतक नहीं सकते।

अन्तमें, मैं अपना विनम्र मत फिर दोहराता हूँ कि यदि अहमदाबादमें शराबकी बिक्रीका मौजूदा तरीका जारी रहा तो वह समझौतेकी भावनाका उल्लंघन होगा; फिर उसमें शाब्दिक अर्थका उल्लंघन भले न हो।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

अ० भा० कां० क०, फाइल सं० ४, १९३१, भाग २।
सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

२९६. पत्र: गंगाबहन झवेरीको

२९ मई, १९३१

चि० गंगाबहन,

तुम्हारे नडियाद पहुँचनेकी खबर छगनलालने दी है। यह भी मालूम हुआ कि तुम मुझे मिलना चाहती हो। जब चाहो आ जाओ। फिलहाल बोरसद नहीं जाना है। नवीन जहाँ भी हो, साथका पत्र उसे भेज देना।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ३११४)की फोटो-नकलसे।

२९७. पत्र : पद्माको

बारडोली
२९ मई, १९३१

चि० पद्मा,

पिताजीसे नैनीतालमें मुलाकात हुई थी। तू क्या उन्हें पत्र लिखती रहती है? अब तू कैसी है? मुझे सभी खबरें दे।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ६११९)की फोटो-नकल तथा सी० डब्ल्यू० ३४७१ से भी। सौजन्य : प्रभुदास गांधी

२९८. पत्र : प्रभावतीको

बारडोली
२९ मई, १९३१

चि० प्रभावती,

मेरा पत्र तुम्हें मिल गया होगा। मुझे बीचमें पत्र लिखने लायक समय भी नहीं मिलता था। पैसेके बारेमें तो नारणदासको लिख ही दिया था। सात जूनतक तो मेरे बारडोलीमें ही होनेकी सम्भावना है। मुझे यहीं पत्र लिखना और पूरी खबर देना। मेरा स्वास्थ्य अच्छा है। खुराक वही है — दूध और फल।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो : श्री प्रभावतीबहनने

२९९. पत्र : नारणदास गांधीको

बारडोली
२९ मई, १९३१

चि० नारणदास,

कल 'नवजीवन'के लिए स्वदेशी-व्रतपर लेख[1] भेज दिया है। यही लेख व्रत-विचार अर्थात् 'मंगल-प्रभात'के लिए है। साथमें डाहीबहन सोनाभाईके लिए पत्र है। वह उदवाड़ा बाजारके स्त्री स्वराज्य संघमें थी; किन्तु उसने वह स्थान छोड़

१. देखिए "स्वदेशी व्रत", ३१-५-१९३१।

देनेकी आज्ञा माँगी थी। इसलिए शायद अब वहाँ न हो — जहाँ भी हो वहीं यह पत्र भेज देना।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

स्वामी रामदासके [सुवाच्य] लेखन सम्बन्धी दोहेका[1] अनुवाद मैंने जेलसे भेजा था। यदि मिल जाये तो वह मुझे भेज देना। डाहीबहनका पत्र नहीं भेज रहा हूँ। वह उदवाड़ामें ही है।

गुजराती एम० एम० यू० – १ से।

३००. पत्र : के० एफ० नरीमानको

स्थायी पता, साबरमती
३० मई, १९३१

प्रिय नरीमान,

सरदार गरदाके सबसे हालके पत्र और अपने उत्तरकी प्रतियाँ संलग्न कर रहा हूँ। यदि अब भी आपका खयाल हो कि वार्ताके जरिए कुछ किया जा सकता है, तो दूसरी बात है; नहीं तो आप कानूनी कार्रवाईके बारेमें अपने उसी सुझावपर अमल कीजिए जो आपने सरदार पटेलको अपने पत्रमें लिखा था। यदि कार्रवाईकी कोई जरूरत न समझें और आगे वार्ता भी न चलानी हो, तो हमें पूरे मामलेको अभी कुछ समयतक के लिए मनसे निकाल देना चाहिए।

हृदयसे आपका,

संलग्न : २

श्री के० एफ० नरीमान
मारफत बम्बई प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी
कांग्रेस भवन, गिरगाँव बैकरोड
बम्बई

अंग्रेजी (एस० एन० १७१६५)की फोटो-नकलसे।

१. दासबोध, १९।

३०१. पत्र : एफ० कोठावालाको

बारडोली
३० मई, १९३१

प्रिय श्री कोठावाला,

अब मैं वराडके पटेल जहाँगीरके विरुद्ध लगाये गये आरोपोंके बारेमें एक टिप्पणी संलग्न कर रहा हूँ। यदि कोई निष्पक्ष खुली जाँच हुई तो न्यायाधिकरणके सामने सभी आरोपोंके समर्थनमें पूरा साक्ष्य प्रस्तुत किया जायेगा। जाँच पूरी तरह खुली हो, इसपर जनताको बिलकुल कोई आपत्ति नहीं है।

और मेरी सूचनाके अनुसार तो पटेल जहाँगीरके पास शराब बेचनेका लाइसेंस है। मेरी रायमें ऐसा लाइसेंस रखते हुए वे पटेलके पदपर बने नहीं रह सकते। और चूंकि इनके विरुद्ध बड़े गम्भीर आरोप लगाये हैं और चूंकि गाँववालोंके साथ की जानेवाली उसकी ज्यादतियोंकी शिकायतें अब भी आती रहती हैं, इसलिए मेरा अनुरोध है कि या तो बहुत शीघ्र ही एक सार्वजनिक जाँच कराई जाये या फिर उन्हें जल्द ही पदसे हटा दिया जाये। यहाँ मुझे यह भी बतला देना चाहिए कि उक्त कर्मचारीके अवांछनीय व्यवहारका यह प्रश्न एक बिलकुल ही स्वतन्त्र प्रश्नके रूपमें उठाया गया है। अस्थायी नियुक्तियोंके सामान्य प्रश्नपर इसका कोई असर नहीं पड़ता, अर्थात् इस सामान्य प्रश्नसे इसका कोई सम्बन्ध नही कि अस्थायी नियुक्तियाँ कितनी ही अवधिके लिए क्यों न की जायें, मेरी रायमें वे समझौतेके सन्दर्भमें भी अस्थायी ही मानी जायेंगी; वे किसी भी तरह स्थायी नहीं मानी जा सकतीं; विशेष-कर जब यह स्पष्ट हो कि ये नियुक्तियाँ इतने वर्षोंतक के लिए या अगला आदेश निकलने तक के लिए ही की गई हैं।

हृदयसे आपका,

संलग्न : १

एफ० कोठावाला महोदय
कलेक्टर, सूरत जिला, बारडोली

[अंग्रेजीसे]

अ० भा० कां० क०, फाइल संख्या १६-सी, १९३१।
सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

३०२. पत्र : फ्रामरोज बी० गरदाको

बारडोली
३० मई, १९३१

प्रिय सरदार गरदा,

आपका पत्र मिला। आप अपनी शिकायतोंके बारेमें यदि मध्यस्थता करानेकी बात स्वीकार करनेको तैयार नहीं है, तो फिर मेरी समझमें नहीं आता कि आपको किस तरह सन्तुष्ट करूँ। फिर तो मामला वकीलोंको ही सौंप देना चाहिए और यदि वे राय दें कि आपकी बतलाई हुई एक निश्चित राशिके बदलेमें मूल जोतदारों को भूमि लौटा देनेका वचन देते हुए आपने जो पत्र लिखा था, उसके आधारपर कानूनी कार्रवाई की जा सकती है, तो न्यायालयकी शरण ही लेनी चाहिए।

हृदयसे आपका,

सरदार फ्रामरोज गरदा
नवसारी

[अंग्रेजीसे]
अ० भा० कां० क० फाइल संख्या १६-सी, १९३१।
सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

३०३. पत्र : रतिलालको

बारडोली
३० मई, १९३१

भाई रतिलाल,

तुम्हारा पत्र मिला। अपनी अड़चनोंको धीरजके साथ सुलझा लो। बुनकरोंके बारेमें नारणदाससे बात जरूर कर लेना।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ७१६६)की फोटो-नकलसे।

३०४. पत्र : फूलचन्द कस्तूरचन्द शाहको

बारडोली
३० मई, १९३१

भाईश्री फूलचन्द,

धोलके[१] मामलेके बारेमें मालूम हो गया है। जो मैं समझा हूँ, उसके अनुसार तो अब तुम्हें राष्ट्रीय झंडेकी माँग भूल जानी चाहिए। दो-तीन लोग आकर मुझसे मिलना चाहें तो मिल जाओ। मुझे लगता है कि बहुत-से कामोंमें उतावली हो जाती है। वहाँ तो तुम्हें अभी विदेशी वस्त्र-बहिष्कार कार्य और वह भी खादीकी मारफत करने तथा मद्य-निषेधके काममें ही जुटे रहना चाहिए। करने लायक समाज-सुधार भी कम नहीं है।

सोच-समझकर कदम उठाना।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ९११९३)की फोटो-नकल तथा सी० डब्ल्यू० २८४४ से भी।
सौजन्य : शारदाबहन शाह

३०५. पत्र : नारायण मोरेश्वर खरेको

३० मई, १९३१

चि० पण्डितजी,

तुम्हारा पत्र मिला।

जो आश्रमवासी बालक विद्यापीठमें गये हैं उनके बारेमें मैंने अपने विचार काकाको तो बता ही दिये हैं। संक्षेपमें वे इस प्रकार हैं: 'जिन विद्यार्थियोंने संघर्षमें भाग लिया था, उन्हें आश्रम नहीं आना चाहिए', इस वृत्तिमें बहुत वजन नहीं है, तो भी मैं आनेको विरोध करने लायक भी नहीं समझता। यदि ये लोग दूसरा काम न कर सकें तो कहाँ जायें? सामान्य तौरपर तो विद्यापीठ ही यह दूसरी जगह है। किन्तु जब दूसरोंने भी काम छोड़-छोड़कर भागना शुरू किया तो हम घबरा गये। और ऐसा भी हो सकता है कि आश्रम न जानेकी प्रतिज्ञाकी आड़में विद्यार्थियोंने विद्यापीठ जानेकी अपनी इच्छा पूरी की हो। किन्तु प्रपात रोके नहीं रुकता। इसलिए जो हुआ, उसे होने दिया। इसके पीछे बहुत-सी बातें थीं। इसमें

१. सौराष्ट्रका एक कस्बा।

कितने अंशतक मोह था और कितने अंशतक कर्त्तव्य, यह कहना मुश्किल है। अभी भी कुछ समझमें न आया हो तो लिखना। जिन-जिनके मनमें शंका उठी हो, उन्हें यह पत्र पढ़ा देना।

रामभाऊ कैसा चल रहा है, यह लिखते रहना।

चि० गजाननके बारेमें समझ गया हूँ। वह चाहे तो अपने चित्रकलाके शौकको पूरा करे। साथमें कताई आदि भी करता है, यह तो अच्छा ही है।

'मननविशी'[1]में सुधार आदि करनेकी जेलमें ही बहुत इच्छा थी। पर मनमें ही रह गई और मैं समयके पहले ही झंझटोंमें फँस गया। अब तो जैसेका तैसा छाप दो। एक मनन जोड़ना है, वह तो तुम्हें भेज ही दिया था।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० २१५)की फोटो-नकलसे।
सौजन्य: लक्ष्मीबहन खरे

३०६. पत्र: गंगाबहन वैद्यको

बारडोली
३० मई, १९३१

चि० गंगाबहन,

इतनी परेशानी क्यों? तुमपर ऐसा तो कुछ नहीं टूटा है। छोटी उम्रमें कोई न मरे, ऐसा कोई नियम थोड़े ही है। फिर तुम्हारे और मेरे कोई एक ही लड़का नही, असंख्य लड़के हैं। उनमें से कुछ चले जाते हैं और दूसरे पैदा होते हैं। उनके मरने-जीनेका हिसाब क्यों? जो पास हैं, उनकी सेवा करना ही हमारा धर्म है। इस तरह न कोई मरता है, न कोई जीता है।

मन्त्रीने प्रबन्ध कर ही लिया हो, तो हमारे विचार करनेकी जरूरत ही नहीं रहती।

तुम अनासक्ति सीखो।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]

बापुना पत्रो: ग० स्व० गंगाबहनने तथा सी० डब्ल्यू० ८७७५ से भी।
सौजन्य: गंगाबहन वैद्य

१. मननके बीस विषय।

३०७. पत्र : घनश्यामदास बिड़लाको

बारडोली
३० मई, १९३१

भाई घनश्यामदास,

आपका पत्र महादेवपर देखा। आपने पोलाकको बिलकुल यथार्थ उत्तर दिया है। करीब ऐसा हि उत्तर[1] उन भाईओंके तारका मैंने भेजा था। मुझे अब भी विश्वास है कि मेरा बिना हिं० मु० प्रश्न हल होते जाना व्यर्थ है। हां, ऐसे प्रधान मंडल इ०को मिलनेके लिये जाना दूसरी बात है।

सुबाषबाबु फिर मिल गये बातें तो काफी हुई। लेकिन कुछ पता नहीं चलता क्या है। सेनगुप्ताका अखबारोंमें खत कल पढ़ा। देखें अब ९ तारीखको क्या होता है। सुबाषबाबुको भी आनेका कहा है।

आपका,
मोहनदास

सी० डब्ल्यू० ७८८६ से।
सौजन्य : घनश्यामदास बिड़ला

३०८. तार : विलियम शिररको[2]

[३० मई, १९३१को या इसके पश्चात्][3]

विलियम शिरर
सेसिल होटल
शिमला

आपका तार। सभी समाचार अनधिकृत, भ्रमपूर्ण अनुमान-भर। मेरी समझमें साम्प्रदायिक समस्या हल न होना गोलमेज परिषद्में मेरे शामिल होनेके रास्तेमें रोड़ा। स्थिति नाजुक। फिर इर्विन-गांधी समझौतेने भी मेरा भारतसे तत्काल प्रस्थान कठिन बना दिया है। ये कठिनाइयाँ हैं, वैसे मेरी बड़ी इच्छा है कि गोलमेज परिषद्की बहसोंमें पूरी तरह हाथ बटाऊं और कांग्रेसकी माँग मनवानेका आग्रह करूँ। इसीलिए मैं कठिनाईका हल

१. देखिए "तार : वी० एस० श्रीनिवास शास्त्रीको", २३-५-१९३१।
२. **शिकागो ट्रिब्यून**के संवाददाता।
३. विलियम शिररके तारसे जो ३० मईका है।

ऐसे असंख्य उदाहरणोंकी कल्पना करके स्वदेशी-धर्मको सिद्ध किया जा सकता है। 'स्वधर्मे निधनं श्रेयः परधर्मो भयावहः' इसीसे कहा गया है। इसका अवश्य यह अर्थ किया जा सकता है—"स्वदेशीका पालन करते मृत्यु मिले, तो भी अच्छा है, परदेशी [वस्तुका वरण] तो भयानक ही है।" स्वधर्म अर्थात् स्वदेशी।

सारी गड़बड़ स्वदेशीको न समझनेसे ही होती है। कुटुम्बके प्रति मोह रख कर मैं उसे खुश करनेकी कोशिश करूँ, उसके लिए चोरी करूँ, दूसरे षड्यन्त्र रचूँ तो वह स्वदेशी नही होगा। मुझे तो उसके प्रति अपने धर्मका पालन करना है। उस धर्मकी खोज करने और उसका पालन करते रहनेसे मुझे सर्वव्यापी धर्म मिल जाता है। स्वधर्मके पालनसे परधर्मी या परधर्मको हानि पहुँचती ही नही, पहुँचनी भी नही चाहिए। यदि पहुँचे तो जिस धर्मको स्वीकार किया है वह स्वधर्म नही, बल्कि स्वाभिमान है, और इस कारण त्याज्य है।

सम्भव है, स्वदेशीका पालन करते हुए कुटुम्बका बलिदान भी करना पडे। परन्तु यदि ऐसा करना पड़े, तो इससे भी कुटुम्बकी सेवा ही निष्पन्न होनी चाहिए। जिस प्रकार हम अपना त्याग करके अपनी रक्षा कर सकते हैं, उसी प्रकार हो सकता है कि कुटुम्बका त्याग करके हम कुटुम्बकी रक्षा कर सकें। मेरे गाँवमें महामारी फैली है। इस रोगके चंगुलमें फँसे हुए लोगोंकी सेवामें मैं अपनेको, अपनी पत्नी, पुत्रों और पुत्रियोंको लगा दूँ और वे सब उस महामारीके शिकार होकर मौतके मुँहमें चले जायें तो मैंने कुटुम्बका संहार नही किया, उसकी सेवा की है। स्वदेशीमें स्वार्थ नही होता और यदि होता ही है तो शुद्ध स्वार्थ होता ही है। शुद्ध स्वार्थ अर्थात् परमार्थ; शुद्ध स्वदेशी अर्थात् परमार्थकी पराकाष्ठा।

इस विचार-श्रृंखलाके आधारपर मैंने खादीमें समाजके शुद्ध स्वदेशी-धर्मके दर्शन किये। वह कौन-सा स्वदेशी-धर्म हो सकता है जिसे सब समझ सकें, जिसके पालनकी इस युगमें, इस देशमें सबको बहुत आवश्यकता है? जिसके सहज पालनसे ही हिन्दुस्तान के करोड़ों लोगोंकी रक्षा हो सकती है; वैसा स्वदेशी-धर्म क्या होगा? इसके उत्तरमें मुझे चरखा और खादी सूझे।

कोई यह न माने कि इस धर्मके पालनसे विदेशी मिलवालोंका नुकसान होता है। चोरको चोरीका माल लौटाना पड़े या उसे चोरी करनेसे रोका जाये तो इसमें उसका नुकसान नहीं, लाभ है। पड़ोसीके शराब पीना या अफीम खाना छोड़ देनेमें कलाल या अफीम-फरोशका नुकसान नहीं, लाभ है। जो अनुचित रीतिसे अर्थ साधते हैं, उनके उस अनर्थका नाश होनेसे उन्हें और जगत्को लाभ ही है।

परन्तु जो चरखेपर चाहे जैसा सूत कातकर और खादी पहन-पहन-कर यह मान बैठते हैं कि स्वदेशी-धर्मका पूर्ण पालन कर चुके, वे महामोहमें फँसे हुए हैं। खादी सामाजिक स्वदेशीकी पहली सीढ़ी है। वह स्वदेशी-धर्मकी परिसीमा नहीं है। ऐसे खादीधारी देखनेमें आते हैं जो और तमाम विदेशी चीजें खरीदते रहते हैं। वे स्वदेशीका पालन नही करते। वे तो बहती गंगामें हाथ धो रहे हैं। स्वदेशी-व्रतका पालन करनेवाला रोज अपने इर्द-गिर्द नजर डालेगा, और जहाँ-जहाँ पड़ोसीकी सेवा

की जा सकती हो, अर्थात् जहाँ उनके हाथका बना आवश्यक माल मिलता होगा वहाँ वह अन्य वस्तुओंको छोड़कर उसीको लेगा। फिर भले ही स्वदेशी चीज पहले-पहल महँगी और घटिया क्यों न हो। व्रतधारी उसे सुधारने या सुधरवानेका प्रयत्न करेगा। वह स्वदेशीकी खराबीसे घबराकर विदेशीका उपयोग नही करने लगेगा।

परन्तु स्वदेशी-धर्मको जाननेवाला अपने कुएँमें आप न डूब मरे। जो चीजें स्वदेशमें न बनती हों या बहुत कठिनाईसे ही बन सकती हों, उन्हें विदेशी वस्तुओंसे द्वेषके कारण यदि देशमें बनाने बैठ जाये तो वह स्वदेशी-धर्म नहीं है। स्वदेशी-धर्मका पालन करनेवाला विदेशी वस्तुओंसे कभी द्वेष करेगा ही नहीं। अर्थात् पूर्ण स्वदेशीमें किसीसे द्वेष नही होता। यह संकीर्ण धर्म नहीं है। यह तो प्रेम और अहिंसासे उत्पन्न एक सुन्दर धर्म है।

[गुजरातीसे]
नवजीवन, ३१-५-१९३१

३१०. स्वतन्त्रताकी मर्यादा

कुछ दिगम्बर जैन भाइयोंने सरदारसे यह सवाल पूछा था कि कराची कांग्रेसके मूलभूत अधिकारवाले प्रस्तावमें कहा गया है कि स्वराज्यमें धार्मिक स्वतन्त्रता होगी; तो फिर यदि दिगम्बर जैन साधु अपने धर्मानुकूल नग्नावस्थामें विचरण करते हैं तो आप उसपर आपत्ति क्यों करते हैं? सरदारने जवाब दिया कि धार्मिक स्वतन्त्रताका यह अर्थ तो कभी नहीं हो सकता कि उसके आचरणसे असंख्य लोग लज्जित हों, अथवा उनकी भावनाको चोट पहुँचे। साधु होकर भी यदि कोई नग्नावस्थामें विचरण करे तो मेरी रायमें लोगोंकी भावनाको आघात पहुँचे बिना न रहेगा।

मुझे लगता है कि सरदार और कोई जवाब दे ही नहीं सकते थे। मैं स्वयं यह मानता हूँ कि मनुष्य-मात्रकी आदर्श स्थिति दिगम्बरकी है। परन्तु आदर्श मनुष्य सर्वथा निर्दोष होता है, विकार-शून्य होता है। ऐसी निर्दोषताके बिना यदि कोई व्यक्ति नंगा घूमता है तो वह दोषी माना जायेगा।

दिगम्बर साधु, साधु होनेके कारण विकार-शून्य ही होते हैं, यह मान लेनेका कोई कारण नही। यदि वे निर्विकार हों, तो भी समाजकी मर्यादाकी रक्षा करना उनका धर्म है। सम्भवतः कुछ श्रावक दिगम्बर साधुकी स्थितिको समझते हों, परन्तु साधारण समाज यह नही समझता और उसे तो आघात ही पहुँचेगा। दिगम्बर साधुको शहरोंमें आनेकी कोई आवश्यकता नही। और यदि आवश्यकता हो तो कम-से-कम शहरकी मर्यादाकी उसे रक्षा करनी चाहिए। ऐसा न करके यदि वे नग्नावस्थामें शहरमें प्रवेश करनेका आग्रह करें अथवा श्रावक ऐसी जिद करें तो मेरी दृष्टिमें वह अधर्म होगा। स्वयं मुझे नग्नावस्था प्रिय है। यदि मैं निर्जन जंगलमें रहता होऊँ तो नग्नावस्थामें ही रहूँ, परन्तु इस विकारमय जगत्में नग्नावस्थाके-सामान्य-आचरण हो जानेकी सम्भावना कम है। नीति बनाये रखनेके लिए किसी भी महापुरुषके लिए

यह आवश्यक है कि वह अपने गुप्तांगोंको ढँके रहे। यह उसका धर्म है। व्यक्ति-स्वातन्त्र्य और उसमें भी धर्म-स्वातन्त्र्यकी सदा अनेक मर्यादाएँ रही हैं और रहेंगी। धर्म अधिकारका भूखा नहीं है। धर्म संयमका, अंकुशका भूखा है। धर्मको जानने और उसकी रक्षा करनेवाला यह विचार नहीं करता कि 'यह मेरा अधिकार है।' वह तो यह सोचता है कि 'यह मेरा कर्त्तव्य है।' और ऐसा सोचनेवालेका नग्न रहना कर्त्तव्य नही हो सकता। कर्त्तव्य अपरिग्रहका है। अपरिग्रह मानसिक धर्म है। मुझपर कोई बोझ लाद दे, तो वह परिग्रह नही होगा। परन्तु उस बोझका मैं उपभोग करने लगूँ तो वह अपरिग्रह होगा। जो साधु सामाजिक कर्त्तव्य पालनके लिए लंगोटीका भार वहन करता है वह परिग्रही नही बल्कि संयमी है। जो 'साधु' सामाजिक लज्जाकी परवाह किये बिना नग्न विचरण करनेका आग्रह करता है, वह स्वेच्छाचारी है। इस जगह गीताका यह वचन भली प्रकार लागू होता है: "मुझे कर्म करनेकी बिलकुल जरूरत नही है, किन्तु लोकसंग्रहके लिए, कर्म करना मेरा धर्म है। यदि मै ऐसा न करूँ, तो अव्यवस्थाका कर्त्ता बनूँ और तीनों लोकोंका नाश करूँ।"[1] साधु ऐसा काम कभी न करे जिससे प्रजाकी हानि हो; समाज भी उसे वैसा करनेके लिए कभी प्रोत्साहित न करे।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ३१-५-१९३१

३११. टिप्पणियाँ

विदेशी और स्वदेशीकी पहचान

इस सम्बन्धमें नीचे लिखा प्रश्न पूछा गया है:[2]

विदेशी और स्वदेशी कपड़ेके भेदको जान लेनेका कोई अचूक उपाय अभी तक नहीं मिला है। धरना देनेवालेको इस भेदकी अच्छी जानकारी हासिल कर लेनी चाहिए। इसीलिए यह सुझाव दिया जाता है कि जिस दुकानपर प्रमाण-पत्र न हो, उस दुकानसे कोई कपड़ा खरीदे ही नहीं। प्रमाण-पत्र दो प्रकारके होते हैं। खादीके लिए अखिल भारतीय चरखासंघका और स्वीकृत देशी मिलके कपड़ेके लिए स्वदेशी-सभाका। मैं नहीं जानता कि उक्त दूसरे प्रकारका प्रमाण-पत्र अभी जारी किया गया है या नहीं। परन्तु इससे भी आसान रास्ता सिर्फ खादीका है। जहाँ असत्य लगभग सर्व-व्यापक बन गया है, वहाँ लोगोंकी खादी-भावना ही उपयोगी हो सकती है। खादीमें भी असत्य घुस गया है, अर्थात् उसमें भी लोगोंको ठगा जाता है। फिर भी उसमें ठगीकी बहुत कम गुंजाइश है। और घरका सूत कातनेवालेको तो कोई डर है ही नहीं।

१. **भगवद्गीता**, अध्याय ३, २२-२४।

२. यहाँ नहीं दिया जा रहा है।

तो सवाल उठता है कि धरना देनेवाली सेविका क्या करे। यदि उसके मनमें खादीके प्रति मेरे समान श्रद्धा होगी तो वह धरनेको खादी-प्रचारका एक साधन मानकर ग्राहकोको विदेशी कपड़ेकी दुकानसे हटाकर खादीकी तरफ ले आयेगी। यदि वे इस तरफ न आयें तो वह धीरज रखेगी और विश्वास रखेगी कि विदेशी वस्त्रके बहिष्कारके लिए अन्य कोई मार्ग है ही नही, और यदि हो भी तो वह बेकार है। यह भी याद रखना चाहिए कि विदेशी वस्त्रका बहिष्कार अपने-आपमें कोई स्वतन्त्र गुण नही है। यह खादी-प्रचारके लिए उपयोगी और आवश्यक है। यदि धरना देनेवाली सेविका इस तत्वको समझ लेगी, तो उसका न तो अपमान होगा, क्योंकि वह अपमान मानेगी नहीं, और न वह परेशान होगी। क्योंकि उसे तो किसी तरह दरिद्रनारायणके लिए खादीका प्रचार करना है। दूसरे प्रपंचमें भय है, अपमान है, दगा है और गरीबके लिए कुछ भी नहीं है।

खरीदारकी जिद

कपड़ा खरीदनेवाले कहते हैं: "हमें जरूरी खादी दिलाइए; हम दूसरा कपड़ा नहीं खरीदेंगे," हम उन्हें किस तरह सन्तुष्ट करें?

इस सवालका जवाब ऊपर आ गया है। यदि खरीदार हठ करे, तो हमें सौगुना हठ करना चाहिए। खरीदारके हठकी कोई बुनियाद नहीं, हमारे हठकी बुनियाद मजबूत है। उसकी मनपसन्द खादीका यह अर्थ नहीं किया जा सकता कि पेरिसकी अतलस जैसी मुलायम खादी उसे उसी भावमें मिले। खादी पहननेवालेका निस्तार खुरदरी, मोटी-झोंटी खादी पहननेमें ही है। यह याद रहे कि हम सबको सन्तुष्ट नही कर सकते। हमारा काम सबको राजी करना नही है; सबका काम दरिद्रनारायणके अनुकूल होना यानी उन्हें सन्तुष्ट करना है। खादी ही दुनियाका विश्रामस्थल है। जो उसकी अवगणना करे, उसके प्रति भी हम सहिष्णु बनें।

ऐसी धरना देनेवाली कम हैं

'नवजीवन' में बताए अनुसार धरना देनेवाले बहुत कम मिलते है, तो क्या थोड़े-से लोगोंको लेकर ही धरना दिया जाये? दुकानें सौ हों और बहनें पाँच हों, किन्तु वे सब जगह घूम नहीं सकती, तो क्या जितनी दुकानोंपर हो सके, धरना दिया जाये? यदि हमेशा वे एक ही जगह खड़ी रहती हैं तो व्यापारी कहता है — 'ग्राहक दूसरी दुकानपर जायेंगे। वहाँ भी धरना दीजिए। हमारी दुकानपर ही क्यों धरना दे रही हैं?' आज एक जगह और कल दूसरी जगह जानेपर लोग गैरहाजिरी ताड़ जाते हैं और व्यापारीके समझानेसे सेविकाओंकी अनुपस्थितिमें खरीदने जाते हैं। क्या ऐसी दशामें धरना जारी रखना उचित है? तादाद कम होनेसे जब धरनादेनेवाले दूसरी जगहसे लोगोंको विदेशी कपड़ा खरीदते देखते हैं तो उन्हें निराशा होती है। ऐसी दशामें दुकानोंपर धरना दिया जाय या मुहल्ले-मुहल्ले घूमकर लोगोंको समझाना उचित होगा?

धरना देनेवाली बहनें पाँच हों, और विदेशी वस्त्रकी दुकानें पाँच सौ हों तो वे पाँच बहनें पाँच ही दुकानोंपर रहें और चाहें तो एक ही दुकानपर। खादी-प्रचार धर्म है, युक्ति नहीं। इसलिए सेविका एक हो, तो भी उसका पालन करे, अनेक हों, तो भी। इसी तरह यदि एक दुकानदार भी पसीजे तो अच्छा है। यदि पाँचों दुकानदार विदेशी कपड़े बेचना छोड़ दें तो अपने कामको उतना आगे बढ़ा हुआ समझकर पाँचों बहनें धरनेका काम जारी रखें। उन्हें धरना देते देखकर अन्य बहनें आयेंगी। उनके धरनेका असर यदि एक व्यापारीपर पड़ेगा, तो हो सकता है कि दूसरोंपर भी पड़े। न पड़े, तो जिसपर असर हुआ है उस व्यापारीको पछतानेकी कोई आवश्यकता नहीं। यदि विदेशी वस्त्रका व्यापार पाप हो, तो दूसरोंके वह पाप करते रहनेपर भी, जिसे ज्ञान हो गया है, वह तो उस पापको छोड़ ही देगा। बड़े काम सदा इसी प्रकार होते हैं। यदि मैं सबकी राह देखता बैठा रहूँ तो खादी-प्रचार होगा ही नहीं। जबर्दस्त काममें जबर्दस्त साहसकी आवश्यकता होती है।

साहससे कोलम्बसने नई दुनिया ढूँढी, परन्तु कोलम्बसका साहस उसके मनोविनोदके लिए था। उसका उद्देश्य किसीको सेवा करनेका नहीं था। नई दुनियाकी खोज करनेकी उसकी इच्छाकी तहमें वहाँकी धनराशि बटोरनेकी इच्छा थी। इसके लिए उसने समुद्र पार किया, तो हिन्दुस्तानके करोड़ों नंगोंको ढँकनेके लिए हमें कितना साहस दिखाना चाहिए? जिस सेविकामें कोलम्बसके समान विश्वास होगा, उसका-सा धीरज होगा, वह अकेली होनेपर भी अपना काम करती रहेगी। दिन-दिन उसमें नया बल आयेगा, नया विश्वास पैदा होगा और काम करनेकी नई युक्तियाँ सूझेंगी, अथवा 'काइंडली लाइट' (प्रेमकी ज्योति) उसे नये मार्ग दिखायेगी। तबतक वह गाये — 'वन स्टेप एनफ फॉर मी' (एक कदम, बस एक कदम)

बेचारा पुरुष

समझौतेके दौरान हमें खादी, विदेशी-वस्त्र-बहिष्कार और शराब-बन्दीका काम करना है। इनमें से अन्तिम दो कार्य बहनोंको सौंपे गये हैं। तो खादी-उत्पादनके सिवा पुरुषोंके लिए दूसरा और क्या काम है?

इस प्रश्नमें खादीके प्रति अश्रद्धा या कहिए कि खादीके महत्वके प्रति अज्ञान निहित है। खादी उत्पादनका काम मानो आसान और कुछ लोगोंका ही हो ऐसा सोचनेकी वजहसे यह सवाल उठा है। खादीका काम ऐसा महाशास्त्र है, जिसका पूरी तरह अभीतक मन्थन नहीं हुआ है। उसमें छोटे-बड़े जितने लोग भी जुट सकें उतने कम हैं। सात लाख गाँवोंमें पहुँचनेके लिए कितने पुरुष आवश्यक हैं। खादीका काम इतना विशाल है कि यदि एक लाख लोग रोजाना आठ घंटे दें तो भी कुछ काम बच रहेगा। इसी बारके अंकमें गुजरातमें खादी-उत्पादन और बिक्रीका संक्षिप्त ब्यौरा दिया गया है। इस ब्यौरेको देखकर ही सबको पता चलना चाहिए कि खादीके कामके लिए कितने पुरुषोंकी जरूरत है?

लेकिन मैं जानता हूँ कि इस प्रश्नकी तहमें दूसरा प्रश्न है। खादीका काम है तो अच्छा, पर जिस पुरुषको वह नीरस मालूम हो, वह क्या करे? ऐसे पुरुषको

गाँवोंकी गन्दगी दूर करनी चाहिए। इसके लिए वह भाषण न झाड़े, बल्कि झाड़ू लेकर रास्ते और पाखाने साफ करे, घूरे बन्द करे, लोगोंमें शौचादिके नियमोंका प्रचार करे। हालाँकि बहनें धरना देंगी, परन्तु उन्हें धरनेके काममें मददकी बहुत जरूरत होगी। पुरुष उनकी मदद करें। यदि सामर्थ्य हो तो पुरुष गाँवोंमें पेड़ोंके नीचे बैठकर बिना किताबके बच्चोंकी शाला चलायें, प्रौढ़ोंके लिए रात्रिशाला शुरू करें। जिसे सेवा ही करनी है, उसके लिए क्षेत्र अनन्त है। और सब यह समझ लें कि जब फिर लड़नेका मौका आयेगा, तब उस लड़ाईके लिए ऐसे ही कामोंसे शक्ति उत्पन्न होगी।

दुनियाके हिंसक सिपाहियोंने भी यही किया है और यही करते हैं। सिर्फ भाड़ेका सिपाही जब लड़ता नहीं, तब मुफ्तकी रोटी खाकर उसे बरबाद करता है, यानी मनमानी करके त्रास फैलाता है और पृथ्वीपर भाररूप रहता है। इतिहासमें हमने पढ़ा है कि गैरीबाल्डी और उसके सिपाही, जब लड़ते न थे तब हल चलाते थे; बोअरोंका पेशा हल चलानेका था, और जब लड़नेका समय आया तब जनरल बोथासे लेकर गरीब बोअरोंतक ने अपने हल एक ओर रख दिये और रणमें दुनियाको आश्चर्यमें डालनेवाली बहादुरी दिखाई –– जो मैंने अपनी आँखों देखी। यदि हिंसक स्वयंसेवक इस प्रकारका रचनात्मक काम करके अपनी लड़नेकी शक्तिको संचित कर सकते हैं, तो हिन्दुस्तानके इस युगके अहिंसक सिपाहीको रचनात्मक काम करनेमें परेशानी क्यों होती हैं, यह मैं समझ नही पाता। सभी पाठक अच्छी तरह याद रखें कि पिछले साल जो उत्साह उमड़ पड़ा था, उसके पीछे भारी तपश्चर्या थी, महान रचनात्मक कार्य था।

दूधमें जहर मिले तो?

जिस दुकानमें विदेशी और स्वदेशी दोनों तरहका कपड़ा बिकता हो, उस दुकानसे बिलकुल कपड़ा न खरीदनेकी सलाह ग्रहकको दी जा सकती है क्या?

दूधमें जहरकी बूंद गिर जानेसे जैसे वह दूध त्याज्य हो जाता है, वैसे ही मेरे मतानुसार विदेशी कपड़ेकी दुकानपर स्वदेशी कपड़ा बिकता हो तो हम उस दुकान पर न जायें। कलालकी दुकानपर शुद्ध दूध ही पिया जाये, तो भी लोग जिस प्रकार दूध पीनेवालेको शराबी ही समझेंगे वही गति विदेशी कपड़ेकी दुकानपर स्वदेशी कपड़ा खरीदनेवालेकी होगी। स्वदेशी कपड़ेकी दुकानें क्या कम हैं? कम हों और हमारे पड़ौसमें न हों, तो जहाँ हों हमें वहीं जाना चाहिए। धरना देनेवालेके लिए तो यह सीधा-सा रास्ता है कि जहाँ विदेशी कपड़ा बिकता हो, उस दुकानपर जानेवाले आदमीको सावधान करे और वह लौट सके तो उसे वापस लौटाये। मुझसे हालमें यह प्रश्न भी पूछा गया है कि शराबवालेकी दुकानपर बहुतेरी स्वदेशी चीजें बिकती हों तो उन्हें खरीदने जाया जाये या नहीं। 'नहीं जा सकते' यह राय देते मुझे देर न लगी।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ३१-५-१९३१

३१२. पत्र : अमतुस्सलामको

३१ मई, १९३१

प्रिय अमतुल,

अगर तेरी तबीयत अच्छी न रहती हो, तो तुझे सिर्फ दूध और फलपर रहना चाहिए। पैसेके बारेमें तेरी नाजुक भावनाको मैं समझ सकता हूँ। इस बारेमें नारणदासको लिख रहा हूँ। मुझे पत्र जरूर लिखती रहना और अपने दिलकी सारी बात कहना। मैं चाहता हूँ कि आश्रममें तेरा मानसिक, नैतिक और शारीरिक विकास हो।

बापू

अंग्रेजी (जी० एन० २३९)की फोटो-नकलसे।

३१३. पत्र : एम० रिबेलो ऐंड सन्सको

३१ मई, १९३१

महोदयगण,

इसी महीनेकी २२ तारीखका आपका पत्र[1] मिला। मेरे व्यक्तिचित्रों पर मेरा प्रतिलिप्याधिकार नहीं है; फिर भी आपने जो अनुमति माँगी है, उसे देनेमें मैं असमर्थ हूँ।

आपका,

अंग्रेजी (एस० एन० १७१२०)की माइक्रोफिल्मसे।

३१४. पत्र : ऐलन डब्ल्यू० सेलरको

स्थायी पता, साबरमती
३१ मई, १९३१

प्रिय मित्र,

मीराबाईने मुझे उनके नाम आया हुआ आपका पत्र दिखाया था। मुझे लगता है, आपके आश्रम आनेके मार्गमें अनेक कठिनाइयाँ हैं। पासपोर्ट लेना जरूरी है और बहुत सम्भव है कि आपको कुछ शर्तोंपर ही पासपोर्ट दिया जाये। इसीलिए मेरी

१. एम० रिबेलो ऐंड सन्सने खपरेल बनानेकी अपनी कम्पनीके व्यापार-चिन्हके रूपमें गांधीजी के चित्रका उपयोग करनेकी अनुमति माँगी थी।

सलाह तो यही है कि मेरे साथ आकर बसनेके लिए भारत आनेका अपना विचार अभी तो कुछ समयतक स्थगित रखिए; किन्तु फिर भी वहाँ रहते हुए आश्रमके नियमोंका पालन कीजिए और उन परिस्थितियोंमें जितना बन सके अपना जीवन आश्रमवासियोंके अनुरूप बनाइए। तब निश्चय ही किसी भी तरहके प्रतिबन्धोंके बिना भारत आनेकी सम्भावनाके द्वार शायद आपके लिए खुल जायेंगे।

यदि आपको वहाँ 'यंग इंडिया' न मिल रहा हो, तो आप विश्वविद्यालयके कार्यालयमें जाकर पूरी फाइल देख सकते हैं।

हृदयसे आपका,

श्री ऐलन डब्ल्यू० सेलर
शिकागो, इलिनॉय

अंग्रेजी (एस० एन० १७१६८) की फोटो-नकलसे।

३१५. पत्र : किरणशंकर रायको

स्थायी पता, साबरमती
३१ मई, १९३१

प्रिय किरण बाबू,

आपका पत्र मिला। सुभाष बाबूने बाकायदा शिकायत भेजी है, इसलिए कार्य-समिति अब पूरे मामलेपर गौर करेगी। आप भरोसा रखें कि उस जाँच-पड़तालमें मैं पूरा-पूरा हाथ बँटाऊँगा और समितिको निष्कर्षोंपर पहुँचनेमें मदद दूँगा। शिशिर बाबूने मुझे अलगसे एक पत्र लिखा था। मैं उनको अब अलगसे उत्तर नहीं दे रहा हूँ।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत किरणशंकर राय,
४४, यूरोपियन एसाइलम लेन
कलकत्ता

अंग्रेजी (एस० एन० १७१६९) की माइक्रोफिल्मसे।

३१६. पत्र : आनन्दकिशोर मेहताको

स्थायी पता, साबरमती
३१ मई, १९३१

प्रिय मित्र,

इसी महीनेकी २७ तारीखका आपका पत्र मिला। आपने उसे याददिहानी कहा है। पर पिछला पत्र मिलनेकी मुझे कोई जानकारी नही। मुझे आपसे खेदके साथ कहना पड़ रहा है कि स्मारककी आपकी योजनाके साथ मुझे कोई सहानुभूति नहीं और उस समितिके साथ अपना नाम जोड़नेके लिए तो मै बिलकुल ही तैयार नहीं हूँ। यदि समितिमें मेरी चले तो मैं उसे भंग करनेकी ही सलाह दूँगा।

हृदयसे आपका,

श्री आनन्दकिशोर मेहता
महामन्त्री
अखिल भारतीय भगतसिह, राजगुरु, सुखदेव स्मारक समिति
अनारकली, लाहौर

अंग्रेजी (एस० एन० १७१७०) की माइक्रोफिल्मसे।

३१७. पत्र : श्रीराम शर्माको

स्थायी पता, साबरमती
३१ मई, १९३१

प्रिय महोदय,

आपका पत्र मिला। आपने यह नहीं लिखा कि कांग्रेस कार्यकर्त्ताओंको गिरफ्तार क्यों किया गया था। जो भी हो, समझौतेमें ऐसी कोई व्यवस्था नही जो सरकारको असल या मनगढ़न्त अपराधोंके लिए मुकदमे चलानेसे रोक सके। यदि तथाकथित अपराध किया ही नहीं गया और गिरफ्तार कार्यकर्त्ता चाहें तो अपने वकील खड़े करके मुकदमा लड़ सकते हैं।

हृदयसे आपका,

श्री श्रीराम शर्मा
महामन्त्री
जिला कांग्रेस कमेटी
रोहतक (पंजाब)

अंग्रेजी (एस० एन० १७१७१) की माइक्रोफिल्मसे।

३१८. पत्र : आर० एस० राजवाडेको

प्रकाशनके लिए नहीं

स्थायी पता, साबरमती
३१ मई, १९३१

प्रिय मित्र,

आपके पत्रके लिए धन्यवाद। मैंने शिमलामें आपकी रिहाईके बारेमें सुना था। अधिकारियोंको इसके लिए राजी करनेमें पहले तो सचमुच काफी परेशानी उठानी पड़ी, लेकिन वह सब करनेमें प्रसन्नताका अनुभव हुआ, क्योंकि आपका मामला मुझे बिलकुल स्पष्ट लग रहा था।

हृदयसे आपका,

श्री आर० एस० राजवाडे
'कर्मयोगी' कार्यालय
५७४, साऊथ कसाबा, शोलापुर

अंग्रेजी (एस० एन० १७१७२)की फोटो-नकलसे।

३१९. पत्र : कृष्णगोपाल दत्तको

स्थायी पता, साबरमती
३१ मई, १९३१

प्रिय मित्र,

मैंने आपके तारका जवाब इसलिए नहीं दिया कि मुझे उसका जवाब सूझा ही नहीं। अब आपका पत्र मिलनेपर मै आपके प्रश्नोंके उत्तर दे सकता हूँ।

१. चूँकि धरनेको बिलकुल शान्तिपूर्ण और जोर-जबर्दस्तीसे मुक्त रखना है, इसलिए वस्त्रोंके मौजूदा संग्रहको मोहरबन्द करनेका कोई सवाल नहीं उठता।

२. परन्तु यदि वस्त्र-विक्रेता आपके प्रतिज्ञा-पत्रपर हस्ताक्षर करनेसे इन्कार करें, तो आप चाहें तो उसकी दुकानपर धरना दे सकते हैं, फिर चाहे उसकी दुकानमें स्वदेशी वस्त्र ही क्यों न हों।

३. जाहिर है कि प्रतिज्ञा भंग करनेवाले दुकानदारकी दुकानपर आप धरना देंगे ही, पर आप उसपर जुर्माना नहीं कर सकते।

हृदयसे आपका,

श्री कृष्णगोपाल दत्त
सिटी रोड, सियालकोट शहर

अंग्रेजी (एस० एन० १७१७३)की माइक्रोफिल्मसे।

३२०. पत्र : वी० बी० हरोलीकरको

स्थायी पता, साबरमती
३१ मई, १९३१

प्रिय मित्र,

ये रहे आपके प्रश्नोंके उत्तर :

१. जी, हाँ, यदि माल प्रामाणिक उत्पादन-कर्त्ताओंसे खरीदा गया हो। लेकिन हर हालतमें अच्छा यही रहेगा कि थोक खरीद अखिल भारतीय संस्था द्वारा ही की जायें।

२. सभी प्रकारकी खरीदके लिए मैं अ० भा० च० सं०का प्रमाणपत्र आवश्यक मानता हूँ।

३. खद्दरकी शर्त जबतक नियमावलिमें मौजूद है, तबतक सभी कांग्रेस समितियों को सख्तीके साथ इसके पालनका आग्रह करना चाहिए।

४. चौथा प्रश्न कहाँतक संगत है, मैं समझ नहीं पाया। इसलिए कि ऐसी कोई बाध्यता न होते हुए भी कांग्रेस यदि चाहे तो विदेशी वस्त्रोंकी दुकानोंपर धरना दे सकती है, बशर्ते कि धरना अर्थात् पूर्णतः शान्तिपूर्ण और प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष दोनों ही प्रकारकी जोर-जबर्दस्तीसे सर्वथा मुक्त हो।

मेरा ख्याल है कि आपके सभी प्रश्नोंके काफी स्पष्ट उत्तर मैं दे सका हूँ।

हृदयसे आपका,

श्री वी० बी० हरोलीकर
नगर कांग्रेस कमेटी
२८, शुक्रवार पेठ
पूना

अंग्रेजी (एस० एन० १७१७४)की माइक्रोफिल्मसे।

३२१. पत्र : चि० यु० चिन्तामणिको

स्थायी पता, साबरमती
३१ मई, १९३१

प्रिय मित्र,

आप मुझसे बधाई पानेकी प्रतीक्षा कर रहे होंगे; परन्तु मैं आपको बधाई नहीं दूँगा, फिर कारण केवल यही क्यों न हो कि मैं आपसे पहले जो कह चुका हूँ, बधाई देना उसको दोहराना-भर होगा। हाँ, आपका यह सोचना बिलकुल सही है कि मै समाचारपत्र नही पढ़ता। स्थानीय समाचारपत्रोंको भी मैं चन्द मिनटोंतक ही देखता हूँ, वह भी मजबूरीसे! अग्रलेख तो मानो मै नियमपूर्वक छोड़ देता हूँ। इस-लिए 'लीडर' की कतरन भेजकर आपने अच्छा ही किया। 'नवजीवन' में महादेव देसाई द्वारा लिखे एक निर्दोषसे अनुच्छेदको उसमें काफी तूल दे दिया गया है। मैं आपको अपनी ओरसे इतना ही आश्वासन दे सकता हूँ कि मैं गैर-संजीदगीसे कोई संघर्ष छेड़नेवाला नही हूँ। मैं जानता हूँ कि युद्धकी घोषणा करनेका लॉर्ड इर्विनके लिए क्या अर्थ होगा। इन वार्ताओंके दौरान हम दोनोंके सम्बन्ध कुछ ऐसे बन गये हैं कि यदि मैं देखूँ कि युद्धकी घोषणा करनेसे लॉर्ड इर्विनको मार्मिक दुःख पहुँचेगा तो यह विचार-मात्र मुझे वैसा कोई कदम उठानेसे पहले हजार बार सोच लेनेके लिए बाध्य कर देगा। पर मैं आपको आपसी तौरपर बतला दूँ कि यदि मैं इतने गैर-संजीदा दिमागसे काम करनेवाला होता तो ऐसे अनेकानेक अवसर आये थे जब मैं प्रान्तीय अधिकारियोंके साथ अपनी वार्ता कभीकी तोड़ सकता था। मैंने सदा ही बड़े धैर्यसे काम लिया है, और अब भी ले रहा हूँ। खैर; मैं वाइसरायको पूरी स्थितिपर फिरसे विचार करनेका पर्याप्त समय दिये बिना और जनताके समक्ष पूरी चीज रखे बिना कोई भी कदम उठानेवाला नहीं हूँ। कहनेकी कोई जरूरत नही रह गई है कि मैं कार्य-समितिकी मंजूरी लिए बिना कुछ भी नहीं करूँगा।

संघर्ष या शान्तिसे सम्बन्धित आपकी आशंकाओंके बारेमें इतना कहना ही काफी होगा। लेकिन साम्प्रदायिक समस्या बिलकुल ही दूसरे तरहकी चीज है। लॉर्ड इर्विनको मैंने अपनी स्थिति अनेक बार स्पष्टतः समझा दी थी। उन्होंने मेरी स्थितिके प्रति बहुत काफी सहानुभूति प्रकट की थी। आप जानते ही हैं कि गोलमेज परिषद्ने अबतक जितने विषयोंकी चर्चा की है, कांग्रेसकी माँग उन सबसे कहीं ऊँचे स्तरकी है। यदि देशमें साम्प्रदायिक समझौता न हो पाया तो मैं अपने अन्दर कांग्रेसकी माँगपर आग्रह करने लायक आत्मविश्वास नहीं बटोर पाऊँगा। पर परिषद्में मेरे शामिल न होनेका अर्थ यह तो नहीं है कि संघर्ष छिड़ जायेगा। यदि साम्प्रदायिक समझौता करनेमें असफलता मिलती है तो उसके लिए ब्रिटिश सरकारको तो दोषी नहीं ठहराया जा सकता। हालाँकि साम्प्रदायिक समस्या वर्तमान शासन प्रणालीके

कारण ही पैदा हुई है। इस मामलेमें भी मैं अभी अपना रास्ता टटोल रहा हूँ और यदि मुझसे बन पड़ा तो मै परिषद्में अवश्य भाग लूँगा। मैंने अबतक बिलकुल ही निश्चित कोई निर्णय नही किया है। यदि मुझे रास्ता सूझ पड़ा तो तनिक भी संकोच किये बिना लन्दन चला जाऊँगा। आपको जब भी लिखनेकी जरूरत महसूस हो, आप मुझे अवश्य ही लिखें।

हृदयसे आपका,

श्री चि० यु० चिन्तामणि
मारफत – 'लीडर'
इलाहाबाद

अंग्रेजी (१७१७५) की फोटो-नकलसे।

३२२. पत्र : एच० डब्ल्यू० एमर्सनको

स्थायी पता, साबरमती
३१ मई, १९३१

प्रिय श्री एमर्सन,

बम्बई सरकार और मेरे बीच हुए पत्र-व्यवहारकी प्रतियाँ संलग्न कर रहा हूँ।

हृदयसे आपका,

संलग्न :

श्री एच० डब्ल्यू० एमर्सन
शिमला

[अंग्रेजीसे]

अ० भा० कां० क०, फाइल संख्या १६ बी, १९३१।
सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

३२३. पत्र : वा० गो० देसाईको

बारडोली
३१ मई, १९३१

भाईश्री वालजी,

दूधीबहनको साथमें जरूर ले आना। अपने हिसाबसे तुम बुधवार अर्थात् ३ तारीखको पहुँचोगे। ७ तारीखको मुझे यहाँसे भागना है।

बापू

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ६४१५) की फोटो-नकलसे।
सौजन्य : वा० गो० देसाई

३२४. पत्र : दूधाभाईको

बारडोली
३१ मई, १९३१

भाई दूधाभाई,

तुम्हारा पत्र मिला। अन्त्यजेतर हिन्दूका अर्थ भंगी नहीं, अन्त्यजेतरका अर्थ है ऐसा हिन्दू जो अन्त्यज नहीं है। गुजरातमें पला हुआ एक ब्राह्मण युवक मेरी नजरमें है। आश्रममें जात-पाँत नहीं और अन्त्यज जैसी चीज हिन्दू धर्ममें से निकाल देनी चाहिए। इस कारण मेरे मनमें यह विचार रहता है कि लक्ष्मीका विवाह अन्त्यजेतरसे करना ही ठीक होगा। लक्ष्मीको जल्दी नहीं है, यह तो बहुत अच्छी बात है। अमरेलीके पास घरके बारेमें तो मैंने लिखा ही है न?

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

इसी आशासे अमरेली गया था।

गुजराती (जी० एन० ३२४४) की फोटो-नकलसे।

३२५. पत्र : रुक्मिणी बजाजको

बारडोली
३१ मई, १९३१

चि० रुक्मिणी,

तेरा पत्र मिला। तुझे किस तरह आश्वासन दूँ। संसारमें सभी चीजें अपने मनकी नहीं मिलतीं। हमें संसारमें अलिप्त होकर रहना है। तू दूसरे प्रान्तमें गई, इसी कारण यह परेशानी हुई है, यह तो कभी न सोचना। तू धीरज रखेगी तो सभी कुछ ठीक हो जायेगा। तुझे कुछ दिनों मेरे पास रहनेकी जरूरत है। ऐसा अवसर देखूँगा। तू शान्त रहना। राधासे आठ तारीखको बम्बईमें मिलना है। उस समय फैसला कर सकेंगे कि उसे कहाँ रहना है और क्या करना है। सन्तोकका स्वास्थ्य ठीक हो गया है, यह जानकर एक चिन्ता दूर हुई।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ९०५८)की फोटो-नकलसे।

३२६. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

३१ मई, १९३१

चि० प्रेमा,

लक्ष्मी और पद्मा बीमार क्यों होती रहती हैं? ऐसा लगता है कि वे दवा वगैराके बारेमें लापरवाह रहती हैं। पद्माको बुखार बना रहा तो उसका स्वास्थ्य बिगड़ जायेगा। उसकी देख-भालकी जिम्मेदारी किसपर रहती है? हर बच्चेको आश्रममें माँ-बापकी कमी नहीं अखरनी चाहिए। कृष्णकुमारीकी तबीयत कैसी है? औरोंके बारेमें भी मुझे लिखना।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० १०२५५)की फोटो-नकल तथा सी० डब्ल्यू० ६७०३ से भी।
सौजन्य : प्रेमाबहन कंटक

३२७. पत्र : विट्ठलदास जेराजाणीको

बारडोली
३१ मई, १९३१

भाई विट्ठलदास,

तुम्हें याद तो रोज ही करता हूँ। तुम्हारे स्वास्थ्यका हाल भी पूछता रहता हूँ। तुम इस तरह बीमार कैसे पड़ गये? अब फौरन काममें लग जानेका आग्रह न करना और स्वास्थ्य सुधार लेना। देवलाली जैसी जगहमें जाकर रहना ठीक हो तो वहाँ रह आओ।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (एस० एन० ९७७७)की फोटो-नकलसे।

३२८. पत्र : नारणदास गांधीको

बारडोली
३१ मई, १९३१

चि० नारणदास,

लक्ष्मी और पद्माका तो कोई योग्य इलाज तुरन्त करवाना चाहिए। डाक्टर कानूगा दोनोंका अच्छी तरह निरीक्षण करें। उससे भी वे ठीक न हों तो सोचना पड़ेगा।

वैद्यकी दवासे बाको कोई विशेष लाभ हुआ नहीं दीखता? उसे तो पानी और सोडेसे फायदा हो रहा लगता है। बा तो यह मानती है कि दवासे बलगम निकलना बन्द हो जाता है और वह छातीमें ही जमा रहता है।

दोनों गंगाबहनें और वसुमती आजकल यहाँ आई हुई हैं।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च:]

मैथ्यूको आना हो और वहाँसे निकल सकता हो तो आ जाये, ऐसा उसे कल लिखा है। अमतुलबहनको लिखा पत्र पढ़ लेना और उसे उसकी धन-सम्बन्धी स्थिति समझा देना।

गुजराती एम० एम० यू०–१ से।

३२९. तार : सुभाषचन्द्र बोसको

स्वराज्य आश्रम
बारडोली
१ जून, १९३१

सुभाषचन्द्र बोस
वुडबर्न पार्क
कलकत्ता

मेरी सलाह कि लिए सेनगुप्तसे मिलों और यदि आपसी निबटारा नामुमकिन हो तो सभी मामले पंच-फैसलेके लिए सौंपनेका प्रस्ताव रखिए। मैं जवाबी आम सभाएँ या प्रचारकी राय नहीं देता। सेनगुप्तको पंच-फैसलेपर राजी होनेके लिए तार भेज रहा हूँ।[1]

गांधी

अंग्रेजी (एस० एन० १७१७८) की फोटो-नकलसे।

३३०. तार : जे० एम० सेनगुप्तको

स्वराज्य आश्रम
बारडोली
१ जून, १९३१

सेनगुप्त
एल्गिन रोड
कलकत्ता

अन्दरूनी मतभेद दूर होने चाहिए। पारस्परिक समझौता असम्भव हो तो कृपया मामले पंच-फैसलेके लिए सौंपनेपर राजी हो जाइए।

गांधी

अंग्रेजी (एस० एन० १७१७६) की फोटो-नकलसे।

१. देखिए पिछला शीर्षक।

३३१. तार : मुरारीलालको

स्वराज्य आश्रम
बारडोली
१ जून, १९३१

डॉ० मुरारीलाल
सिविल लाइन्स
कानपुर

आपका तार[1] मिला। बड़ा दुःख हुआ पर यही सुझाव दे सकता हूँ कि दोनों पक्ष मामला पंच-फैसलेको सौंप दें। पूरी चीज देखे बिना कोई दूसरी राय नही दे सकता।

गांधी

अंग्रेजी (एस० एन० १७१८०)की फोटो-नकलसे।

३३२. भेंट : पत्र-प्रतिनिधियोंको

१ जून, १९३१

सर चिमनलाल सीतलवाडने हालमें गोलमेज परिषद्के प्रति गांधीजी के रुखके बारेमें एक वक्तव्य दिया था। उसके सम्बन्धमें 'एसोसिएटेड प्रेस'के प्रतिनिधि द्वारा भेंट किये जानेपर गांधीजीने कहा :

सर चिमनलाल सीतलवाडने मेरे बारेमें जो भी कहा, उसके सम्बन्धमें मुझसे प्रश्न पूछकर आप मुझे संकोचमें डाल रहे हैं। उनकी उम्र और उनके बड़प्पनके बलपर उनको पूरा अधिकार है कि वे अपर्याप्त जानकारीके आधारपर भी जैसे चाहें वक्तव्य दे सकते हैं। मेरे जैसे छोटे-मोटे व्यक्तियोंकी आलोचना उन्हें नहीं छू सकती।

और हालाँकि इस नाजुक वार्ताके दौरान मैं बहुत ज्यादा खुलासा करके तो कोई बात नहीं कह सकता, पर मोटे तौरपर इतना जरूर कर सकता हूँ कि मैंने कम-से-कम अपनी जानकारीमें तो ऐसा कोई काम नहीं किया है जो समझौतेको खटाईमें डाल दे या उसके विरुद्ध पड़े।

१. तार इस प्रकार था : "गांधी सेवा समितिके साइनबोर्डको लेकर हिन्दु-मुस्लिम झगड़ा। इतने ऊँचे साइन बोर्डसे कोई बाधा न पड़नेपर भी मुसलमान उसके नीचेसे जुलूस [ताजिये] निकालनेको तैयार नहीं। . . . हिन्दू लोग कुछ घंटोंके लिए भी उसे हटानेको राजी नहीं। . . . सारे शहरमें आंतक . . .।"

इन परिस्थितियोंमें हालाँकि मैं गोलमेज परिषदमें शामिल होनेके लिए राजी हूँ और उत्सुक भी हूँ, लेकिन समझौतेको मैं जितना समझ पाया हूँ, उसमें तो ऐसी कोई चीज मुझे नहीं दिखाई पड़ती जिसके कारण कांग्रेसके लिए गोलमेज परिषद्में शामिल होना अनिवार्य ही हो जाता हो; इसलिए कि वह चर्चा शुद्ध रूपसे सिद्धान्तों की ही चर्चा है और उसके दौरान उपस्थिति अनुपस्थितिका कोई प्रश्न बिल्कुल उठा ही नहीं।

यह पूछे जानेपर कि क्या उनका रुख लगातार बदलता रहा है, महात्मा गांधीने कहा :

मुझे तो नहीं मालूम कि मैंने ऐसा कुछ किया है।

वे गोलमेज परिषद्में भाग लेंगे या नहीं — इस प्रश्नके उत्तरमें उन्होंने कहा :

यदि मैं गोलमेज परिषद्में शामिल हो सका, तो मैं वहाँ एक दर्शक-मात्र बनकर नहीं रहूँगा; मैं उसकी कार्रवाईमें पूरी तौरपर भाग लूँगा और अपने पूरे उत्साह तथा समूची शक्तिसे कांग्रेसकी माँगें गोलमेज परिषद्के सामने पेश करूँगा।

यह पूछनेपर कि क्या बारडोलीमें कोई गतिरोध पैदा हो गया है, महात्मा गांधीने कहा :

मैंने श्री वल्लभभाई पटेलके साथ जाकर कलेक्टरसे मुलाकात की थी और वह काफी अच्छी रही। मुझे आशा है कि सब-कुछ सन्तोषप्रद ढंगसे तय हो जायेगा।

एक और प्रश्न पूछा गया कि क्या बारडोली या बोरसदमें सन्धिकी शर्तोंका कोई उल्लंघन हुआ था। इसके उत्तरमें उन्होंने कहा :

मैं इस प्रश्नका उत्तर नहीं देना चाहूँगा क्योंकि बारडोली और बोरसद दोनों ही से सम्बन्धित अनिर्णीत प्रश्नोंको तय करनेके लिए वार्ता अब भी चल ही रही है।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, ३-६-१९३१

३३३. तार : तमिलनाडु सम्मेलन, मदुराको

स्वराज्य आश्रम
बारडोली
२ जून, १९३१

तमिलनाडु सम्मेलन
मदुरा

सम्मेलनकी सफलताकी कामना। निस्सन्देह विदेशी वस्त्र बहिष्कारका दारोमदार धरनेकी अपेक्षा खद्दरपर अधिक।

गांधी

अंग्रेजी (एस० एन० १७१८२) की माइक्रोफिल्मसे।

३३४. तार : कोम्ब्राबेलको

कोम्ब्राबल
बाल्मट्टी
मंगलौर

मेरी रायमें अनुमति नहीं दी जा सकती।

गांधी

अंग्रेजी (एस० एन० १७१८३) की माइक्रोफिल्मसे।

३३५. पत्र : एच० डब्ल्यू० एमर्सनको

स्थायी पता, साबरमती
२ जून, १९३१

प्रिय श्री एमर्सन,

'नवजीवन' और 'यंग इंडिया' प्रेसके बारेमें हुई हमारी बातचीत[1] आपको याद होगी। आपने शायद कानूनी सलाह[2] ली है? मैं जितने भी लोगोंसे राय ले पाया हूँ, वे यही कहते है कि इस धाराका अर्थ निश्चित रूपसे यही है कि उसी स्थानपर सुपुर्दगी दी जाये, जहाँसे सम्पत्ति हटाई गई थी। मैं जानना चाहूँगा कि आपके वकील इस सम्बन्धमें क्या कहते हैं। इस बीच स्थिति यह है कि प्रबन्धकोंके स्वामित्वमें उपयुक्त किस्मकी मशीनें और अन्य सामग्री होनेके बावजूद, 'यंग इंडिया' और 'नवजीवन'को अभी भी कठिनाई हो रही है।

हृदयसे आपका,

[अंग्रेजीसे]

अ० भा० कां० क०, फाइल संख्या १६–बी, १९३१।
सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

१. इस विषयमें गांधीजीके पहले पत्रके लिए देखिए "पत्र : आर० एम० मैक्सवेलको", ७-५-१९३१।
२. देखिए "पत्र : एच० डब्ल्यू० एमर्सनको", १४-६-१९३१।

३३६. पत्र : सी० एफ० एन्ड्रयूजको

स्थायी पता, साबरमती
२ जून, १९३१

प्रिय चार्ली,

आपके दो बहुमूल्य पत्र मिले। मैं समझ गया कि आप चाहते हैं, मैं जल्दी-से-जल्दी इंग्लैड पहुँच जाता — सम्भव हो, तो हवाई डाककी तरह। लेकिन मैं तो फुदक भी नहीं सकता। मुझे अबतक मार्ग नहीं सूझ रहा है। मेरी इच्छा तो वहाँ आनेकी है, पर अन्दरसे आवाज आती है — "नहीं;" और बाहरी वातावरण अंतरकी आवाजके मार्ग-दर्शनका ही समर्थन करता है। आप जानते ही हैं कि कांग्रेसकी माँगों की भाषा कुछ अधिक स्पष्ट रूपमें दो टूक है। वह अन्यथा हो भी नहीं सकती थी। यदि हम अपने ही घरमें साम्प्रदायिक समस्या तकको हल न कर पाये, तो फिर मैं लन्दनमें आत्मविश्वासके साथ एक अविचलित स्वरमें अपनी बात नहीं कह सकूँगा। इसलिए मुझे नहीं लगता कि यदि साम्प्रदायिकताका निबटारा न हो पाया और सर्वसम्मतिसे कोई काम-चलाऊ समझौता न हो सका तो अपने अन्दर उतना आत्मविश्वास पैदा कर सकूँगा जितना कि कांग्रेसका सन्देश देनेके लिए अपेक्षित है। यह रही गोलमेज परिषद्की बात। ब्रिटेनके मंत्रीगण यदि कांग्रेसके दृष्टिकोणकी चर्चा करने और उसे समझनेके लिए वहाँ मेरी उपस्थिति आवश्यक समझेंगे तो मैं जरूरत पड़नेपर आ सकता हूँ और वे चाहें तो उनमें थोड़ा प्रचार-कार्य भी कर सकता हूँ। लेकिन तब फिर दिल्ली समझौता भी तो है। मेरा कर्त्तव्य है कि मैं देखूँ कि कोई अकेला आदमी जितना प्रयत्न कर सकता है, वह मैं समझौता-भंग न होने देनेके लिए अवश्य करूँ। बम्बई सरकारने मुझे युद्धकी घोषणा करनेका पर्याप्त कारण दे दिया है, लेकिन मैं धैर्यसे काम ले रहा हूँ, इतने धैर्यसे कि यदि आपको सारी बातें मालूम होती तो आपको मेरे धैर्यपर आश्चर्य ही होता। छोटी-छोटी बातोंमें भी उनके अमलके समय ऐसा लगता है जैसे कोई मजबूत दाँत बाहर खींचा जा रहा हो। लेकिन मैं अपनी इन परेशानियोंसे आपको परेशान नहीं करना चाहता। मैं उनको हँसते हुए झेल रहा हूँ और विरोधको खत्म करता जा रहा हूँ। ईश्वरकी कृपासे केन्द्रीय सरकारकी सहायता मुझे मिल रही है। मेरा विश्वास है कि श्री एमर्सन मुझे भली-भाँति समझते हैं और वे सब ठीक कर देंगे। लेकिन प्रान्तीय सरकारें कुछ ऐसी परिस्थितियाँ पैदा कर सकती हैं, जिनपर मेरा और उनका, किसीका भी बस न चले। मैं आपको बताता हूँ कि जहाँतक कांग्रेसकी बात है, कांग्रेसी समझौतेको जिस निष्ठाके साथ कार्यान्वित कर रहे हैं उसकी तो मुझे आशा नही थी। वैसे कभी-कभी धरनों आदिमें उत्साहका अतिरेक दिखाई पड़ता है, लेकिन उसे तुरन्त ही काबूमें ले लिया जाता है। जिनको भी जरूरत मालूम पड़े उनको आप मेरी ओरसे आश्वस्त कर सकते हैं।

मैं परिषद्‌की बैठकोंमें शामिल होनेका इच्छुक हूँ और वार्ताके जरिये स्थायी शान्ति स्थापित करने तथा संवैधानिक समस्याओंके बारेमें सम्मानपूर्ण समझौता करनेके लिए भरसक प्रयत्न करूँगा। मुझे वास्तवमें रोकनेवाली चीज अगर कोई है तो बाह्य परिस्थिति ही है। लेकिन अब तो गोलमेज परिषद् और उसकी समितियोंकी बैठक स्थगित कर दी गई है और उसके स्थगनके कारणोंका मेरे इस संकोचसे कोई सरोकार नही। इसलिए यदि परिषद्‌के अतिरिक्त अन्य कारणोंसे मेरी उपस्थिति वहाँ अपेक्षित न हो गई हो, तो मेरे वहाँ आनेकी बातको लेकर जल्दबाजी करनेकी जरूरत नहीं रह गई है। आप जितना चाहते थे, मैंने आपको उतना बतला दिया है।

मैं फिलहाल बारडोलीमें सब ठीक-ठीक करनेमें लगा हुआ हूँ।

गुरुदेव शायद अस्वस्थ हैं।

सस्नेह,

मोहन

अंग्रेजी (एस० एन० ९६८) की फोटो-नकलसे।

३३७. पत्र : सतीशचन्द्र दासगुप्तको

स्थायी पता, साबरमती
२ जून, १९३१

प्रिय सतीश बाबू,

आपका पत्र मिला। सुभाष बाबू यहाँ आये थे। वे प्रत्यारोपोंकी एक लम्बी-चौड़ी फेहरिस्त साथ लाये थे। अब मैंने दोनोंको तार द्वारा कह दिया है कि यदि दोनों ही पारस्परिक सहमतिसे अपना मामला मध्यस्थको सौंप दें और यदि वे किन्हीं स्थानीय व्यक्तियोंको मध्यस्थ बना लें और उनके फैसलेको स्वीकार करके चलें तो यह अशोभनीय विवाद समाप्त हो सकता है। जो भी हो, मैं ९ तारीखको इसे निबटानेके लिए जितनी भी कोशिश हो सकती है, करूँगा।

'गीता' और 'आत्मकथा'के मामलेमें आपको सफलता मिल रही है। मुझे तो आशा नही थी कि आप इन पुस्तकोंकी कुछ भी बिक्री कर पायेंगे।

यह जानकर खुशी हुई कि आपका वजन कुछ बढ़ा है, लेकिन और काफी बढ़ना चाहिए। मैं पूर्ण विश्वासके साथ कहता हूँ कि आपको अपने शरीरके लिए आवश्यक भोजन लेनेमें कोई कसर नहीं रखनी चाहिए। माँस और मछलीका त्याग करना ही आपके लिए बहुत काफी है। आपको दूध और दही काफी मात्रामें लेना चाहिए और ऐसे ताजा फल भी जो आसानीसे मिल सकें। मैंने यही बात हेमप्रभा देवीको भी लिखी है। उनका निखिलके[1] दुःखमें अपने शरीरके लिए आवश्यक भोजन न लेना बहुत गलत है। मेरी यह धारणा दिन-दिन पुष्ट होती जा

१. सतीशचन्द्र दासगुप्तका पुत्र, जिसका स्वर्गवास १९२८ में हो गया था।

रही है कि इस प्रकारके आत्मत्यागमें कोई अच्छाई तो है ही नहीं, बल्कि यह अपनेआपमें प्राकृतिक नियमोंका उल्लंघन है। भोजनका त्याग तभी गुणकारी होता है जब वह स्वादके मामलेमें जिह्वाको नियन्त्रणमें रखने या किसी उपचारके लिए किया जाये।

आपने मुझे कतैयोंकी ओरसे १८२८ में लिखे गये जिस पत्रका अनुवाद भेजा था, उसे मैंने 'यंग इंडिया' में प्रकाशित कर दिया था।[1] अब किशोरलाल मशरूवालाने उसकी प्रामाणिकतापर सन्देह प्रकट किया है। उनका कहना है कि पत्रकी भाषा और उसमें रखे गये विचार भी बहुत आधुनिक मालूम पड़ते हैं। आपके पत्रको यदि मैं ठीक-ठीक समझ पाया हूँ तो आपने उसमें उल्लेख किया था कि आपके पास उस समाचारपत्रकी प्रति मौजूद है जिसमें पत्र-प्रकाशित हुआ था।

सस्नेह,

बापू

श्रीयुत सतीशचन्द्र दासगुप्त
खादी प्रतिष्ठान
सोदपुर (कलकत्ता)

अंग्रेजी (जी० एन० ८०३४) की फोटो-नकलसे।

३३८. पत्र : ए० जी० बटको

२ जून, १९३१

प्रिय मित्र,

आपका पत्र[2] मिल गया। आप मेरे कथनके सत्यका साक्षात्कार प्रार्थना, आत्म-शुद्धि, चिन्तन, उपवास और श्रम-साध्य अध्ययनके बलपर कर सकते हैं।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजी (एस० एन० १७१६४) की फोटो-नकलसे।

१. देखिए "अठारह सो अट्ठाईसमें", २१-५-१९३१।

२. ए० जी० बट्टने २९-५-१९३१ को शिमलासे लिखे अपने पत्रमें "बीसवीं सदीकी एक सती", ३-५-१९३१ गांधीजी के एक लेखका उल्लेख करते हुए कहा था कि आत्माकी अमरताके पक्षमें कही गई बातपर विश्वास नहीं जमता।

३३९. पत्र : सर डब्ल्यू० जे० वेनलेसको

स्थायी पता, साबरमती
२ जून, १९३१

प्रिय मित्र,

पत्रके लिए मैं आपका आभारी हूँ। आपने मेरी जो सेवा की थी उसकी स्मृति तो मेरे दिमागमें बहुत ही स्पष्ट है,[१] लेकिन एक अरसा हुआ मैंने इस प्रकारकी सेवाका किसी भी प्रकारका कोई पारिश्रमिक देनेकी बात सोचना बन्द कर दिया है। और मैं तो स्वयं ऐसी सेवा करनेमें लगभग असमर्थ ही हो गया हूँ। इसलिए इधर वर्षोतक मैंने लोगोंकी बस एक ही सेवा की है — उनको हार्दिक धन्यवाद देना; और मेरे जैसे निर्धन व्यक्तिके हृदयसे निकला धन्यवाद आशीर्वाद बन जाता है। मैं स्वीकार करता हूँ कि मुझपर अनेकानेक लोगोंने निजी तौरपर कृपाएँ की हैं। आप जरा सोचिए कि सार्वजनिक कार्योंके ही सिलसिलेमें अपने परिचित धनीमानी व्यक्तियोंसे अगर मैं अपने कृपालुओंके श्रमके लिए दान इत्यादि माँगना शुरू कर दूँ तो मेरी क्या स्थिति हो जायेगी और क्या स्थिति होगी उन समृद्ध व्यक्तियोंकी। इसलिए आपकी इच्छाके अनुसार कार्य करनेकी मेरी असमर्थताके लिए आप मुझे क्षमाकर देनेकी कृपा करें।

हृदयसे आपका

डॉ० सर डब्ल्यू० जे. वेनलेस
१०१६, मेटीलिजा रोड
ग्लेन्डेल, कैलीफोर्निया (अमेरिका)

अंग्रेजी (एस० एन० १७१८८)की फोटो-नकलसे।

१. सम्भवत: १९२७की बीमारीमें प्रेषीने गांधीजीका इलाज किया था उससे संकेत है; देखिए खण्ड ३३, पृष्ठ २०९-१०।

३४०. पत्र : एन० जी० जोशीको

स्थायी पता, साबरमती
२ जून, १९३१

प्रिय मित्र,

निपानीके फौजदारी मुकदमेके तथ्योंके विवरणका आपका पत्र मुझे मिल गया। जहाँ हिंसाका कोई भी आरोप है, वहाँ मामला प्रान्तीय सरकारपर निर्भर करेगा। मैं उसमें जो भी लिखा-पढ़ी करूँगा, उसकी सफलताकी सम्भावना नही है। इसलिए मैं सलाह दूँगा कि बाकायदा मुकदमा लड़ा जाये।

हृदयसे आपका,

श्री एन० जी० जोशी
अध्यक्ष, जिला कांग्रेस कमेटी
बेलगाँव

अंग्रेजी (एस० एन० १७१८९)की फोटो-नकलसे।

३४१. पत्र : सर कावसजी जहाँगीरको

स्थायी पता, साबरमती
२ जून, १९३१

प्रिय सर कावसजी,

मेरे पत्रकी[1] प्राप्ति-सूचना तुरन्त भेजने और सरदार गरदाके कब्जेमें मौजूद जमीनके सिलसिलेमें अब भी जारी आपके प्रयत्नोंके लिए मैं आपका आभार मानता हूँ। मुझे लगता है कि सौदा पक्का करनेका वह पत्र लिखनेके बाद सम्पत्तिको हस्ता-न्तरित करना सरदार गरदाके लिए कानूनन अनिवार्य हो गया है। उनके पत्रके उत्तर में मैंने इसी आशयका[2] पत्र उनको लिखा है। मैं और आगे भी जाँच-पड़ताल करता रहा हूँ और मैं आपको आश्वस्त कर सकता हूँ कि उनके लगाये आरोपोंमें कोई सार नही है। बल्कि उल्टे वे ही जनताको आतंकित किये हुए हैं। उनकी जमीनसे आम तोड़नेके अपराधमें बारह वर्षसे कम अवस्थाके लडके गिरफ्तार किये गये थे। आपके ताल्लुकेकी जानकारी नहीं है। आमके दरख्त सरकारी संरक्षणमें नहीं हैं और प्रदेश-भरमें शरारती लड़के आमोंके मौसममें खूब आम तोड़ते फिरते हैं और उनको कोई भी नहीं टोकता। मैं ठीक नहीं कह सकता कि गिरफ्तार किये जानेवाले शरारती

१. देखिए "पत्र : कावसजी जहाँगीरको", २६-५-१९३१।
२. देखिए "पत्र : फ्रामरोज बी० गरदाको", २६-५-१९३१।

लड़कोंने उनके आमोंपर ही हाथ साफ किया था या नहीं। मान लीजिए, किया भी हो, तो उनपर किसीका नियन्त्रण नहीं होगा। फिर भी वे इस प्रकारकी घटनाओं को लेकर अपना आरोप-पत्र तैयार कर देते हैं, हालाँकि तंग किये जानेके उनके तथा-कथित आरोपसे इन घटनाओंका कोई सम्बन्ध ही नहीं।

कुमारी वी० कान्ट्रैक्टरकी शिकायतके बारेमें मैं आपके पत्रकी राह देख रहा हूँ।

हृदयसे आपका,

श्री कावसजी जहाँगीर
टैम्पल हिल
महाबलेश्वर

[अंग्रेजीसे]

अ० भा० कां० क०, फाइल संख्या १६–सी, १९३१।
सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

३४२. पत्र: शारदाबहन चि० शाहको

२ जून, १९३१

चि० शारदा,

पत्र मिला। लगता है, इन दिनों तेरी तबीयत ठीक चल रही है। तुम सब भी मेरी ही तरह पत्र लिखनेमें सुस्त बन गई हो।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९९०२)से।
सौजन्य: शारदाबहन जी० चोखावाला

३४३. पत्र: नानीबहन झवेरीको

बारडोली
२ जून, १९३१

चि० नानीबहन,

तुम्हारा पत्र मिला। तुम विद्यापीठमें रह गई उसके लिए माफी माँगनेकी बिलकुल जरूरत नहीं। वहाँ रहना कोई गुनाह नहीं है। वहाँ सीखोगी ही इसलिए सन्तोषपूर्वक रहना, स्वास्थ्य सुधारना, मनका विकास करना। मुझे पत्र लिखती रहना। गंगाबहनके भी वहीं आनेकी काफी सम्भावना है।

बापूके आशीर्वाद

गजराती (जी० एन० ३११५)की फोटो-नकलसे।

३४४. पत्र : मणिलाल और सुशीला गांधीको

बारडोली
२ जून, १९३१

चि० मणिलाल और सुशीला,

तुम दोनोंका स्टीमरसे लिखा पत्र मिल गया था। तुम लोगोंके पहुँचनेकी खबर भी मिल गई है। इस बार तुम्हारे नियमित रूपसे आनेवाले पत्रकी राह देखूंगा।

बा मेरे साथ बारडोलीमें है। शिमलामें भी साथमें ही थी। विलायतका अभी तो कोई पक्का कार्यक्रम नहीं बना। हिन्दू-मुस्लिम समस्याका कोई हल अभी ही दूर लगता है। बाकी ठीक है।

ज्यादा लिखनेका समय नहीं है।

सीता उर्फ तो भूल गया हूँ, अब तो फिर मोटी हो गई होगी। वहाँ बीमारी तो होनी ही नहीं चाहिए। इसी तरह सुशीला भी मोटी हो जाये तो कितना अच्छा है।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ४७८४)की फोटो-नकलसे।

३४५. पत्र : हरि-इच्छा देसाईको

बारडोली
२ जून, १९३१

चि० हरिइच्छा,

तुम्हारा पत्र बहुत दिनोंके बाद मिला। आँखका इलाज जल्दी ही कर लेना चाहिए। उसका उपाय यह है : जितना सहन हो सके उतने गर्म पानीमें थोड़ा नमक डालकर रोज आँखें धोयें। नमक बिलकुल साफ और थोड़ा-सा ही होना चाहिए। इससे आँखोंपर छींटे भी दें। फायदा होना होगा तो एक ही दिनमें इसका असर समझमें आ जायेगा अर्थात् आँखका तेज बढ़ा हुआ मालूम होगा। रातको सोते समय कपड़ा दूधमें भिगोकर आँखपर बाँधकर सो जाना। ९ तारीखको बम्बई जाना है। ११ को वापस आऊँगा।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

बच्चोंको जरूर लाना।

गुजराती (जी० एन० ७४६७) की फोटो-नकल तथा सी० डब्ल्यू० ४९१३ से भी।
सौजन्य : हरि-इच्छा कामदार

३४६. पत्र : बबलभाई मेहताको

बारडोली
२ जून, १९३१

चि० बबलभाई,

तुम्हारा पत्र मिला।

१. विदेशियोंपर लागू कानूनके अनुसार हुक्म मिले तो उसे न माना जाये।

२. अपने निवास-स्थानपर भेज दिया जाये तो वहाँ बेजा बन्धन स्वीकार न किये जायें।

३. जेलमें समझौतेकी खबर मिले तो उसे कुछ महत्व न दिया जाये। जो लोग बाहर बैठे हैं वे जो-कुछ करना चाहें करें।

४. प्राप्त आदेशकी रसीद देनेमें कोई हर्ज नहीं है।

तुमने जेलमें नियमोंका पालन किया और बाहर भी कर रहे हो, यह बहुत अच्छी बात है।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्चः]

तुम्हें जो बातें लिख रहा हूँ इनमें स्थितिके अनुसार फेरफार तो हो ही सकता है। ये विचार मैंने लिखे हैं; तो भी जिस समय जैसा योग्य लगे वैसा ही करना।

बापू

गुजराती (एस० एन० ९४५३) की फोटो-नकलसे।

३४७. प : नारायण मोरेश्वर खरेको

२ जून, १९३१

चि० पण्डितजी,

ठक्कर बापा लिखते हैं कि डाकोरमें जो भंगियोंका सम्मेलन हुआ था उसके लिए तुमको बुलाया था किन्तु तुम नहीं जा सके। क्या यह ठीक है?

रामभाऊ कैसा चल रहा है?

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० २१६) की फोटो-नकलसे।
सौजन्य : लक्ष्मीबहन खरे

३४८. पत्र : रामभाऊ खरेको

२ जून, १९३१

चि० रामभाऊ,

तूने अलमोड़ासे तो बहुत ही कम पत्र लिखे थे। क्या वहाँ भी आलसी ही बना रहेगा? क्या अब आलस्य छोड़ नहीं देना चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० २८९) की फोटो-नकलसे।
सौजन्य : लक्ष्मीबहन खरे

३४९. पत्र : नारणदास गांधीको

२ जून, १९३१

चि० नारणदास,

क्या आश्रमका कोई ऐसा व्यक्ति तुम्हारी दृष्टिमें है जो भंगी सेवा-कार्यके लिए आगे आये?

लालजी कैसा काम करता है? खर्चके अनुपातमें काम कर लेता है?

लाल बंगलेमें कोई रह रहा है या वहाँ कोई सोता है? क्या गिरिराज बहक गया है?

बापूके आशीर्वाद

गुजराती एम० एम० यू०–१से।

३५०. पत्र : छगनलाल जोशीको

२ जून, १९३१

चि० छगनलाल,

सुरेन्द्रके पत्रने तुम्हें उलझनमें डाल दिया लगता है। उसने कई बातोंकी खिचड़ी बना डाली है, इसीलिए तुम्हें उनका सार समझनेमें कठिनाई हुई है। सुरेन्द्र आश्रममें जाये, यह एक स्वतन्त्र विचार है और उसके ये कारण हैं।

१. मुझे कराड़ीमें उसकी खास आवश्यकता नही दिखाई दी।

२. विशेष प्रयत्न करके दूसरी जगह ढूँढ़े और वहाँ रहें, हम अपरिग्रही ऐसा नहीं कर सकते।

३. वर्तमान स्थितिमें ऐसे व्यक्ति आश्रम चले जायें तो इसमें तनिक भी बुराई नहीं है।

४. सरदारकी यह इच्छा जरूर है कि सुरेन्द्र या आश्रमके दूसरे सदस्य जो परिस्थितियोंके अनुसार अपनेको न ढाल सकें, आश्रममें ही चले जायें तो अच्छा है।

इस बातके साथ-साथ जिन दूसरी बातोंपर चर्चा हुई उनका सार यह है:

१. जो आश्रमवासी आश्रम-नियमोंका पालन करनेमें शिथिल हों और बाहर रहकर काम करना चाहिए, ऐसा बहाना बनाकर आश्रम न जायें, उन्हें आश्रममें वापस चले जाना चाहिए।

२. जिस आश्रमवासीकी बाहर आवश्यकता हो और जो नियमोंका पालन कर सकता हो उसका कर्त्तव्य है कि बाहर रहकर कार्यक्रममें योग दे।

३. एक गाँवमें एक ही कार्यकर्त्ता जाये, यह अधिक वांछनीय है।

४. हो सकता है कि एकसे ज्यादा कार्यकर्त्ता होनेसे काम कम पड़ जाये और फिर दो कार्यकर्त्ताओंके छोटे-से आपसी मतभेदके कारण भी लोगोंका विश्वास डिग जाये।

५. सम्भव है कि दरबारीने तीन-चार आश्रमवासी कार्यकर्त्ताओंको देखकर सोचा हो कि मेरा जो स्थान था, वह अब नहीं रहा और ऐसा सोचकर वह चला गया हो।

६. जहाँ अपनी सेवाकी आवश्यकता स्वयं सिद्ध न हो वहाँसे भाग आयें। मैंने क्या कहा है इसका दूसरों द्वारा किया गया वर्णन स्वीकार करनेसे पहले मुझसे पूछ लेना चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]

बापुना पत्रो–श्री छगनलाल जोशीने

३५१. पत्र : खुशालचन्द गांधीको

बारडोली
२ जून, १९३१

पूज्य भाईश्रीकी सेवामें,

नारणदासको लिखा आपका पोस्टकार्ड पढ़कर दुःख हुआ। आपने पत्र काँपते हाथोंसे लिखा है। इससे कमजोरी जाहिर होती है। नारणदासके आनेसे थोड़ी शान्ति मिली होगी। देह रहे तो भी क्या, न रहे तो भी क्या, ऐसी स्थिति हमारी होनी चाहिए। मुझे पत्र लिखवाइए।

आप दोनोंको,

मोहनदासके दण्डवत्

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९२२०)से।
सौजन्य : नारणदास गांधी

३५२. पत्र : रसिक देसाईको

बारडोली
२ जून, १९३१

चि० रसिक,

पत्र मिला। फोड़े तो खूनकी खराबीके कारण होते हैं। यह केवल फल और दूधका आहार लेनेसे ही दूर हो सकती है।

तू विद्यापीठ या कहीं और जाना चाहे तो ऐसा करनेकी योग्यता तो होनी ही चाहिए। जो अपना काम छोड़कर विद्यापीठमें जाता है, वह जाने योग्य नहीं है। आश्रममें पूरी तरह पढ़ना नहीं हो पाता, यदि कोई यह बहाना लेकर पढ़नेके लिए विद्यापीठमें जाये तो वह भी जाने योग्य व्यक्ति नहीं है। स्वराज्य सेवाकी खातिर जिसकी उपस्थिति विद्यापीठमें जरूरी है और जो इसके लिए वहाँ जाता है वही ऐसा करने योग्य है।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च:]

जयन्तसे कहना कि उसके पत्रमें जवाब देने लायक कुछ नहीं था, इसलिए नहीं लिखा।

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ४३५०)से।
सौजन्य : रसिक देसाई

३५३. पत्र : हेमप्रभा दासगुप्तको

बारडोली
२ जून, १९३१

चि० हेमप्रभा,

तुमारा खत मिला है। मेरा अगला खत मिला होगा।

पुत्रके या ऐसे प्रियजनके मृत्युके बाद खाना कम करना या छोड़ना अज्ञान हि मानो। उसमें कुछ भी पुण्य नहिं है। मरे हूए के पीछे सेवावृत्ति बढ़ाना, सब आत्माका ऐक्य पहचानना, देहका मिथ्यात्व जानना धर्म है शुद्ध श्राद्ध है। खाना कम करना या कुछ बीज छोड़ना तो स्वादेंद्रि वश करनेके कारण या शारीरिक व्याधि दूर करनेके कारण हो। प्रियजनके मृत्युके साथ भोजन त्यागका कोई संबंध नहिं है। इसलिये जागृत हो जाओ निखिलके[1] मृत्युका भूल जाओ और सेवाके कारण देहको सुधारनेकी चेष्टा करो। दूध दही और फल खानेकी आवश्यकता है। पैसेका कष्ट है तो लिखो।

बापूके आशीर्वाद

जी० एन० १६८७ की फोटो-नकलसे।

३५४. पत्र : एच० डब्ल्यू० एमर्सनको

स्थायी पता, साबरमती
३ जून, १९३१

प्रिय श्री एमर्सन,

बन्दूकों-तमंचों आदि शस्त्रोंके प्रश्नके सम्बन्धमें अभी निर्णय करना है। मुझे मालूम नहीं कि आपने इस मामलेमें कानूनी सलाह ले ली है या नहीं। कानूनी सलाह कुछ भी हो, 'अवैध रूपमें रखना' शब्दोंके बारेमें अपना सुझाव रखते समय इस विषयमें जो बातचीत हुई थी वह मुझे बड़ी अच्छी तरह याद है। मूल प्रारूप को देखनेपर आपको शायद वह पूरी बातचीत याद आ जायेगी, क्योंकि उसमें बन्दूक-तमंचों आदिको शामिल नहीं किया गया था।

१. हेमप्रभा देवीके पुत्र निखिलका देहान्त जुलाई, १९२८ में हुआ था।

मैं मथुरा और लुधियानाकी घटनाओंकी आपको याद दिला दूँ। इन दोनों मामलोंकी गहराईसे जाँच की जानी चाहिए।

हृदयसे आपका,

श्री एच० डब्ल्यू० एमर्सन
शिमला

[अंग्रेजीसे]

अ० भा० कां० क०, फाइल संख्या, १६-बी, १९३१।
सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

३५५. पत्र : एच० डब्ल्यू० एमर्सनको

स्थायी पता, साबरमती
३ जून, १९३१

प्रिय श्री एमर्सन,

आपको याद होगा कि हम लोगोंने स्कूल छोड़ देनेवाले विद्यार्थियोंके प्रश्नपर चर्चा की थी। हर तरफसे शिकायतोंका ताँता लगा हुआ है। मैं समझता हूँ कि इन विद्यार्थियोंको बिना किसी शर्तके स्कूलोंमें वापस ले लेना अत्यन्त ही आवश्यक है। दण्ड देनेके लिए उनको ही चुने जानेके विचार-मात्रसे दिल काँप उठता है।[1]

हृदयसे आपका,

श्री एच० डब्ल्यू० एमर्सन
शिमला

[अंग्रेजीसे]

अ० भा० कां० क०, फाइल संख्या १६-बी, १९३१।
सौजन्य : गांधी स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

१. एमर्सनने २ जुलाईको उत्तर दिया था कि "विद्यार्थीको पूरी तौरपर एक व्यक्ति नहीं ही माना जा सकता। वह एक संगठित संस्थाका सदस्य होता है, और किसी व्यक्तिको लांछित करनेके उद्देश्यसे नहीं, बल्कि संस्थाके हितको देखते हुए बहुधा यह आवश्यक हो जाता है कि कुछ ऐसी शर्तें लगाई जायें जिनसे अनुशासन स्थापित हो सके। ये विचार हैं जिनको प्रान्तीय सरकारें निस्सन्देह काफी महत्त्व देती हैं और यह अनुमान लगाया जा सकता है कि यदि समझौतेकी चर्चाके समय यह प्रश्न उठाया गया होता तो प्रान्तीय सरकारोंने भावी आचरणके लिए किसी भी तरहकी गारंटी लिये बिना विद्यार्थियोंको फिरसे दाखिला देनेकी बातपर डटकर आपत्ति की होती, भले ही पढ़ाई छोड़नेके कारण कुछ भी हों, विद्यार्थीने पढ़ाई छोड़ी हो या उसे शिक्षण संस्थासे निकाल दिया गया हो। इन परिस्थितियोंमें भारत सरकार यह उचित नहीं समझती कि प्रान्तीय सरकारोंको एक ऐसा काम करनेके लिए बाध्य किया जाये जो समझौतेकी हदसे बाहर पड़ता है।.

३५६. पत्र : जी० वी० केतकरको

स्थायी पता, साबरमती
३ जून, १९३१

प्रिय मित्र,

आपका पत्र मिला।

हाँ, श्री राजवाडेके मामलेको लेकर मुझे काफी परेशानी और चिन्ता रही।

श्री राजाके[1] मामलेके पूरे कागजात मुझे अभी-अभी मिले हैं। मैं उनका अध्ययन कर रहा हूँ।

चिरनेरके मामलेमें अभी इस समय कुछ भी नहीं किया जा सकता।

देवने[2] हाल ही में मुझे पत्र लिखा था।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

श्रीयुत जी० वी० केतकर
'केसरी' और 'मराठा' कार्यालय
५६८, नारायण पेठ
पूना शहर

अंग्रेजी (जी० एन० ७९६५)की फोटो-नकलसे तथा सी० डब्ल्यू० ९८० से भी।
सौजन्य : जी० वी० केतकर

१. एच० डी० राजा।

२. शंकरराव देवने महाराष्ट्रमें कांग्रेस कमेटियोंके चुनावके बारेमें गांधीजी को लिखा था। गांधीजी के सचिवने पत्रके अन्तमें निम्नांकित पुनश्च जोड़ दिया था: "मुझे आशा है कि आप कोई काम-चलाऊ नुस्खा निकाल सकेंगे। शंकरराव देवको गांधीजीका उत्तर।"

३५७. पत्र : जे० सी० कुमारप्पाको[1]

स्थायी पता, साबरमती
३ जून, १९३१

प्रिय कुमारप्पा,

तुम्हारा भेजा हुआ डॉ० टी० दासका पत्र मुझे मिल गया है। मैं नहीं समझता कि हम इस मामलेमें कुछ कर सकते हैं।

आशा है बम्बईमें ९ तारीखको तुमसे भेंट होगी।

बापू

श्री जे० सी० कुमारप्पा[2]
बम्बई

अंग्रेजी (जी० एन० १००९४)की फोटो-नकलसे।

३५८. पत्र : एस० एन० बाटलीवालाको[3]

३ जून, १९३१

प्रिय मित्र,

पिछले महीनेकी २० तारीखके आपके पत्रके लिए धन्यवाद। मेरा लेख आपको 'यंग इंडिया' में 'क्या बहिष्कार एक आर्थिक आवश्यकता है'[4] शीर्षकसे मिलेगा।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजी (एस० एन० १७१०६)की माइक्रोफिल्मसे।

१. जे० सी० कुमारप्पाके २७ मईके पत्र (एस० एन० १७१६२)के उत्तरमें।

२. साधन-सूत्रमें "एच० कुमारप्पा" लिखा है।

३. एस० एन० बाटलीवालाने दिनांक १९-५-१९३१ के **टाइम्स ऑफ इंडिया**में प्रकाशित भारतीय आर्थिक संकटसे सम्बन्धित अपने लेखकी एक प्रति संलग्न की थी, जिसमें बतलाया गया था कि विदेशी वस्त्रपर ३५ प्रतिशत आयात-कर लगाकर भारतीय जनताका रक्त किस प्रकार चूसा जा रहा है और भयंकर आर्थिक मन्दीके कालमें विदेशी वस्त्रोंका भारी परिमाणमें आयात करनेसे किस तरह भारतीय रुईकी कीमत गिर गई है।

४. दिनाक ४-६-१९३१ के अंकमें "क्या वह आर्थिक आवश्यकता है", शीर्षकके अंतर्गत।

३५९. पत्र : विलियम हेडॉर्नको

स्थायी पता, साबरमती
३ जून, १९३१

प्रिय मित्र,

आपके पत्रके लिए धन्यवाद। यदि लन्दन जानेमें सफल हुआ तो सचमुच मैं विभिन्न स्थानोंपर जाना भी पसन्द करूँगा। लेकिन ऐसा हो सकेगा या नहीं, मैं नहीं जानता। फिर भी यदि यूरोपमें विभिन्न स्थानोंपर मेरा जाना हो सका तो निश्चय ही आपका परिचय प्राप्त करके प्रसन्नता होगी।

हृदयसे आपका,

श्री विलियम हेडॉर्न
हैमबर्ग २४ (जर्मनी)

अंग्रेजी (एस० एन० १७१९२)की फोटो-नकलसे।

३६०. पत्र : चार्ल्स एस० फील्डको

स्थायी पता, साबरमती
३ जून, १९३१

प्रिय मित्र,

मैं आपके पत्रकी कद्र करता हूँ और यदि अमेरिका जाता तो मैंने आपसे परिचय अवश्य प्राप्त करता। लेकिन आप समझ ही गये होंगे कि वह एक बेसिर-पैरकी अफवाह ही थी। और उसीने कुछ लोगोंमें आशा और शायद कुछमें आशंका भी जगा दी थी कि मैं शायद अमेरिकाकी यात्रा करूँगा।

हृदयसे आपका,

श्री चार्ल्स एस० फील्ड
डलास टैक्सास (अमेरिका)

अंग्रेजी (एस० एन० १७१९३)की फोटो-नकलसे।

३६१. पत्र : दरभंगा महाराजको

स्थायी पता, साबरमती
३ जून, १९३१

प्रिय मित्र,

बोरसदसे पुनः प्रेषित आपके तारके लिए धन्यवाद। आपने जोतदारोंके जिस घोषणापत्रका उल्लेख किया है, वह मेरी नजरसे नहीं गुजरा। आप यदि उसे भेजनेकी कृपा करें तो देखूंगा कि क्या किया जा सकता है।

हृदयसे आपका,

दरभंगा महाराज

अंग्रेजी (एस० एन० १७१९४)की फोटो-नकलसे।

३६२. पत्र : गर्ट्रूड एमर्सनको

स्थायी पता, साबरमती
३ जून, १९३१

प्रिय बहन,

आपका यह सोचना बिलकुल ठीक ही है कि यदि मुझे यरवदामें भी आपकी पुस्तक[1] पढ़ जाने लायक शान्त वातावरण नहीं मिल सका तो फिर उस शान्ति-कुटीरसे बाहर तो इसकी कोई सम्भावना ही नहीं है। जेलमें एक सहयोगी बन्दीने आपकी पुस्तक पढ़नेको ले ली थी और अपनी रिहाईके समय वे उसे साथ ही लिये चले गये। मेरे रिहा होनेपर उन्होंने पुस्तक तब लौटाई जब मैं अशेष कामोंमें जुटा हुआ था। रिहाईके बाद मुझे चैन ही नहीं मिली। मेरे शरीरकी रही-सही शक्ति हाथका काम ही ले लेता है।

आप जब भी आयें, आश्रममें आपका स्वागत होगा।

कुमारी गर्ट्रूड एमर्सन

मारफत 'एशिया'
४६८, फोर्थ एवेन्यु
न्यूयार्क (अमेरिका)

अंग्रेजी (एस० एन० १७१९५)की फोटो-नकलसे।

१. तात्पर्य शायद १९३० में प्रकाशित **वॉइसलैस इंडियासे है।**

३६३. पत्र : कोंडा वैंकटप्पैयाको

स्थायी पता, साबरमती
३ जून, १९३१

प्रिय वैंकटप्पैया,

मुझे इस बातकी खुशी है कि आपने बापी नीडूके बारेमें मुझको पूरे विस्तारसे लिखा। मैंने उनको आश्रममें रखने और परिवारके उनके आश्रित सदस्योंके लिए तैंतीस रुपये प्रति मास देनेका प्रस्ताव रखा है।[१] उन्होंने इतनी ही रकम माँगी थी। परन्तु यदि आप उनको वहीं अपनी निगरानीमें रखकर कुछ करा सकें तो कृपया अवश्य करें। आपकी निगरानी उनको मंजूर भी होगी।

आपकी पत्नी कैसी है? आपकी बच्चीके बारेमें सुनकर बड़ा दुःख हुआ; उसे गर्मियोंमें हर बार पहाड़ोंपर तो जरूर जाना चाहिए।

हृदयसे आपका,

श्री कोंडा वैंकटप्पैया
गुन्टूर

अंग्रेजी (एस० एन० १७१९६)की माइक्रोफिल्मसे।

३६४. पत्र : के० पंडार चेट्टीको

स्थायी पता, साबरमती
३ जून, १९३१

प्रिय मित्र,

आपके पत्रके सन्दर्भमें। ऐसा नहीं लगता कि आपकी बन्दूकका लाइसेंस असहयोग के कारण जब्त किया गया है। असहयोग आन्दोलनसे असम्बद्ध मामलोंपर 'समझौता' लागू नहीं होता।

हृदयसे आपका,

श्री के० पंडार चेट्टी
कार्डमम प्लान्टर
बोदिनायकनूर (दक्षिण भारत)

अंग्रेजी (एस० एन० १७१९७)की फोटो-नकलसे।

१. देखिए "पत्र : मगन्ती बापी नीडूको", २८-५-१९३१।

३६५. पत्र : श्रीमती सी० ए० हाटेको

स्थायी पता, साबरमती
३ जून, १९३१

प्रिय बहन,

मेरे शरीरमें जो-कुछ भी शक्ति है, वह मेरे नियमित जीवन और यथाशक्ति संयम पालनके कारण ही है। यह बिलकुल सच है कि आपपास रहनेवाले मेरे मित्रों पर भी मेरे चित्तकी शान्तिका असर पड़ता है। यह एक ईर्ष्याकी वस्तु है। ऐसी मानसिक शान्ति, ईश्वर और उसकी कृपापर परम आस्था रखनेसे प्रति-फलित होती है। इस आस्थासे ही मुझे परिणाम या फलकी चिन्तासे सर्वथा मुक्त रहकर अपना नियोजित कर्म विनम्रतापूर्वक करते रहनेकी सामर्थ्य मिलती है।

मेरा विश्वास है कि अपच एक ऐसी चीज है जिसपर हरएक आदमी काबू पा सकता है और उसे दूर कर सकता है। उचित भोजन विषयक सलाह दे सकनेके लिए आपने पत्रमें जितनी बातें लिखी हैं, उससे बहुत अधिक जानकारी आवश्यक होगी। मैं जानना चाहूँगा कि जब आपको अपच हो जानेका अनुमान होता है तब आपको कैसा लगता है। क्या आपकी आँतें ठीक काम कर रही हैं? आप कितने अर्सेसे अपचसे पीड़ित हैं? इस समय आप भोजनमें क्या-क्या ले रही हैं, कितनी मात्रामें और कितनी बार? आप कौन-सा व्यायाम कर रही हैं? पूरे दिनकी चर्या क्या रहती है?

हृदयसे आपका,

श्रीमती सी० ए० हाटे
'इन्दु भवन'
३४३ ठाकुरद्वार, बम्बई

अंग्रेजी (एस० एन० १७१९८)की फोटो-नकलसे।

३६६. पत्र : एस० स्वामिनाथन् चेट्टियारको

स्थायी पता, साबरमती
३ जून, १९३१

प्रिय मित्र,

गत २५ मईका आपका पत्र मिल गया।[1] यदि कोई अध्यक्ष कांग्रेस-विधानके किसी नियमको माननेसे जान-बूझकर इन्कार करे तो निश्चय ही वहाँ मौजूद कोई भी सदस्य उसके निर्णयको चुनौती दे सकता है और अविश्वासका प्रस्ताव रख सकता है या सदस्योंके लिए विहित अन्य उपायोंका सहारा ले सकता है।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत एस० स्वामिनाथन्
उत्तर पोत्तमरै
कुम्भकोणम्

अंग्रेजी (एस० एन० १७२००)की फोटो-नकलसे।

३६७. पत्र : मन्त्री, भारतीय व्यापारी मण्डलको

स्थायी पता, साबरमती
३ जून, १९३१

प्रिय महोदय,

मुझे सर्वसम्मतिसे आपके मण्डल (चेम्बर)का अवैतनिक सदस्य चुन लिया गया है, पिछले महीनेकी १९ तारीखके आपके पत्रकी इस सूचनाके लिए धन्यवाद। इस प्रकार मुझे सम्मानित करनेके लिए कृपया मेरी ओरसे मण्डलको मेरा धन्यवाद पहुँचा दीजिए।

आपका विश्वस्त,

मन्त्री, भारतीय व्यापारी मण्डल
बम्बई

अंग्रेजी (एस० एन० १७२०१)की फोटो-नकलसे।

१. पत्रमें कहा गया था कि कुम्भकोणम् तालुका कांग्रेस कमेटीके अध्यक्षने एक वकील सदस्यको समितिकी कार्रवाईमें भाग लेनेकी अनुमति दी थी; हालाँकि अन्य सदस्योंने आपत्ति भी उठाई थी कि वह सदस्य आदतन खद्दरधारी न होनेके कारण इसका अधिकारी नहीं था।

३६८. पत्र : अनन्त गोपाल शेवड़ेको

स्थायी पता, साबरमती
३ जून, १९३१

प्रिय मित्र,

आपका पत्र मिला। यदि आपका दावा है कि डिप्टी सुपरिन्टेन्डेन्ट पुलिसका आदेश गैरकानूनी है, तो आपको न्यायालयकी शरण लेनी चाहिए। और जब उसके बारेमें कोई शंका थी तो उस विषयमें गृहमन्त्रीको लिखकर और जनताके सामने पूरा मामला पेश करके आपने सर्वथा उचित तरीका ही अपनाया है।

हृदयसे आपका,

श्री अनन्त गोपाल शेवड़े
प्रचार अधिकारी
प्रान्तीय राजनीतिक परिषद्
सागर (मध्य प्रान्त)

अंग्रेजी (एस० एन० १७२०२)की माइक्रोफिल्मसे।

३६९. पत्र : सर डार्सी लिंडसेको

स्थायी पता, साबरमती
३ जून, १९३१

प्रिय मित्र,

गत ३० अप्रैलके आपके पत्रके लिए धन्यवाद। मेरा ख्याल था कि किसीने भी इस प्रस्थापनाका गम्भीरतापूर्वक खण्डन नहीं किया कि देशकी प्रशासनिक व्यवस्थामें भारतीयोंकी स्थिति महज क्लर्कों-जैसी[1] है। मैं चाहता हूँ कि आप 'आई० सी० एस०' (भारतीय असैनिक सेवा) के भी कुछ भारतीय सदस्योंकी मन:स्थितिसे परिचित हो लेते। मै अपने व्यक्तिगत अनुभवके आधारपर कह सकता हूँ कि उनमें भी एक बड़ी संख्या ऐसे अधिकारियोंकी है जो अपनेको क्लर्कोंसे अधिक कुछ महसूस नहीं करते; हाँ, आप उनको कुछ ऊँचे दर्जेके क्लर्क मान सकते हैं। लेकिन वह अनुच्छेद लिखते समय मेरे दिमागमें ऊँची-ऊँची तनख्वाहें फटकारनेवाले इन मुट्ठीभर भारतीयोंकी नहीं, बल्कि वास्तविक क्लर्कोंके विशाल समुदायकी बात ही थी।

१. देखिए खण्ड ४५, "राक्षस और बौना", २६-३-१९३१।

इन क्लर्कोंकी योग्यता कितनी ही ऊँची क्यों न हो, वे क्लर्कीके दर्जेसे ऊपर उठ ही नही सकते।

और जब मैंने कहा था कि भारतीयोंका दर्जा अधिक-से-अधिक एक दलालका दर्जा है, तब अपनी समझमें मै शब्दश: सही बात कह रहा था। वैदेशिक व्यापारकी बड़ी-से-बड़ी कोई भी मद ले लीजिए। क्या भारतीय व्यापारी उसमें विदेशी मालिकोंके दलाल-भर नही हैं? यदि वे अपने लिए पाँच रुपये कमाते हैं तो अपने विदेशी मालिकोंको ९५ रुपयेकी कमाई कराते हैं। और जबतक व्यापारकी वर्तमान परिस्थितियाँ बनी रहेंगी तबतक दूसरा कुछ हो भी नही सकता। यदि भारत मुख्यत: कच्चा माल निर्यात करने और तैयार वस्तुओंका आयात करनेवाला देश बना रहेगा तो सम्भावना इसी बातकी है कि भारतीय व्यापारीका दर्जा दलालोंका ही बना रहे, फिर चाहे वे इंग्लैंडके दलाल हों, या जापान, या अमेरिका या अन्य किसी देशके।

मैं आपको कैसे सिद्ध करके दिखलाऊँ कि भारतीय चाहे कितना भी धनी क्यों न हो, उसे रोज-रोज कैसे-कैसे अपमानोंका सामना करना पड़ता है, और उसे किसी भी तरहकी सुविधा नही मिलती, जब कि उसके ब्रिटिश प्रतिद्वन्द्वीको हर सुविधा माँगते ही मिल जाती है। ब्रिटिश जहाजरानी कम्पनियोंकी ही बात लीजिए; खान उद्योग हो, या बैंकिंग या अन्य कोई व्यवसाय, हर क्षेत्रमें यूरोपीयोको भारत-भरमें इतनी अधिक रियायतें मिलती हैं कि उन्हें गिनाया ही नहीं जा सकता।

मैंने कहा है कि इंग्लैंडके व्यापारकी नींव भारतके व्यापारके नाशपर खड़ी है। पर यह तो मैंने इतिहासज्ञोंके कथनको ही दोहराया है। मुझे जरा भी शिकायत न होती यदि यह परिस्थिति-मात्र उद्योगशीलता और जीवटका ही परिणाम होती। लेकिन मैं चाहूँगा कि आप जरा 'इंडिया आफिस' के रिकार्डोमें देखें कि "ईस्ट इंडिया कम्पनी" कैसे और किन तरीकोंसे फैली तथा पनपी है। इस रिकार्डको संकलित करनेका श्रेय ब्रिटिश इतिहासकारोंको ही दिया जाना चाहिए।

मैंने जहाँ दोनोंको समान स्तरपर लानेकी प्रक्रियाकी बात लिखी है, वहाँ मेरे दिमागमें रूसके बोल्शेविक शासनकी मिसाल नही थी। मेरे लिए शायद यह स्वीकार करना शर्मकी बात है कि मुझे अबतक यही ठीक-ठीक मालूम नहीं कि बोल्शेविज्म है क्या। और इसका कारण यही है कि रूसी क्रान्तिकी आन्तरिक प्रक्रियाका अध्ययन करनेका मुझे समय मिल ही नहीं पाया। समान स्तरपर लानेकी प्रक्रियाका सीधा-सीधा अर्थ मेरे दिमागमें यही है कि मेरे ख्यालसे ब्रिटिश वाणिज्य पक्षपातपूर्ण विशेषाधिकारोंकी जिस पद्धतिपर खड़ा किया गया है, वह खत्म कर दी जाय और वैसा करनेके लिए एक दोहरी प्रक्रिया आरम्भ करनी पड़ेगी। पक्षपात और विशेषाधिकार समाप्त किये जायें और नये भारतीय उद्योगोंको राजकीय सहायता और संरक्षण दिया जाये।

मैं जानता हूँ कि मैं अपने तर्कोंके बलपर ही आपका मत बदल देनेकी उम्मीद नही कर सकता। भारतमें मौजूद अंग्रेजोंसे मै इतना ही चाहता हूँ कि वे अपने-आपको एक औसत भारतीयकी आँखोंसे देखें और स्वयंसे सवाल करें कि

भारतके इतने विशाल समुदायकी उनके प्रति ऐसी भावनाएँ क्यों है। भारतीयोंकी भावनाएँ क्या है, यह मैं 'यंग इंडिया' के स्तम्भोंमें बहुधा लिखता रहा हूँ। क्या यह हो सकता है कि कुछ ब्रिटिश अर्थशास्त्रियोंने जो मत प्रकट किया है और अधिकांश भारतीय अर्थशास्त्रियों, इतिहासकारों और प्रशासकोंने भी जो मत प्रकट किया है, वह एकदम असत्य हो? मैंने जो कैफियत पेश की है, वह इन लोगों द्वारा जुटाये गये साक्ष्यपर ही आधारित है और मेरा व्यक्तिगत अनुभव भी उसका समर्थन करता है।

अन्तमे मैं यही कहूँगा कि आपके विचारोंसे मेरा कितना भी मतभेद क्यों न हो, पर मैं आपको आश्वस्त करता हूँ कि आपने मुझे मेरी गलती समझानेकी अपनी कोशिशमें जो लगन दिखाई है, मै उसकी बड़ी कद्र करता हूँ। और यदि आप अपनी कोशिश न छोड़ें तो मै यह कहनेकी धृष्टता कर सकता हूँ कि मै तब भी यदि अपना मत न बदल पाऊँ तो हो सकता है कि इस मैत्रीपूर्ण पत्र-व्यवहारकी प्रक्रियामें आपको ही विपक्षमें दिये गये तर्कोंके सत्यकी प्रतीति हो जाये।

हृदयसे आपका,

सर डार्सी लिडसे
स्पोर्ट्स क्लब
सेंट जेम्स स्क्वेअर
लन्दन, साउथ वेस्ट

अंग्रेजी (एस० एन० १७२०३)की फोटो-नकलसे।

३७०. पत्र : विद्यानाथ सहायको

स्थायी पता, साबरमती
३ जून, १९३१

प्रिय मित्र,

आपका पत्र मुझे मिल गया।

मेरा निश्चित मत है कि हर कीमतपर सत्य भाषण करना प्रत्येक व्यक्तिका, और शिक्षाविदोंका तो विशेष तौरपर परम कर्त्तय है।

कालेजोंमें होनेवाली राजनीतिक बहसोंमें निन्दाको कोई स्थान नहीं दिया जाना चाहिए।

भारतीय रजवाड़ोंके मामलोंको दिल्ली समझौतेमें शामिल करना मुमकिन नहीं था।

अपनी इच्छासे त्यागपत्र देनेवालों और बर्खास्त किये जानेवालोंके बीचका अन्तर मैं समझ सकता हूँ। बर्खास्तगी असहयोग आन्दोलनसे सर्वथा असम्बद्ध अन्य उचित आधारोंपर भी तो हो सकती है।

यदि आपकी बात सच है तो मुझे इसपर आश्चर्य नहीं है कि आपने जो बातें गिनाई हैं, उनके आधारपर आपको कश्मीर सरकारकी सेवासे बर्खास्त करनेपर अन्य शैक्षणिक संस्थाएँ भी अपने यहाँ क्यों नहीं रखतीं।

हृदयसे आपका,

श्री विद्यानाथ सहाय
एम्पायर हिन्दू होटल
शिमला

अंग्रेजी (एस० एन० १७२०४)की माइक्रोफिल्मसे।

३७१. पत्र: चार्ल्स एफ० वैलरको

स्थायी पता, साबरमती
३ जून, १९३१

प्रिय मित्र,

१७ अप्रैलके आपके स्नेहपूर्ण पत्रके लिए धन्यवाद। १९३३ तो बहुत दूरकी चीज है। मैं उस वर्षके लिए अभी अस्थायी तौरपर भी किसी प्रबन्धकी बात नहीं सोच सकता। यदि सब ठीक-ठीक चलता रहे, तो आपको १९३२ के बीचमें कभी मुझे इस सम्बन्धमें लिखना पड़ेगा। तभी मैं आपको निश्चित उत्तर दे सकूँगा। आशा है, आप मेरी कठिनाईको समझेंगे।

हृदयसे आपका,

श्री चार्ल्स एफ० वैलर
'शिकागोज फैलोशिप ऑफ फेथ्स'
शिकागो (अमेरिका)

अंग्रेजी (एस० एन० १७२०५)की फोटो-नकलसे।

३७२. पत्र : के० राय चेट्टीको

स्थायी पता, साबरमती
३ जून, १९३१

प्रिय मित्र,

आपके प्रश्नका उत्तर 'यंग इंडिया'के स्तम्भोंमें देना बिलकुल गैर-जरूरी है। जवाब बिलकुल साफ है। कांग्रेसका कोई भी सदस्य अफीमके ठेकेके लिए बोली नही बोल सकता।

हृदयसे आपका,

श्री के० राय चेट्टी
सीतानगरम्
बरास्ता कोव्वूर, पूर्वीय गोदावरी जिला

अंग्रेजी (एस० एन० १७२०६)की माइक्रोफिल्मसे।

३७३. पत्र : सुभाषचन्द्र बोसको

स्थायी पता, साबरमती
३ जून, १९३१

तुम्हारा पत्र मिला। मैं समझता हूँ कि उस साधुको परेशान करनेकी जरूरत नहीं है। उसे पागल कहा जाता है—यह जानकारी तो मुझे कुछ अच्छी ही लगी; क्योंकि यह बात तो हम दोनोंमें भाईचारा सूचित करती है। वह ऐसी चेतावनी न देता तो भी मैं यह तो जानता ही हूँ कि यूरोपकी यात्रा मेरे स्वास्थ्यको खतरेमें डाल सकती है। लेकिन इससे क्या होता है? यदि वहाँ जाकर कुछ सेवा करना मेरे भाग्यमें बदा है तो जैसे भी हो, स्वास्थ्य मेरा साथ जरूर देगा।

श्री सुभाषचन्द्र बोस
१ वुडबर्न पार्क
कलकत्ता

अंग्रेजी (एस० एन० १७२०७)की फोटो-नकलसे।

३७४. पत्र : श्रीमती वी० बनर्जीको

स्थायी पता, साबरमती
३ जून, १९३१

प्रिय बहन,

आपका पत्र मिला। मुझे लगता है कि आपको अनेक परीक्षाओंसे गुजरना पड़ा है। नौकरीके चुनावके सिलसिलेमें पता नहीं, मुझे आपका मार्ग-दर्शन करनेकी कोई आवश्यकता है भी या नहीं। आपके सामने अनेक मार्ग हैं। इसलिए आपको मेरी सही सलाह है कि काम चुननेमें आप अपनी रुचिको ही महत्व दीजिए। मैं उस तरफ आनेपर आपसे जरूर मिलना चाहूँगा।

हृदयसे आपका,

श्रीमती वी० बनर्जी
लेडी हैल्थ विजिटर
बेबी क्लिनिक कमेटी
राजशाही (बंगाल)

अंग्रेजी (एस० एन० १७२०८)की माइक्रोफिल्मसे।

३७५. पत्र : कृष्णदासको

स्थायी पता, साबरमती
३ जून, १९३१

प्रिय कृष्णदास,

२५ मईके पत्रमें तुम्हारी जमी हुई लिखावटसे पता चलता है कि तुमने बड़ी तेजीसे स्वास्थ्य-लाभ कर लिया है। आशा है कि उसके बादसे और भी काफी प्रगति कर ली होगी। शरीरमें पूरी तरह शक्ति आनेसे पहले और थकान महसूस किए बिना दूरतक घूमने-फिरने लायक होनेसे पहले तुमको बाहर आने-जानेकी कोशिश नहीं करनी चाहिए। जब स्वास्थ्य-लाभ कर ही रहे हो तो ज्यादा अच्छा यही रहेगा कि पहले जितनी शक्ति हासिल करके ही नहीं, बल्कि शरीरकी बिलकुल काया-पलट करके दम लो। एकदम जर्जर कर देनेवाले ऐसे भयंकर संकटको झेल लेनेके बाद तुम्हारे लिए यह बिलकुल सम्भव होना चाहिए।

सुभाष बाबू मथुरासे मेरे साथ ही यात्रा कर रहे थे। हम बडौदातक साथ-साथ रहे। गपशप खासी लम्बी चली। वे फिर बारडोली आये थे। मैंने उनको बंगालके सभी विवाद स्थानीय रूपसे पंच-फैसलेको सौंपनेकी सलाह दी है।

मैं ९ तारीखको बम्बई जाकर १२ को यहाँ लौटूँगा।

श्री कृष्णदास
शक्ति आश्रम
पो० राजपुर (जिला देहरादून)

अंग्रेजी (एस० एन० १७२०९)की माइक्रोफिल्मसे।

३७६. पत्र : मोहनलाल विद्यार्थीको

स्थायी पता, साबरमती
३ जून, १९३१

प्रिय मित्र,

आपका पत्र मिला। हताश होनेका कोई कारण नहीं। हल्के-फुल्के व्यायामसे आरम्भ करें, फिर शरीरमें शक्ति बढ़नेके साथ ही साथ व्यायाम बढ़ाते जाइए। रोज सुबह-शाम दोनों वक्त खुली हवामें घूमना उचित व्यायाम होगा। जितना पचा सकें, दूध लीजिए और ताजे फल भी। फिलहाल दूसरा कोई आहार न लें। फिर रोज दोपहरको टबमें बैठकर कटि-स्नान कीजिए। यदि कोई तकलीफ महसूस न हो तो दस मिनटसे शुरु करके ३० मिनटतक जा सकते हैं। कटि-स्नानके बारेमें कोई भी जानकारी न हो, तो वह मेरी पुस्तक 'स्वास्थ्यकी कुंजी' में[1] मिल जायेगी।

हृदयसे आपका,

श्री मोहनलाल विद्यार्थी
कानपुर शहर

अंग्रेजी (एस० एन० १७२११)की फोटो-नकलसे।

३७७. पत्र : अनन्त च० पटनायकको

स्थायी पता, साबरमती
३ जून, १९३१

प्रिय मित्र,

आपके सम्मेलनमें मेरे शामिल होनेका प्रश्न नहीं उठता। लेकिन मैं उसकी सफलताकी पूरी कामना करते हुए प्रत्येक सदस्यका ध्यान उस महान दायित्वकी ओर आकर्षित करना चाहता हूँ जो अगले वर्षके कांग्रेस अधिवेशनके सिलसिलेमें आपके कन्धोंपर आ गया है। एक चीज है, जिसकी तैयारी आपको अभीसे करनी पड़ेगी। खादी किसी जादूगरके फलकी तरह तो पैदा नहीं की जाती। उसके लिए आपको अभीसे

१. देखिए खण्ड ११ और १२।

एक बहुत जोरदार कार्य चलानेकी तैयारी करनी पड़ेगी ताकि आप दिखा सकें कि कांग्रेसके इस सर्वाधिक रचनात्मक कार्यके क्षेत्रमें उड़ीसा कितना-कुछ कर सकता है।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत अनन्त च० पटनायक
कार्यकारी मन्त्री
पुरी जिला सम्मेलन, पुरी
पो० बालीपटना (ग्राम अथान्तर)

अंग्रेजी (एस० एन० १७२१२)की माइक्रोफिल्मसे।

३७८. पत्र : महालक्ष्मी एम० ठक्करको

३ जून, १९३१

चि० महालक्ष्मी,

क्या मुझे पत्र न लिखनेकी प्रतिज्ञा की है? माधवजीको बच्चोंके बारेमें थोड़ी चिन्ता रहती है, खासकर चन्द्रके बारेमें। चन्द्रको आश्रम भेजनेकी बात चल रही है। इस सम्बन्धमें अपने विचार लिखना। वहाँका दैनिक कार्यक्रम लिखना। यहाँ आकर मिल सको तो दोनों बहनें आकर मिल जाओ।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ६८१६)की फोटो-नकलसे।

३७९. पत्र : विट्ठलदास जेराजाणीको

बारडोली
३ जून, १९३१

भाई विट्ठलदास,

तुम्हारा पत्र पढ़कर प्रसन्नता हुई। अक्षर तो वैसे ही सधे हुए हैं। दोपहरको माथेपर मिट्टीकी पट्टी बाँधनेका प्रयोग करके देखो तो अच्छा। दिनमें खुली हवामें सोते हो न? क्या रातको कोठरीमें खूब हवा आती है? इस तरहकी बीमारीमें तीमारदारी ही सच्ची दवा है। काम शुरू करनेकी उतावली न करना। खादीको बेच डालनेका काम होता रहेगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (एस० एन० ९७७६)की फोटो-नकलसे।

३८०. पत्र : नारणदास गांधीको

बारडोली
३ जून, १९३१

चि० नारणदास,

तुम राजकोटसे लौट आये होगे। मैंने कल ही मुरब्बी खुशालभाईको पत्र[1] लिखा था। भगवानजी को भी पत्र लिखा है कि यदि उसे आश्रममें असत्य ही दिखाई देता है तो वह खुशीसे जा सकता है। सुरेन्द्र कराडी और उंटडी होता हुआ वहाँ आयेगा। १५ तारीख तक रवाना हो जाये। आप्टे और सारजा पहुँच गये होंगे।

दाँडी यात्राके समय तुम्हें अंकलेश्वरसे रुपये ५४३-४-० भेजे गये थे, ऐसा अंक्लेश्वरसे भाई छोटालाल गांधीने लिखा है। क्या यह रकम वहाँ है। यदि हो और खादीके-खातेमें जमा हो तो उन्हें वापस भेज देना। उन्हें लिख देना कि उसे खादीके काममें ही लगाना है।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

व्रत-विचारके बारेमें काका साहबके साथ बात कर लेना। पर्याप्त प्रतियाँ पड़ी हों तो दूसरी आवृत्तिकी जरूरत नही है।

गुजराती एम० एम० यू०–१ से।

३८१. पत्र : किशनसिंह चावड़ाको

बारडोली
३ जून, १९३१

भाई किशनसिंह,

यदि आप अब आना चाहें तो रविवार तक किसी भी दिन आ सकते हैं।

मोहनदासके वन्देमातरम्

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९२९४)की फोटो-नकलसे।

१. देखिए "पत्र : खुशालचंद गांधीको", २-६-१९३१।

३८२. पत्र : पदमलालको

३ जून, १९३१

भाई पदमलालजी,

आपका पत्र मिला है। देशी राज्योंमें जो-कुछ भी कष्ट पड़ते हैं उसके लिए सत्याग्रह पर्यन्त जो-कुछ भी इलाज ले सकते है, वह इलाज लेनेका प्रजाको हक्क है। इसमें कांग्रेसका नाम न लिया जाय। क्योंकि कांग्रेस सहाय नहिं दे सकेगी। प्रजा अपनी शक्तिपर निर्भर रहे।

आपका,
मोहनदास गांधी

मध्यप्रदेश और गांधीजीमें प्रकाशित प्रतिकृतिसे।

३८३. वर्ण और जाति

एक विद्यार्थी अपना नाम और पता देकर लिखता है:[1]

यह कहना एकदम सच तो नहीं है कि हिन्दू-मुसलमान एक दूसरेका अपने त्यौहारोंके अवसरपर मान-सम्मान नही करते। परन्तु यह अवश्य ही अभीष्ट है कि यह आदान-प्रदान बहुत अधिक अवसरोंपर और अधिक व्यापक रूपमें हो।

जाति-पाँतिके बारेमें मै कई बार कह चुका हूँ कि आधुनिक अर्थमें मै जाति-पाँति नही मानता। वह विजातीय तत्व है और प्रगतिमें विघ्नरूप है। इस तरह मैं मनुष्य-मनुष्यके बीचकी असमानताओंको भी नही मानता। हम सब सम्पूर्णतया समान है। परन्तु समानता आत्माओंकी है, शरीरोंकी नही। इसलिए वह एक मानसिक अवस्था है। समानताका विचार करने और जोर देकर उसे प्रकट करनेकी आवश्यकता इसलिए पड़ती है, कि इस भौतिक जगतमें हम बड़ी-बड़ी असमानताएँ देखते है। इस बाह्य असमानताके आभासमें हमें समानता सिद्ध करनी है। कोई भी आदमी किसी भी दूसरे आदमीकी अपेक्षा अपनेको उच्च माने, तो वह ईश्वर और मनुष्यके समक्ष पाप है। इस प्रकार जाति-पाँति जिस हदतक दर्जेके भेदकी सूचक है, बुरी चीज है।

परन्तु मै वर्ण-भेदको अवश्य ही मानता हूँ। वर्णकी रचना वंश-परम्परागत धन्धोकी बुनियादपर है। मनुष्यके चार सर्वव्यापी धन्धों — ज्ञान देना, आर्तकी रक्षा करना, कृषि और वाणिज्य और शारीरिक श्रम द्वारा सेवाकी समुचित व्यवस्था करनेके लिए चार वर्णोका निर्माण हुआ है। ये धन्धे समस्त मानव जातिके लिए एक-से हैं। परन्तु हिन्दू

१. यहाँ नहीं दिया जा रहा है।

धर्मने इन्हें जीवन धर्मके रूपमें स्वीकार करके सामाजिक सम्बन्ध और आचार-व्यवहारके नियमके लिए इनका उपयोग किया है। गुरुत्वाकर्षणके अस्तित्वको हम जाने या न जाने, तो भी हम सबपर उसका असर होता है। लेकिन वैज्ञानिकोंने, जो इस नियमको जानते हैं, उससे जगतके सामने आश्चर्यचकित करनेवाले फल प्रस्तुत किये हैं। इसी तरह हिन्दू धर्मने वर्ण-धर्मकी खोज और उसका प्रयोग करके जगतको चकित किया। फिर हिन्दू जड़ताके शिकार हो गये, और तब वर्णके दुरुपयोग के फलस्वरूप बेशुमार जातियाँ बन गई; और रोटी-बेटी व्यवहारके अनावश्यक बन्धन पैदा हुए। वर्ण-धर्मका इन बन्धनोंसे कोई सम्बन्ध नहीं है। जुदा-जुदा वर्णके लोग परस्पर रोटी-बेटीका व्यवहार रख सकते हैं। शील और आरोग्यके खातिर ये बन्धन आवश्यक हो सकते हैं। परन्तु जो ब्राह्मण शुद्र-कन्याको या शुद्र ब्राह्मण-कन्याको ब्याहता है, वह वर्ण-धर्मका लोभ नहीं करता।

अपने धर्मसे बाहर ब्याह करनेका सवाल जुदा है। इसमें जबतक स्त्री-पुरुषमें से हरएकको अपने-अपने धर्मका पालन करनेकी छूट होती है, तबतक नैतिक दृष्टिसे मैं ऐसे विवाहमें कोई आपत्ति नही समझता। परन्तु मैं नहीं मानता कि ऐसे विवाह-सम्बन्धोंके फलस्वरूप शान्ति कायम होगी। शान्ति स्थापित होनेके बाद ऐसे सम्बन्ध अवश्य किये जा सकते हैं। जबतक हिन्दू-मुसलमानोंके दिल फटे हुए हैं; तबतक हिन्दू-मुसलमान विवाह सम्बन्धोंकी हिमायत करनेका फल मेरी दृष्टिमें सिवा परेशानीके और कुछ न होगा। अपवादरूप किसी परिस्थितिमें ऐसे सम्बन्ध सुखदायी साबित हों तो भी वे सम्बन्ध उन्हें सर्वव्यापक बनानेकी हिमायत करनेके कारण नही माने जा सकते। हिन्दू-मुसलमानोंमें खान-पानका व्यवहार तो आज भी बड़े पैमानेपर होता है। परन्तु इससे भी पारस्परिक शान्तिमें वृद्धि तो नही ही हुई। मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि रोटी-बेटी व्यवहारका कौमी इत्तफाकसे कोई सम्बन्ध नही है। झगड़ेके कारण तो आर्थिक और राजनैतिक हैं, और उन्हीको दूर करना है। यूरोपमें रोटी-बेटी-व्यवहार है, फिर भी जिस तरह यूरोपवाले आपसमें कटे-मरे हैं, इतिहासमें वैसे तो हम हिन्दू-मुसलमान कभी नहीं लड़े। हमारी अधिकांश जनता तो तटस्थ ही रही है।

अस्पृश्योंका एक जुदा वर्ग है—और हिन्दू धर्मके सिरपर वह कलंकका टीका है। जातियाँ विघ्नरूप हैं, पापरूप नही। अस्पृश्यता तो पाप है, और भयंकर अपराध है, और यदि हिन्दू धर्मने इस अजगरका समय रहते नाश नहीं किया, तो यह हिन्दू धर्मको ही निगल जायेगा। 'अस्पृश्य' हिन्दू धर्मके बाहर कभी गिने ही नही जाने चाहिए। वे हिन्दू समाजके प्रतिष्ठित सदस्य माने जाने चाहिए और उनके पेशेके अनुसार वे जिस वर्णके योग्य हों, उन्हें उसी वर्णका माना जाना चाहिए।

वर्णकी मेरी व्याख्यानुसार तो आज हिन्दू धर्ममें वर्ण-धर्मका पालन होता ही नहीं। ब्राह्मण नामधारियोंने विद्या पढ़ाना छोड़ दिया है। वे दूसरे अनेक धन्धे करने लगे हैं। यही बात कमोबेश दूसरे वर्णोंके लिए भी है। वस्तुतः तो विदेशियोंके जुएके नीचे होनेकी वजहसे हम सब गुलाम हैं, इस कारण शुद्रोंसे भी हलके, पश्चिमके अस्पृश्य हैं।

इस पत्रके लेखक अन्नाहारी होनेकी वजहसे मांसाहारी मुसलमानके साथ खानेके प्रश्नपर मनको समझानेमें कठिनाई अनुभव करते हैं। परन्तु वे यह बात याद रखें कि मांसाहार करनेवाले हिन्दू संख्यामें मुसलमानोंसे भी ज्यादा है। जबतक अन्नाहारी को स्वच्छतापूर्वक पकाया हुआ ऐसा भोजन परोसा जाये, जिसे खानेमें कोई बाधा न हो, तबतक किसी [मांसाहारी] हिन्दू या अन्य मांसाहारी व्यक्तिके साथ बैठकर खाया जा सकता है। फल और दूध तो वे जहाँ जायेंगे, सदा मिल सकेंगे।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, ४-६-१९३१

३८४. टिप्पणियाँ

मुझे मेरे प्रशंसकोंसे बचाओ

सुदूर कन्याकुमारीसे एक भाई लिखते हैं:[1]

> . . . **यहाँके रथयात्रा उत्सवमें प्रतिमाको रथमें रखकर नगरमें घुमाया जाता है। लोगोंका एक दल यह चाहता है कि प्रतिमाके साथ आपकी तसवीर भी रखी जाये और नगरमें घुमाई जाये। समझदार लोगोंका दूसरा एक दल कहता है कि आपको अपना ईश्वरकी तरह पूजा जाना पसन्द न होगा।**

दूसरे एक भाईने मथुरासे एक भयानक चित्र मेरे पास भेजा है। उसमें यह दिखाया गया है कि मैं सहस्रमुखवाले शेषनागकी शैयापर लेटा हूँ, मेरे एक हाथमे असहयोग और दूसरेमें चर्खा है। मेरी पत्नी बेचारी मेरे पैर दबा रही है। कुछ दूसरे प्रसिद्ध व्यक्तियोंको भी मेरी सेवामें उपस्थित दिखाया गया है। चित्रके दूसरे अंशोंका वर्णन करके मैं पाठकोंके दिलको चोट नही पहुँचा सकता। इतना कहना काफी होगा कि यह चित्र शेषशायी विष्णुसे सम्बन्धित कथाका उपहास है। जिस भाईने यह चित्र भेजा है, वह चाहते हैं कि मैं इस चित्रके प्रकाशकोंसे प्रार्थना करूँ कि वे इसे वापस ले लें। आगे चलकर वह यह भी ठीक ही कहते हैं कि कट्टर वैष्णव अपना रोष प्रकट रूपसे प्रकाशित भले ही न करें, तो भी इस चित्रसे उनकी भावना को चोट पहुँचे बिना नहीं रहेगी। इन दोनों पत्र-लेखकोंके भावोंका मैं सम्पूर्ण हृदयसे समर्थन करता हूँ। दोनों मामलोंमें उद्देश्य अच्छा हो सकता है। परन्तु यह अमर्यादित वीर-पूजा प्रायः अनुचित मूर्ति-पूजाका रूप धारण कर लेती है, और बिना किसी कारणके सनातनधर्मी लोगोंकी भावनाओं पर प्रहारकरनेवाली सिद्ध होती है। ऐसे अमर्यादित कामोंसे मेरे अन्धभक्तोंके उद्देश्यकी भी हानि होगी। यदि उन्हें मेरी भावनाओंका थोड़ा-सा भी लिहाज हो, तो रथयात्रामें मेरी तसवीर रखनेके इच्छुक व्यवस्थापक-गण और भावनाओंको ठेस पहुँचानेवाले उस चित्रके प्रकाशक अपनी कार्रवाईसे

१. यहाँ पत्रके कुछ अंश ही उद्धृत किये गये हैं।

बाज आयें। देशभक्तिकी भावनाको प्रकट करने और बढ़ानेके दूसरे अनेक स्वस्थ तरीके हो सकते हैं।

दक्षिण आफ्रिकासे लौटे हुए लोग

पण्डित बनारसीदास चतुर्वेदी और स्वामी भवानीदयाल संन्यासीने देश लौटनेके लिए सरकारी सहायता सम्बन्धी योजनाके अधीन दक्षिण आफ्रिकासे भारत लौटे लोगों की स्थितिकी स्वतन्त्र जाँच करके उसकी एक बहुत ही युक्तियुक्त रिपोर्ट तैयार की है। इसके अलावा पिछले महीनेकी १६ तारीखको स्वामीजी ने मुझे एक तार भेजा था, जिसमें मुझसे रिपोर्टपर राय प्रकट करनेको कहा गया था। तारमें समाचार यह था कि "हालत ही खराब है, बहुत लोग भूखों मर रहे हैं, स्त्रियोंको तन ढँकनेको पूरा कपड़ा नही है, बालक भीख माँगते है।" उक्त रिपोर्ट और यह तार तभीसे मेरे पास पड़े है। रिपोर्टकी चर्चा मैं जल्दी नही कर सका, इसका मुझे खेद है। जिस तारसे मैंने उक्त उद्धरण दिया है, वह रिपोर्टका सारांश है। हमारे यहाँ लोगोंको अपने ही देशमें आकर परायोंकी तरह रहना पड़े, यह स्थिति हमारे और सरकार दोनोंके लिए कलंकरूप है। परन्तु सरकारकी अपेक्षा यह हमारे लिए अधिक बड़ा कलंक है। दुनियाकी कोई भी सरकार ऐसे मामलोंका पूरा-पूरा प्रबन्ध नहीं कर सकती। ऐसे मामलोंमें सरकार लोगोंके ऐच्छिक प्रयत्नमें एक हदतक मदद भर-कर सकती है। वस्तुतः ऐसे लोगोंके कल्याणमें सच्ची दिलचस्पी लेने और उनके लिए उचित काम तलाश करनेका काम कलकत्तेके धनाढ्य व्यापारियों और उन दूसरे लोगों का है, जो लोगोंको मजदूरीपर रखते हैं।

परन्तु स्वदेश लौटे हुए इन लोगोंकी यह दशा जिस कारणसे हुई है, उसकी तुलनामें इनकी आजकी हालत कोई चीज नही है। दक्षिण आफ्रिकाके भारतीयोंके स्वदेश लौटनेके सम्बन्धमें किसी प्रकारका इकरार होना ही नहीं चाहिए था, और यदि हुआ भी तो पहले उन्हें उचित काम दिलानेकी पूरी व्यवस्था हो जानी चाहिए थी, और किसी भी हालतमें उस उपनिवेशमें जन्मे भारतीयोंके, जिनमें से पूरे ३३ फीसदी कलकत्ता स्टेशनपर पड़े हैं, स्वदेश लौटनेके लिए तो कभी सम्मति दी ही नहीं जानी चाहिए थी। पर साँपके निकल जानेपर लकीर पीटनेसे क्या लाभ? केपटाउनका करार फिरसे होते समय यदि गरीब भारतीय मजदूरोंकी आबादीके हक अन्य भारतीय अधिवासियोंको मिलनेवाली संदिग्ध छूटके बदलेमें बेच नहीं डाले जायें, तो इस रिपोर्टके लेखकोंका परिश्रम निष्फल न होगा। भारतीय अधिवासियोंने जो रुख अख्तियार किया है, उसपर आक्षेप नहीं किया जा सकता। उसका आधार तो उसके अपने गुण-दोष ही होने चाहिए। इसलिए अधिवासियोंको स्वयं किसी ऐसे करारमें शामिल होनेसे इनकार कर देना चाहिए, जिसकी वजहसे उनके बदनसीब भाइयोंके हक मारे जाते हों। जितने भारतीय आज वहाँ हैं, उनका समावेश और प्रबन्ध दक्षिण आफ्रिका आसानीसे कर सकता है।

गांधी आश्रम, मेरठ

यह आश्रम आचार्य कृपलानीकी कृति है। आश्रमकी ओरसे इसकी गतिविधियों का परिचय देनेवाली एक सुन्दर छोटी पुस्तिका प्रकाशित हुई है। १९२० में जब बनारसमें इसके जीवनका श्रीगणेश हुआ था, यह एक छोटी-सी चीज थी। यह आज बढ़कर अनेक शाखाओंवाली विशाल संस्था बन गई है, और इसका अपने प्रधान केन्द्र, मेरठमें निजका मकान भी हो गया है। अब यह एक धर्मार्थ संस्थाके रूपमें रजिस्टर्ड हो चुकी है। इसका मुख्य काम खादीका उत्पादन और प्रसार है, पर जहाँ-जहाँ हो सकता है, यह निःशुल्क औषधालयों और रात्रि-पाठशालाओंका संचालन भी करती है। १९२१ में इस संस्थाने ४८) की खादी पैदा की थी, और ३,१००) की बेची थी। १९३० में उत्पादन ४,२१,४९०) का था और बिक्री ५,३२,३६१) की। १९२१ में इसकी ४५ इंच अर्जवाली खादीका भाव १) गज था और १९३० में। –)।। गज। इस संस्थामें खादीकी बुनाईतक के काम तो होते ही हैं, इसके अलावा धुलाई, इस्तरी करने और रँगाईके विभाग भी हैं। यह संस्था इन विभागोंमें उम्मीदवारोंको भर्ती करके उन्हें काम सिखाती है और मेरठकी गरीब स्त्रियोंको बुनाई, चादरोंके किनारों पर कढ़ाई वगैराका काम देकर उन्हें रोजी देती है। अब कौन कह सकता है कि खादीका भविष्य उज्ज्वल नहीं है, या वह देशके सबसे दरिद्र लोगोंकी सहायक नहीं है?

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ४-६-१९३१

३८५. क्या यह एक आर्थिक आवश्यकता है?

'टाइम्स ऑफ इंडिया' (२६-५-१९३१) में प्रकाशित एक लेखमें निम्नलिखित अंश आया है:

> **महात्मा गांधीने धरनोंके प्रयोजन और कार्य-विधिके सम्बन्धमें अपने सबसे हालके लेखमें[1] अपना यह विश्वास फिर दोहराया है कि विदेशी वस्त्रोंका आयात बन्द करना 'भारतके लिए एक आर्थिक आवश्यकता है।' वे शायद 'यंग इंडिया' के अगले अंकमें इस बातका खुलासा देंगे कि आर्थिक आवश्यकता का वे क्या अर्थ लगाते हैं। सूती वस्त्रोंकी जैसी स्थिति अब सामने आती जा रही है उसके सम्बन्धमें उठनेवाले इन कुछ प्रश्नोंके उत्तरोंसे अपेक्षित जानकारी प्राप्त हो सकती है।**
>
> **१. हाथ-कताई और हाथ-बुनाईकी विधियोंसे तैयार देशी वस्त्रोंके उत्पादनकी वृद्धिने १९३०–३१ के दौरान सूती वस्त्रोंके आयातमें हुई एक अरब गज वस्त्रकी कमीकी किस हदतक पूर्ति की है?**

१. देखिए "टिप्पणियाँ", २१-५-१९३१ का उपशीर्षक "धरने"।

२. मिलोंके उत्पादनकी वृद्धिने उसकी किस हद्तक पूर्ति की है?

३. क्या बहिष्कारके लिए परिमाणकी एक कोई सीमा रखी गई है जिसके बाद उसे बन्द कर दिया जायेगा या बहिष्कार हर हालतमें जारी रहेगा, फिर हाथसे तैयार और मिलोंमें बने वस्त्र आयात होनेवाले वस्त्रोंका क्रमशः कितने ही परिमाणमें स्थान क्यों न ले लें?

४. यदि हाँ, तो बहिष्कार अन्य प्रान्तोंके सिवा बम्बई प्रान्तके अपने हितमें किस हद्तक है?

यदि ग्रामोद्योगोंके पुनरुद्धारके सभी प्रयत्न निश्चित तौरपर असफल सिद्ध हो चुके हैं, जैसा कि लगता भी है, तो फिर महात्मा गांधी अपने इस परमप्रिय आन्दोलनकी असफलता स्वीकार करनेमें चाहे कितना भी संकोच क्यों न दिखायें, यह तो स्पष्ट है कि सार्वजनिक ईमानदारीके हितमें बहिष्कार आन्दोलनका नियन्त्रण औपचारिक रूपसे 'सूती वस्त्र मिल-मालिक संघों' के हाथों सौंप दिये जानेका उपयुक्त समय आ गया है, जिससे वे कांग्रेसके नियन्त्रणमें काम करनेवाले एजेन्टोंके बनावटी रूपको छोड़कर उसके वास्तविक कर्त्ताधर्त्ता होकर इसका संचालन करें।

इन विशेष प्रश्नोंके उत्तर इस प्रकार हैं:

१. गजोंके आँकड़ोंके साथ तो इस प्रश्नका उत्तर दिया नहीं जा सकता। क्योंकि सारीकी-सारी खादी बिक्री व खरीदके लिए तैयार नहीं की जाती। घरोंमें खुद अपने इस्तेमालके लिए तैयार की जानेवाली खादीका उत्पादन ही दिन-दिन इतना अधिक फैलता-बढ़ता जा रहा है कि उसका हिसाब रखना बेचारे 'अखिल भारतीय कताई संघ' के बसकी बात नहीं रह गई है।

२. देशी कपड़ा-मिलें निस्सन्देह उस कमीको पूरा करनेमें काफी हाथ बँटा रही हैं।

३. वे कितना काम कर पायेंगी, यह आगेकी प्रगतिपर निर्भर करेगा।

४. बम्बईका हित भारतका हित है। लेखकने शायद अहमदाबादको बम्बईमें शामिल मान लिया है; और स्पष्ट है कि भारत-भरमें बिखरी अन्य महत्वपूर्ण मिलोंको तो उन्होंने गिना ही नहीं है।

मैंने इन प्रश्न-विशेषके उत्तर अपनी या जनताकी सन्तुष्टिके विचारसे उतने नहीं, लेखककी ही सन्तुष्टिके लिए अधिक दिये हैं। लेखकका निश्चित मत है कि खादी-आन्दोलन असफल सिद्ध हो चुका है। जनताको मालूम होना चाहिए कि यदि मुझे विश्वास हो जाये कि खादी सचमुच असफल रही है तो मुझे विदेशी वस्त्रोंके बहिष्कार में फिर कोई दिलचस्पी नहीं रह जायेगी। पता नहीं लेखकने ऐसा निश्चित मत किस आधारपर बना लिया है। लेकिन खादीके उत्पादन और प्रचारका मुख्य प्रणेता होनेके नाते मैं साहसपूर्वक कह सकता हूँ कि असफल होना तो दूर, खादी धीरे-धीरे ही सही, लेकिन निश्चित तौरपर भारत-भरमें प्रगति कर रही है। इसलिए मैं

फिर यह दावा करता हूँ कि भारतकी जनताके लिए बहिष्कार एक आर्थिक आवश्यकता है। हो सकता है कि यह बात कुछ विचित्र लगे, पर है बिलकुल सही कि बहिष्कार मिलोंके लिए उसी अर्थमें और उतनी ही हदतक आर्थिक आवश्यकता नही है जितना कि वह खादीके लिए है। इसमें सन्देह नही कि बहिष्कारके कारण मिलोंको आशातीत लाभ हुआ है, परन्तु वे बहिष्कारके बिना भी अपना अस्तित्व बनाये रख सकती थीं; वे ऐसा पहले कर ही रही थीं। और फिर वे अज्ञान तथा अभावसे पीडित जनतापर अपनी मिलोंमें बना कपड़ा थोपकर करोड़ों भूखे-नंगे लोगोंके शोषण-में ब्रिटेन और जापानके साझीदार तो बन ही सकती हैं। इसके सिवा जनता फुर्सतके समयमें अपनी आवश्यकताके योग्य वस्त्र तैयार कर सकनेकी अपनी सामर्थ्यको भूलकर उनकी मिलोंके महीन सूती वस्त्र खरीदेगी तथा इस प्रकार अपना दोहरा नुकसान करेगी। इसलिए बहिष्कार-आन्दोलनका नियन्त्रण पूरी तौरपर मिलोंके हाथ नही सौंपा जा सकता; वे चाहें, तो भी नहीं। यदि वे नियन्त्रण अपने हाथमें ले भी लें, तो उनके हाथ असफलता ही लगेगी। इस तथ्यपर परदा नहीं डाला जा सकता कि मिलें तो अपने एजेन्टो और अपने हिस्सेदारोंके मुनाफेकी खातिर ही बहिष्कारमें खास दिल-चस्पी लेती हैं; जब कि कांग्रेस पूरी तौरपर आम जनताके सामान्य हितोंकी दृष्टिसे ही बहिष्कार आन्दोलनको चला रही है।

लेखक, और देखा जाये तो अन्य कई लोगोंको भी इस बातकी समझ नहीं है कि खादीका तरीका अर्थशास्त्रके क्षेत्रमें उसी तरह एक नया तरीका है जिस तरह कि अहिंसाका तरीका राजनीतिके क्षेत्रमें है। खादीका तरीका परम्परागत अर्थशास्त्रीय सिद्धान्तोंकी नजरमें उसी तरह अटपटा लग सकता है, जैसे कि अहिंसाके तरीकेने परम्परागत राजनीतिक तरीकोंके समर्थकोंको उलझनमें डाल रखा है। यह नया तरीका केवल कुछ सीमातक ही परम्परागत सांख्यकीय पद्धतिसे आँकड़ोंके आधारपर सिद्ध किया जा सकता है। बहिष्कार आन्दोलनकी अद्भुत सफलताका रहस्य खादीकी भावना में ही है। बहिष्कार कोई नई बात नहीं है। वह बंग-भंगके कालसे पहलेकी न हो, तो भी कम-से-कम उतनी पुरानी तो है ही। लेकिन उसकी सफलताकी आशा १९१९ में खादीके पुनरुद्धारके साथ ही जन्मी थी, और गत वर्ष खादी-भावनाके चरम उत्कर्षके कालमें ही आंशिक रूपमें यह आशा पूरी हुई थी। खादी-भावनाकी वास्तविक अभिव्यक्ति तो अभी सामने आनेको है। उसका सामने आना अनिवार्य है और लोग जितना सोचते हैं, उससे कही जल्दी वह सामने आयेगी। और जब वह वास्तवमें अभिव्यक्त हो पायेगी तब न तो धरनोंकी जरूरत बचेगी, न आँकड़ों द्वारा उससे होनेवाले लाभको सिद्ध करनेकी ही।

'टाइम्स ऑफ इंडिया' के लेखकने सुझाया है कि बहिष्कारका एकमात्र लक्ष्य जनताको हानि पहुँचाकर, मिलोंको लाभ पहुँचाना है। बहिष्कारके साथ यदि खादीकी बात जुड़ी हुई न होती तो लेखकके इस सुझावका कुछ आधार माना भी जा सकता था। लेखक और उनकी तरहके आलोचकोंको यह नहीं भूलना चाहिए कि हमारा नारा 'खादीके जरिए बहिष्कार' का है। भारतीय मिलोंका काम यही है कि वे

खादीके अनुपूरक बनें। लेकिन यदि भारतीय मिलें खादीका विरोध भी करें, तो भी बहिष्कार जारी ही रहेगा। एक समय था जब अनेक मिलोंने विरोध किया भी था। खादीके प्रति उनकी उदासीनता भी काफी स्पष्ट थी। हाँ, इतना श्रेय उनको दिया जाना चाहिए कि उन्होंने वक्तकी माँगको कुछ हदतक समझ जरूर लिया है, और उन्होंने खादीके साथ समझौता कर लिया है, भले ही उनमें से अधिकांशने समझौतेको अधूरे मनसे ही निभाया है। कुछ तो खादीके पक्के समर्थक भी बन गये हैं और इसके लिए यदि आवश्यकता पड़े तो घाटा उठानेकी भी कोई परवाह नही करेंगे। इसलिए बहिष्कार-आन्दोलनमें भारतीय मिलोंकी भूमिका मुख्य नही है। इसमें सन्देह नही कि इससे उनको लाभ होता है और होगा, कम-से-कम कुछ समयतक तो उनको अधिकाधिक लाभ होता चला जायेगा, लेकिन लाभकी वृद्धिकी दर खादीके प्रति उनकी ईमानदारीके अनुपातमें ही होगी।

लेखक और पाठकगण भी समझ लेंगे कि हालके कानूनमें मिलोंको संरक्षण देनेसे भारत अर्थात् भारतीय जनताको कुल मिलाकर निश्चित तौरपर लाभ क्यों होगा। मिलोंके बने कपड़ेके मूल्योमें वृद्धि अवश्य ही होगी। मिलोंको मुनाफेके अनुचित लोभसे दूर रखनेके लिए कांग्रेसको अनवरत प्रचार करते रहना चाहिए और जनताको सिखाना चाहिए कि उनका आर्थिक कल्याण इसीमें है कि वे अपने घरोंमें ही हाथ-कताईके जरिए खादी तैयार करते चलें। एक बार जहाँ विदेशी वस्त्र रास्तेसे हटे कि देशी मिलें बड़ी तत्परतासे या तो अपने वस्त्रोंके मूल्य और उसके उत्पादनको खादीके अनुरूप बना लेंगी या फिर विदेशी मिलोंकी भाँति उनको भी बहिष्कारका खतरा उठाना पड़ेगा।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, ४-६-१९३१

३८६. गोलमेज परिषद् और कांग्रेस

यदि स्थायी शान्तिके लिए, जिसतक पहुँचना सब दलोंका समान ध्येय है, मौन धारण करनेकी आवश्यकता न होती, तो गोलमेज परिषद्में शामिल होनेके लिए लन्दन जानेके सम्बन्धमें बहुत पहले ही मैंने जनताको विश्वासपूर्वक अपने मनकी बातें बताई होती। अब मैं नीचे लिखा स्पष्टीकरण देनेकी परिस्थितिमें हूँ।

मैंने अपनी राय, जो नई नही है, कभी छिपानेका प्रयत्न नहीं किया है; बल्कि मैंने उसी समय, जब दिल्लीमें समझौतेकी बातचीत चल रही थी, अपनी यह राय जाहिर की थी कि यदि हम आपसमें कौमी सवालको निपटानेमें कामयाब न हुए तो परिषद्में भाग लेनेके लिए लन्दन जानेमें मुझे बहुत ज्यादा पसोपेश होगा। मैं अपनी रायको बदलनेका अभीतक कोई कारण नहीं देखता।

दिल्लीके समझौतेके मार्गमें नाजुक स्थितियोंका उत्पन्न होते रहना मेरे लन्दन जानेकी एक दूसरी बाधा है। समझौतेको भंग होनेसे बचानेमें मैं अपनी जानतक की

बाजी लगा दूँगा। और, मैं तो अपने-आपको महत्व देता हुआ दिलमें यह मानता हूँ कि समझौता न टूटने देनेके लिए मेरी उपस्थिति यहाँ आवश्यक है।

तथापि हम यह आशा रख सकते हैं कि सितम्बरमें होनेवाली सभामें जानेके लिए हिन्दुस्तान छोड़ना जरूरी होनेकी घड़ीतक ये दोनों कठिनाइयाँ दूर हो चुकेंगी।

मैं यह विश्वास दिला सकता हूँ कि समझौता किया गया है, इसलिए मैं कांग्रेस की प्रतिष्ठाके ख्यालसे लन्दन जाकर गोलमेज परिषद्में श्री चर्चिल सहित ब्रिटिश राजनीतिज्ञोंको कांग्रेसकी बात बतानेके लिए उत्सुक हूँ। मैं जानता हूँ कि श्री चर्चिल और उनके दलवाले यह अनुभव नहीं करते कि कांग्रेस ब्रिटेनकी दुश्मन नही है। कांग्रेस तो हिन्दुस्तानके लिए बड़ी चीज चाहती है, जिसे ब्रिटेनके लिए मुहैया करनेकी गरजसे, उसने और उसके पुरखाओंने लड़ाइयोंमें हाथ बँटाया है। इसलिए लन्दन ले जानेके लिए मेरी मनुहार करनेकी जरूरत नहीं है। मैंने मित्रोंसे यह भी कहा है कि यदि कौमी झगड़ा नहीं सुलझा और उसकी वजहसे मैं गोलमेज परिषद्में भाग लेनेमें असमर्थ रहा तो भी यदि मुझे समझौतेके कामसे फुरसत मिल गई, तो जरूरत होनेपर जिम्मेदार राजनीतिज्ञोंके सामने कांग्रेसकी स्थितिको रखनेके लिए मैं लन्दन जाऊँगा। मेरी यह उत्कट इच्छा है कि यदि सम्मानके साथ और राष्ट्रका दुबारा अवर्णनीय कष्टपूर्ण युद्धके लिए आह्वान किये बिना स्थायी समझौता हो सके तो वह किया जाये।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, ४-६-१९३१

३८७. प्रभात-फेरी

प्रभात-फेरियोंके आरम्भ होनेका समाचार मैंने यरवदा जेलमें पढ़ा था। मैंने सोचा था कि जिसे यह विचार सूझा है, वह धन्यवादका पात्र है। मैंने अनुभव किया कि प्रचारकी दृष्टिसे मूल्यवान होनेके सिवा वह आध्यात्मिक दृष्टिसे भी एक सुन्दर काम है। वह सोते हुए आदमीको कर्त्तव्यनिष्ठ बननेकी याद दिलाता है। प्रभात-फेरी उसे इस बातका स्मरण कराती है कि बिस्तर छोड़कर उठने और उस समय उठते ही सबसे पहले परमात्माकी स्तुति करनेका समय हो गया हैं। मैंने पढ़ा था कि प्रभात-फेरियोंमें भाग लेनेवाले लोग सामयिक सार्वजनिक घटनाओंके गीतोंके अतिरिक्त ईश्वर-स्तुतिका गीत भी गाते हैं, इसलिए उचित रीतिसे रहनुमाई की जाये, तो यह प्रथा सच्ची राजनैतिक शिक्षाका ही नहीं, बल्कि आत्मशुद्धिका भी जबर्दस्त साधन बन सकती है। पर मेरे सुननेमें यह भी आया है कि कभी-कभी दुर्भाव पैदा करनेवाले गीत भी गाये जाते हैं। यदि सचमुच ऐसा होता है तो मुझे दुख होगा। इन फेरियोंके व्यवस्थापकोंसे मैं अनुरोध करता हूँ कि वे इस शान्तिके समयमें ही नहीं, लेकिन सदाके लिए गीतोंके चुनावमें मर्यादाका ख्याल रखें, और ईश्वर-स्तुति, खादी, शराब-बन्दी, कौमी-एकता, अस्पृश्यता-निवारण और दूसरे समाज-सुधार-जैसे रचनात्मक कामों

सम्बन्धी गीत ही चुनें। फेरियोंमें भाग लेनेवाले लोगोंको भली-भाँति और एक सुरसे गानेकी तालीम दी जानी चाहिए और सारे हिन्दुस्तानमें इनके निकालनेका समय एक ही रखना चाहिए। मुझे याद है कि बम्बईमें प्रभात-फेरियाँ सदा वक्तकी ऐसी पाबन्दी नहीं करती, और इलाहाबादमें वे बम्बईसे भिन्न ही किसी समयमें निकलती है। यह प्रथा शुरू तो हो गई है, परन्तु अभी इसका रूप योजनाबद्ध नहीं है; इसके मूल प्रवर्तकगण अब इसकी कोई उचित योजना तैयार कर लें और जिन्हें किसी भी धर्म या दलके लोग गा सकें, ऐसे गीतोंका संग्रह प्रकाशित करें, तो अच्छा हो। यह संस्था दलबन्दीसे रहित राष्ट्रीय संस्था होनी चाहिए। यदि किसी कारणसे दल-बन्दी होने लगे, और लोग चाहे जिस रीतिसे चाहे जब गीत गाते घूमने लगें, तो फेरियाँ प्रलाप बन जायेंगी और इस कारण वे लोगोंके काम-काजमें बाधक हो जायेंगी किन्तु प्रातःकालमें तो सुन्दर संगीत अवश्य पसन्द किया जायेगा।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ४-६-१९३१

३८८. एक खरी शंका (?)

गांधी-इर्विन समझौता अब काफी प्रसिद्धि पा चुका है। भारतके सभी कांग्रेसियोंने तो नहीं, पर कम-से-कम उनके बहुमतने तो लगभग मुक्तकण्ठसे उसकी शर्तोंकी सराहना की ही है। इस देश और यूरोपीय महाद्वीप दोनों ही के समाचारपत्रों और जनताने शान्ति-वार्ताओंकी सफलताको सच्चे हृदयसे सराहा है और उन्होंने एक स्वरसे यह मत व्यक्त किया है कि दोनों पक्षोंकी सदाशयता और आचरणकी शुद्धताने वार्ताओंकी सफलताको बहुत काफी महत्व प्रदान कर दिया है। इस सबके बावजूद ऐसे लोगोंका, विशेषकर नई पीढ़ीके युवकोंका, एक अल्पमत है, जो समझौतेकी शर्तोंके एकदम विरुद्ध है और बिलकुल खुले रूपमें उनका अनुमोदन करनेसे बिलकुल इनकार करता था, और अब भी करता है। और इस अल्पमतको एक-दोका नहीं, काफी बड़ी संख्याका समर्थन प्राप्त है। उनकी राय है और हमारे विचारसे उसका पर्याप्त औचित्य भी है कि भारतकी पूर्ण स्वतन्त्रताके तात्कालिक लक्ष्यकी घोषणाकी जो ध्वजा लाहौर कांग्रेसमें फहराई गई थी, उसे समझौतेकी शर्तोंने झुका दिया है और इस प्रकार कांग्रेस तथा उसके अनुयायियोंको पहलेसे कहीं कम कठिन और एक सर्वथा भिन्न कार्यक्रमसे प्रतिबद्ध कर दिया है।

कांग्रेसके एक अकेले प्रतिनिधिके रूपमें गांधीजी ने और ब्रिटिश सरकारके प्रवक्ताके रूपमें लॉर्ड इर्विनने जिस कर्त्तव्य-निष्ठा तथा सदाशयताके साथ शान्ति-वार्ताओंको इस सफलतातक पहुँचा दिया है, उसपर तो कोई एक क्षणके लिए

भी सन्देह नहीं करता। श्री सुभाषचन्द्र बोसके नेतृत्वमें वामपन्थियोंने लगभग तय कर लिया था कि वे कराची कांग्रेसमें दिल्ली समझौतेके अनुमोदनके प्रस्ताव का विरोध करेंगे, लेकिन फिर उन्होंने वह विचार छोड़ दिया और हम उनके आभारी हैं कि उन्होंने इस प्रकार कांग्रेसको अत्यन्त गम्भीर फूटकी सम्भावनासे बचा लिया, वह भी एक ऐसे समयमें जब, आजकी भाँति ही, शत-प्रतिशत सर्वसम्मति और परस्पर सहयोग हमारे लिए एक मार्मिक महत्व रखता था। उन्होंने बड़ी ही अनिच्छापूर्वक क्यों न हो गांधीजी की इच्छाके सामने सिर झुकाकर उनको ब्रिटिश सरकारपर अपनी आस्थाको परखनेका एक और अवसर देना स्वीकार किया था।

आइए, हम जरा देखें कि समझौतेके बादसे उसकी शर्तोंका कहाँतक पालन किया गया है। सरकारने अपनी ओरसे इतना किया है कि सविनय अवज्ञाके अपराधी बन्दियोंको रिहा कर दिया है, विभिन्न अध्यादेश वापस ले लिये हैं और कांग्रेस संगठनको कानूनी करार दे दिया है। इधर कांग्रेसने सविनय अवज्ञा आन्दोलन, जोरदार धरने तथा ब्रिटिश मालका बहिष्कार इत्यादि बन्द कर दिया है और पुलिसकी ज्यादतियोंकी जाँच रद करनेकी बात भी मान ली है। इतना तो सभीके हितमें रहा। परन्तु हम यह नहीं समझ पाये कि सरकारने समझौतेकी शर्तोंके आधारभूत सिद्धान्तोंका सख्तीसे पालन किया है या नहीं। रोज ही हमें ऐसे अनेक समाचार सुनाई पड़ते हैं कि देशके विभिन्न भागोंमें बन्दियोंको रिहा नहीं किया गया है, राजनीतिक सभाओंपर दफा १४४ लगा दी गई है, राजनीतिक कारणोंसे लोगोंकी गिरफ्तारी हुई है और सजाएँ सुनाई गई हैं और अनेक प्रकारकी ऐसी घटनाएँ होती रहती हैं जो समझौतेका बिलकुल ही उल्लंघन करती हैं। दूसरी ओर हमसे कहा जाता है कि प्रान्तीय सरकारोंको शिकायत है कि जनता समझौतेकी शर्तोंका पूरी तरह पालन नहीं करती। दोनों पक्षों द्वारा लगाये जानेवाले इन आरोपोंका कितना-क्या औचित्य है, यह बतलाना हमारा काम नहीं।

इन सभी बातोंको देखते हुए हमारे मनमें यह बिलकुल सही शंका उत्पन्न होती है कि क्या समझौतेको मानकर लाहौरमें फहराई गई स्वाधीनताकी ध्वजाको इस प्रकार झुका देनेका पर्याप्त औचित्य गांधीजी के पास था। और यह शंका भी उठती है कि क्या गांधीजी को सचमुच ही पूरी तरह भरोसा हो गया था कि ब्रिटिश सरकारका वास्तविक हृदय-परिवर्तन हो गया है और इसलिए इस प्रकारके एक समझौतेमें कांग्रेसको बाँधना ठीक रहेगा। हमारी तीसरी बड़ी प्रामाणिक शंका यह है कि उनके नेतृत्वमें कांग्रेसके उसमें शामिल होनेपर भी क्या गांधीजी सचमुच यही समझते थे कि ब्रिटिश सरकार भारतीय स्वाधीनताके प्रश्नपर अगली गोलमेज परिषद्में गम्भीरतापूर्वक चर्चा करेगी।

चौथे, हमारे मनमें एक प्रामाणिक शंका यह भी है कि क्या गांधीजी को कभी एक क्षणके लिए भी ऐसा लगा था कि ब्रिटिश सरकार डेढ़ सौ वर्षोंतक एक ऐसे राष्ट्रको, जिसका लगातार शोषण करनेके बाद जो उसके निर्वाहका मुख्य स्रोत है, और जो एक ऐसा आधार है जिसपर उसके वैभवकी समूची इमारत खड़ी है, कांग्रेसके हाथोंमें सौंपकर गद्दीसे बिलकुल ही हट जायेगी; और हमारे मनसे पाँचवीं शंका यह है कि क्या ब्रिटिश सरकार कभी "ब्रिटिश साम्राज्यीय मुकुटके सबसे जगमगाते रत्न"को ऐसे लोगोंके हाथ सौंपनेको तैयार हो जायेगी जिनका फिर वह भविष्यमें कोई शोषण ही न कर पाये और क्या इस प्रकार वह अपने पतनका मार्ग स्वयं ही प्रशस्त करना ठीक समझेगी। और आखिरी शंकासे पहले हमारी एक और शंका यह है कि क्या गांधीजीको स्मरण था कि पिछले कालमें कैसे एकाधिक अवसरोंपर ब्रिटिश सरकारके प्रति उनका विश्वास झूठ सिद्ध हो चुका है और क्या उन्होंने कभी यह भी सोचा है कि तरुण भारत अब उनको फिर हमेशाकी ही तरह मेहनतकश जनतापर अपनी राजनीतिक जादूकी छड़ी नहीं फेरते रहने देगा।

अब हम अपनी अन्तिम शंका सामने रखते हैं; लेकिन उसकी अहमियत अन्य शंकाओंसे किसी भी कदर कम नहीं है। वह शंका यह है कि क्या आगामी परिषद्में कांग्रेसके भाग लेनेसे सफलताकी कोई आशा दिखलाई पड़ती है। कौन कह सकता है कि लन्दनके लिए देशसे एक बार रवाना हो जानेपर गांधीजी और उनके साथ जानेवाले सहयोगियोंको वार्ता असफल हो जानेकी स्थितिमें अपने कार्य-क्षेत्रमें वापस लौटने भी दिया जायेगा या नहीं? या कौन गारंटी दे सकता है कि लन्दन-प्रवासके दौरान भारतीय शिष्ट-मण्डलका यथायोग्य आतिथ्य-सत्कार किया ही जायेगा?

हमारे मनमें पूरी ईमानदारीके साथ एक यह प्रश्न उठता है कि क्या अब यही सर्वथा उपयुक्त अवसर नहीं है कि हम सब अपने तात्कालिक और चिरन्तन एकमात्र लक्ष्यको प्राप्त करनेकी खातिर मिलकर एक संयुक्त मोर्चा बना लें और यदि आवश्यक हो तो उसके लिए रक्त-स्नान करनेमें भी संकोच न करें, जाहिर है कि हम यह सब अहिंसाके अपने सिद्धान्तका पालन करते हुए ही करेंगे।

उपर्युक्त लेख मेरे पास 'द यूथ ऑफ इंडिया' की ओरसे भेजा गया है। इसके साथ बाकायदा हस्ताक्षर किया हुआ एक सह-पत्र भी संलग्न है। मैंने लेखके कुछ अनावश्यक अंशोंको निकाल दिया है और आरोपमें सारतः कोई परिवर्तन किये बिना प्रस्तुत अंशोंमें थोड़ा रद्दोबदल भी कर दिया है। उनके इस कथनमें सचाई है कि समझौता-भंग करनेके बारेमें सम्बन्धित पक्षोंमें आरोपण-प्रत्यारोपण हुआ है। परन्तु मैं जनताको विश्वास दिलाता हूँ कि अब कठिनाइयाँ दूर की जा चुकी हैं। मैं जानता

हूँ कि कांग्रेसकी तरह केन्द्रीय सरकार भी समझौतेको कार्यान्वित करना चाहती है और जबतक यह स्थिति बनी रहेगी, समझौतेके ठप्प होनेका कोई खतरा नहीं। इस एक बड़े ही नाजुक किस्मके यन्त्रको चलाने, उसका उपयोग करने और उसे चुस्त-दुरुस्त रखनेके इस दौरमें, मैं इस सम्बन्धमें इससे अधिक कुछ नहीं कह सकता। जनताको मुझसे इससे ज्यादा कर पानेकी आशा भी नहीं होनी चाहिए।

जहाँतक समझौतेकी बात है, मुझे इसमें रंचमात्र भी शंका नहीं कि यदि कांग्रेस यह समझौता न करती तो बड़ी गलती करती और श्री सुभाषचन्द्र बोस तथा उनके साथी युवकोंने कराचीमें अपना विरोध वापस लेकर और समझौतेसे सम्बन्धित प्रस्ताव का समर्थन करके निश्चय ही देशभक्तिपूर्ण कार्य किया है। कराची कांग्रेसने स्वाधीनताके ध्वजको झुकाया नहीं है। इस सम्बन्धमें कांग्रेसका आदेश बहुत ही स्पष्ट है।

गोलमेज परिषद्में कांग्रेस अपनी माँगें मनवा सकेगी या नहीं, मैं नहीं कह सकता। परन्तु मैं इतना जानता हूँ कि अपनी माँगें ठुकराई जानेके भयसे परिषद्में भाग लेनेसे कतराना कांग्रेसके लिए गलत होगा। परिषद् भी एक साधन है जिसके जरिए हम अपनी राष्ट्रीय माँगकी नितान्त न्यायपूर्णता सिद्ध कर सकते हैं। कांग्रेसको जब पूरी तरहसे इस बातकी छूट थी कि वह अपनी सम्पूर्ण माँग जैसी-की-तैसी पेश करके उसपर आग्रह कर सकती है; ऐसी हालतमें उसका परिषद्में भाग लेनेसे इन्कार करना मूर्खतापूर्ण ही होता। गोलमेज परिषद्के सामने अपनी माँग पेश करनेका अवसर मिलनेपर यदि कांग्रेस उसका लाभ उठानेसे इन्कार करती तो उससे साहसकी कमी ही टपकती।

इसलिए मैं यदि यह देखूँ कि मेरा लन्दन जाना सर्वथा निरापद है, तो परिषद्में भाग लेनेके लिए वहाँ जानेमें कोई संकोच नहीं करूँगा। मेरी कठिनाई बुनियादी है और उसे सभी जानते हैं। यदि हम साम्प्रदायिक समस्याको हल करके खुद अपना ही घर व्यवस्थित न कर पायें तो कांग्रेसकी माँग पेश करने लायक आत्मविश्वास मेरे अन्दर पैदा नहीं हो सकेगा। पर मैं प्रतीक्षा कर रहा हूँ कि हल निकले; मैं हालातपर नजर जमाये हुए हूँ और ईश्वरसे प्रार्थना कर रहा हूँ। मार्ग सूझते ही, मैं जहाँ-कहीं भी मेरी दरकार हो, जानेको बिलकुल तैयार रहूँगा। दूसरी एक कठिनाई है, जो इतनी गम्भीर तो नहीं, लेकिन फिर भी किसी भी कदर कम महत्वपूर्ण नहीं है। यदि समझौतेसे सम्बन्ध रखनेवाले कुछ गम्भीर प्रश्न खटाईमें पड़े हों तो समझौतेमें कांग्रेसकी ओरसे शामिल होनेवाले मुख्य प्रतिनिधिकी हैसियतसे लन्दनके लिए रवाना होना मुझे बड़ा ही अटपटा लगेगा। मैंने लॉर्ड इर्विनको वचन दे दिया है कि मैं समझौता ठप्प न होने देनेके लिए अपनी ओरसे कुछ भी उठा नहीं रखूँगा। मैं पहले ही इस बातका संकेत दे चुका हूँ कि प्रान्तीय सरकारें मेरे मार्गमें कुछ कठिनाइयाँ पैदा कर रही हैं। परन्तु आशा है कि धैर्यसे काम लेनेसे सब कुछ ठीक हो जायेगा। जो भी हो, पूरी विनम्रताके साथ मेरा अपना विश्वास है कि संकटकी स्थिति उत्पन्न न होने देनेके लिए भारतमें मेरा रहना जरूरी है।

पत्र-लेखक या लेखकोंकी अन्य शंकाओंके बारेमें मैं अपनी वही बात दोहरा सकता हूँ जो मैं अक्सर कहता रहा हूँ। अर्थात् जबतक कि मैं भली-भाँति यह न

देख लूँ कि वार्तासे कोई भी लाभ होनेवाला नही है, मैं आशाका पल्ला नही छोडूँगा, चूँकि मानव-स्वभावकी सद्प्रवृत्तिपर मेरा विश्वास बना हुआ है, इसलिए मुझे पिछली निराशाओंके बावजूद भरोसा रखना चाहिए। मै इसीको व्यावहारिक बुद्धिमत्ता मानता हूँ। सफलताके मेरे विश्वासका आधार हमारे राष्ट्रीय उद्देश्यकी सहज या अन्तर्निहित न्यायपूर्णता और उसी हदतक उसके लिए अपनाये जानेवाले साधनोंकी औचित्यपूर्णता है। मै नहीं मानता कि लन्दनमें कांग्रेसी शिष्ट-मण्डलको अपमान झेलना पड़ेगा। यदि वैसा हुआ भी तो उससे कांग्रेसकी प्रतिष्ठापर कोई आँच नहीं आयेगी। हानि तो अपमान करनेवालोंकी ही होगी। इसीलिए इन युवक पत्र-लेखकोंसे मेरा आग्रह है कि वे निराशाको मनमें जगह न दें और समझौतेको सफल बनानेके लिए अपनी पूरी शक्तिसे जुट जाये और राष्ट्रीय दृष्टिकोणकी पुष्टिकी खातिर रचनात्मक कार्यक्रम पर अमल करके कांग्रेसकी शक्ति बढ़ायें। क्योंकि यदि परिषद्में कांग्रेसका प्रतिनिधित्व होता है तो कांग्रेस जितनी शक्तिशाली होगी, परिषद्में हमें ठीक उसी अनुपातमें सफलता मिलेगी।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, ४-६-१९३१

३८९. भारतमें मिशनरियोंके तौर-तरीके

गांधीजीने ईसाइयतके प्रचारके लिए अपनाये जानेवाले मौजूदा तौर-तरीकों और मिशनरियों द्वारा किये जानेवाले ईसाइयतकी श्रेष्ठताके दावोंके विरुद्ध मत व्यक्त करके मिशनरियोंको बहुत दुखी किया है। मिशनरियोंने श्री गांधीकी इस बातपर तीखे स्वरमें क्षोभ प्रकट किया है कि उनके काम करनेके तौर-तरीके संदिग्ध हैं। . . . १९११ के भारतीय जन-गणना प्रतिवेदनमें कहा गया था कि आदिम जातियोंके लोग "मिशनरियोंसे संकट कालमें सहायता और भू-स्वामियोंके अत्याचारोंसे संरक्षण पानेकी आशामें" ईसाई धर्म स्वीकार कर लेते हैं। . . . राजाराम मोहनरायने १८२१ में 'ब्रह्मेनिकल मैगजीन' में अनुरोध किया था कि "गालियों और अपमानके जरिये या सांसारिक सुखोंकी आशा बँधाकर" ईसाइयतकी श्रेष्ठताका प्रचार नहीं किया जाना चाहिए। . . .

शिकागोकी 'सोसाइटी फॉर द एजूकेशन ऑफ द वीमैन ऑफ इंडिया' की मन्त्रिणी, श्रीमती चार्ल्स हॉवर्डने बम्बईके श्री वीरचन्द आर० गांधीके नाम अपने एक पत्रमें १८९६ में लिखा था: ? "परन्तु मुझे अधिक चिन्ता निर्धन भारतकी है। जब ईसाइयत यहाँ असफल रही तो फिर उसे भारतपर क्यों थोपा जाये?"[1]

१. यहाँ कुछ ही अंश दिये गये हैं।

यह सब एक अवकाशप्राप्त डिप्टी कलेक्टरकी कलमसे लिखा गया है। उल्लिखित साधन-सूत्रोंसे लिए गये इन उद्धरणोंको देखकर मिशनरियोंको क्रोधित होनेके बजाय अपना हृदय टटोलना चाहिए। मेरे पास इसी तरहके अनेक लेख मौजूद हैं, जिनमें से कुछ भारतीय ईसाइयोंके लिखे हुए भी हैं। उनको प्रकाशित न करनेके लिए उन पत्र-लेखकोंसे मैं क्षमा चाहता हूँ। इस बहसको और लम्बा नहीं खिंचने देना चाहिए। पत्र-लेखकोंने उत्साहमें आकर सतर्कता नहीं बरती और अपनी स्मृतिपर जरूरतसे कहीं अधिक भरोसा करके एक ऐसी बहस[1] खड़ी कर दी है जो मेरा बस चलता तो मैं शुरू ही न होने देता।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ४-६-१९३१

३९०. तार: जेम्स मिल्सको

स्वराज्य आश्रम,
बारडोली
४ जून, १९३१

जेम्स मिल्स
सेसिल होटल
शिमला

आपका तार मिला। कृपया तार कर दें कि भारतको स्वाधीनताके अपने अहिंसापूर्ण प्रयत्नमें अमेरिका द्वारा दी जा सकनेवाली सभी प्रकारकी सहायताकी जरूरत है।

गांधी

अंग्रेजी (एस० एन० १७२१३) की फोटो-नकलसे।

१. देखिए "विदेशी मिशनरी", २३-४-१९३१ और "फिर विदेशी मिशनरियोंके बारेमें", ७-५-१९३१ भी।

३९१. तार : जे० एम० सेनगुप्तको

स्वराज्य आश्रम
बारडोली
४ जून, १९३१

सेनगुप्त
एल्गिन रोड
शिमला

तारके[1] लिए धन्यवाद। मेरी राय कि आप सभी मामले बिना शर्त पंच-फैसलेके लिए सौंप दें। चुनावमें अनियमितता पाई जाये तो रद किये जा सकते हैं।

गांधी

अंग्रेजी (एस० एन० १७२१४)की फोटो-नकलसे।

१. तारमें कहा गया था: "... आपको भेजे सुभाषबाबूके तार और उसमें अपनाये रुखको देखते हुए मैं पंच-फैसलेके लिए सहमत हूँ। निवेदन है कि पंच-फैसला समझौतेके स्तरपर न उतरे, वह ब्योरेवार छानबीनके बाद सिद्धान्तके प्रश्नोंपर और तथ्योंपर दिया गया एक निर्णय हो। पंच या पंचगण सिद्धान्तके निम्नलिखित प्रश्नोंपर निर्णय देंगे ऐसी आशा है: क्या जिला कांग्रेस कमेटियोंको बिना किसी बाधाके बड़े पैमानेपर सदस्य बनानेकी सामर्थ्य प्रदान करनेकी दृष्टिसे पहलेकी तरह सदस्यताके फार्म छपवानेका अधिकार रहेगा; क्या जिला कांग्रेस कमेटियोंके अध्यक्ष पदेन चुनाव-अधिकारी नहीं होने चाहिए; और जब अध्यक्ष सुलभ न हों तब क्या बंगाल और सुरमा घाटीसे अ० भा० कां० क० के लिए प्रतिनिधियोंके निर्वाचनपर निर्वाचन नियमावलीका नियम पाँचवाँ, आवश्यक परिवर्तनोंके साथ, लागू नहीं किया जाना चाहिए। क्या बंगाल प्रान्तीय कां० क० की कार्यकारिणीकी सारी राशियोंके आय-व्ययका लेखा प्रस्तुत नहीं करना चाहिए; क्या निगमके कर्मचारियों और ठेकेदारोंको बंगाल प्रान्तीय कां० क० या जिला कां० कमेटियोंकी कार्यकारिणी समितियोंके अधिकारी तथा सदस्य बननेकी अनुमति दी जानी चाहिए; क्या बंगाल प्रान्तीय कां० क० के नियमों तथा उप-नियमोंमें से ऐसी व्यवस्थाएँ निकाल नहीं देनी चाहिए जो एक गुटकी सत्ता और बुराइयोंको स्थायित्व प्रदान कर सकती हों? पंचके यहाँ आनेपर उनके सामने तथ्योंसे सम्बन्धित मामलोंसे उठनेवाले प्रश्न पेश किये जायेंगे, जिनमें मनमाने या गलत तौरपर जिला कां० कमेटियोंको सम्बद्ध या असम्बद्ध करनेका प्रश्न भी सम्मिलित है। सुभाषबाबू और मेरे बीच उपस्थित विवादको व्यक्तिगत मानना भ्रमपूर्ण होगा। झगड़ा तो सिद्धान्तोंको लेकर है। बंगाल कांग्रेसका बहुत बड़ा और दृढ़ बहुमत गुटकी सत्ता और बुराइयोंके विरुद्ध आवाज उठा चुका है। हमें शंका है कि सुभाषबाबू और उनकी पत्रिका द्वारा किये जानेवाले निरन्तर प्रचारके फलस्वरूप बंगालसे बाहर कुछ क्षेत्रोंमें यह मिथ्या धारणा पैदा हो गई है कि बंगाल कांग्रेस अब भी उनके और उनके गुटका समर्थन करती है।... इस प्रकार बत्तीस जिला समितियोंमें से बाईस मेरे साथ हैं। शेष दस समितियोंमें से भी किसीने मेरे दृष्टिकोणको नापसन्द नहीं किया है। मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि कार्यसमिति जैसे ही बंगाल प्रान्तीय कां० क० के वर्तमान चुनावको रोकनेका

३९२. तार : वेंकटेश नारायण तिवारीको

स्वराज्य आश्रम
बारडोली
४ जून, १९३१

वेंकटेश नारायण तिवारी
कीटगंज
इलाहाबाद

आपका तार मिला। स्पष्ट ही तिरेपनवीं पंक्तिमें[1] भूल है। अगले अंकमें 'भूल सुधार' दे रहा हूँ।

गांधी

अंग्रेजी (एस० एन० १७२१५)की माइक्रोफिल्मसे।

३९३. तार : मकबूल हुसैनको

स्वराज्य आश्रम
बारडोली
४ जून, १९३१

हकीम मकबूल हुसैन
मारफत कांग्रेस
कानपुर

आपका तार। मामला[2] पंच-फैसलेको सौंपिए।

गांधी

अंग्रेजी (एस० एन० १७२१६)की माइक्रोफिल्मसे।

आदेश देंगी, हम तुरन्त चुनाव सम्बन्धी अपनी कार्रवाई बन्द कर देंगे। . . . आज बंगालके जीवनके सभी क्षेत्र और सभी सार्वजनिक संस्थाएँ कांग्रेससे प्रभावित हैं। कांग्रेसको इसीलिए हर कीमतपर शुद्ध और सन्देहोंसे ऊपर रखना जरूरी है। पंच-फैसलेको सौंपनेके प्रस्तावकी दूसरे पक्ष द्वारा स्वीकृति और बँगाल प्रान्तीय कां० क० का निर्वाचन रोकनेकी सूचनाके साथ आपके पत्रका इन्तजार है।"

१. देखिए "एक भूल-सुधार", ११-६-१९३१।

२. अनुमानतः कानपुरमें हिन्दू-मुसलमान तनावका मामला। देखिए "तार : मुरारीलालको", १-६-१९३१।

३९४. पत्र : प्रेमाबहनको कंटकको

बारडोली
४ जून, १९३१

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। मैं भी सोमवारको रवाना होनेवाला हूँ। इसलिए मंगलवारको ही हम दोनों बम्बई पहुँचेंगे। लेकिन मैं कुछ जल्दी पहुँचूँगा। मंगलवारको फुरसत हो, तब कुछ देरके लिए मिल जाना। उस समय बातचीत करनेका मौका मिला तो निश्चय कर दूँगा।

तेरा पत्र समाचारोंसे खासा भरा हुआ पत्र था। गंगाबहनमें उमंग और उत्साह तो बहुत है। तू उनके साथ खूब चर्चा करना और उन्हें मदद भी देना। उनका प्रेम अपार है और सेवाकी उत्कट इच्छा है।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० १०२५६) की फोटो-नकल तथा सी० डब्ल्यू० ६७०४ से भी।
सौजन्य : प्रेमाबहन कंटक

३९५. पत्र : वसुमती पण्डितको

४ जून, १९३१

चि० वसुमती,

तुम्हारा पत्र मिला। मैंने भाई नानालालका पत्र ध्यानपूर्वक पढ़ लिया है। यदि इस कामके सिलसिलेमें तुम्हें वीसनगर रहना पड़े तो उसके लिए मेरी हाँ नहीं है। यह काम अटपटा है। नानालाल मुझे मिलना चाहे तो बेशक मिल ले। इस मामलेमें मैं कृष्णदासका विश्वास करूँगा। कुछ भी निर्णय करनेसे पहले दूधाभाई, मथुरादास और नारणदासकी राय जाननी चाहिए। आश्रमके बाहर कामकी कोई जगह पसन्द करनी हो, तो तुम्हें नडियाद या बोचासण पसन्द करना चाहिए। मेरा मन तो बोचासणकी तरफ झुकता है। वहाँका काम जमा हुआ है। किन्तु यदि नड़ियादकी उस शालाके लिए कुछ करना धर्म हो, तो फिर उसका पालन करना ही चाहिए। तुमने किसी भी तरहकी आशा बँधाई हो तो उसे पूरा करना चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (एस० एन० ९३२६) की फोटो-नकल तथा सी० डब्ल्यू० ५७१ से भी।
सौजन्य : वसुमती पण्डित

३९६. पत्र : गंगाबहन वैद्यको

बारडोली
४ जून, १९३१

चि० गंगाबहन,

तुम्हारा पत्र मिला। तुम्हारे लिए तो आश्रम ही ठीक है। तुम लड़कियोंको नहीं छोड़ सकतीं। नई आना चाहें तो उन्हें भी ले लेना चाहिए। इसलिए तुम आश्रममें ही ठीक काम कर सकोगी।

वसुमती नड़ियादमें रहना चाहे, तो रहे।

सान्ताक्रूजकी खादी बहुत अच्छी है।

तुम्हें कब जाना है यह लिखना। मनमें जो विचार उठें, उन्हें लिखते रहना।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]

बापुना पत्रो : गं० स्व० गंगाबहनने; तथा सी० डब्ल्यू० ८७७६ से भी।
सौजन्य : गंगाबहन वैद्य

३९७. पत्र : मूलचन्द अग्रवालको

बारडोली
४ जून, १९३१

भाई मूलचंदजी,

आपका पत्र मिला —

(१) गाँवकी सफाई करना राजधर्म है।

(२) राज न करे तो ग्रामवासी करे।

(३) म्युनिसीपालिटीका अर्थ ग्रामसेवक समाज। ऐसा समाज ग्रामवासी स्वयं बना सकते हैं।

(४) स्वयंसेवक काम करे तो सफाई मुफ्त होने लगे।

(५) छोटे देहातमें दो चार परोपकारी नवजवान भी सफाईका काम कर सकते हैं।

मोहनदास

जी० एन० ७५८ की फोटो-नकलसे।

३९८. पत्र : घनश्यामदास बिड़लाको

बारडोली
४ जून, १९३१

भाई घनश्यादास,

यह नकल सर डारसी लिंडसेके खतकी है। उसका उत्तर आंकड़ोंके साथ भेजो। मैंने तो भेजा है।[1] परंतु उससे अधिक ज्ञानमय उत्तरकी आवश्यकता है।

बंगालके झगड़ेके बारेमें तार मिला। मैंने सेनगुप्ता[2]को तार दिया है पंच कबूल करलें बगैर शरत।

बापू

[पुनश्च:]

मैं ९–११ तक मुंबई हुंगा।

सी० डब्ल्यू० ७८८७से।
सौजन्य : घनश्यामदास बिड़ला

३९९. तार : घनश्यामदास बिड़लाको

स्वराज्य आश्रम,
बारडोली
५ जून, १९३१

घनश्यामदास बिड़ला
मारफत 'लकी'
कलकत्ता

थोड़ी भी गुंजाइश हो तो बंगाल-विवाद स्थानीय पंच-फैसलेके जरिए तय करनेकी कोशिश कीजिए।

गांधी

अंग्रेजी (एस० एन० १७२२८)की फोटो-नकलसे।

१. देखिए "पत्र : सर डार्सी लिंडसेको", ३-६-१९३१।
२. देखिए "तार : जे० एम० सेनगुप्तको", १-६-१९३१।

४००. तार : अध्यक्ष, हिन्दी सम्मेलन, मदुराको

स्वराज्य आश्रम,
बारडोली
५ जून, १९३१

अध्यक्ष
हिन्दी सम्मेलन
मदुरा

आशा है आपके प्रयत्नोंके फलस्वरूप अगले कांग्रेस अधिवेशनमें सभी प्रतिनिधि हिन्दी बोलेंगे समझेंगे।[1]

गांधी

अंग्रेजी (एस० एन० १७२३२)की माइक्रोफिल्मसे।

४०१. तार : कृष्णदासको

स्वराज्य आश्रम
बारडोली
५ जून, १९३१

कृष्णदास
शक्ति आश्रम
राजपुर (देहरादून)

आपका तार। आपको यहाँ आने या चिन्तित होनेकी जरूरत नहीं। मामला तय करनेकी पूरी कोशिश कर रहा हूँ।[2]

बापू

अंग्रेजी (एस० एन० १७२२९)की माइक्रोफिल्मसे।

१. यह तार ७ जूनको सम्मेलनमें पढ़कर सुनाया गया था।
२. अनुमानतः बंगाल कांग्रेसमें चलनेवाला विवाद; देखिए "पत्र : कृष्णदासको", ३-६-१९३१।

४०२. तार : सदागोपाचारीको

स्वराज्य आश्रम
बारडोली
५ जून १९३१

सदागोपाचारी
अध्यक्ष जिला कांग्रेस
तिरुतनी

आपका तार। चक्रवर्ती राजगोपालाचारीसे मिलिए। विवरण भेजिए।

अंग्रेजी (एस० एन० १७२३०) की माइक्रोफिल्मसे।

४०३. तार : फूलचन्द क० शाहको

स्वराज्य आश्रम
बारडोली
५ जून, १९३१

फूलचन्द शाह
राष्ट्रीय शाला
वढवाण नगर

आपका पत्र। आप रविवारको या बम्बईसे लौटने पर आ सकते हैं।

गांधी

अंग्रेजी (एस० एन० १७२३१) की माइक्रोफिल्मसे।

४०४. पत्र : एच० डब्ल्यू० एमर्सनको

स्थायी पता, साबरमती
५ जून, १९३१

प्रिय श्री एमर्सन,

शराबका घपला काफी परेशानी पैदा कर रहा है। कालीकटसे आये एक पत्रके निम्नलिखित अंशों[1]से आपको मालूम हो जायेगा कि कांग्रेस-पक्षका कहना क्या है,

१. पत्रमें कहा गया था कि "...धरनेके कारण दूकानोंपर शराब न बिक पानेसे उसे पुलिस और चुंगी अधिकारियोंकी मददसे...फेरीवालों या उनके दोस्तोंके घरोंपर भेज दिया जाता है, जहाँसे उसकी नियमित बिक्री चलती है।"

अहमदाबादके धरनेके बारेमें तथ्य आपको पहले ही भेज चुका हूँ। इस मामलेको अन्तिम रूपसे तय करनेमें अब और अधिक देर करना ठीक नहीं होगा।

हृदयसे आपका,

संलग्न : १

श्री एच० डब्ल्यू० एमर्सन
शिमला

[अंग्रेजीसे]

अ० भा० कां० क०, फाइल संख्या १६–बी, १९३१।
सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

४०५. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

५ जून, १९३१

प्रिय जवाहरलाल,

आशा है कि लंकामें तुमने जो स्वास्थ्य-लाभ किया था, उसे दक्षिण भारतमें गँवा नहीं दिया है। यदि तुम चुस्त-दुरुस्त होओ और सफर नापसन्द न करो तो इतवारको दिन-भरके लिए बारडोली आ जाओ, जिससे हम मंगलवारको कार्रवाई शुरू करनेसे पहले शान्तिके साथ बातचीत कर सकें। आशा है कि विश्रामसे कमला और इन्दुको लाभ पहुँचा होगा।

तुम्हारा,
बापू

पण्डित जवाहरलाल नेहरू
मारफत — श्रीयुत जालभाई नौरोजी
नैपियन सी रोड
बम्बई

[अंग्रेजीसे]

गांधी-नेहरू कागजात, १९३१।
सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

४०६. पत्र : जे० सी० कुमारप्पाको

स्थायी पता, साबरमती
५ जून, १९३१

प्रिय कुमारप्पा,

सह-पत्र देख लो और यदि तुम्हें सम्बन्धित साहित्य और अवकाश मिल जाये तो कृपया उसका अपना उत्तर भी मुझे भेज दो।

बापू

संलग्न : १

श्री जे० सी० कुमारप्पा
६५, एस्पलेनेड रोड
बम्बई

अंग्रेजी (जी० एन० १००९५) की फोटो-नकलसे।

४०७. पत्र : पी० ए० वाडियाको

स्थायी पता, साबरमती
५ जून, १९३१

प्रिय प्रो० वाडिया,

मैं एक अंग्रेज मित्रके पत्रकी प्रति संलग्न कर रहा हूँ। मैंने उनको उत्तर दे दिया है, लेकिन मैं जानता हूँ कि मेरा उत्तर उतना वजन नहीं रखता जितना कि एक मँजे-मँजाये अर्थशास्त्रीके उत्तरका हो सकता है। इसलिए क्या आप तथ्यों और आँकड़ों सहित अपना सुविचारित उत्तर मुझे भेजनेकी कृपा करेंगे?

हृदयसे आपका,

संलग्न : १

प्रो० पी० ए० वाडिया
विल्सन कालेज
बम्बई

अंग्रेजी (एस० एन० १७२३३) की माइक्रोफिल्मसे।

४०८. पत्र : एम्मा हार्करको

स्थायी पता, साबरमती
५ जून, १९३१

प्रिय मित्र,

आपका पत्र मिला। मैं विदेशी वस्त्रोंका बहिष्कार कैसे हटा सकता हूँ और फिर क्यों? बहिष्कारका अर्थ क्या है? वह तो समझाने और आग्रह करनेका एक साधन-भर है। लोग यदि विदेशी वस्त्र पहनना चाहें तो उनको रोकनेवाली चीज तो कोई है नहीं। पर यदि देशमें राष्ट्रीय सरकार होती तो निश्चय ही विदेशी वस्त्रोंके प्रवेश पर प्रतिबन्ध लगाया जाता, जैसा कि ऐलिजाबेथके कालमें इंग्लैंडमें किया गया था। यह सच है कि संक्रमणकालमें लंकाशायरके मजदूर कष्टमें पड़ जायेंगे। लेकिन क्या यही सोचकर भारतके करोड़ों लोगोंको भूखों मरना होगा? लंकाशायरने भारतके कुटीर उद्योगोंका गला घोंटकर एक अन्याय किया। अब यदि उस अन्यायका निराकरण करनेकी कोशिशमें भारत अपने कर्त्तव्यका निर्वाह करते हुए विदेशी वस्त्रोंका उपयोग करना बन्द कर दे, तो लंकाशायरको चाहिए कि अपने लिए अपेक्षाकृत कम हानिकारक कोई उद्योग तलाश ले। हानि किसे हो रही है और अन्याय किसपर? मैं चाहता हूँ कि आप इस समस्याका विशद विवेचन करें; तब आप देखेंगी कि विदेशी वस्त्रोंपर रोक लगाना भारतके गाँवोंमें बसनेवाले करोड़ों लोगोंके जीवनके लिए अत्यावश्यक है।

स्पष्ट है कि आपने अमेरिकामें मद्य-निषेधकी समस्याका अध्ययन नहीं किया है। मैंने मद्य-निषेधके पक्ष और विपक्ष दोनोंके प्रतिपादकोंसे बात की है। यह तो सच है कि अमेरिकामें मद्य-निषेधके कारण कई प्रकारके "फैशनेबल" अपराध होने लगे हैं, लेकिन यह भी तो सच है कि मद्य-निषेधने हजारों-लाखों अमेरिकी मजदूरों को बर्बादीसे बचा लिया है और वे अब इस लोभकारी आदतसे छुटकारा पाकर अधिक संयत परिवारोंका पालन-पोषण कर रहे हैं। पर अमेरिकाकी तुलनामें, भारतमें परिस्थिति कहीं अच्छी है। अमेरिकामें शराब पीना 'फैशन' बन चुका था, फिर भी अमेरिकाके महान व्यक्तियोंने उसके विरुद्ध आन्दोलन किया। मद्य-निषेधका संकल्प करके अमेरिकाने एक कितना महान कार्य किया है, इसका सही-सही अनुमान हम अभी नहीं लगा सकते। भारतमें शराबखोरी एक बुरी लत मानी जाती है और वह भी एक वर्ग-विशेषके लोगोंमें ही पाई जाती है। इसलिए इस देशमें मद्य-निषेध पूर्णतः मंगलकारक ही होगा।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

श्रीमती एम्मा हार्कर
६, बैलग्रेव टेरेस
कराची

अंग्रेजी (एस० एन० १७२३५)की फोटो-नकलसे।

४११. पत्र : प्रभावतीको

५ जून, १९३१

चि० प्रभावती,

तुम्हारा पत्र मिल गया है। इतना बीमार होनेपर भी तुम्हें वहाँ रहना ही पड़ रहा है यह असह्य है। तुम्हें हिम्मत बाँधकर कोई उपाय ढूंढ़ना चाहिए। मैंने तुम्हें लम्बा ब्यौरेवार पत्र लिखा है। वह मिला होगा। इसलिए इस पत्रमें ज्यादा नहीं लिखता। बम्बईमें ९ से ११ तारीखतक ही रहूँगा। वहाँ पता है: लैबर्नम रोड, बम्बई। सिर्फ तीन दिन ही रहना है।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ३४०१)की फोटो-नकलसे।

४१२. पत्र : लालजी परमारको

५ जून, १९३१

चि० लालजी,

क्या मामासाहब तुमसे नाराज हैं? उन्हें पत्र लिखते हो? क्या तुम अपनी सगाईकी कुछ तजवीज कर रहे हो? तुम्हें शादी करनेकी जल्दी है क्या? मनमें जो भी बात हो मुझे लिखना।

वहाँ खूब काम कर रहे होगे।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ३२९२)की फोटो-नकलसे।

४१३. पत्र : नाजुकलाल न० चौकसीको

५ जून, १९३१

चि० नाजुकलाल,

तुम्हारा पत्र मिला। मोतीका ऑपरेशन कराना ही हो तो जल्दी करा लो। पुस्तकालयमें जाकर ठीक ही किया है। वेतन कितना है?

चम्पारनके विषयका लेख देख लिया है। वह देशी तो मानी जायेगी। हमारी स्थिति इतनी दयनीय है कि जो इस प्रकारकी चीनी छोड़ना चाहता है, उसे चीनी बिलकुल ही छोड़ देनी पड़ेगी।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (एस० एन० १२१४८) की फोटो-नकलसे।

४१४. पत्र : नारायण मोरेश्वर खरेको

५ जून, १९३१

चि० पण्डितजी,

भंगी सम्मेलनके बारेमें इतने लम्बे चौड़े स्पष्टीकरणकी जरूरत ही न थी। रामभाऊ अपने कार्यक्रमकी व्यवस्था करने दे तो कर देना।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० २१७) की फोटो-नकलसे।
सौजन्य : लक्ष्मीबहन खरे

४१५. पत्र : नारणदास गांधीको

बारडोली
५ जून, १९३१

चि० नारणदास,

तुम्हारा पत्र मिला। तुम राजकोट हो आये, यह भी अच्छा ही हुआ।

बड़े-बूढ़ोंको लिखकर भी समझाते रहोगे तो शायद वे खादीके बारेमें तुम्हारी सलाह मान लेंगे।

मुकुन्दरायका पत्र बहुत दिन पहले आया था; तुम्हें भेज रहा हूँ। इससे महालक्ष्मीके बारेमें ज्यादा अच्छी तरह समझोगे। मुझे नहीं मालूम था कि गौरीशंकर उसका सम्बन्धी है। उसे लिया जा सके तो मुझे अच्छा लगेगा। छगनलाल भी उसके सम्बन्धियोंमें से हैं।

वह दूसरी बहन भी जैसी तुम्हें लगी है, वैसी ही हो तो उसे आश्रममें लिया जा सकता है। उसके पतिसे परिचय करना चाहिए। इतना तीव्र वैराग्य था तो शादी क्यों की? आयु कितनी है? कितना पढ़ी है? किस जातिकी है? पति, ससुर क्या करते हैं? पिता क्या करता है? सिद्धान्त रूपसे तो हमें ऐसी स्त्रियोंको लेना चाहिए।

रतुभाई बम्बई आया होगा तो मिलेगा। लीलावतीके बारेमें डाक्टर असन्तुष्ट हैं, यह तो मैं जब रंगून गया था तभी समझ गया था। किन्तु रतुभाई बम्बईमें मिलेगा तब उससे बात करूँगा।

मदनमोहन जमनालालजीके पास रहे यह ठीक लगता है। हरिभाई यहाँ थे, उनसे भी बात हो गई है। मदनमोहन जमनालालजीके पास रहे तो उसे कुछ भेजनेकी जरूरत नही रहती।

यदि अमतुलबहन आश्रममें ही रहकर मरना भी चाहे तो हमें उसे रहने देना चाहिए। उसे बाहरसे पैसा भेजा जाये और वह चाहे तो उसे ले ले। यदि बाहरसे उसे पैसा न मिले, तो हमें उसका खर्च उठा लेना चाहिए। मुझे लगता है कि यदि वह शारीरिक श्रम कम करे तो उसका स्वास्थ्य अच्छा हो जायेगा। बाके नामसे जो हुंडी आई थी, वह तुम्हें मिल गई होगी।

जो आश्रमवासी जिस जगह जाकर बसता है, उसका खर्च वहींसे निकलना चाहिए। किन्तु इसके सम्बन्धमें छगनलाल किसी व्यक्तिके लिए और कुछ करना चाहे तो वैसा ही कर लेना। मैंने छगनलालको भी यही लिखा है।

द्वारकानाथके बारेमें मुझे हथियार रखनेका जो शक हुआ है, जबतक वह दूर नहीं हो जाता तबतक मैंने उसे गुजरातसे बाहर रहनेकी सलाह दी है। वह कुछ दिनोंमें चला जायेगा। उसके बिलका प्रश्न उठता है। छगनलालको द्वारकानाथ निर्दोष

लगता है। उसे लिखा है कि यदि उसकी राय बिल अदा कर देनेकी हो तो अदा कर दे। अब वह तुम्हें भी अदायगीके लिए लिखे तो अदा कर देना।

मैं सोमवारको यहाँसे रवाना होऊँगा और ११ तारीखको बम्बईसे निकलकर १२ तारीखको बारडोली वापस पहुँच जाऊँगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती एम० एम० यू०–१ से।

४१६. पत्र : घनश्यामदास बिड़लाको

५ जून, १९३१

भाई घनश्यामदास,

इस खत पढीयो।[1] मेरा कुछ ख्याल रहा है कि मैं इस बारेमें आपको लिख चुका हुं। कैसे भी हो, यदि रघुमल ट्रस्टमें से इस संस्थाको मदद मिल सके तो देनेके लायक है ऐसा मैंने माना है।

बंगालके झगड़ेके बारेमें पंचके मार्फत समझौता हो सके तो करवानेका तार आज दीया है। वरकिंग कमिटीके पास यह मामला नहि आना चाहिये।

मैं मुंबईमें ९-११ तक हुंगा।

मोहनदास

सी० डब्ल्यु० ७८८८से।
सौजन्य : घनश्यामदास बिड़ला

४१७. तार : जे० एम० सेनगुप्तको

स्वराज्य आश्रम
बारडोली
६ जून, १९३१

सेनगुप्त
एलगिन रोड
कलकत्ता

आपका तार। आपका त्यागपत्र देना या शामिल न होना दोनों बातें गलत होंगी। मैंने आपके आचरणका न अनुमोदन किया न विरोध,

१. पत्र पिछड़ी हुई जातियोंके कल्याण-संघ, दिल्लीके रामानन्द संन्यासीने लिखा था। इसमें रघुमल ट्रस्टकी बैठक १६ या १७ जूनको होनेकी सूचना थी।

सिर्फ इसीलिए कि मुझे तथ्योंकी जानकारी नहीं है। अब तक नहीं जानता कि पृथक चुनावोंका अर्थ क्या है। धोखाधड़ी जहाँ भी साबित हो उसपर पर्दा नहीं डालना चाहता। यही सलाह थी कि कार्य-समितिको निर्णय देने पर बाध्य करनेके बजाय स्थानीय पंच ही सभी मसले तय कर दें और यह बंगालके नाम पर बट्टा न लगने देने और जल्द फैसला करनेकी खातिर ही। इसमें सरदार सहमत हैं।

गांधी

अंग्रेजी (एस० एन० १७२४३)की फोटो-नकलसे।

४१८. पत्र : आर० एम० मैक्सवैलको

स्थायी पता, साबरमती
६ जून, १९३१

प्रिय श्री मैक्सवेल,

आपके १३ मईके पत्र[1]की चर्चा एक बार फिर कर रहा हूँ। शिमलामें आपका पत्र मिलनेके लगभग साथ-साथ मुझे यह समाचार भी मिल गया था कि श्री राजवाड़े रिहा किये जा चुके हैं; हालाँकि उक्त पत्रसे ऐसी कोई आशा नहीं बँधती थी। श्री एमर्सनने मुझे यह समाचार तार द्वारा दिया था, जिसका मैंने बड़ा आभार माना था। अब श्री एच० डी० राजाके मामलेके कागजात भी मिल चुके हैं। उनमें मुझे हिंसाके लिए कोई उकसावा देनेकी बात तो दिखी नहीं। भाषणोंका पाठ तो मेरे पास नहीं है; मुझे बतलाया गया है कि मुकदमेके रिकार्डमें भी भाषणोंका पाठ मौजूद नहीं है। फिर भी सरकारी गवाहोंके बयानों और न्यायाधीश द्वारा दिये गये निर्णयमें उन भाषणोंके सर्वाधिक संगत अंशोंकी झाँकी मिल जाती है, जो अत्यन्त ही अशिष्ट और राजद्रोहपूर्ण अवश्य हैं, पर हिंसाको उकसानेके प्रयत्नकी तो कोई बू उनमें नहीं मिलती। इसके विपरीत न्यायाधीशने स्वयं ही अभियुक्त द्वारा किये जानेवाले अहिंसाके प्रचारका उल्लेख किया है, परन्तु उसे कोरी मुँहकी बात कहकर टाल दिया है। मेरी समझमें नही आया कि जब हिंसाके लिए उकसानेका कोई प्रत्यक्ष प्रमाण मौजूद नही है और अहिंसाके लिए प्रत्यक्ष रूपसे किये गये आग्रहका प्रमाण मौजूद है, तब कैसे कोई न्यायाधीश अहिंसाके प्रचारको केवल एक ऊपरी बात करार दे सकता है। पर इस मामलेमें मैंने अपने ही अकेले मतको काफी नहीं मान लिया है। मैंने यह मामला अपने तीन वकील मित्रोंके सामने भी रखा था। उनमें से एक मित्रने अपनी राय लिखित रूपमें देनेकी कृपा की है, उसकी प्रति मैं संलग्न कर रहा हूँ। महामहिमसे मेरा अनुरोध है कि ऐसी परिस्थितियोंमें वे अपने निर्णयपर फिरसे विचार करें। मैं

१. देखिए परिशिष्ट ९।

बतलाना चाहता हूँ कि समझौतेकी धारा १३के अनुसार तो सरकार इस बातके लिए बाध्य है कि वह असहयोग आन्दोलनके उन सभी बन्दियोंको रिहा कर दे, जिनपर सिवा कानूनी हिंसाके और कोई हिंसा कार्य करने या हिंसाके कामके लिए उत्तेजित करनेका अपराध सिद्ध न होता हो। मै यह भी कहता हूँ कि जब साक्ष्यके आधारपर उत्तेजना फैलानेका कार्य स्पष्टतः सिद्ध नहीं होता, तब ऐसे किसी कार्यका अनुमान करनेका सरकारको अधिकार नही है।

और बारडोली ताल्लुकाके रतनजी दयारामका मामला भी है। मैंने अब इस मुकदमेका फैसला और उसके सबूत देख लिये हैं। समझौतेकी धारा १३में हिंसाकी बात की गई है, वह हिंसा निश्चय ही उन्होंने नहीं की है। और यह कहना भी सही नही है कि अभियुक्तने अपने बटाईदारकी फसल जलाई थी। अभियुक्तने अपनी ही फसलमें आग लगा दी थी और उस फसलमें वादी, देवलिया जागला साझीदार था। यदि वादीको कोई नुकसान पहुँचा था और यदि वह चाहता था तो अभियुक्तपर दीवानी अदालतमें दावा कर सकता था। ऐसा वह अब भी कर सकता है। लेकिन जब सबूतोंसे और खुद न्यायाधीशके फैसलेसे प्रकट है और सरकारने भी स्वीकार किया है कि फसलको बेचकर लगान वसूली करनेसे सरकारी अधिकारियोंको रोकने के लिए ही उसने फसल जलाई थी, तब साझीदारको नुकसान पहुँचानेकी गरजसे फसल जलानेका कोई सवाल ही नही उठता। और सरकारने जो कार्रवाई की है उसमें भी एक अनियमितता है, जिसे मैं बतलाना चाहता हूँ। सरकारने फसलके जाने-माने साझीदार रतनजी दयारामको तो जेलमें रख छोड़ा है, पर उसके साथी अभियुक्त रणछोड़को रिहा कर दिया है, जिसका फसलमें कोई हिस्सा नही है। इसलिए मेरा यह कथन है कि समझौतेकी शर्तोंके अनुसार रतनजी दयारामको भी उसी आधारपर रिहा कर दिया जाये जिसपर श्री एच० डी० राजाको रिहा किया गया है।

गत ३० मईके आपके दूसरे पत्रके सिलसिलेमें मैं यही कहूँगा कि महामहिम द्वारा अपनाये गये रुखसे मेरे मनको गहरी पीड़ा पहुँची है। प्रेस वापस करनेसे इन्कार करनेके लिए जो तर्क दिये गये हैं, वे मुझे बड़े ही विचित्र लगे हैं। यह तो वापस देनेकी बात है, वापस लेनेकी नही। धारा १६के अनुसार वापस देनेकी जिम्मेदारी सरकारपर रखी गई है; जिसकी सम्पत्ति ली गई है उसपर यह जिम्मेदारी नही रखी गई है कि वह खुद जाकर उसे वापस ले। आपके पत्रके तीसरे अनुच्छेदमें पेश किये गये तर्क तो और भी पीड़ादायी हैं। अध्यादेशका जो अर्थ लगानेकी कोशिश की गई है, उसका तो मैंने कभी अनुमानतक नहीं किया था। आपकी व्याख्या पर तो मैं कोई आपत्ति नहीं कर सकता, फिर भी शान्ति स्थापनाके उद्देश्यको लेकर तैयार किये गये एक दस्तावेजकी व्याख्या इतनी क्षुब्ध करनेवाली की जाये, मैं इस बातपर आपत्ति अवश्य कर सकता हूँ। सरकार तो अपने अधिकारियों द्वारा मनमाने ढंगसे किये गये सम्पत्तिके विनाशको उचित ठहराना चाहती है। परन्तु मैंने कांग्रेसके एक प्रतिनिधिके रूपमें मेरे और सरकारके बीच पड़े विवादास्पद प्रश्नोंके क्षेत्रको जहाँतक हो सके अधिक-से-अधिक सीमित करनेके लिए ही मोटरकारों और

बाइसिकिलोंके मालिकोंको सलाह दी है कि वे यदि चाहें तो उनको स्वयं हटा लें। पर जहाँतक प्रेसकी बात है, मुझे खेद है कि समझौतेकी शर्तोंके समुचित पालनपर मुझे आग्रह करना ही पड़ेगा। यदि सरकारको मेरे लगाये अर्थपर सचमुच कोई आपत्ति हो, तो मैं इस प्रश्नको बम्बई उच्च न्यायालयके मुख्य न्यायाधीश या किसी भी अन्य निष्पक्ष अधिकारीके सामने निर्णयके लिए पेश करनेको बिल्कुल तैयार हूँ।

हृदयसे आपका,

संलग्न: १

श्री आर० एम० मैक्सवेल
महामहिम गवर्नर, बम्बईके निजी सचिव
महाबलेश्वर

[अंग्रेजीसे]

अ० भा० कां० क०, फाइल संख्या ४, १९३१, खण्ड १, पृष्ठ ७-९।
सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

४१९. पत्र: दुनीचन्दको[1]

स्थायी पता, साबरमती
६ जून, १९३१

प्रिय लाला दुनीचन्द,

आपके पत्रके लिए धन्यवाद। सभी मुकदमोंके बारेमें मै आपकी रायका इन्तजार करूँगा।

मजिस्ट्रेटने सभा तितर-बितर क्यों कर दी थी? तितर-बितर करनेका प्रकट कारण क्या बतलाया गया था और उसके लिए कौन-सा तरीका अपनाया गया था?

सरकार जैसे ही लुधियाना काण्डके बारेमें अपनी राय प्रकाशित करे, आप मुझे तुरन्त लिख दीजिएगा।

हृदयसे आपका,

लाला दुनीचन्द
एडवोकेट
अम्बाला

[अंग्रेजीसे]

अ० भा० कां० क०, फाइल संख्या १६-बी, १९३१ खण्ड १, पृष्ठ ७९
सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

१. देखिए "पत्र: एच० डब्ल्यू० एमर्सनको", १९-५-१९३१।

४२०. पत्र : के० वी० वेलको

स्थायी पता, साबरमती
६ जून, १९३१

प्रिय मित्र,

गत ३० अप्रैलके आपके पत्रके लिए धन्यवाद। मेरा सन्देश इस प्रकार है:

जापानको भारतके अहिंसात्मक आन्दोलनका अध्ययन करना और उसकी सहायता करनी चाहिए।

हृदयसे आपका,

श्री के० वी० वेल
पो० बा० ९
अकासाका, टोकियो (जापान)

अंग्रेजी (एस० एन० १७२३८)की फोटो-नकलसे।

४२१. पत्र : जुगलकिशोरको

स्थायी पता, साबरमती
६ जून, १९३१

प्रिय जुगलकिशोर,

आपका पत्र मिल गया। अच्छा यह रहा कि आचार्य कृपलानी इस समय बारडोलीमें हैं। मैंने उनसे मशविरा कर लिया है; यदि आप स्वयं भी सुझावका अनुमोदन करें तो वे इसके लिए तैयार हैं कि मैं प्रस्तावकी शर्तोंके अनुसार उनको नामजद कर दूँ। उन्होंने दूसरा नाम भी सुझाया है और मैंने उसे स्वीकार कर लिया है। दूसरा नाम काशी विद्यापीठके आचार्य नरेन्द्रदेवका है। ये दोनों ही तपे-तपाये सैनिक हैं और इनको इन मामलोंका यथेष्ट अनुभव है। इन दोनोंके रहते, अब यह आवश्यक नहीं रह गया कि मैं विशेषज्ञोंके नामोंको भी तुरन्त ही पेश कर दूँ।

प्रस्तावको सुपाठ्य बनानेकी दृष्टिसे मेरा सुझाव है कि उसमें निम्नलिखित परिवर्तन कर दिया जाये: "आत्मनिर्भरताके आधारपर" के स्थानपर "संस्थाको

आत्मनिर्भर बनानेके लिए" शब्द रख दिये जायें। और "संग्रह"के बाद "तथा वितरणके हेतु" शब्द जोड़ दिये जायें।

हृदयसे आपका,

आचार्य जुगलकिशोर
प्रेम महाविद्यालय
वृन्दावन

अंग्रेजी (एस० एन० १७२३९)की फोटो-नकलसे।

४२२. पत्र : उर्मिला देवीको

स्थायी पता, साबरमती
६ जून, १९३१

प्रिय बहन,

आपका तार मिल गया था और अब पत्र भी। निश्चय ही बंगालकी स्थिति अन्यन्त निन्दनीय है, पर मेरी समझमें नही आता कि यहाँसे क्या किया जा सकता है। मैंने सोचा था कि पंच-फैसला ही तनाव दूर किये जा सकनेका एक उपाय है। इसके सिवा कार्य-समिति या स्वयं मैं भी और क्या कर सकते थे? सुभाष बाबू यहाँ आये थे और उन्होंने श्री सेनगुप्तके विरुद्ध एक बड़ा लम्बा आरोप-पत्र सरदार वल्लभभाईको दे दिया था। वल्लभभाईने उसे इस आशासे फाइलमें सहेज लिया है कि वे दोनों पक्षोंकी उपस्थितिमे उसकी जाँच-पड़ताल कर सकेंगे। क्या आप इस कठिनाईसे निकलनेका कोई दूसरा रास्ता सुझा सकती हैं?

श्रीमती उर्मिला देवी
४०/१ रूपचन्द मुखर्जी लेन
भवानीपुर, कलकत्ता

अंग्रेजी (एस० एन० १७२४०)की फोटो-नकलसे।

४२३. पत्र : नीलकण्ठ दासको

स्थायी पता, साबरमती
६ जून, १९३१

प्रिय नीलकण्ठ बाबू,

आपका पत्र मिला। मैं परिस्थिति बखूबी समझ रहा हूँ, लेकिन आपने जिसका जिक्र किया है, ऐसे मामलोंमें अभी इस समय अधिक कुछ नहीं किया जा सकता। इतना ही कह सकता हूँ कि यदि इन उत्तेजनाओंके बावजूद शान्तिपूर्ण ढंगसे धरना जारी न रखा जा सकता हो, तो उसे कुछ समयके लिए स्थगित कर देना चाहिए। लेकिन तब लोगोंके पास घर-घर जाकर जोरदार प्रचार-कार्य शुरू कर दिया जाना चाहिए।

चौ० नीलकण्ठ दास
भुवनेश्वर

अंग्रेजी (एस० एन० १७२४१) की माइक्रोफिल्मसे।

४२४. पत्र : सतीशचन्द्र दासगुप्तको

स्थायी पता, साबरमती
६ जून, १९३१

प्रिय सतीश बाबू,

आपका पत्र और 'अमृत बाजार पत्रिका' की कतरन मिली। यदि मामलेका निर्णय कार्य-समितिको ही करना है तो उसे इसके लिए काफी जटिल कार्यविधि अपनानी होगी। उसे टालना हो तो उसकी जगह पंच-फैसलेका सुझाव देनेके सिवा और क्या किया जा सकता है? सुभाष बाबू यहाँ आये थे और उन्होंने सेनगुप्तके विरुद्ध शिकायतोंकी एक लम्बी सूची सरदार वल्लभभाईको दी थी। वल्लभभाई उस सिलसिलेमें कुछ भी नहीं कर सकते थे; लेकिन उन्होंने कह दिया था कि कार्य-समितिके सामने औपचारिक रूपसे मामला पेश होनेपर वे शिकायतोंके बारेमें कार्रवाई करेंगे। पर जब मेरे और उनके पास बंगालसे आये तारोंका ताँता बँध गया तो मैंने सुझाया कि मामला स्थानीय रूपसे पंच-फैसलेके लिए सौंप दिया जाये। अब या तो ऐसा पंच-फैसला कराया जाये या फिर कार्य-समितिमें औपचारिक रूपसे मामला पेश होनेपर वह कोई निर्णय दे—इसके अलावा क्या और कोई रास्ता है?

यदि आपका स्वास्थ्य काफी ठीक हो तो आप बम्बई आकर 'अखिल भारतीय चरखा संघ' की बैठकमें पूरी स्थितिपर स्वयं चर्चा कर लें। मैं डॉ० रायको अहमदा-

बाद आनेकी सलाह नहीं दे सकता, विशेषकर जब कई मिलमालिक अहमदाबादमें नहीं हैं।

आप यदि १८२८के 'समाचार' की फाइल न देख पाये हों तो मैं समझता हूँ, आपको देख ही लेनी चाहिए और बुनकरोंके पत्रके[1] तथ्योंकी सचाईकी जाँच स्वयं ही कर लेनी चाहिए।

अंग्रेजी (एस० एन० १७२४२) की फोटो-नकलसे।

४२५. पत्र : नानाभाई मशरूवालाको

बारडोली
६ जून, १९३१

भाई नानाभाई,

तुम्हारा पत्र मिला। मैं तो कैसे आ सकता हूँ? बा की हालत अब ऐसी नहीं कि वह घूम-फिर सके। उसके मुँहपर बीच-बीचमें सूजन आ जाती है। स्वामी और देवदासको जरूर भेजा जा सकता है।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ६६८१) की फोटो-नकल तथा सी० डब्ल्यू० ४३२६ से भी।
सौजन्य : कनुभाई मशरूवाला

४२६. प्रति ग्राम एक स्वयंसेवक?

सात लाख गाँवोंमें पहुँचनेके लिए कितने कार्यकर्त्ता आवश्यक हैं? यह प्रश्न विचारने योग्य है। ब्रिटिश सरकारका झंडा हरएक गाँवमें फहर रहा है अर्थात् हरएक गाँव उसके सिक्केका उपयोग करता है और हरएक गाँव उस सिक्केके हिसाबसे लगान अदा करता है। परन्तु कांग्रेस हरएक गाँवमें नहीं पहुँच पाई है। प्रत्येक गाँवमें कांग्रेस का नाम भी नहीं पहुँचा है तो फिर उसके सन्देशके बारेमें तो कहना ही क्या? खादी द्वारा कांग्रेस हरएक गाँवमें पहुँच सकती है, परन्तु खादीमें उतनी दिलचस्पी अभी हममें पैदा नहीं हुई है।

इस प्रकार यद्यपि हरएक गाँवमें सरकारकी दुहाई फिरती है तथापि पाठकोंको यह जानकर आश्चर्य होगा कि न तो हर गाँवके पीछे एक पटेल है, न पटवारी और न सिपाही। सरकार जो कर सकी है सो इतना ही कि प्रत्येक पटवारी और

१. देखिए "१८२८ में", २१-५-१९३१; और "पत्र: सतीशचन्द्र दासगुप्तको" २-६-१९३१ भी।

पटेलके जिम्मे कुछ गाँव हैं। पटवारी कुछ पढ़ा-लिखा होता है, उसे हिसाब-किताब रखना पड़ता है; इसलिए पटेलकी बनिस्बत एक पटवारीके जिम्मे अधिक गाँव होते हैं, प्रति पटेलके जिम्मे थोड़े। पूछा जा सकता है, यदि सरकारके पास हरएक गाँवके पीछे पटवारी और पटेल नही है तो कांग्रेसके पास इतने कार्यकर्ता कहाँसे हो सकते हैं। किन्तु मैं यह जानता हूँ कि बात इससे उलटी होनी चाहिए। जो शक्ति सरकारके पास न हो, स्वभावतः वह कांग्रेसके पास होनी चाहिए। परन्तु लज्जापूर्वक हमें यह स्वीकार करना पड़ता है कि हकीकत ऐसी नही है। सरकार इतना धन खर्च नही कर सकती कि वह हर गाँवमें एक पटवारी और पटेल रख सके; किन्तु कांग्रेसको धनकी जरूरत नहीं। कांग्रेसके नामसे ही स्वयंसेवक मिल जाते हैं। परन्तु कांग्रेसका नाम इतनी दूर नही पहुँचा कि प्रति गाँवमें स्वयंसेवक हो जाता।

ऐसी दशामें यदि कांग्रेस प्रत्येक गाँवमें एकसे ज्यादा सेवक रखती है तो यह उसकी फिजूलखर्ची होगी। हमें तो दस-दस मीलके घेरे बनाने चाहिए। जैसे-जैसे सुभीता होता जाये और स्वयंसेवक बढ़ते जायें, वैसे-वैसे घेरोंमें भले वृद्धि हो, परन्तु फिलहाल तो स्वयंसेवकको एक मध्यबिन्दुसे दस मीलतक पहुँचना चाहिए। अर्थात् उसके घेरेका व्यास बीस मील होगा। परन्तु स्वयंसेवकको किसी दिन बीस मील नही चलना पड़ेगा। ऐसा कोई नियम न हो कि रात हमेशा केन्द्रीय गाँवमें ही बिताई जाये। दस मीलके घेरेमें वह चाहे जिस गाँवमें रातको रुक जाय, यही नही, बल्कि उसका यह कर्त्तव्य है कि वह बारी-बारीसे हर गाँवमें रात बिताये। इस प्रकार दस मील घेरेमें कम-से-कम दस गाँव तो होंगे ही। इसलिए मेरे हिसाबसे हर दस गाँवोंके लिए एक कार्यकर्त्ता रहे। इस तरह हर गॉवमें पहुँचनेके लिए हमें सत्तर हजार स्वयंसेवकों और स्वयंसेविकाओंकी जरूरत है। मैंने स्वयंसेवक और स्वयंसेविकाएँ कहा है। सच पूछा जाये तो स्वयंसेविकाओंकी अलग गिनती होनी चाहिए। आरम्भमें यदि स्वयं-सेविकाएँ दो-दोकी जोड़ीमें रहें तो उनकी संख्या सत्तर हजारसे अधिक होनी चाहिए, अथवा वे जितनी हों उस हिसाबसे उनकी अलग व्यवस्था हो जाये। इससे इतना तो स्पष्टतः सबकी समझमें आ गया होगा कि हरएक गाँवके पीछे एकसे अधिक सेवक रखना गुनाह ही होगा।

१. अब यह देखें कि एक स्वयंसेवक क्या कर सकता है। वह स्वयंसेवक आसानी से लड़कोंको इकट्ठा करके उन्हें तकली चलाना सिखाये, पीजना सिखाये, तकली बनाना सिखाये, और अक्षरज्ञान कराये। इसके लिए एक छोटी-सी योजना ही बनाई जा सकती है और पाठ्यक्रम तैयार किया जा सकता है।

२. गाँवकी सफाईकी देखरेख करे और स्वयं सफाई करे।

३. गाँवमें बीमारोंको दवा दे।

४. गाँवमें फूट हो तो उसे दूर करे।

५. गाँवके अस्पृश्योंके दुःख दूर करे और उनके लिए पानी वगैराका सुभीता न हो, तो उसकी व्यवस्था करे।

६. खादीके मामलेमें गाँवको स्वावलम्बी बनानेका प्रयत्न करे।

७. अपने हिस्सेमें जो गाँव आये हों उनकी मर्दुमशुमारी करे, ढोरोंकी गिनती करे; उन गाँवोंके गाय, भैंस, बैल, पाड़े, पड़िया, बछड़े-बछिया वगैराको अलग-अलग गिन ले। भैंस और गायके दूधका अनुपात निकाले। अन्त्यजोंकी गिनती करे। उनकी स्थितिका वर्णन लिखे। गाँवका क्षेत्रफल, उसकी फसल, लगान, उद्योग, कुओंकी संख्या, गाँव या खेतोंमें फलदार पेड़ों और यदि बबूल वगैरा हो तो उनकी जानकारी हासिल करे और उसे नोट कर ले। हालाँकि मैंने इस चीजका उल्लेख अन्तमें किया है किन्तु स्वयंसेवकको इस बारेमें पहले ही जानकारी प्राप्त कर लेनी चाहिए। इस काममें बहुत समय नहीं लगता। परन्तु इतनी जानकारी इकट्ठी कर लेनेवाला स्वयंसेवक अपने कामको आसान बना लेगा। ये सब तथ्य उसे एक छोटी-सी नोट-बुकमें दर्ज कर लेने चाहिए।

कोई यह न कहे कि एक ही व्यक्तिसे दस गाँवोंमें यह सब काम नहीं हो सकता। पाठशालाका उदाहरण ले लें। जिस प्रकार चौबीस घंटोंमें पाठशालाका वक्त कुछ ही घंटोंका रहता है, उसी प्रकार वह सप्ताहमें कुछ ही दिन चले तो भी हर्ज नहीं। भले प्रति दस दिनमें एक गाँवकी पाठशाला एक ही दिन खुले। यह तो केवल बिलकुल अन्तिम छोरकी स्थिति हुई। नया स्वयंसेवक अपने आसपासके गाँवोंकी जानकारी जल्दी ही हासिल कर लेगा और फिर हरएक गाँवसे स्वयंसेवक और स्वयंसेविकाएँ तैयार करेगा और उन्हें उनकी सामर्थ्यके अनुसार सेवाका काम सौंप देगा। और इस तरह स्वयं निरीक्षक स्वयंसेवक बन जायेगा। जिस गाँवमें जिस दिन वह हाजिर नहीं होगा उस दिन उस गाँव के स्थानीय स्वयंसेवक वहाँका काम कर लेंगे।

ऐसे स्वयंसेवकमें एक गुण तो होना ही चाहिए और वह गुण है पवित्रता। अगर उसकी ग्यारहों इन्द्रियाँ दूषित होंगी तो वह निकम्मा है। ग्यारह इन्द्रियाँ अर्थात् पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ, पाँच कर्मेन्द्रियाँ, और एक मन। मन स्वच्छ हुआ तो दसों इन्द्रियाँ अपने-आप स्वच्छ रहेंगी। मन दूषित है तो सब दूषित समझना चाहिए। हाथ, पैर, मुँह और दो गुह्येन्द्रियाँ, कर्मेन्द्रियाँ हैं, स्पर्शकी त्वचा, रसकी जीभ, सुननेकी कान, सूँघनेकी नाक और देखनेकी आँख, ये पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ हैं। जो स्वयंसेवक इन इन्द्रियों पर अधिकार न रख सकता हो उसे नम्रतापूर्वक स्वयंसेवक बननेसे इन्कार कर देना चाहिए। यदि वह स्वयंसेवक बन गया हो किन्तु बादमें उसे लगे कि वह संयमका पालन नही कर सकता है तो उसे नम्रतापूर्वक इस्तीफा दे देना चाहिए। इसी तरह काम होता है और होगा।

कोई कहेगा कि यह कार्यक्रम तो सौ वर्षमें भी पूरा न होगा और हमें स्वराज्य तो आज ही लेना है। ऐसी शंका निरर्थक है। स्वराज्यमें स्वयंसेवकोंकी बारिश नहीं होगी। जो आज स्वयंसेवक होंगे उन्हींमें से स्वराज्यका काम चलानेवाले मिलेंगे। यह सच है कि मौजूदा शासन जब लोगोंके हाथमें आयेगा तब उसका काम करनेवाले तो होंगे ही। तिसपर भी यदि कांग्रेसके पास मेरे बताये अनुसार स्वयंसेवक नहीं होंगे तो मिली हुई सत्ता हमारे हाथसे निकल जायेगी या उसे घुन लग जायेगा और देशमें

अराजकता फैल जायेगी। यह माननेका कोई कारण नहीं कि शासनके बदलते ही जो नौकर आज अवांछनीय हैं, वे पल-भरमें देवरूप बन ही जायेंगे। इसलिए जैसा हम आज बोयेंगे, वैसा काटेंगे। यदि आज शुद्ध वृत्तिवाले स्वयंसेवक मिल जायें तो मैंने जो कार्यक्रम बताया है, उसपर आजसे ही अमल होना शुरू हो जाये। काम करनेका तरीका यह नहीं कि पहले सत्तर हजार स्वयंसेवक तैयार हो जायें, दस मीलकी सरहदवाले घेरोंके नकशे बन जायें, फिर देखा जायेगा। इस तरह विचार करनेसे तो काम कभी होगा ही नहीं।

काम करनेका तरीका यह है कि गुजरात आज शुरू करे, पूरा गुजरात नहीं तो एक दो जिले, जिले नहीं तो ताल्लुके, नहीं तो छिटपुट स्वयंसेवक, जो गुजरातमें फैले हुए हैं, उपर्युक्त ढंगसे काम करना शुरू कर दें, और वैसा करते हुए जो काम अधिक या दोषपूर्ण लगे उसे त्याग दें, जो करने योग्य हो, वह करें। जहाँ एकसे अधिक स्वयंसेवक इकट्ठे हो जायें वे बँट जायें, बिखर जायें। यदि यह ठहरे कि अधिक स्वयंसेवक रहने ही चाहिए, तो उसके कारणकी जाँच कर ली जाये। मन या शरीरकी शिथिलताके कारण अपनेको अथवा जनताको धोखा न दें।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ७-६-१९३१

४२७. टिप्पणियाँ

हिन्दूकी शर्म

२२ मई, १९३१को डाकोरमें भंगी भाइयोंकी सभा हुई थी, जिसका विवरण ठक्करबापाने भेजा है। उसका सारांश मैं नीचे देता हूँ :

> लगभग १५० गाँवोंके करीब १,५०० भंगी भाई इकट्ठे हुए थे। उन्होंने बैठक और रातमें सोनेके लिए टाटका मण्डप बनाया था और उसीकी बिछायत की गई थी। दिनको वहाँ सभा होती और रातको सब वहीं सो रहते। किन्तु रसोईके लिए बरतन कौन दे? पानी कहाँसे लाया जाये? गोमतीके-तालाबका पानी इतना गंदला होता है कि म्युनिसिपैलिटीकी ओरसे जगह-जगह उसे न पीनेकी सूचनाके पटिये लगाये गये हैं। परन्तु भंगीभाई वह पानी पी सकते हैं! सम्मेलनमें ऐसा पानी कैसे पिया जाये? एक मुसलमान भाईको दया आई, उन्होंने अपने बरतन दिये, रसोईमें मददकी और पानी भी दिया।
>
> डाकोर-जैसे तीर्थ-स्थानमें किसी हिन्दूको दया न आई और न शर्म आई कि इतने मेहमानोंके डाकोर आनेपर पानी होते हुए भी उन्हें पानीकी तंगी रही, बरतन होनेपर भी बरतन न मिले, रसोईकी सुविधा होते हुए भी रसोईकी सांसत रही। डाकोरकी स्वयंसेविकाएँ रसोई बना सकती थीं, डाकोरके

महाजनोंका धर्म इन भाई-बहनोंको पानी देनेका था। वे इस धर्मको भूले रहे और उन्होंने हिन्दू धर्मका तेज कम किया।

कोई कह सकता है, "परन्तु ऐसा तो सब जगह होता है, 'ढेढ़-भंगी'की परवाह कही कोई नही करता; डाकोरके हिन्दुओंने इसी बार यह कोई विशेष आचरण थोड़े ही किया? यही बात है। मेरे पुरखे पाप करते आये हैं, इसलिए मुझे पाप करनेका इजारा नही मिल जाता। जैसे-जैसे दिन बीतते जा रहे है, अन्त्यजोंमें जागृति बढ़ती जा रही है, और हिन्दू धर्मकी बुराई प्रकट होती जा रही है तथा अन्त्यजेतर हिन्दूको शर्म आने लगी है। विवरण तैयार करनेवाले हिन्दू हैं, विवरण भेजनेवाले हिन्दू हैं। कांग्रेसने अधिकारोंके सम्बन्धमें जो प्रस्ताव पास किया है, हम सबको उसपर अमल करना है। अतएव आजतक चाहे जो हुआ हो, परन्तु भविष्यमें स्वयं हिन्दू ही ऐसे अपमानको न सहेंगे जैसा कि डाकोरमें हुआ है। स्वराज्यमें अन्त्यज और अन्त्यजेतरका भेद नही रहेगा। इसलिए हम अब सजग हो जायें।

जरा विचारने योग्य

ठासरा तहसीलमें भरथरी नामक एक गाँव है। वहाँ धनजीभाई नामक एक अन्त्यजभाई अन्त्यजोंमें सुधार कार्य करनेके लिए खूब परिश्रम कर रहे हैं। मेरे सामने जो रिपोर्ट मौजूद है, उससे ज्ञात होता है कि यह काम करते हुए उन्हें कष्ट सहने पड़ते हैं, पर वे उन्हें चुपचाप सहते है। उन भाईके सुधारोंमें एक सुधार यह है: जो मुर्दार मांस खाते हैं, उनसे मुर्दार मांसका खाना छुड़वाना और साथ ही मरे हुए ढोरोंकी व्यवस्था करनेके धन्धेसे भी उन्हें मुक्त करना। मुर्दार मांस छुड़वाना तो अच्छा है ही, परन्तु मरे हुए ढोरोंकी व्यवस्थाका काम छुड़ाना मुझे तो भयंकर मालूम होता है। मै स्वयं इस कामको पवित्र मानता हूँ, और आवश्यक तो यह है ही। यह धन्धा पवित्र है, क्योंकि इससे रोगोंका फैलना रुकता है। अगर मरे हुए ढोर यों ही जहाँ-तहाँ पड़े रहें तो उससे आबहवा खराब होगी, रोग फैलेंगे और देशका धन नष्ट होगा। जिस प्रकार जीवित ढोर लोगोंकी सेवा करते हैं, उसी प्रकार मरकर भी वे सेवा करते हैं। चमड़े, हड्डी, चर्बी और आँतोंका हम काफी उपयोग करते हैं। और यदि हम जिन्दा ढोरका सदुपयोग करें और फिर मरे हुए ढोरके चमड़े वगैराका शास्त्रीय ढंगसे उपयोग करें तो ढोरकी कीमत इतनी बढ़ जाये कि उसको कत्ल करनेमें कोई लाभ न रहे।

इसलिए सुधारकोंको तो मैं यह सलाह दूँगा कि ढेढ़-चमार भाइयोंको उनके धन्धेको छोड़नेकी सीख न दें, बल्कि उन्हें वह धन्धा भली-भाँति सिखा दें। इसके लिए तालीमकी आवश्यकता है। ढेढ़-चमारका पेशा हमारे ही देशमें हलका माना जाता है। पश्चिममें तो इस धन्धेमें करोड़पति लोग लगे होते है। बी० ए० पास करके अध्यापकी करनेकी अपेक्षा अगर नवयुवक चमारका धन्धा सीखें, मरे हुए ढोरोंका चमड़ा किस तरह उतारा जाये, उसके और भागोंका कैसे उपयोग किया जाये, वगैरा बातें सीखें तो जो करोड़ों रुपये आज इस धन्धेके ज्ञानके अभावमें परदेश चले जाते हैं,

वह रुक जायेगा और चमारका काम करनेवाले भाई अपने धन्धेको हलका नहीं समझेंगे। अस्पृश्यताका निवारण चमारादिके धन्धेको छोड़नेसे नहीं होगा, परन्तु जब हिन्दू जनता अपने पापको समझेगी और अन्त्यज भाई अपनेमें से उन बुराइयोंको दूर करेंगे, जो उनमें घुस गई हैं, तभी अस्पृश्यताका निवारण होगा।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ७-६-१९३१

४२८. दरिद्रनारायणकी हुण्डी

रोग-शय्यापर पड़े-पड़े भाई विट्ठलदास शिकायत करते हैं कि खादीका स्टाक बढ़ता जा रहा है। गुजरातके कार्यकर्त्ता लिखते हैं कि गुजरातमें खादीका स्टाक इकट्ठा हो गया है, जिससे कताईका काम कम करना पड़ा है। खादीके बारेमें यह शिकायत हमारे लिए शर्मकी बात है। खादी एक ऐसी चीज है, जिसे पहननेवाला जानता है कि उससे बहुत ही गरीब बहनोंको मदद मिलती है। यदि यह साधारण-सी बात हमारे मनमें बैठ जाये तो खादीकी खपतमें कमी ही न हो। जिस प्रकार करेंसी नोटकी कीमत उसमें लिखे अंकके अनुसार मिलती ही है, उसी प्रकार खादीका नियत मूल्य मिलना चाहिए। खादी दरिद्रनारायणकी हुण्डी है। इसे सकारनेवाले शहरके नागरिक होने चाहिए। और जबतक यह हुण्डी मिले तबतक किसीको दूसरी हुण्डी सब जगह छूनी भी नहीं चाहिए।

मेरा बस चले और लोग मदद करें तो खादीकी कीमत सब जगह एक ही हो। रुईकी दरमें भले घट-बढ़ हो, परन्तु यदि कत्तिनोंको सम्बन्धित प्रान्तमें सब जगह एक ही दरसे मजदूरी मिले, जुलाहोंके साथ भी यही हो और खादी सम्बन्धी हरएक क्रिया की दर सदा एक ही रहे तो खादीकी कीमत एक ही रखनेमें किसी प्रकारकी अड-चन नहीं होनी चाहिए। हममें इतनी सचाई, इतना संगठन, गरीबोंके प्रति इतना प्रेम नहीं है, इसीसे खादीके भावोंमें घट-बढ़ होती रहती है। ऐसा होते हुए भी जो लोग खादीमें थोड़ी भी दिलचस्पी रखते हैं, वे जानते हैं कि हर प्रान्तमें दस साल पहले खादीका जो भाव था, उसमें कमी ही हुई है। मैं बता चुका हूँ[1] कि मेरठके आश्रममें, जहाँ बहुत खादी तैयार होती है, वहाँ जिस खादीकी दर पहले एक रुपया थी, वह आज छः आनेसे कम है। इसका यह मतलब नहीं कि कत्तिनोंको कम मिलता है। इसका मतलब इतना है कि खादी बनानेकी कलामें अधिक कुशलता आई है, कताईमें सुधार हुआ है, जिससे जुलाहेको सूत बुननेमें कम कठिनाई होती है, और इसीसे बुनाईकी दर कम हो सकी है, किन्तु इतनेपर भी जुलाहेकी आमदनी में कमी नहीं हुई है। दरोंमें कमीके शुभ परिणामका कारण यह है कि खादी-प्रचारका काम एक परोपकारी संस्थाकी मारफत होता है। इससे खादीकी किस्ममें उत्तरोत्तर सुधार

१. देखिए "टिप्पणियाँ", ४-६-१९३१ का उपशीर्षक "गांधी आश्रम मेरठ"।

हुआ है, और भाव उत्तरोत्तर कम हुए हैं। फिर भी अभी खादीकी किस्ममें सुधार करने और भाव घटानेकी काफी गुंजाइश है। और जैसे-जैसे लोगोंसे प्रोत्साहन मिलेगा, वैसे-वैसे किस्ममें सुधार होगा और दाम घटेंगे। जाहिर है कि ज्यों-ज्यों खादीकी खपत बढ़ेगी त्यों-त्यों अधिक लोग और अधिक होशियार लोग उसमें दिलचस्पी लेंगे, और इसका निश्चित परिणाम यह होगा कि किस्में सुधरेंगी और दर घटेंगी। दरिद्र-नारायणकी पेढ़ीके भागीदार कुछ खास लोग ही नहीं हैं, बल्कि उसके भागीदार तो तीस करोड़ लोग हैं। ऐसी खादीकी खपतमें कठिनाई क्यों हो? परन्तु यह सच होते हुए भी कठिनाई होती है, इसलिए यह प्रश्न पूछना निरर्थक है। उसकी खपतके मार्ग ढूँढ़ निकालनेमें ही बुद्धिमानी है। नीचे लिखे मार्ग आसानीसे सूझ सकते हैं:

१. खादीकी फेरी लगाना। फेरीके लिए सब जगहोंपर किसी नियत दिन बहनें निकलें। इससे बहनोंको रोज निकलना न पड़ेगा। कुछ निश्चित दिन कुछ घंटोंकी फेरी लगाना काफी होगा। पश्चिममें जिस प्रकार अस्पताल वगैराके लिए करोड़पतियोंकी स्त्रियाँ निकल पड़ती हैं, उसी प्रकार यहाँ भी बहनें निकल पड़ें।

२. खादीकी किस्म और मूल्य-सूचीवाली पत्रिकाएँ घर-घर बाँटी जायें।

३. गली-गलीमें भाषण दिये जायें।

मैंने तो ये मार्गदर्शक सूचनाएँ दी हैं। परन्तु जिसे खादीसे प्रेम है और जिसमें खोज करनेकी शक्ति है, वह खादीके स्टाकको खपानेके लिए अन्य अनेक मार्ग ढूँढ़ निकालेगा।

[गुजरातीसे]
नवजीवन, ७-६-१९३१

४२९. नये नामकी जरूरत

एक अन्त्यजभाई लिखते हैं:[1]

जागृतिके इस युगमें ऐसी भावना स्वाभाविक है। मनुष्यको वह नाम अच्छा नहीं लगता जिसमें उसकी निन्दा निहित होती है, फिर उसकी उत्पत्ति निर्दोष ही क्यों न हो? एक समय था जब अन्त्यज नाममें किसी प्रकारकी निन्दा नहीं मानी जाती थी। ढेढ़, भंगी नाम बुरे लगते थे। जहाँतक मेरा ख्याल है दलित नाम स्व० स्वामी श्रद्धानन्दजी का दिया हुआ है। पर अब यह नाम भी बुरा लगने लगा है। सच बात तो यह है कि जबतक समाजमें अस्पृश्यताका जहर मौजूद है, तबतक कैसा भी नाम क्यों न हो, कुछ समय बाद उसके बुरा लगनेकी सम्भावना है। इसलिए सही चीज तो जहरको निकाल फेंकना है। हिन्दू समाजको तो इस जहरको बिना

१. पत्रका अनुवाद यहाँ नहीं दिया गया है। पत्र-लेखकने 'अन्त्यज' आदि शब्दोंको अपमानजनक मानते हुए गांधीजीसे कोई नया शब्द गढ़नेकी प्रार्थना की थी। 'हरिजन' शब्दके चुनावके लिए देखिए खण्ड ४७, "टिप्पणियाँ" २-८-१९३१ का उप-शीर्षक 'हरिजन'।

किसी शर्तके निकाल फेंकना है। पापका प्रायश्चित्त करनेमें शर्तकी जरूरत नहीं होती। इसके लिए अस्पृश्य भाई-बहनोंकी मदद आवश्यक है। किन्तु अन्त्यजेतर हिन्दू समाजके चाहे जितना प्रयत्न करनेपर भी, उस समाजके पापके कारण अन्त्यज भाइयोंमें जो बुराइयाँ जड़ जमा बैठी हैं वे तो विशेषकर उनके अपने प्रयत्नसे ही दूर होंगी। इस प्रयत्नमें अन्त्यजेतर हिन्दूकी मददकी आवश्यकता रहेगी। वह मदद धीरे-धीरे मिल रही है, उसकी गति बढ़नी चाहिए। इस सबका विचार करते हुए भी अन्तिम प्रयास अन्त्यजोंका होना चाहिए। इस प्रकार मूल वस्तुके सुधारकी आवश्यकता होते हुए भी यदि किसीको अन्त्यज अथवा दलित विशेषणकी अपेक्षा अधिक अच्छा विशेषण सूझे, तो वे मुझे लिखें।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ७-६-१९३१

४३०. एक वहम

एक संस्कारी और अति पवित्र माताके पत्रका सारांश मै नीचे देता हूँ:

> मैंने अपने पुत्रकी मृत्युके बादसे दूध-घी छोड़ दिया है। दाल-भात, रोटी और मट्ठेसे काम चलाती हूँ। संसार फीका लगता है। पर कुछ-न-कुछ सेवा करके दिन बिता रही हूँ। रामायणादि पढ़ती हूँ। परन्तु मनके भीतर कहीं प्रिय पुत्रकी याद पीड़ा पहुँचाती रहती है।

इस माताका शरीर कमजोर तो था ही किन्तु अब और ज्यादा कमजोर हो गया है। कहा नहीं जा सकता कि उनका शरीर टिकेगा या नहीं। जिस प्रकार मैंने माताके पत्रका सारांश ऊपर दिया है, उसी प्रकार मैंने उन्हें जो जवाब दिया है उसका सारांश भी यहाँ दिये देता हूँ।[1]

पुत्र मरे या पति, उसका शोक मिथ्या है और अज्ञान है। इसे केवल ज्ञानकी बात समझकर कोई इसकी उपेक्षा न करे, बल्कि हृदयमें स्थान देकर इसपर अमल करे। जहाँ सबको मरना ही है, वहाँ आज या कलका काल-भेद मात्र रह जाता है। उसका शोक क्या करना। मरता तो सिर्फ शरीर है; उसका तो यह स्वभाव है, इसमें आश्चर्यकी कोई बात नही। यह निश्चय है कि उसमें रहनेवाला जीव कभी नहीं मरता, जीवका स्वभाव अमरता है। इतना निश्चयात्मक ज्ञान होते हुए भी शोक किसलिए?

परन्तु यदि शोक अवश्यम्भावी हो तो क्या उस शोकका निवारण उपवास या खुराककी कमीसे हो सकता है? उससे लाभ किसे होगा? मरनेवालेको? और फिर क्या मरनेवाली देहको या अमर आत्माको? खानेवाली देह तो राख हो चुकी है,

१. देखिए "पत्र : हेमप्रभा दासगुप्तको", २-६-१९३१।

या उसे कीड़े खा रहे हैं। आत्मा तो न खाती है, न पीती है, तो फिर माता या पत्नी खानेमें संकोच क्यों करे?

तात्पर्य यह कि सती स्त्री या माताके कम खानेसे मरनेवालेकी देह या आत्माका कोई सम्बन्ध नही है। देहमुक्त आत्माके कल्याणका इच्छुक, उसकी यादको कायम रखनेवाला व्यक्ति, उपवास करके अपनी इच्छा पूरी नही कर सकता, बल्कि उसके गुणोंके अनुकरणसे दोनों बातें साध सकता है, उसके नामपर सोच-समझकर दान करके उसकी स्मृतिको कायम रखनेमें मदद कर सकता है।

तो क्या उपवास और खुराकके संयमका कोई स्थान ही नहीं है? इस दशामें तो निश्चय ही नही है। खुराकका संयम या उपवास एक मर्यादाके भीतर या तो आत्मशुद्धिके लिए किये जा सकते है या रोग-निवारणके लिए। रोगकी बात छोड़ देता हूँ। स्वादेन्द्रियका संयम आत्मशुद्धिके लिए है। यानी खुराकके संयम या उपवास की यह मर्यादा है। झूठ बोलनेका प्रायश्चित्त उपवास नही, उसका प्रायश्चित्त सच बोलनेका व्रत ही है, झूठ बोलनेके लिए जो प्रलोभन हमारे सामने हों, उनका त्याग है। परन्तु जीभ वशमें न रहती हो तो उसके लिए उपवास किया जाये, खुराकका संयम रखा जाये। जिसने सब प्रकारके स्वादको जीत लिया है; वह शरीरको टिकाये रखनेके लिए ही खाता है। उसकी खानेकी चीजें गिनी-गिनाई और नपी-तुली ही होंगी। ऐसे स्त्री-पुरुष अन्न-फल औषधिके रूपमें ही ग्रहण करते हैं। ऐसे लोग यदि और त्याग करें तो पाप करेंगे। क्योंकि औषधके रूपमें खानेवाला यदि उतना भी न खाये तो शरीर क्षीण हो जाये; शरीर सेवाका साधन है। जो इस साधनको कमजोर बनाता है, वह चोरी करता है। ऐसे लोग करोड़ोंमें विरले ही होते हैं। यह दृष्टान्त देनेका कारण अर्थ समझानेकी भर दृष्टिसे है।

हम प्राकृत देहधारी रोज स्वादकी दृष्टिसे खाते हैं। तब फिर हमें उपवास करने ही होंगे, अन्न लेनेमें भी संयम करना जरूरी होगा। पर ये क्रियाएँ हम स्वादको मारनेके लिए करेंगे। मरनेवालेकी यादमें या किसी दूसरे बहाने ऐसा करनेमें आत्म-वंचना है; यह पाप तक हो सकता है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ७-६-१९३१

४३१. एक पत्र

बारडोली
७ जून, १९३१

सरदार गरदाने मुझसे २५ अप्रैलको बारडोलीके स्वराज्य आश्रममें मुलाकात की थी। उनके साथ सर कावसजी जहाँगीर, श्री के० एफ० नरीमान, श्री वीमदलाल, रावबहादुर भीमभाई और एक अन्य पारसी मित्र थे। सर कावसजी जहाँगीर और अन्य मित्र उनको बारडोलीके किसानोंकी उस जमीनके सिलसिलेमें लेकर आये थे, जिसे असहयोग आन्दोलनके दौरान जब्त कर लिया गया था और जिसे उन्होंने खरीद लिया था। सरदार गरदाने शिकायत की कि जनताने उनके साथ दुर्व्यवहार किया है। मैंने उनसे कहा कि वे जो भी शिकायत करेंगे, मैं उसकी पूरी-पूरी जाँच कराकर उनको सन्तुष्ट करूँगा। सभी मित्रोंने उनसे अनुरोध किया कि वे उक्त जमीन लौटा दें। सरदार गरदा इस बातपर जमे रहे कि जमीनके लिए अदा किया गया मूल्य अर्थात् ४,५६९ रुपये ही नहीं बल्कि उस जमीनपर उन्होंने जो अतिरिक्त राशि खर्च की अर्थात् ६,००० रुपये वह भी उन्हें मिलनी चाहिए। सर कावसजीने उनको आश्वस्त किया कि उन्हें वह राशि भी मिल जायेगी। इसपर उन्होंने कहा कि मैं जमीनकी खरीदकी कीमतके अलावा ६,००० रुपयेकी उक्त राशि लेकर शायद जमीन वापस करनेको तैयार हो जाऊँगा, पर उसके लिए मुझे अपने लोगोंसे बात करनी पड़ेगी जिसमें दो दिन लगेंगे और उसके बाद ही मैं कोई अन्तिम उत्तर दे सकूँगा। सरदार गरदाने बातचीतके दौरान कहा कि मेरी खरीदी हुई उस जमीनका मूल्य ठीक चार लाख रुपयेके बराबर है और यदि अधिकारी जोर न देते तो मैं उसे नहीं खरीदता। जाहिर है, यह बात उन्होंने गोपनीय रखनेके लिए निजी तौरपर ही कही थी। मैंने उनसे पूछा था कि क्या मै लोगोंको बतला दूँ कि अधिक सम्भावना इसी बातकी है कि आप जमीन लौटानेको राजी हो जायेंगे। उनका उत्तर था जरूर। दो दिन बाद रावबहादुर भीमभाईने सरदार वल्लभभाईके नाम अपने पत्रमें सूचित किया कि सरदार गरदाने उनके पास एक पुर्जा भेजा है कि उन्होंने उक्त राशि लेकर जमीन वापस कर देनेका फैसला कर लिया है। सरदार गरदा द्वारा रावबहादुर भीमभाईको लिखे गये पत्रकी एक प्रति संलग्न है। पत्रको समाचारपत्रोंमें भी प्रकाशित किया गया था और सम्बन्धित लोगोंको समझौतेकी बात यथाविधि बतला दी गई थी। सात मईको सरदार गरदाका जो पत्र मेरे पास आया तथा मैंने उसका जो उत्तर भेज दिया उनकी प्रतियाँ संलग्न हैं। उसके बाद सरदार गरदाके साथ मेरा अबतक जो पत्र-व्यवहार हुआ है मै उसकी प्रतियाँ भी संलग्न कर रहा हूँ।

[अंग्रेजीसे]

अ० भा० कां० क०, फाइल संख्या १६-सी, १९६१।
सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

४३२. पत्र : के० बी० भद्रपुरको

स्थायी पता, साबरमती
७ जून, १९३१

प्रिय श्री भद्रपुर,

मैं यह पत्र रासगाँवके मौजूदा मुखियाके सिलसिलेमें लिख रहा हूँ। मैं उसे हटाने और उसके स्थानपर पहलेवाले मुखियाको नियुक्त करनेके प्रश्नको लेकर एकाधिक बार श्री पैरीसे चर्चा कर चुका हूँ और मुझे आशा थी कि अबतक कम-से-कम रासके मौजूदा मुखियाको हटा दिया गया होगा। अब इस मामलेपर फौरन ध्यान देना पड़ेगा, क्योंकि रासके गैर-धाराला निवासियोंकी ओरसे एक शिष्टमण्डल मुझसे कल मिलने आया था और उन्होंने शिकायत की है कि वहाँ उनका जीना दूभर होता जा रहा है। पिछले पखवारेमें रासगाँवमें उनके कथनानुसार जो विनाश-लीला चलती रही है, उसका ब्यौरा मैं नत्थी कर रहा हूँ। उन्होंने यह भी बतलाया है कि सम्पत्तिकी हानि करनेके साथ-साथ व्यक्तियोंको मारा-पीटा भी जाता है। कहनेका मंशा यह नहीं कि यह सब हरकतें मुखियाने खुद की हैं, फिर भी उसने अगर शह नहीं दी तो इन चीजोंको जान-बुझकर अनदेखा जरूर किया है। और यह तो स्वीकार करना ही पड़ेगा कि संलग्न ज्ञापनमें शामिल किये बयानोंमें यदि कोई सचाई है तो फिर गैर-धाराला जातियोके लोग वर्षा आरम्भ होनेपर अपने खेतोंमें खेती नहीं कर पायेंगे। यह सुझाव पहले भी दिया गया है कि मुखियापदके काम तीन भागोंमें बाँट दिये जाने चाहिए, और प्रत्येककी जिम्मेदारी अलग-अलग तीन व्यक्तियोंको सौंप देनी चाहिए। मै कहनेकी जरूरत नहीं समझता कि इस तरह काम नहीं चलेगा। मौजूदा मुखिया यदि ठीक आदमी नही है तो फिर समझौतेकी शर्तो और आयुक्तकी स्वीकारोक्तिके अनुसार ऐसे व्यक्तिको मुखिया पदसे हटा दिया जाना चाहिए। और चूँकि रासका मौजूदा मुखिया चोरीके मामलेमें सजायाफ्ता आदमी है, इसलिए उसको तो निश्चय ही बहुत पहले हटा दिया जाना चाहिए था। मेरी इस मांगका मेरे उस कथनसे कोई सम्बन्ध नही है और न इसका उसपर कोई प्रभाव ही पड़ता है कि समझौतेके अर्थके अनुसार एक निश्चित अवधिके लिए होनेवाली मुखियोंकी नियुक्तियाँ स्थायी नही होतीं। इसलिए यदि आप मुझे यथाशीघ्र यह बतलानेकी कृपा करें कि सरकार इस मुखियाको हटाकर रास-निवासियोंके जान-मालकी हिफाजत करनेका कोई इरादा रखती है या नहीं, तो मैं आपका आभार मानूँगा।

हृदयसे आपका,

श्री के० बी० भद्रपुर
खेड़ा जिला कलेक्टर, खेड़ा

[अंग्रेजीसे]

अ० भा० कां० क०, फाइल संख्या १६–सी, १९३१।
सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

४३३. पत्र : थॉमस बी० लीको

स्थायी पता, साबरमती
७ जून, १९३१

प्रिय मित्र,

आपके पत्रके लिए धन्यवाद। ईसाई विज्ञान सम्बन्धी साहित्य तो मेरे पास पर्याप्त है ही। आप मेरे इस कथनका बुरा न मानें कि न जाने क्यों, ईसाई धर्मका यह वैज्ञानिक सिद्धान्त मेरे मनमें कोई उत्साह पैदा नही करता। दक्षिण आफ्रिकामें इस ईसाई-पद्धतिके अनेक प्रतिपादकोंसे मेरी भेंट हो चुकी है। उनकी बातचीत मुझे आश्वस्त नही कर सकी। और आप ऐसा क्यों कहते हैं कि अबतक विश्वकी सर्वाधिक महत्वपूर्ण खोज यही रही है कि वास्तवमें स्वयं शरीरमें कोई प्राण या संवेदना नही है? सच तो यह है कि यह कथन अपने-आपमें तर्ककी कोई पूर्ण प्रतिज्ञा नही है। स्पष्ट है कि शरीरका अर्थ यहाँ प्राणहीन शरीर ही है। और यह तो औषध-विज्ञान भी सिखाता है कि प्राणहीन शरीरमें कोई संवेदना नहीं रहती; प्रत्येक हिन्दू बालक इसे बचपनसे ही जानता है। परन्तु मुझे बहसमें नहीं पड़ना है। मुझे लगा कि मुझे आपके विस्तृत पत्रका एक तर्क-संगत उत्तर दे देना ही चाहिए।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

श्री थॉमस बी० ली
स्टर्लिंग रेडियो कम्पनी
कन्सास नगर, मिसौरी

अंग्रेजी (एस० एन० १७२४८) की फोटो-नकलसे।

४३४. पत्र : माधव रामकृष्ण जोशीको

स्थायी पता, साबरमती
७ जून, १९३१

प्रिय मित्र,

आपका पत्र मिला। कोई भी ईश्वरनिष्ठ व्यक्ति लोगोंमें भेद नही करता। पत्नी, बहन, माता, भाई, अजनबी मित्र या शत्रु कोई भी क्यो न हो, वह बिलकुल निष्पक्ष रहकर सभी स्नेहके पात्र लोगोंको स्नेह देता है, और सबके बाद अपने बारेमें सोचता है। वह अन्य सभीकी सेवा कर चुकनेके बाद अपनी चिन्ता करता है, और यह बात तभी सम्भव हो पाती है, जब हमारी ईश्वरपर आस्था हो और हमारी प्रार्थनाके उत्तरमें ईश्वर जो प्रकाश दिखाये, जो मार्ग सुझाये उसका अनुसरण किया जाये।

हृदयसे आपका,

श्री माधव रामकृष्ण जोशी
मारफत जिला कांग्रेस कमेटी कार्यालय
आगरा रोड, धुलिया (पश्चिम खानदेश)

अंग्रेजी (एस० एन० १७२४९) की फोटो-नकलसे।

४३५. पत्र : तप्पन नायरको

स्थायी पता, साबरमती
७ जून, १९३१

प्रिय तप्पन,

आपका पत्र मिला। आपको 'यंग इंडिया' के स्तम्भोंको लगनके साथ पढ़ते रहना चाहिए। इससे शायद आपको मदद मिले। आपके फौरी सवालके बारेमें तो मैं यही कहूँगा कि यदि यहाँ आपको ऐसा लगे कि आपके लिए कोई काम नही है तो आप आश्रम लौट सकते है। कई लोगोंने यही किया है।

हृदयसे आपका,

श्री तप्पन नायर
कांग्रेस शिविर
पालघट (मलाबार)

अंग्रेजी (एस० एन० १७२५०) की माइक्रोफिल्मसे।

४३६. पत्र : एच० वी० हॉडसनको

स्थायी पता, साबरमती
७ जून, १९३१

प्रिय मित्र,

आपके पत्रके लिए धन्यवाद। यदि मैं लन्दन आया तो आशा है हमारी मुलाकात जरूर होगी; और यदि न आ सका तो मेरी इस बातपर विश्वास कीजिए कि उसका कारण मेरी अनिच्छा या मेरी प्रयत्नहीनता नही है; कुछ ऐसी परिस्थितियाँ हैं जिनपर मेरा बिलकुल भी बस नही चलता।

हृदयसे आपका,

श्री एच० वी० हॉडसन
१० वुडलेन
हाईगेट, लन्दन नार्थ ६

अंग्रेजी (एस० एन० १७२५१)की फोटो-नकलसे।

४३७. पत्र : एम० आई० डेविडको

स्थायी पता, साबरमती
७ जून, १९३१

प्रिय श्री डेविड,

आपके ९ मईके पत्रके लिए धन्यवाद। मैं आपके कार्य-कलापपर समाचारपत्रोंके आधारपर नही, बल्कि आपके समाजकी भावनापर होनेवाली उसकी प्रतिक्रियाके आधार पर बड़ी ही बारीकीसे लगातार नजर रखे हूँ। भले ही साम्प्रदायिक समस्या हल करना समझौता-समितिके बूतेसे बाहरकी चीज हो, पर यदि वह शान्ति-स्थापनामें सहायक बन सके तो वह एक काफी बड़ा कदम होगा। आपके एक और कार्य-क्षेत्रके प्रति मेरे मनमें दिलचस्पी पैदा हो रही है। वह है मधुमक्खी पालना और मधु तैयार करना। मैं चाहूँगा कि मधुमक्खीपालन उद्योगका भारत-भरमें चलन हो जाये। प्रश्न यही रह जाता है कि क्या मधु-मक्खीपालन लाभदायक उद्योग बन सकता है। मैंने इस दिशामें कुछ प्रयोग भी किये थे, पर अबतक सफलता नही मिल पाई है। यदि आप ऐसे कुछ तरीके निकाल सकें, जिनसे गरीब लोग भी इसे अपना सकें तो सारी जनता आपका बड़ा आभार मानेगी।

हृदयसे आपका,

श्री एम० आई० डेविड
४ क्वीन्स रोड
फोर्ट, बम्बई

अंग्रेजी (एस० एन० १७२५२)की फोटो-नकलसे।

४३८. पत्र : एस्थर मेननको

स्थायी पता, साबरमती
७ जून, १९३१

एक लम्बे अर्सेसे, महीनोंतक इन्तजार करानेके बाद आखिर तुमने पत्र लिख ही दिया। मेननको अबतक डिप्लोमा नहीं मिला। यह अफसोसकी बात है। एक मित्रने मुझे लिखा था कि इस असफलतासे तुम काफी निराश हो गई हो। मैं तुमको जिस रूपमें जानता हूँ, उसे देखते हुए यह बात तुम्हें शोभा नहीं देती। तुम तो ईश्वर और उसके मंगलकारी स्वरूपपर जीवन्त आस्था रखती हो, इसलिए तुमको बड़ी-से-बड़ी असफलता या विपत्तिसे भी विचलित नहीं होना चाहिए। हम नहीं जानते कि हर असफलता सचमुच ही दुःखजनक है और न यही जानते हैं कि हर विपत्ति सचमुच ही कोई दण्ड है। क्या हम बहुधा यह नहीं देखते कि समृद्धि और सफलता लोगोंके विनाशका कारण बन जाती है और असफलताएँ तथा विपत्तियाँ उनको शुद्ध तथा संयत बना देती हैं?

मैं नही जानता कि मैं लन्दन जाऊँगा या नहीं। यदि गया तो निस्सन्देह डेन्मार्क जाना भी पसन्द करूँगा और यदि डेन्मार्क गया तो तुमसे न मिलना कैसे पसन्द करूँगा। लेकिन एक इतनी दूरकी सम्भावनाके बारेमें अनुमान लगानेसे कोई लाभ नहीं।

मारिया जब-तब मुझे लिखती रहती है।

इतना लिखाते-लिखाते मुझे एक दूसरा पत्र भी मिल गया है जिसमें तुम्हारा अधिक आत्मीयतापूर्ण उल्लेख किया गया है। यह पत्र डॉ० हेनिंग डालसगार्डका है। उन्होंने पत्रमें लिखा है कि तुम प्रसन्न हो, परन्तु उन्होंने मुझसे पूछा है कि क्या मैं मेननके लिए कुछ कर सकता हूँ। परन्तु कोई स्पष्ट बात सूझ नहीं रही है। क्या तुम्हारे सामने कोई प्रस्ताव है? यदि हो, तो मुझे लिखनेमें संकोच मत करना और यदि मै उस दिशामें कुछ करनेकी स्थितिमें हुआ तो तुम जानती ही हो कि मैं अवश्य करूँगा।

श्रीमती एस्थर मेनन
एम०, क्वैस्ट हाउस
सैली ओक
नॉर्थ बरमिंघम (इंग्लैंड)

अंग्रेजी (एस० एन० १७२५४)की फोटो-नकलसे।

४३९. पत्र : डॉ० हेनिंग डालसगार्डको

स्थायी पता, साबरमती
७ जून, १९३१

प्रिय मित्र,

'इंटरनेशनल पीपुल्स कालेज' की ओरसे भेजे गये औपचारिक पत्रकी पुश्तपर लिखी आपकी टिप्पणी मैंने बड़ी ही दिलचस्पीके साथ पढ़ी। प्रोफेसर मैन्निचेको लिखे मेरे उत्तरसे आपको मालूम हो जायेगा कि डेन्मार्क जानेकी बात तो दूर, अभी मेरा लन्दन जाना ही अनिश्चित है।

मैं चाहूँगा कि मेननके बारेमें आप अधिक स्पष्ट लिखें। लेकिन अब चूंकि आपने उनका उल्लेख किया ही है, इसलिए मैं उसकी जरूरतोंके बारेमें एस्थरसे पूछ रहा हूँ।

हृदयसे आपका,

डॉ० हेनिग डालसगार्ड
प्राध्यापक राजनीति शास्त्र
एलसीनोर, डेनमार्क

अंग्रेजी (एस० एन० १७२५३)की फोटो-नकलसे।

४४०. पत्र : रामसेवक शुक्लको

७ जून, १९३१

प्रिय मित्र,

आपका पत्र मिला। आप अपनी ईजाद[1]का पूरा ब्यौरा पूरी तरह समझाकर लिख दें।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजी (एस० एन० १७२५५)की माइक्रोफिल्मसे।

१. एक नई तरहकी तकली।

४४१. पत्र : श्रीराम शर्माको

स्थायी पता, साबरमती
७ जून, १९३१

प्रिय मित्र,

आपका पत्र मिला। आपने अपने पत्रमें जिन विषयोंकी चर्चा की है उनके बारेमें आपको असलमें प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीके पदाधिकारियोंके साथ बैठकर चर्चा करनी चाहिए जिससे कि एक-सी नीति अपनाई जा सके। 'यंग इंडिया' के पृष्ठोंमें तो मैं आम सिद्धान्तोंकी ही चर्चा कर सकता हूँ और अन्यायके स्पष्ट मामलोंकी ओर सरकारका ध्यान दिला सकता हूँ। आप भी मानेंगे कि इससे आगे जाना मेरे लिए मुमकिन नहीं होगा।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत् श्रीराम शर्मा
महामन्त्री, जिला कांग्रेस कमेटी
रोहतक (पंजाब)

अंग्रेजी (एस० एन० १७२५६) की माइक्रोफिल्मसे।

४४२. पत्र : अम्तुस्सलामको

८ जून, १९३१

प्रिय अमतुल,

अपनी गलत-सलत अंग्रेजीसे परेशान होनेकी जरूरत नहीं। लेकिन हिन्दी लिखना तुझे जल्द ही सीख लेना चाहिए। तू अगर साफ लिखावटमें उर्दू लिखे तो मैं पढ़ सकता हूँ। तुझे थोड़ेमें बात कहनेकी खूबी पैदा करनी चाहिए।

सस्नेह,

बापू

अंग्रेजी (जी० एन० २४०)की फोटो-नकलसे।

४४३. पत्र : पद्माको

८ जून, १९३१

चि० पद्मा,

तुम्हारा पत्र मिला है। तुम्हारा स्वास्थ्य सुधरता जा रहा है। यह तो बहुत ही बढ़िया खबर है। अब क्या संयुक्त प्रान्त जानेका इरादा छोड़ दिया है? खूब आराम करके अच्छी हो जाओ।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ६१२०) की फोटो-नकलसे तथा सी० डब्ल्यू० ३४७२ से भी।
सौजन्य : प्रभुदास गांधी

४४४. पत्र : शारदाबहन चि० शाहको

मौनवार, ८ जून, १९३१

चि० शारदा,

तेरे इस बारके अक्षर अच्छे कहे जा सकते हैं। अभी भी सुधारकी गुंजाइश है। क्या लिखें, यह क्यों नहीं सूझता? क्या किया, क्या देखा, यह नहीं लिख सकती?

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९९०३) से।
सौजन्य : शारदाबहन जी० चोखावाला

४४५. पत्र : कान्ति पारेखको

मौनवार, ८ जून, १९३१

चि० कान्ति,

तुम्हारे पत्रका जवाब इस प्रकार है। प्रेमके दो अर्थ हैं — एक मोह और दूसरा अहिंसा। स्त्री-पुरुषके बीच प्रेम अधिकतर मोहका रूप ही धारण करता है। इसलिए वह त्याज्य है और वह सर्वव्यापी भी नही हो सकता। एक पुरुष अनेक स्त्रियोंसे विवाह करे या एक स्त्री अनेक पुरुषोंसे विवाह कर ले, तो संसार नष्ट हो जाये। अहिंसा रूपी प्रेम ही सर्वव्यापी होता है और उसे सीखनेके लिए स्त्री-पुरुषोंको एक-दूसरेके प्रति मोहजनित प्रेम छोड़ ही देना चाहिए। संसार-चक्र इस मिश्रित प्रेमसे ही चलता है और चलता रहेगा। इसीलिए स्वार्थ और परमार्थ दोनों संग-संग चलते

हैं। मैंने शुद्धतम प्रेमके बारेमें लिखा है। आदर्श समझ लें तो उससे शुद्ध व्यवहार करना सीख सकते हैं। आदर्शको व्यवहारके अनुसार ढालने लगे तो दोनों सरल हो जायें। इसमें कुछ समझमें न आया हो, तो फिर पूछना। तुम्हारा पत्र इसके साथ है।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ६२६९) की फोटो-नकलसे।

४४६. पत्र : नारणदास गांधीको

[बारडोली
८ जून, १९३१][1]

चि० नारणदास,

तुम्हारे तीन पत्र एक साथ मिले हैं। मै आज शामको बम्बईके लिए रवाना होऊँगा। आज पण्डित जवाहरलाल मिलने आये हैं। मेरे साथ ही वापस आयेंगे। खान अब्दुल गफ्फार खाँ तो हैं ही। देवदासने उनके बारेमें एक सुन्दर लेख 'यंग इंडिया'[2] के लिए लिखा है। उसे पढ़ना। लीलाधरका क्या हुआ? उसकी कुछ मदद की जा सके तो करें। विट्ठलको तो लिखूँगा ही।

फिलहाल तो भगवानजी का मामला ठिकाने लगा ही समझें। उसका मन असमंजसमें नहीं है, बल्कि बहुत अस्थिर है। जिनसे बाहरका काम ठीक न होता हो, उन्हें आश्रममें वापस चला जाना चाहिए ऐसा मैंने छगनलालको लिखा जरूर है। सुरेन्द्रको जो पत्र लिखा है, उसके बारेमें वह तुम्हें समझायेगा। शायद तुम्हें उसकी नकल भी भेजे।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च:]

मैं ११ तारीख शामको बम्बईसे चलकर १२ तारीख शामको बोरसद पहुँचूंगा। इसलिए ११ की डाक सूरत भेजोगे, तो मुझे वहाँ मिल जायेगी।

चि० इन्दु वहाँ था फिर लौटकर आ रहा है। उसका ध्यान रखना। वह कान्ति पारेखका भाई है। वह स्वभावका स्नेही और खिलाड़ी भी है। सीधा है। उससे बराबर काम लेना। अध्ययन तो करता ही रहे।

बापू

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो : श्री नारणदास गांधीने

१. देवदास द्वारा अब्दुल गफ्फार खाँपर लिखे गये लेखके उल्लेखसे। गांधीजी ८ जूनको बारडोलीसे बम्बईको रवाना हो गये; देखिए अगला शीर्षक।

२. ११-६-१९३१ के अंकमें।

४४७. पत्र : नारणदास गांधीको

बम्बई जाते हुए
८ जून, १९३१

चि० नारणदास,

अंकलेश्वरसे १–४–१९३०को भेजे गये रुपये ५४३–४–० खादी खातेमें डाल देना और खादी-कार्यके लिए अंकलेश्वरके छोटुभाई गांधीको भेज देना। उनसे खर्चका हिसाब लिख भेजनेको कहना।

छोटुभाईका पता है: ताल्लुका समिति।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती एम० एम० यू०–१ से।

४४८. पत्र : घनश्यामदास बिड़लाको

८ जून, १९३१

भाई घनश्यामदास,

आपका पत्र मिला। शूस्टर[1] पर खत भी मिला। उसे पढ़ लुंगा। समय तो बारीक है हि और बारीक होता जायगा। यदि हम पारमार्थिक दृष्टिसे काम लेंगे तो इसमें से भी परिणाम अच्छा आ सकता है।

सेनगुप्ताने पंच बनानेकी बात मान ली है। अब इलेक्शन मोकुफ करनेकी बात छोड़ दी है। अब तो मैं कल हि मुंबई पहोंच जाउंगा उमेद है दोनों[2] आ जायंगे।

बापू

सी० डब्ल्यू० ७८८९ से।
सौजन्य : घनश्यामदास बिड़ला

१. सर जॉर्ज शूस्टर, जो उस समय वाइसरायकी परिषद्में राजस्व सदस्य थे।
२. जे० एम० सेनगुप्त और सुभाषचन्द्र बोस।

४४९. भाषण : बम्बईमें

१० जून, १९३१

आज सुबह प्रभातफेरियाँ फिर शुरू कर दी गईं। लगभग पचास कांग्रेस सदस्य आज सुबह साढ़े पाँच बजे चौपाटी मैदानमें एकत्र हुए और बम्बई कांग्रेस कमेटीके अध्यक्ष श्री के० एफ० नरीमानके नेतृत्वमें सबसे पहले गांधीजी के निवास मणिभवन उनका आशीर्वाद लेने गये।

गांधीजीने छज्जेपर खड़े होकर जुलूसमें शामिल लोगोंको सम्बोधित किया। उन्होंने कहा कि आपको अपनी प्रभातफेरी नित्य ही सूर्योदयसे पहले पूरी कर लेनी चाहिए और ईश-प्रार्थना तथा देशभक्तिके गिने-चुने भजन गाते चलना चाहिए। ऐसे आपत्तिजनक गीत नहीं गाने चाहिए जो कांग्रेसके आदर्शोंसे मेल न खाते हों।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, १०-६-१९३१

४५०. टिप्पणियाँ

कांग्रेसका पदाधिकारी कौन हो सकता है?

सिन्धके एक भाई पूछते हैं :

१. क्या विदेशी सिगरेट और तम्बाकूका व्यापारी कांग्रेस-कमेटीका प्रधान बन सकता है?

२. क्या विदेशी कपड़ेके व्यापारी कांग्रेस कमेटीके उप-प्रधान और कोषाध्यक्ष बन सकते हैं?

३. क्या विदेशी कपड़ेके व्यापारियोंसे सम्बन्ध रखनेवाला व्यक्ति कांग्रेस कमेटीका मन्त्री बन सकता है?

सवाल बड़े गलत ढंगसे पूछे गये हैं। यदि पत्र-लेखकने पूछा होता कि अमुक आदमीको पदाधिकारी बनना चाहिए या नहीं, तो मैं अपनी राय उसके गुण-दोषोंका विचार करके दे सकता था। परन्तु जब वह पूछते हैं कि अमुक किस्मका आदमी पदाधिकारी बन सकता है या नहीं, तो वह कांग्रेसके संविधानके लोकतन्त्रीय स्वरूपके विषयमें अपने अज्ञानका ही परिचय देते हैं। कोई शराबी या दुश्चरित्र व्यक्ति भी, यदि उसके मतदाता उसे चुनें तो कांग्रेस कमेटीका प्रधान या मन्त्री बन सकता है। परन्तु हम यह मान सकते हैं कि यदि मतदाता शराब न छूनेवाले और चरित्रवान होंगे, तो वे शराबी या दुश्चरित्र व्यक्तिको नहीं चुनेंगे। इसी प्रकार यदि उनमें स्वदेशी

के प्रति पूरी-पूरी श्रद्धा होगी, तो वे किसी ऐसे आदमीको नही चुनेंगे जो विदेशी कपड़े या आजकल भारतमें भी बननेवाले विदेशी मालका व्यापार करता हो। जहाँतक राष्ट्रको हानि पहुँचानेवाली जैसे कि शराब और नशीली चीजों वगैराका सवाल है, कांग्रेसवाले उनमें विदेशी और स्वदेशीका कोई भेद नहीं करेंगे। हानिकर चीजें, स्वदेशी हों या विदेशी, त्याज्य ही समझी जानी चाहिए।

खादीके रूपमें मिलका मोटा कपड़ा

अनेक स्थानों, मद्रास, बंगाल और बम्बई प्रान्तों व दूसरी जगहोंसे शिकायतें आ रही है कि मिलका मोटा कपड़ा खादी कहकर बेचा जा रहा है और यद्यपि कांग्रेसके साथ करार हो जानेके बादसे मिल-मालिक थानोंपर खादीके लेबल तो नही चिपकाते है पर उनकी मूल्य-सूचीमें और अन्यत्र मोटे कपड़ेको खादी कहा जाता है। अगर यह बात सच है तो यह स्पष्ट ही कांग्रेसके साथ हुए करारका उल्लंघन है। कांग्रेसके आन्दोलनके कारण मिलोंको जो लाभ हो रहा है, उन्हें उसपर सन्तोष करना चाहिए। लेकिन अगर वे लोभवश अवैध रूपसे, किसी भी ढंगसे और किसी भी स्तरपर अपने मालके लिए 'खादी' नामका उपयोग करेंगे, तो यह उस लालची आदमीकी नकल करने जैसा होगा जिसे मुफ्त नारियल पानेके लालचमें अपनी जानसे हाथ धोना पड़ा था।

स्वराज्य भवन अस्पताल

श्री मोहनलाल नेहरू लिखते है :[1]

दानकी इस राशिमें नैनीतालमें मिली राशि शामिल नहीं है, जो इस स्तम्भमें यथासमय प्रकाशित की जायेगी।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ११-६-१९३१

४५१. मेरी श्रद्धा

एक बंगाली भाईने, आवश्यकता पड़नेपर अपना नाम और पता भी छाप देनेकी स्वीकृतिके साथ, मुझे जो लम्बा पत्र लिखा है, वह संक्षेपमें मैं नीचे देता हूँ :

> भगतसिंह और उनके साथियोंके बारेमें बहुत कुछ कहा गया है, फिर भी अभीतक मुझे यह समझनेमें कठिनाई हो रही है कि कराची कांग्रेसका उनसे सम्बन्धित प्रस्ताव पास करना किस हदतक बुद्धिमानीका काम था।
>
> भगतसिंह विषयक आपके वचनोंका और उनकी स्तुति करनेवाले कराचीके प्रस्तावका दुरुपयोग करके यहाँ कुछ स्वार्थी राजनीतिज्ञ अपना मतलब गाँठ लेने

१ पत्र यहां नहीं दिया जा रहा है। उसमें दानकर्ताओंकी सूची दी गई थी। दानकी अपीलके लिए देखिए "इलाहाबाद कांग्रेस अस्पतालके लिए अपील", १४-५-१९३१।

और आपके प्रभावको नष्ट करनेके लिए जो तरह-तरहके विचित्र और छिपे प्रयत्न करते हैं, मुझे लगता है कि मैं उनका वर्णन आपके सामने नहीं कर सकता।

१. वे आपपर आरोप लगाते हैं कि आपने प्रस्तावमें शब्दोंका प्रयोग बड़ी कृपणताके साथ किया है। वे लोग नौजवानोंके मनपर यह असर डालनेकी कोशिश करते हैं कि आपके दिलमें उन अभागे लोगोंके लिए सच्ची सहानुभूति बिल्कुल ही नहीं थी, और नौजवानोंके तीव्र आन्दोलनका सामना न कर सकनेके कारण लाचार होकर, और पण्डित जवाहरलालको खुश करनेके लिए ही आपने उस प्रस्तावका समर्थन किया और भगतसिंह तथा उनके साथियोंकी प्रशंसा की।

२. वे आपके प्रामाणिक और निष्कपट होनेपर शंका करते हैं। और आपके (तथा आपके कार्यको) कमतर बतानेके लिए बंगालमें छिपे तौरपर ऐसे विचार फैलानेकी कोशिश कर रहे हैं कि आपने कराचीमें भगतसिंह सम्बन्धी प्रस्तावपर तो सक्रिय सहानुभूति प्रकट की, परन्तु फरीदपुर परिषद्में गोपीनाथ साहा[1] की स्तुति करनेवाले प्रस्तावको पास करनेकी जिम्मेदारीके लिए स्वर्गीय देशबन्धुदासकी कड़ी आलोचना की थी; जब कि गोपीनाथ साहाको भी भगतसिंहकी तरह ही फाँसी दी गई थी। वे यहाँतक कहते हैं कि आप प्रान्तीय पक्षपातसे मुक्त नहीं हैं; वे लोग बंगालमें प्रान्तीय भावनाको उकसाकर आपके प्रभावको घटानेके हर अवसरका लाभ उठा रहे हैं। वे कहते हैं कि जिस कामके लिए भगतसिंह और उनके साथियोंकी जानें गई, उसी कामके लिए इस साल बंगालमें बहुतसे बंगाली नौजवानोंने अपने प्राणोंकी बलि दी है। बंगालमें इस प्रकार जो लोग मरे हैं, उनमें विनय बोस और उसका साथी, चटगाँव-शस्त्रागारको लूटनेवाले लोग वे २१ लड़के जो जलालाबादकी पहाड़ियोंपर ब्रिटिश फौजके साथ लड़ते हुए वीरगतिको प्राप्त हुए, और जिनका पराक्रम आपकी कल्पनासे कहीं अधिक साहसपूर्ण एवं काव्यमय था — शामिल हैं। परन्तु कैसा आश्चर्य है कि इनमें आपको काव्य नहीं दिखाई दिया; आपके मुँहसे सहानुभूतिका एक शब्द भी न निकला। ऐसे छलपूर्ण ढँगसे उनकी प्रान्तीय भावनाको जगानेपर उनकी आपमें और आपकी अहिंसात्मक प्रणालीमें श्रद्धा शेष नही रहती।

भगतसिंह विषयक प्रस्ताव मैंने तैयार किया और पास करवाया; उसके औचित्यके बारेमें मैं अपनी शंका प्रकट कर चुका हूँ किन्तु यह इसलिए नही कि उक्त प्रस्ताव तात्विक दृष्टिसे ठीक नहीं था। बल्कि मैंने ऐसा उस गलतफहमीकी खातिर किया था जो उसकी वजहसे पैदा हुई है। परन्तु पाठकोंको यह जान लेना चाहिए कि उक्त प्रस्ताव पेश करनेके लिए मैं न तो नौजवानोंके भयसे प्रेरित हुआ था और न उसमें मेरा उद्देश्य पण्डित जवाहरलालको खुश करनेका ही था। नौजवानोंके आगे झुकने और पण्डित जवाहरलालको खुश करनेमें मुझे शर्म आती हो, सो बात भी नहीं है।

१. देखिए खण्ड ४२, पृष्ठ २३५-६।

नौजवानोंके आगे झुकनेसे यदि देशकी भलाई होती हो, और सिद्धान्तकी हत्या न करनी पड़ती हो, और फिर भी मैं उनके सामने न झुकूँ तो मैं मूर्ख माना जाऊँ। और पण्डित जवाहरलालको प्रसन्न रखने और उनके उस असीम प्रेमको, जिसका पात्र होनेका सौभाग्य मुझे प्राप्त है, बनाये रखनेके लिए तो मैं बहुत कुछ करनेके लिए तैयार हो जाऊँगा। परन्तु इस मामलेमें मुझे ऐसी किसी प्रेरणाकी आवश्यकता ही नहीं थी। भगतसिंह और उनके साथियोंकी फाँसीकी सजा घटानेके लिए आन्दोलनमें मैंने दिलचस्पी ली थी। उस काममें मैंने अपनी सारी शक्ति लगा दी थी। उस करुण कथाके सूत्रधारके जीवनका मुझे इसीलिए अध्ययन करना पड़ा। उनके भक्त-पितासे और दूसरे लोगोंसे, जो भगतसिंहसे, उनके कृत्यके कारण नहीं, बल्कि उनकी सच्चरित्रता के कारण स्नेह रखते थे, मुझे परिचय प्राप्त करना आवश्यक हुआ। इस प्रकार स्वाभाविक रूपसे मैं उस प्रस्तावकी दिशामें बढ़ता चला गया। मैं इतना भावनाशून्य व्यक्ति नहीं हूँ कि जिन संयोगोंमें सहानुभूतिकी जरूरत हो, उनमें भी मेरा हृदय न पसीजे।

अतएव अगर उक्त बंगाली युवकोंमें से किसीके लिए दिलचस्पीके साथ काम करना मेरे लिए आवश्यक हो गया होता और अगर मेरी यह कल्पना होती कि मैं उनके लिए अपनी शक्ति-भर कुछ कर सकता हूँ, तो मैंने उतनी ही तत्परताके साथ उनके मामलेमें भी जान लड़ाई होती। मैं मानता हूँ कि मुझमें प्रान्तीय पक्षपात रखनेकी शक्ति ही नहीं है। मुझे जितना पंजाब प्रिय है उतना ही बंगाल भी प्रिय है। और, बंगालसे युवावस्थामें मुझे जो प्रेरणा मिली है, उसके लिए तो मैं उसका खासतौरपर ऋणी हूँ। यह सच है कि गोपीनाथ साहा विषयक प्रस्तावके बारेमें, किस वस्तुपर जोर दिया जाये, इस बातको लेकर देशबन्धुके और मेरे बीचमें मतभेद हो गया था।

मेरी समझमें तो गोपीनाथ साहा सम्बन्धी मेरा प्रस्ताव[1] कराचीवाले प्रस्तावसे तत्वतः भिन्न नहीं था। फिर भी पाठक यह जान लें कि हमारे दरम्यान चाहे जो मतभेद रहे हों, तो भी देशबन्धुके साथ मेरी मित्रता सदा कायम ही रही। वस्तुतः उनके स्वल्प जीवनके अन्तिम दिनोंमें तो हम अपने आदर्शों और उनतक पहुँचनेके तरीकोंके बारेमें एक-दूसरेके बहुत ही नजदीक पहुँच चुके थे।

इसलिए यह जानकर मुझे दुःख होगा कि बंगालमें मेरे विरुद्ध, थोड़ा-बहुत ही क्यों न हो, गुप्त प्रचार-कार्य होता है। बंगालमें मेरे बहुतेरे कीमती साथी हैं। मैं चाहता हूँ कि उनकी संख्या बढ़ती रहे। बंगालके नवयुवकोंका सहयोग कितना बहुमूल्य है, मैं इसे जानता हूँ। मुझे उनकी और जिस देशपर उन्हें इतनी अधिक भक्ति है,—यह दुःखकी बात है कि कभी-कभी यह भक्ति अन्धभक्ति होती है—उस देशकी खातिर उनके इस सहयोगकी जरूरत है। बिला वजह किसी प्रकारका पूर्वग्रह रखकर उन्हें एक सच्चे सेवककी सेवासे हाथ नहीं धो बैठना चाहिए। अगर देशके नौजवानोंपर मेरा कुछ भी प्रभाव हो, तो उस कीमती पूँजीका उपयोग मैं मातृभूमि

१. देखिए खण्ड २४, पृष्ठ २७२-७६।

की स्वतन्त्रताके लिए करना चाहता हूँ। अतः मुझे प्रसन्नता है कि पत्र-लेखकने मुझे अपनी स्थिति स्पष्ट करनेका अवसर दिया। बंगालके या किसी भी प्रान्तके युवकों पर मेरा प्रमुत्व कायम रहे या न रहे, मुझे तो उच्च स्वरमें अपनी धार्मिक श्रद्धाका ऐलान करना ही होगा। भारतवर्षके भूखों मरनेवाले करोड़ोंकी मुक्ति सत्य और अहिंसा द्वारा ही प्राप्त की जा सकती है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ११-६-१९३१

४५२. भूल सुधार

२८ मई, १९३१ के हिन्दी नवजीवनमें 'संयुक्त प्रान्तके किसानोंसे' शीर्षक लेख[1] की एक भूलकी ओर मेरा ध्यान आकर्षित किया गया है, जो दुर्भाग्यसे उसमें रह गई है। उक्त लेखके पाँचवें अनुच्छेदकी ग्यारहवी पंक्तिमें 'अठन्नी या चवन्नी' शब्द हैं। वहाँ 'चवन्नी' के स्थान पर 'बारह आना' होना चाहिए था। मुझे इस भूलके लिए खेद है, परन्तु मुझे आशा है कि इसके कारण किसीको भ्रम नही हुआ होगा। क्योंकि लेखकी पूर्वोक्त पंक्तियोंको देखते हुए ऐसे शककी कोई गुंजाइश नहीं रह जाती।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ११-६-१९३१

४५३. अस्पृश्यताका विष

हिन्दू धर्मके सभी प्रेमियोंको नीचे लिखा पत्र पढ़कर हर्षके साथ-साथ दुःख भी अवश्य ही होगा।[2]

अपनी बहादुरी और दृढ़ताके लिए श्री सुबानागौंडर बहुत ही धन्यवादके पात्र हैं। मैं उन्हें यही सलाह दे सकता हूँ कि वे अपने गाँवके अस्पृश्योंकी रक्षा करते हुए अपने सिर हर तरहकी जोखिम उठायें, और फिर भी गाँववालोंके लिए दिलमें थोड़ा भी वैरभाव न रखें। अन्तमें वे देखेंगे कि गाँववाले उन्हें सतानेसे बाज आ गये हैं। पहले तो लोग उनकी भलमनसाहतको कमजोरी मानेंगे, परन्तु बादमें वे उसकी तहमें छिपी हुई शक्तिके दर्शन कर सकेंगे। क्योंकि जब लोग देखेंगे कि वे उनके प्रति नम्र और क्षमाशील हैं, और फिर भी अस्पृश्योंकी रक्षा करनेमें पहाड़की तरह

१. देखिए "संयुक्त प्रान्तके किसानोंसे", २३-५-१९३१।

२. यहाँ नहीं दिया जा रहा है। इसमें अस्पृश्योंको अपने कुएँसे पानी भरने देनेके कारण जिला कोयम्बतूरमें कुगालुर निबासी एक कर्मठ कार्यकर्त्ता सुबानागौंडरको उनके गाँववाले कितना परेशान कर रहे थे, इसका वर्णन था।

अटल है, तो उन्हें फौरन ही अपनी भूल नजर आने लगेगी। जैसे-जैसे समय बीतेगा, गाँववालोंके साथ लोगोंकी हमदर्दी नहीं रहेगी। और श्री सुबानागौंडरको जनताकी सक्रिय सहानुभूति और सहायता प्राप्त हो जायेगी। शर्त सिर्फ यही है कि उन्हें अपने सर्वस्वकी कुर्बानीके लिए तैयार हो जाना चाहिए: गाँववालोंके पापपूर्ण बहिष्कार के कारण यदि मजदूर भड़क ही जायें, तो उन्हें अपने खेत बिना जुते ही पड़े रहने देनेको तैयार रहना चाहिए। उनको साथ देनेवाले उनके चार मित्र हैं, इस समाचारसे मुझे कुछ आश्वासन मिलता है। परन्तु इन मित्रोंको खो बैठनेपर भी उन्हें अपने संकल्पको पूरा करनेकी तत्परता रखनी चाहिए, क्योंकि मेरा विश्वास है कि वे जो-कुछ खोयेंगे, सो प्राप्त करनेके लिए ही। ईश्वर जिसे आशीर्वाद देना चाहता है, कभी-कभी उसकी पूरी-पूरी परीक्षा करता ही है।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, ११-६-१९३१

४५४. इसका नाम है दरिद्रता

सिन्धके देश सेवा मण्डलने सिन्धके भीलोंकी आर्थिक स्थितिके सम्बन्धमें एक छोटी-सी पुस्तिका प्रकाशित की है। उसमें जयरामदास दौलतरामके दो लेख हैं, जो उन्होंने सिन्धके थरपारकर जिलेमें रहनेवाले भीलोंकी स्थितिकी खुद जाकर सावधानी के बाद लिखे हैं। यह अंचल एक मरुभूमि है। श्री जयरामदास लिखते हैं।

> **रेगिस्तानमें खेती करना, कुदरतके विरुद्ध घनघोर लड़ाई ठानना है। . . . इस हिस्सेमें खेतीकी पैदावार फी एकड़ ५ रु० से ज्यादा नहीं होती। और यह भी नहीं कि हर साल किसान सब जमीन जोतता हो। . . . रेतीली जमीन, कम बारिश, टिड्डियोंका त्रास और अनाजके सस्ते भाव; इस हालतमें उनका खातेदारोंके लिए डूबनेसे बच सकना कठिन है। . . . मैंने सब प्रकारके भील देखे हैं, वे इनेगिने लोग जो फिलहाल कर्जदारीसे मुक्त हैं; वे लोग जो हमेशासे कर्जदार हैं और आधापेट खाकर जीते हैं, और वे लोग जिन्हें गरीबीसे ऊपर उठकर कभी अच्छे दिन देखनेकी आशा ही नहीं है। यहाँ कुछ गाँवोंके बारेमें थोड़ी निश्चित बातें[1] पाठकोंके सामने रखना ही सबसे अच्छा है।**

इन लोगोंको बरसोंतक ऐसी जमीन जोतनेके लिए मिलनी चाहिए, जिसका लगान माफ हो। ऐसे लोगोंके लिए ही मैंने मुफ्त नमककी माँग पेश की थी, और मैं जानता हूँ कि हमारी बातचीतके अन्तमें नमक सम्बन्धी छूट देते हुए लॉर्ड इर्विनको आनन्द हुआ था। मैं आशा रखता हूँ कि सारे देशके कार्यकर्त्ता आधेपेट जीनेवाले ग्रामवासियोंतक मुक्त नमकका सन्देश पहुँचायेंगे और ऐसे नमकके क्षेत्र खोज निकालेंगे,

१. यहाँ नहीं दी जा रही हैं।

जो सामुदायिक उत्पत्तिके लिए नही तो कमसे-कम गाँवकी जरूरतके लिए उपयोगी होंगे। वे ये ही लोग हैं जिनके लिए चरखा आशा और सुखका सहारा है, ग्रामीण अर्थशास्त्र उद्योगप्रधान अर्थशास्त्रसे भिन्न है। मानवीय अर्थशास्त्र और केवल जड़-प्रकृतिके शोषणका अर्थशास्त्र एक ही नहीं है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ११-६-१९३१

४५५. असममें किसानोंकी परिस्थिति

> असम एक भयंकर आर्थिक संकटकी चपेटमें आ गया है। उत्तर लखीमपुर, शिवसागर, दारांग और नौगाँव, गोलपाड़ा और कामरूप सभी जगहोंसे इस अभावके फलस्वरूप रैयतपर टूटनेवाली मुसीबतों और दुःख-दर्दकी कहानियाँ सुननेको मिल रही है। हजारों लोग आम तौरपर मैमनसिंहसे आनेवाले लँगोटीके नामपर कुछ चिथड़े ही पहने हुए प्रवासियोंके जत्थेके जत्थे . . . भीख माँगनेके लिए गोलपाड़ा और धुबरी नगरोंकी ओर भाग रहे हैं। . . .।
>
> गोलपाड़ा और शिवसागरमें, नौगाँव और उत्तर लखीमपुरमें गत कुछ वर्षोंसे हर वर्ष बाढ़ोंके कारण बार-बार फसलें चौपट होती रही हैं। पिछली जुलाईमें भूकम्पकी एक और विपत्ति भी आई थी। . . .
>
> इस आर्थिक मन्दीकी चपेटमें पड़कर अब हर जगहसे लगानकी माफीके लिए आवाजें उठने लगी हैं। . . .
>
> लगता है कि सरकार अबतक अपने दिमागसे असहयोगके भूतको नहीं निकाल सकी है। . . . वह किसानोंकी लगान-अदायगीकी असमर्थताको उनकी अनिच्छा मान बैठी है और अब वह किस्त अदा करनेकी आखिरी तारीखतक तरह-तरहके अप्रत्यक्ष दबाव डालकर उस अनिच्छाको तोड़नेपर तुल गई है।

उपयुक्त प्रतिवेदन[1] असम प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीने भेजा है। यदि प्रतिवेदनमें स्थितिका बिलकुल ठीक-ठीक विवरण है, तो स्पष्ट ही लगानमाफीका पूरा-पूरा औचित्य है, और प्रतिवेदनमें कही गई बातोंकी सत्यतापर सन्देह करनेका कोई कारण दिखाई नहीं पड़ता।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ११-६-१९३१

१. अंशतः उद्धृत।

सार्वजनिक मन्दिरोंमें जानेकी छूट दूसरे सब हिन्दुओंको हो, और अन्त्यजोंको न हो, ऐसे अत्याचार स्वराज्यमें नही टिक सकेंगे। वेदों और दूसरे शास्त्रोंकी प्रामाणिकता अस्वीकार नहीं की जायेगी, परन्तु जिस हृदतक इन धर्म-ग्रन्थोंका उपयोग जनताके आचार-विचारका नियमन करनेमें होगा, उस हृदतक उनका अर्थ करनेका काम व्यक्तियोंका नहीं, बल्कि अदालतोंके जिम्मे रहेगा। धर्मबुद्धिके विधि-निषेधोंकी कद्र की जायेगी, परन्तु इसके लिए सार्वजनिक सदाचार या दूसरेके अधिकारोंको हानि पहुँचाकर नहीं। जो असाधारण विधि-निषेध अपनायेंगे, उन्हें स्वयं अड़चन उठानी पड़ेगी और अपनी इस सुविधाका दाम चुकाना होगा। रूढ़ि या धर्मके नामपर कोई भी व्यक्ति या वर्ग अपनेको उच्च मान ले, तो कानून उसे सहन नहीं करेगा। परन्तु यह सब तो मेरा स्वप्न है। मै कोई कांग्रेस नही हूँ। जो कांग्रेससे इसके विपरीत काम करवाना चाहते हों, वे जल्दीसे उसमें शामिल हो जायें और अपने-जैसे मत रखनेवाले दूसरोंको भी उसमें शामिल होनेकी प्रेरणा दें। कांग्रेस लोकमतकी प्रतिनिधि है, या यों कहिए कि उसका संविधान लोकमतकी प्रतिनिधि बनने जितना विशाल है।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, ११-६-१९३१

४५७. भाषण : देशसेविका सभा, बम्बईमें

११ जून, १९३१

गांधीजीने आज सुबह-सुबह चन्द मिनटोंके लिए देशसेविकाओंके समक्ष भाषण करते हुए कहा कि वे शान्तिपूर्ण ढंगसे अपना धरना जारी रखें। धरना देनेका अधिकार केवल उनको ही मिलना चाहिए जो आदतन खादी पहनते हों। श्रोताओंमें से किसीके पास यदि विदेशी वस्त्र हों तो उनको होलीमें जलानेके लिए दे देना उचित है। यदि उनके पास मिलका कपड़ा हो, तो उन्हें चाहिए कि वे उसे गरीब और जरूरतमन्द लोगोंमें बाँट दे। खद्दरका उद्देश्य भूखों मरते किसानों-मजदूरोंकी मदद करना है। यदि खादीको प्रोत्साहन दिया जाये तो किसान-मजदूरोंको अपनी मेहनतका पूरा-पूरा लाभ मिलने लगेगा, जब कि मिलके वस्त्रोंसे उनको रुपयेमें एक आना ही मिल पायेगा। इस मानवीयतापूर्ण उद्देश्यको बल पहुँचानेके लिए आप लोगोंको खद्दर ही पहनना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, ११-६-१९३१

४५८. भाषण : बम्बईमें[1]

११ जून, १९३१

सबसे पहले तो मैं आपसे इस बातके लिए क्षमा चाहता हूँ कि मैंने आप लोगोंको इतने सवेरे-सवेरे कष्ट दिया। 'हिन्दुस्तानी सेवा दल'का उद्देश्य देशकी सेवा करना है। अबतक तो मैं जब भी 'भारत सेवक' (सर्वेंट्स ऑफ इंडिया)का नाम सुनता, तो मैं बड़ा भयभीत हो उठता था। क्योंकि भारतके शासक भी अपने-आपको भारत सेवक ही बतलाते हैं। ये तथाकथित भारत सेवक वास्तवमें कभी अपने नामके अनुरूप नहीं हो सकते। वे ब्रिटिश साम्राज्यके सेवक हैं और ब्रिटिश साम्राज्य तथा भारतभूमि दोनों ही की सेवा एक-साथ करना असम्भव है। मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि यदि आप इन तथाकथित 'भारत-सेवकों'के पद-चिन्होंपर चलनेकी कोशिश करें तो आप भारतकी कोई सेवा नहीं कर सकेंगे। इसके लिए आपको अपने अन्दर सच्ची सेवाकी लगन पैदा करनी पड़ेगी, जो उन लोगोंको छू तक नहीं गई है। यदि सत्ता ग्रहण करनेके बाद आप अपनी सत्ताको क्रूरतापूर्वक जनतापर थोपनेकी कोशिश करने लगेंगे तो फिर जनताकी सेवा किस प्रकार कर पायेंगे?

हमारे अन्दर सच्ची सेवाकी यह भावना नहीं है, इसीलिए हमारे बीच प्रतिस्पर्धा और असन्तोष काफी बड़े पैमानेपर घर कर चुके हैं। मुझे यह सुनकर बड़ी ठेस लगी कि लोगोंने विभिन्न कांग्रेस संगठनोंमें ऊँचे पद प्राप्त करनेके लिए धनका इस्तेमाल शुरू कर दिया है, और इस तरह एक अस्वास्थ्यकर प्रतियोगिताका वातावरण पैदा कर दिया है। सच्चा कार्यकर्त्ता तो वही है जो सबसे पिछली कतारमें होनेपर भी अपना काम स्थिरमतिसे करता रहता है। सच्ची सेवाके खरेपनकी कसौटी केवल यह बात नहीं होती कि कितना अधिक कार्य सम्पन्न किया गया है, बल्कि एक बड़ी हदतक उसका दारोमदार इस बातपर रहता है कि वह कार्य विनम्रताकी भावनासे किया गया है या नहीं। मैंने अभी-अभी जिन गुमराह लोगोंका जिक्र किया था, लगता है वे बल-प्रयोगके जरिए अपने देशकी सेवा करना चाहते हैं। परन्तु इससे निश्चित ही यह प्रकट होता है कि उनकी मन:स्थिति सर्वथा अवांछनीय है। यदि कोई अपने भले उद्देश्यकी पूर्तिके लिए दूषित या आपत्तिजनक साधन अपना ले तो वह न तो कभी फल-फूल सकता है और न ही किसीकी कोई भलाई करनेमें समर्थ हो सकता है।

मेरे लिए यह सोचना निश्चय ही गलत होगा कि यदि मैं भारतका सम्राट बन जाऊँ तो भारतकी सेवा ज्यादा अच्छी तरह कर सकूँगा। किसी समय फ्रांसके राजनीतिक जीवनमें बिलकुल ऐसी ही स्थिति बन गई थी और लोग अपने

१. 'हिन्दुस्तानी सेवा-दल' द्वारा आयोजित प्रशिक्षण-शिविरमें शामिल हुए उन कार्यकर्त्ताओंके समक्ष, जिन्होंने गांधीजी से उनके बम्बई-निवास 'मणि भवन' में मुलाकात की थी।

विरोधियोंको राजनीतिक क्षेत्रसे हटानेके लिए क्रूरसे-क्रूर तरीके अपनाया करते थ। परन्तु 'हिन्दुस्तानी सेवा दल' के कार्यकर्त्ताओंको अपने कार्यकी बुनियाद शान्ति और सत्यपर रखनी चाहिए।

उनको अपने अन्दर अधिक-से-अधिक विनम्रताकी भावना भी पैदा करनी चाहिए; और यदि उनको लगे कि उनके कामको समुचित महत्व नहीं दिया जा रहा है तो भी उनको अपने प्रयत्नोंमें न तो ढ़िलाई आने देनी चाहिए और न ही अपने कामका स्तर तनिक भी गिरने देना चाहिए। उनको अपने साथियोंके साथ पर्याप्त सहिष्णुताका व्यवहार करना चाहिए और अपनी माताओं तथा बहनोंको पूरा मान-सम्मान देना चाहिए। मै जानता हूँ कि विनम्रता, सत्य, प्रेम और शान्तिका कोई भी नितान्त निर्दोष संगम इस संसारमें अत्यन्त दुर्लभ है; फिर भी आप सबको उसे पानेका प्रयास अवश्य करना चाहिए। याद रखिए कि यदि सेनामें सभी लोग सेनापति बनकर आदेश देने लगें, तो युद्धके लिए सैनिक बचेंगे ही नहीं। मैं सच्चे हृदयसे आशा करता हूँ कि मैंने आज दिनके सबसे शुभ मुहूर्तमें आपके सामने जिस आदर्शकी बातकी है, आप इसके अनुरूप बननेकी कोशिश करेंगे और मैं पूरे विश्वासके साथ कह सकता हूँ कि यदि आप सच्चे हृदयसे कोशिश करेंगे और आजकी इस प्रभात-वेलाको सदा अपनी स्मृतिमें सँजोये रहेंगे तो आप अपनी और अपनी मातृभूमि दोनों ही की उत्तम सेवा करेंगे।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, १२-६-१९३१

४५९. पत्र : जमनादास गांधीको

बोरसद
१२ जून, १९३१

चि० जमनादास,

तुम्हारा स्वभाव भी न्यारा है। इतने दिन मेरे पास रहकर जानेके बाद महत्वपूर्ण बातें वहाँसे लिख रहे हो। इससे कई सम्बन्धित प्रश्न उठ खड़े होते हैं। उन्हें डाकसे भेजूँ या तुम्हें वापस बुला लूँ? बम्बईतक आनेका विचार करनेका कारण क्या है, यह जाननेकी इच्छा करनेपर तुम कारण नहीं बता सके और एकदम भाग गये। अब वहाँसे पत्र लिखकर ५,००० रुपयोंकी माँग की है। मेरी तुम्हें अब यह सलाह है कि तुम काका साहबको पत्र लिखो और उनके पास अपनी माँगका औचित्य सिद्ध करो। ऐसा करो, तो मेरा मार्ग सरल हो जायेगा। क्या मनु और बेबी वहाँ आ गये हैं?

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९३२४)से।
सौजन्य : जमनादास गांधी

४६०. भेट : यूरोपीय शिष्टमण्डलको

१२ जून, १९३१

गांधीजी ने लगभग तीस तरुण यूरोपीयोंके एक शिष्ट-मण्डलसे भेंट की, उनमें चार तरुणियाँ भी थीं। गांधीजी ने शिष्ट-मण्डलके अनुरोध कर भारतमें रहनेवाले अंग्रेजों और अन्य यूरोपीयोंके प्रति कांग्रेसके रुखको स्पष्ट किया।

गांधीजी ने कहा कि कांग्रेसका रुख वैमनस्यतापूर्ण नहीं है, बल्कि निश्चित तौर पर सक्रिय मैत्रीका है। उन्होंने शिष्ट-मण्डलको याद दिलाया कि कांग्रेसकी तो स्थापना ही एक अंग्रेज श्री ह्यूमने की थी और पार्लियामेन्टके सदस्यतक उसकी अध्यक्षता करते रहे थे। उन्होंने कहा कि मैं चाहता हूँ आप लोग कांग्रेसके उद्देश्यों और उसके इतिहासका अध्ययन करें और देखें कि कांग्रेसका मन्शा कभी किसी जाति या किन्हीं हितोंको नुकसान पहुँचाना नहीं रहा। यदि कांग्रेसके साथ आपकी सहानुभूति हो तो उसमें शामिल होना आपका कर्त्तव्य है। यह तो ठीक ही है कि भारतवासियोंको अपने देश भारतमें शासन चलानेका उसी तरह पूर्ण अधिकार होना चाहिए जिस प्रकार अंग्रेजोंको इंग्लैंडमें है। अंग्रेज; कुछ विशेष संरक्षणों और व्यापारिक अधिकारोंके लिए आग्रह कर रहे हैं ऐसा करना उनके लिए उचित नहीं है। भारतपर अपने शासनके डेढ़ सौ वर्षोंके दौरान उन्होंने अपने जो विशेषाधिकार हथिया लिये हैं उनको स्थायी बनानेका मतलब होगा असमानताके आधारपर मैत्री कायम रखना। इतना ही नहीं कि कांग्रेस अंग्रेजोंके प्रति वैमनस्य नहीं रखती, बल्कि वह तो उनके सहयोग, उनकी सहायता और उनके सम्पर्क तथा उनकी संगठन-क्षमताका स्वागत करती है। इस प्रकारके सहयोगका अर्थ असमानताके आधारपर सहयोग करना नहीं होता। शिष्ट-मण्डलसे गांधीजी की मुलाकात लगभग पन्द्रह मिनटोंतक चली।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १२-६-१९३१

४६१. भाषण : मरोलीमें[1]

१२ जून, १९३१

महात्मा गांधीने कुमारी मीठुबहन पेटिट द्वारा संचालित बुनाई-शालाके भवनका शिलान्यास किया। उन्होंने एक विशाल सभामें बोलते हुए कहा : यदि दस वर्ष पहले किसीने मुझे बताया होता कि बम्बईके एक बड़े ही प्रतिष्ठित परिवारकी कुमारी मीठुबहन पेटिट मोटा-झोटा खद्दर पहने, नंगे पाँवों, सर्दी-गर्मीकी चिन्ता किये बिना दिन-रात गाँव-गाँव घूमकर गरीबोंके बीच काम करेंगी और उनके बच्चोंको कताई, बुनाई और अन्य धन्धे सिखायेंगी, तो मैंने उसपर विश्वास न किया होता। हालाँकि मैंने पारसियों द्वारा किये गये कामको, मद्य-निषेध आन्दोलन शुरू करनेके दिनोंमें भी सराहा था, लेकिन मैं समझता था कि खद्दरके प्रचारके बिना केवल मद्य-निषेध आन्दोलन सफल नहीं हो सकेगा। शराबकी दुकानें बन्द कराना ही सबसे मुख्य बात नहीं है। यदि शराबी लोग शराब पीनेकी आदत नहीं छोड़ेंगे तो वे अवैध रूपसे शराब तैयार करने लगेंगे और आजकी तरह उसका अवैध व्यापार भी खूब चलेगा। लत लग जानेवालोंको जबतक कोई धन्धा नहीं सिखाया जायेगा तबतक वे शराब नहीं छोड़ पायेंगे। बड़ी-बड़ी फैक्टरियोंमें काम करनेवाले मजदूरोंको थकान दूर करनेके लिए कोई चीज चाहिए। स्वयं मैंने कभी शराब चखी भी नहीं है, लेकिन दक्षिण आफ्रिकामें थकानसे चूर मजदूरोंको मैंने अपने हाथों शराब दी। मेरे कुली सहयोगियोंने शराब माँगी और मैंने एक 'कैन्टीन'वालेसे लाकर उनको शराब दी। पशुओंकी तरह काममें जोते जानेवाले लोगोंको शराबकी जरूरत पड़ेगी, लेकिन घरोंके शान्त वातावरणमें काम करनेवाले लोग आसानीसे शराब छोड़ सकते हैं।

यदि कताई, बुनाई, पशु-पालन, चर्म-कार्य, इत्यादि ग्रामीण धन्धोंका पुनरुद्धार किया जाये तो ग्रामीण क्षेत्र पहलेसे अधिक समृद्ध बन जायेंगे। वे बम्बईके सट्टा बाजारके करोड़पतियों जितने धनी नहीं बनना चाहते; वे तो केवल इतना चाहते हैं कि कर्जसे मुक्ति मिल जाये। उनकी गोलकमें चाँदीके कुछ सिक्के जमा हो जायेंगे। उनको साहूकारोंसे कर्ज लेनेके बदले, अपनी बचतके पैसे साहूकारोंके पास जमा करने चाहिए। तब उनके पास अपने खुदके मकान हो जायेंगे और उनके पशुओंकी संख्या बढ़ जायेगी। उस क्षेत्रमें ऐसी ही प्रक्रिया शुरू हो गई है और भारतके सात लाख गाँवोंमें भी यही होना चाहिए। यह स्वराज्यका ही काम है। पिछले वर्ष उन लोगोंने जमीन तैयार की थी और अब उनको उसमें बीज बोने हैं। यह रचनात्मक

१. सूरतसे लगभग १२ मीलकी दूरीपर स्थित।

काम है। बीज बोनेका काम ज्यादा अहमियत रखता है। यह काम हमें ज्यादा लम्बे समय तक करते रहना पड़ेगा।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, १२-६-१९३१

४६२. तार : महेन्द्रप्रसादको

बोरसद
१३ जून, १९३१

महेन्द्रप्रसाद,[1]
छपरा

मेरे रवाना होने तक राजेन्द्रबाबू बहुत काफी चंगे हो गये थे।[2] चन्द ही दिनोंमें वे मेरे पास आ जायेंगे। अच्छी-से-अच्छी परिचर्याका प्रबन्ध है। पूरी तरह चंगे होने और विश्राम कर लेनेके बाद ही कहीं जाने-आने दूँगा। इन दिनों यहाँका मौसम काफी अच्छा रहता है।

गांधी

अंग्रेजी (एस० एन० १७२७१)की फोटो-नकलसे।

४६३. पत्र : दुनीचन्दको

१३ जून, १९३१

प्रिय लाला दुनीचन्द,

सूरजभानजी ने लिखा है कि उन्होंने जो रुपये खर्च किये हैं आप उनकी भी अदायगी नहीं कर रहे हैं। आशा है कि यह शिकायत गलत होगी। मेरी समझमें खर्चकी सारी राशि चुकता कर दी जानी चाहिए। आगेके लिए यदि कोई सुझाव आपके मनमें हो तो कृपया मुझे लिखें।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजी (जी० एन० ५५८१)की फोटो-नकलसे।

१. राजेन्द्र बाबूके बड़े भाई।
२. राजेन्द्रप्रसाद बीमारीके कारण बम्बईमें ९ और १० जूनको हुई कार्य-समितिकी बैठकमें भाग नहीं ले सके थे।

४६४. पत्र : एमेलिया मैक्बीनको

स्थायी पता, साबरमती
१३ जून, १९३१

प्रिय महोदया,

आपका पत्र मिल गया। धन्यवाद। आप मुझे जिस चीजका श्रेय दे रही हैं उसका मैं बिलकुल भी पात्र नहीं हूँ। आप मेरे नामराशी एक दूसरे गांधीकी[1] बात कर रही हैं, लेकिन उनसे मेरी कोई भी रिश्तेदारी नहीं है। हाँ, हम दोनों मित्र रहे हैं और कुछ दिनोंतक साथ-साथ भी रहे हैं। आपको जानकर दुःख होगा कि कई वर्ष पूर्व वे संसारसे उठ चुके हैं और अपने पीछे एकमात्र पुत्र छोड़ गये हैं। वे ही अमेरिका गये थे; और वहाँ अनेक लोग उनके मित्र बन गये थे। मुझे आपके महाद्वीपमें आनेका सौभाग्य नहीं मिला है।

हृदयसे आपका,

कु० एमेलिया मैक्बीन
मारफत श्रीमती मैक्बीन
प्रैरी एवेन्यु
शिकागो (अमेरिका)

अंग्रेजी (एस० एन० १७२७२) की फोटो-नकलसे।

४६५. पत्र : सुरेन्द्रसिंहको

स्थायी पता, साबरमती
१३ जून, १९३१

प्रिय सरदार सुरेन्द्रसिंह,

आपके पत्रके लिए धन्यवाद। प्रेमके सिद्धान्तका चारों ओर प्रचार करनेके लिए मैं शक्ति-भर अपने ही ढंगसे प्रयत्न तो कर रहा हूँ, लेकिन हिन्दुओं और मुसलमानोंके बीच दिन-दिन बढ़ती घृणा और अविश्वासके बीच उसकी प्रगति बड़ी मन्द है। साम्प्रदायिक समस्याके आपके सुझाये हलके बारेमें मुझे लगता है कि दोनों ही सम्बन्धित पक्ष चाहते हैं कि समझौता सभी प्रान्तोंमें हो या फिर बिल्कुल ही न हो।

१. वीरचन्द गांधी।

मैं आपकी इस बातसे सहमत हूँ कि यदि चन्द प्रान्त भी अपने यहाँ यह समस्या हल कर लें तो भी इस दिशामें काफी कुछ प्रगति हो जायेगी।

हृदयसे आपका,

सरदार सुरेन्द्रसिंह
कृषि-विभाग
पंजाब सरकार
शिमला पूर्व

अंग्रेजी (एस० एन० १७२७३) की फोटो-नकलसे।

४६६. पत्र : मन्त्री, 'सेन्ट्रल सिख लीग' अमृतसरको

स्थायी पता, साबरमती
१३ जून, १९३१

मन्त्री
सेन्ट्रल सिख लीग
अमृतसर

प्रिय महोदय,

'यंग इंडिया' का सम्पादक होनेके नाते मेरे पास आपका पत्र भेज दिया गया है। ध्वजके बारेमें जो सुझाव आपने दिये हैं, उनको तो आप कांग्रेस कार्य-समिति द्वारा नियुक्त ध्वज-समितिके मन्त्रीके पास भेज दें। यही ठीक रहेगा। ध्वज-समितिके संयोजक और मन्त्री हैं: डॉ० पट्टाभि सीतारमैया, मसूलीपट्टम, द० भारत।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजी (१७२७४) की माइक्रोफिल्मसे।

४६७. पत्र : डॉ० मु० अ० अन्सारीको

बोरसद
१३ जून, १९३१

प्रिय डॉ० अन्सारी,

दिल्ली शहरके आपसी झगड़ोंके बारेमें आपसे बात करना मैं भूल गया था, और उसका समय भी नहीं मिल पाया था। श्रीमती आसफ अलीके पत्रसे मुझे मालूम हुआ है कि झगड़े निबटना तो दूर, अब महिलाएँ भी उनमें शामिल होने लगी हैं।[1] क्या आप इन झगड़ोंको खत्म नहीं करा सकते?

उम्मीद है कि आपके पहुँचनेतक आपके भाईकी हालत बेहतर हो गई होगी। क्या डॉ० रहमान कुछ कर पाये?

डॉ० मु० अ० अन्सारी
१ दरियागंज, दिल्ली

अंग्रेजी (एस० एन० १७२७५)की फोटो-नकलसे

४६८. पत्र : शामलालको

बोरसद
१३ जून, १९३१

प्रिय लाला शामलाल,

आपका पत्र मिला।[2] आपने पत्र लिखा इसकी मुझे खुशी हुई, और मैं चाहता हूँ कि आप मुझे रोहतकके हालातके बारेमें सूचित करते रहें। पर इस अवस्थामें

१. श्रीमती आसफअलीने लिखा था: "कांग्रेसी 'दिल्ली महिला सेवा दल' की सदस्याओंके बारेमें गन्दा प्रचार कर रहे हैं। चूँकि वातावरण इतना गन्दा हो चुका है कि कोई भी आत्म-सम्मानी महिला इसमें काम करती नहीं रह सकती, इसलिए मैं त्यागपत्र देकर अलग हो रही हूँ।"

२. पत्रमें कहा गया था: "...प्रत्येक पुलिस थानेके क्षेत्रमें एक कांग्रेसी कार्यकर्त्ता है। हमने जिलेमें लगभग २,५०० सदस्य बनाये हैं और १२५ कांग्रेस कमेटियाँ स्थापित की हैं। इससे अधिकारी चिन्तित हो उठे हैं और जिलेमें दमन शुरू हो गया है। हमारे कोषाध्यक्षपर—जिनसे सरकारको कोई खतरा नहीं और जो असहयोग आन्दोलनके दिनों जेल तक गये थे — अब मुकदमा चलाया जा रहा है। ... दो अन्य कार्यकर्त्ता गिरफ्तार कर लिए गये हैं। अधिकारी कांग्रेसके सामान्य कार्यको भी बन्द कर देना चाहते हैं। रोहतक जिलेमें कांग्रेस कार्यकर्त्ता इस बातका विशेष ध्यान रखते हैं कि हिंसात्मक भाषण न दिये जायें, लेकिन चूँकि जिले-भरमें रोहतकमें ही कांग्रेसका काम संगठित रूपसे चल रहा है, इसलिए उ ही दमनका खास निशाना बनाया गया है।"

मैं आपकी कोई सहायता नही कर पाऊँगा। समझौतेकी शर्तोंके अन्तर्गत तो मैं दमनकी ओर सरकारका ध्यान तभी आकर्षित कर सकता हूँ जब वह बहुत ही प्रत्यक्ष दिखाई देता हो, लेकिन रोहतककी तरह जहाँ वह अप्रत्यक्ष रूपसे और छिप-छिपे किया जा रहा हो, वहाँ तो आपको अपनी ही सूझबूझसे उसका मुकाबला करना पड़ेगा, और आपको इस योग्य होना चाहिए। हाँ, न्यायालयोंमें प्रतिवादी–पक्ष पेश करके अपना बचाव करनेकी योग्यताका उपयोग करनेका आपको पूरा अधिकार है।

हृदयसे आपका,

लाला शामलाल
एडवोकेट
९ दयालसिंह बिल्डिंग्ज
अपर माल, लाहौर

अंग्रेजी (एस० एन० १७२७६)की माइक्रोफिल्मसे।

४६९. पत्र : विधानचन्द्र रायको

बोरसद
१३ जून, १९३१

प्रिय डॉ० विधान,

आपका पत्र मिल गया।[1] उसके लिए धन्यवाद। शिलाँगका कवित्वपूर्ण वृत्तान्त पढ़कर मुझे आपसे ईर्ष्या होती है।

बंगालके दुर्भाग्यपूर्ण विवादोंके बारेमें जो भी किया गया है वह सब आपने समाचारपत्रोंमें देख ही लिया होगा। बंगालके वातावरणको विषसे मुक्त बनानेमें मैं मुझसे जो शक्य होगा सो सभी-कुछ कर दूँगा, आप इसका भरोसा रखें।

आपसे जब भी भेंट हो आप वासन्तीदेवी, मोना, बेबी और सुजाताको मेरी ओरसे नमस्कार कहनेकी कृपा करें। उनसे कहियेगा कि मैं उनको पत्र तो नहीं लिखता, पर अक्सर उनकी याद अवश्य करता हूँ।

हृदयसे आपका,

डॉ० विधानचन्द्र राय
शिलांग

अंग्रेजी (एस० एन० १७२७७)की माइक्रोफिल्मसे।

१. पत्रमें बंगालके विवादको पंच-फैसलेको सौंपनेके गांधीजी के प्रस्तावकी ताईद की गई थी।

४७०. पत्र : डॉ० बा० शि० मुंजेको

स्थायी पता, साबरमती
१३ जून, १९३१

प्रिय डॉ० मुंजे,

अपने ६ जूनके पत्रके लिए मेरा धन्यवाद लीजिए। मैं यदि लन्दन जानेमें सफल भी हुआ तो अपने साथ विशेषज्ञोंको ले जानेका मेरा कोई इरादा नहीं है। वहाँ मेरा कार्य-क्षेत्र इतना सीमित-सा रहेगा कि विशेषज्ञोंसे परामर्श करनेकी खास जरूरत नहीं पड़ेगी।

हृदयसे आपका,

डॉ० बालकृष्ण शिवराम मुंजे
फरग्रोव
शिमला

अंग्रेजी (एस० एन० १७२७८)की फोटो-नकलसे।

४७१. पत्र : भूपेन्द्र नारायण सेनको

बोरसद
१३ जून, १९३१

प्रिय भूपेन,

तुम्हारा पत्र मुझे मिल गया। खुशी हुई कि तुमने मुझे निस्संकोच होकर इतनी स्पष्टताके साथ पत्र लिखा। तुम्हें जिस प्रकारकी सहायता दरकार है, उसे जुटाना मेरे लिए कठिन है। मेरा ख्याल था कि तुमने अभय आश्रमसे अपने-आपको सम्बद्ध कर लिया होगा। जो भी हो, मेरी सलाह है कि जमनालालजी जब वहाँ आयें, तब तुम उनसे मिल लो। उनको आशा है कि अगले महीने वहाँ पहुँचेंगे।

तीस पौंड वजन घटना तो बहुत ज्यादा है। तुम्हें उसकी पूर्ति कर लेनी चाहिए।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत भूपेन्द्र नारायण सेन
पो० बारदौगोले
जिला हुगली (बंगाल)

अंग्रेजी (एस० एन० १७२७९)की माइक्रोफिल्मसे।

४७२. पत्र : एच० डब्ल्यू० एमर्सनको

बोरसद
१३ जून, १९३१

प्रिय श्री एमर्सन,

आपने समाचारपत्रोंमें पढ़ा होगा कि खान अब्दुल गफ्फार खाँ कुछ दिनोंसे मेरे साथ रह रहे हैं। मै रोजाना जितना भी समय निकाल पाया, उसमें उनके साथ बातचीत करता रहता था, और मेरे मन पर उनकी यह छाप पड़ी है कि वे एक बहुत ही सच्चे हृदयके व्यक्ति हैं और अहिंसामें उनकी परम निष्ठा है। अमानुल्ला आन्दोलनके साथ उनका कोई सम्बन्ध नही है। उनका सारा कार्य 'खुदाई खिदमतगार' आन्दोलनतक ही केन्द्रित है। यह आन्दोलन सेवा-कार्यके लिए लोगोंको भर्ती करता है। भर्ती किये जानेवाले व्यक्तियोंसे यह प्रतिज्ञा कराई जाती है: "मैं सत्यवादी और सच्चरित्र रहूँगा। मेरा आचरण अहिंसापूर्ण रहेगा और मैं अपने पड़ोसियोंसे नहीं लड़ूँगा। मै अपने पड़ोसीकी सम्पत्तिपर लोलुप दृष्टि नहीं डालूँगा। मैं देशकी स्वतन्त्रता के लिए मृत्यु-पर्यन्त कष्ट-सहन करनेको तत्पर रहूँगा।" यह प्रतिज्ञा करके 'खुदाई खिदमतगारों' में भर्ती होनेवाले लोगोंसे यह अपेक्षित है कि वे अपने-अपने गाँवोंमें साप्ताहिक हाजिरी देंगे। उन्होंने बहुत ही स्पष्ट शब्दोंमें घोषणा की है कि खुद उन्होंने और उनके अनुयायियोंने भी समझौतेको किसी भी तरह कही भी भंग नही किया है और उनका कहना है कि उन्होंने हर स्थानपर जनताको यही समझाया है कि समझौता जहाँतक जनतापर लागू होता है, वहाँतक उसकी सभी शर्तोको पूरा करना जनताके लिए अत्यावश्यक है। लेकिन उनका कहना है कि अधिकारियोंने अनेक बार समझौता भंग किया है और उसके ये उदाहरण दिये हैं:

(क) सीमाप्रान्त और एजेंसीके कई इलाकोंमें अबतक अनेक सविनय अवज्ञा करनेवाले बन्दियोंको रिहा नहीं किया गया है।

(ख) उनका कहना है कि छोटी-छोटी बातोंको लेकर ही लोगोंको तंग किया जा रहा है। गाँवोंके घरोंके पाससे गुजरते हुए सैनिक "इस्लाम मुर्दाबाद," "गांधी मुर्दाबाद" और "गफ्फार खाँ मुर्दाबाद" के नारे लगाते चलते हैं। उन्होंने यह भी कहा है कि स्वयं उन्होंने अपने लोगोंको आपत्तिजनक नारे लगानेसे मना कर दिया है।

खान साहब स्वीकार करते हैं कि वे आयुक्तसे मुलाकात करने नहीं गये। उनका कहना है कि वे इसलिए नहीं गये कि स्थानीय अधिकारियोंके रुखमें उनको कोई परिवर्तन नहीं दिखाई पड़ा और यदि वे मिलने चले जाते तो उनको आशंका थी कि उसका गलत अर्थ लगाया जाता। वे आपसे या महामहिम वाइसरायसे इस शर्त पर मिलनेको तैयार हैं कि मैं साथ रहूँ। मैं भी यह अच्छा समझता हूँ कि आप उनसे परिचय कर लें और यदि आप उपयोगी समझें तो उनको आपसे परिचित करानेके लिए ही मैं खुशी-खुशी शिमला आ जाऊँगा। मैं समझता हूँ कि समझौतेमें

यह अपेक्षा तो निहित ही है कि पारस्परिक विश्वास हो, और इसलिए सरकारकी बुद्धिमत्ता भी शायद इसी बातमें होगी कि वह पहले खान साहबसे व्यक्तिगत सम्पर्क स्थापित कर ले और तब उसके बाद उनके आश्वासनोंको कसौटीपर कसकर देखें। मैंने इस अपने पत्रका उत्तर मिलने तकके लिए खान साहबको यहीं रोक लिया है। और चूँकि वे काफी अर्सेसे मेरे साथ हैं और मैं भी उनको उतनी ही देरतक रोकना चाहता हूँ, जितना कि बिलकुल ही जरूरी हो; इसलिए मैं आपसे अनुरोध करता हूँ कि आप इसका उत्तर तार द्वारा देनेकी कृपा करें। साथ ही, मुझे यह भी बतला देना चाहिए कि खान साहबका बड़ा आग्रह है कि मैं सीमाप्रान्त जाकर खुद वहाँकी परिस्थिति देख लूँ और 'खुदाई खिदमतगारों' के विशाल समुदायसे सम्पर्क स्थापित करके खान साहबके कार्योंका अध्ययन करूँ। मैं महसूस करता हूँ कि अब तो मेरे सीमाप्रान्त जानेके बारेमें कोई आपत्ति नही होनी चाहिए।[1]

हृदयसे आपका,

श्री एच० डब्ल्यू० एमर्सन
शिमला

[अंग्रेजीसे]

अ० भा० कां० क० फाइल संख्या १६-बी, १९३१।
सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

४७३. पत्र: अमतुस्सलामको

बोरसद
१४ जून, १९३१

प्रिय अमतुल,

तेरा खत मिला। अपनी कमजोरीपर या इस हकीकतपर कि तुझे आश्रमसे सेवा लेनी पड़ती है, सोचते नहीं रहना चाहिए। सभी जानते हैं कि तू सेवा करनेके लिए आतुर है। अगर तू धीरज रखेगी तो खुदा तुझे सेवा करनेकी जरूरी ताकत देगा। तुझे चिन्ता नहीं करनी चाहिए।

बापू

[पुनश्च:]
गंगाबहनसे अपना इलाज करवाओ।

अंग्रेजी (जी० एन० २४१)की फोटो-नकलसे।

१. एमर्सनने ६ जुलाईको उत्तर दिया था कि गांधीजी के वहाँ जानेसे काफी उत्तेजना फैलने और स्थानीय प्रशासनकी कठिनाइयाँ बढ़ जानेकी सम्भावना है। देखिए "पत्र: एच० डब्ल्यू० एमर्सनको", १७-६-१९३१ की पादटिप्पणी भी।

४७४. पत्र : एम० आई० डेविडको

स्थायी पता, साबरमती
१४ जून, १९३१

प्रिय श्री डेविड,

अब मुझे एक सूत्र सूझ गया है। उसे यहाँ दे रहा हूँ :

उन भारतीयों और यूरोपीयोंका, जो जल्दी ही एक ऐसी शासन प्रणालीको स्थापित करनेके पक्षमें हों, जो भारतको विश्वके स्वतंत्र राष्ट्रोंके बीच अपना उचित स्थान ग्रहण करनेमें समर्थ बना सके, एक मिला-जुला प्रचार-मंच बनाया जाये।

"विश्वके स्वतन्त्र राष्ट्रोंके बीच" — ये शब्द मूलमें प्रयुक्त "स्वतन्त्र राष्ट्रोंके ब्रिटिश राष्ट्र-मण्डलके एक सहयोगी सदस्यके रूपमें" शब्दोंके स्थानपर रखे गये हैं। आप देखेंगे कि इस सूत्रमें स्वेच्छापूर्वक समान भागीदारकी हैसियतसे ब्रिटेनके साथ सम्बन्ध रखनेकी गुंजाइश रखी गई है; साथ ही उसे अनिवार्य भी नहीं बनाया गया है। अन्य दो सूत्रोंके बारेमें मैं अधिक कुछ नहीं कहूँगा।

हृदयसे आपका,

श्री एम० आई० डेविड
४, क्वीन्स रोड
फोर्ट, बम्बई

अंग्रेजी (एस० एन० १७२८०)की फोटो-नकलसे।

४७५. पत्र : हरेकृष्ण मेहताबको

स्थायी पता, साबरमती
१४ जून, १९३१

प्रिय मेहताब बाबू,

आपका पत्र[1] मिल गया। इसमें क्षमा-याचनाकी तो कोई बात ही नहीं थी। आपका कार्यक्रम कुछ अधिक विशद और व्यापक है। परन्तु मुझे कोई कारण नहीं दिखाई पड़ता कि आप आस्था और श्रमके बलपर उसे पूरा क्यों नहीं कर सकते।

जानकर प्रसन्नता हुई कि मतिदास और पुरबाई आपके पास हैं। स्वल्प साधनोंको लेकर या निरी साधनहीनताकी स्थितिमें कोई संस्था शुरू करना बड़ी बात

१. हरेकृष्ण मेहताबने लिखा था कि बालासोरके गांधी कर्म मन्दिरके नियम कुछ ज्यादा सख्त है और इसीलिए उन्हें अधिक सरल रूपमें प्रस्तुत किया था।

है। आस्था ही सबसे बड़ी पूँजी है। आपके आय-व्ययमें सिर खपानेकी मुझे जरूरत नहीं, क्योंकि जमनालालजी मेरे विचारोंका बड़ा ठीक प्रतिनिधित्व करते हैं और ऐसे मामलोंमें उनकी सलाह बहुत सही और कारआमद होती है।

हृदयसे आपका,

श्री हरेकृष्ण मेहताब
गांधी कर्म मन्दिर
बालासोर (उड़ीसा)

अंग्रेजी (एस० एन० १७२८१)की माइक्रोफिल्मसे।

४७६. पत्र : पी० जी० मैथ्यूको

बोरसद
१४ जून, १९३१

प्रिय मैथ्यू,

इस बार फिर आप रह गये। कैसे? मुझे तो पूरी आशा थी कि आप बारडोलीमें जरूर आयेंगे। आप मेरे साथ पूरे हफ्ते-भर रह सकते थे। यदि वहाँ अपना काम आपको बहुत ही पसन्द हो तो दूसरी बात है, फिर आपके न आनेकी मुझे कोई चिन्ता नहीं। आप अपने दिन-भरके कामकी एक झाँकी दीजिएगा।

श्री मैथ्यू
साबरमती आश्रम

अंग्रेजी (एस० एन० १७२८२)की माइक्रोफिल्मसे।

४७७. पत्र : एम० आई० डेविडको

बोरसद
१४ जून, १९३१

प्रिय श्री डेविड,

कल रात ही मैंने एक पत्र बोलकर लिखाया था। महादेवने मुझे इसी महीनेकी ११ तारीखका आपका एक दूसरा पत्र भी थमा दिया। जिसमें आपने पूछा है कि क्या मैं बम्बईके मेयरके तत्वावधानमें गठित की जानेवाली प्रस्तावित गैर-सरकारी समझौता-समितिके बारेमें पत्रमें दिये गये आपके सुझावका अनुमोदन करता हूँ। मैं उसमें एक ही संशोधन करना चाहूँगा। ज्यादा अच्छा यही रहेगा कि भारतीयों और यूरोपीयोंकी संख्याके बीच अनुपात निश्चित करनेके लिए सख्तीसे किसी लीकको न

पकड़ा जायें।[1] उसके लिए सहज तरीका अपनाना ही ज्यादा अच्छा रहेगा। हो सकता है कि समितिमें काम करनेके लिए आपको भारतीयोंकी अपेक्षा अधिक कर्त्तव्य-निष्ठ यूरोपीय मिल जाये। मैं उस स्थितिमें यूरोपीयोंको अधिक संख्यामें शामिल करनेमें या इसके विपरीत, दूसरी स्थितिमें भारतीयोंको अधिक संख्यामें शामिल करनेमें संकोच नहीं करूँगा।

हृदयसे आपका,

श्री एम० आई० डेविड
४, क्वीन्स रोड
फोर्ट, बम्बई

अंग्रेजी (एस० एन० १७२८३)की फोटो-नकलसे।

४७८. पत्र: जॉन काइट कॉलैटको

स्थायी पता, साबरमती
१४ जून, १९३१

प्रिय मित्र,

'चिल्ड्रन्स लीग' के कुछ कार्डों और पदकोंके साथ आपका पत्र प्राप्त हुआ। 'साल्वेशन आर्मी' के साथ मेरा कोई सम्पर्क नहीं है और न मुझे बच्चोंके बीच उस संस्थाके किये जानेवाले कार्योंके बारेमें कोई जानकारी ही है। फिर मेरा अपना काम तो एक बिलकुल ही दूसरी तरहका है। इसलिए अगर आपका खयाल हो कि मैं 'साल्वेशन आर्मी'के सम्बन्धमें ही काम कर रहा हूँ तो स्पष्ट है कि आपकी सूचना सही नहीं है। इसलिए मैं 'साल्वेशन आर्मी'से पूछ रहा हूँ कि क्या वे इन कार्डों और पदकोंको मुझसे लेना पसन्द करेंगे। यदि वे तैयार न हों तो कृपया लिखिए कि मैं पदकोंका क्या करूँ।

हृदयसे आपका,

जॉन काइट कॉलैट महोदय
अध्यक्ष
'चिल्ड्रन्स लीग ऑफ पीस ऐंड गुडविल'
'सनराइज,' पैनार्थ

अंग्रेजी (एस० एन० १७२८४)की फोटो-नकलसे।

१. एम० आई० डेविडका प्रस्ताव था कि मध्यस्थता समझौता-समितिमें "भारतीय और यूरोपीय सदस्योंकी संख्या समान रखी जाये।"

४७९. पत्र : 'साल्वेशन आर्मी', बम्बईको

बोरसद
१४ जून, १९३१

प्रिय मित्र,

मेरे पास श्री जॉन कॉलैटका एक पत्र आया है। मैं उसे संलग्न कर रहा हूँ। श्री कॉलैटके नाम अपने पत्रकी[1] एक प्रति भी मैं आपको भेज रहा हूँ। आप मुझे यह बतलानेकी कृपा करें कि क्या आप पत्रमें उल्लिखित प्रयोजनके लिए कार्डों और पदकोंको लेना चाहेंगे?

हृदयसे आपका,

संलग्न : २

ऑफिसर कमांडिंग
बम्बई शाखा, साल्वेशन आर्मी
बम्बई

अंग्रेजी (एस० एन० १७२८५)की फोटो-नकलसे।

४८०. पत्र : सी० ए० हाटेको

स्थायी पता, साबरमती
१४ जून, १९३१

प्रिय मित्र,

आपका पत्र मिला। मैं जब कभी बम्बई आऊँ, आप मुझसे मिलनेकी कोशिश कीजिए। आहारके बारेमें अभी इस समय आपको कोई सलाह देना कठिन है। इसके लिए आपसे मिलकर कुछ प्रश्न पूछना आवश्यक है। क्या आप बम्बईमें प्राकृतिक चिकित्साके किसी विशेषज्ञसे परामर्श नहीं करना चाहेंगी? हार्नबी रोडके श्री खम्भाता एक चिकित्सकको जानते हैं और उनको उसकी चिकित्सासे लाभ भी हुआ है। उनका पूरा पता है: बहराम खम्भाता, २७५, हार्नबी रोड, फोर्ट, बम्बई।

यह कहना तो मुश्किल है कि हर व्यक्तिके लिए कितने घंटोंकी नींद जरूरी होती है, लेकिन मैं आपके बारेमें बड़े मजेसे कह सकता हूँ कि आप आरामसे जितनी

१. देखिए पिछला शीर्षक।

देर सो सकती हैं, अवश्य सोयें। आपको सुबह शाम रोज टहलने भी जाना चाहिए। केवल एक बारका टहलना काफी नहीं होगा। यदि शक्ति हो, तो सचमुच आपको तीन-चार घंटे टहलना चाहिए। आप चाहें तो इतने टहलनेको दो-तीन बारमें भी पूरा कर सकती हैं।

आपने पूछा है कि व्यक्तिको अपने जीवनका क्या आदर्श बनाना चाहिए। संसारके सभी मनीषियोंने आत्मसाक्षात्कारको ही ऐसा आदर्श बतलाया है।

मेरा पैर जल जानेकी खबर गलत है। ज्यादा सही होता यदि कहा जाता कि मेरा पैर जलनेसे बाल-बाल बचा।

हृदयसे आपका,

श्रीमती सी० ए० हाटे
'इन्दु भवन'
३४३, ठाकुरद्वार
बम्बई

अंग्रेजी (एस० एन० १७२८६)की फोटो-नकलसे।

४८१. पत्र : एच० डब्ल्यू० एमर्सनको

बोरसद
१४ जून, १९३१

प्रिय श्री एमर्सन,

समझौतेमें प्रयुक्त "लौटाना" शब्दके अर्थके बारेमें विधि विभागके[1] अहस्ताक्षरित मतके साथ आये आपके पत्रने तो मुझे एकदम झकझोरकर रख दिया। ऐसे मतकी मुझे कतई उम्मीद नहीं थी। मुझे तो अपने बारेमें यह खुशफहमी थी कि विधिका मेरा अपना ज्ञान कोई बहुत गया-गुजरा नहीं हो गया है। परन्तु विधिके अपने ज्ञानके बारेमें मेरे मनमें जो थोड़ा-बहुत आत्मविश्वास था, आपके विधि-विभागके मतने उसकी जड़ें हिला दी हैं। मैं इसीलिए इस मामलेके बारेमें बम्बईमें उस समय सुलभ बड़े-से-बड़े वकीलोंकी राय लेने दौड़ा। उनकी रायकी एक प्रति[2] मैं आपके पास भेज रहा हूँ। इनमेंसे पहले दो हस्ताक्षरकर्त्ता बम्बईके महाधिवक्ता रह चुके हैं, और वे दोनों तथा तीसरे हस्ताक्षरकर्त्ता भी आज बम्बईके बड़े प्रतिष्ठित वकील हैं और वकालत कर रहे हैं। इसलिए फिलहाल मेरा आत्मविश्वास तो लौट आया है; पर यह आपके लिए तो बेमतलब ही है। बम्बईके वकील, वे कितने ही प्रतिष्ठित क्यों

१. मत यह था कि "लौटा दिया जायेगा" शब्दोंका अर्थ यह होगा कि "स्वामित्व बहाल कर दिया जायेगा" और गांधी इर्विन समझौतेमें वापस लौटानेके स्थानके बारेमें कुछ भी नहीं कहा गया था।

२. देखिए परिशिष्ट १०।

न हों, जो राय दे रहे हैं, उसे आप अपने विधि-विभागकी रायको देखते हुए स्वीकार न कर पायें, आपकी यह विवशता मै भली-भाँति समझता हूँ, भले ही विधि-विभागकी राय समझदारीसे बिलकुल ही खाली लगती हो। इसलिए मै आपके सामने भी वही सुझाव रख रहा हूँ जो मैंने बम्बई सरकारके सामने रखा है। चूँकि 'नवजीवन प्रेस' के प्रबन्धकोंके लिए यह एक सैद्धान्तिक प्रश्न है, इसलिए मैं बम्बई सरकारके समक्ष रखा अपना यह सुझाव फिर दोहराता हूँ कि पूरा मामला बम्बईके मुख्य न्यायाधिपति को पंच-फैसलेके लिए सौंप दिया जाये। स्वाभाविक ही है कि प्रबन्धक-मण्डल चाहता है कि इस बहसको जल्द-से-जल्द निबटा दिया जाये और प्रेससे वंचित किये जानेके कारण लगातार होनेवाली हानिसे भी अपनेको बचाया जाये। इसलिए आशा है कि इस मामलेमें अविलम्ब कोई-न-कोई फैसला करके इसे निबटा दिया जायेगा।

इस संकटपूर्ण स्थितिके सिलसिलेमें मुझे सामान्य महत्वके एक मामलेकी भी चर्चा करनी पड़ रही है। मुझे लगता है कि समझौतेसे उत्पन्न होनेवाली समस्याओंके सम्बन्धमें बम्बई सरकार ज्यादा झंझटें पैदा कर रही है, मैंने आपसे जिनका जिक्र किया है उनसे कही ज्यादा। फिर मद्रास अहातेमें भी शराबके ठेकों पर धरना देनेके सिलसिलेमे झंझटे बढ़ती जा रही हैं। इसी मुद्देके बारेमें श्री राजगोपालाचारी द्वारा जारी की गई हिदायतोंका एक अंश मै उद्धृत कर रहा हूँ। हिदायतें आप देख चुके है और उनकी आपने इतनी सराहना की थी कि आपने उनको बधाई देनेके लिए मुझसे कहा था। उद्धरण इस प्रकार है:

> **मैं अबतक इसी कोशिशमें था कि आपकी परेशानी न बढ़ाऊँ। यहाँकी सरकार अब यह महसूस करने लगी है कि शान्तिपूर्ण धरना उतना हानि रहित नहीं जितना कि उसने उसे समझा था। उसे पता चला है कि वह शराब-बन्दीका सचमुच सबसे कारगर साधन है; और फलस्वरूप राजस्वको खतरा पैदा हो जाता है। वह शराबके ठेके लेनेवालोंको इस वर्ष तो कायम रख सकती है, लेकिन अगले वर्ष ठेकोंकी नीलामीके समय क्या होगा? उसने देख लिया है कि किसी भी जोर-जबरदस्ती या किसी भी प्रकारकी हाथापाईके बिना धरना देनेसे ही लोग शराबकी दूकानों पर जानेसे कतराने लगते हैं।**
>
> **ठेकेदारोंने भी सोचा था कि पुलिस पिछले वर्षकी भाँति इस वर्ष भी कांग्रेसकी कार्रवाइयोंमें हस्तक्षेप करेगी। इसीलिए उन्होंने शुरूमें स्वयंसेवकोंके काममें कोई बाधा नहीं डाली। लेकिन अब वे महसूस करने लगें है कि सन्धिने हालातकी सारी रंगत ही बदल दी है। इसलिए वे भय खाने लगे हैं। उन्होंने सरकारसे जोरदार अपीलें करनी शुरू कर दी हैं कि या तो पुलिस इस स्थितिमें हस्तक्षेप करे या फिर बकाया राशि बट्टेखातेमें डाल दी जाये। इस प्रकार अब सरकारी अधिकारियों और ठेकेदारों दोनों ही की आँखे खुल रही हैं और वे धरनोंकी नैतिक शक्ति तथा सन्धिके परिणामोंकी असलियत समझते जा रहे हैं। इसीलिए लगता है कि सरकारी अधिकारियों और ठेकेदारों दोनोंने ही नई**

तरकीबें इस्तेमाल करनेका फैसला कर लिया है। अब लगभग एक-साथ ही हर जगह स्वयंसेवकोंको डरानेके लिए की जानेवाली गुंडागर्दीके अनेक समाचार आये हैं। गुंडागर्दी की तो उम्मीद की भी जा सकती थी, लेकिन उसके अलावा अब ठेकेदार लोग कार्यकर्त्ताओं और उनके हमदर्दोंपर जुर्माने कराने तथा सजाएँ दिलानेके लिए और कांग्रेस संगठनोंको परेशानीमें डालनेके लिए नागरिकोंसे शिकायतें करवाकर उनपर झूठे आरोप लगवा रहे हैं। इसमें उनको सरकारी अधिकारियोंकी शह मिली है या नहीं, मैं निश्चित तौरपर नहीं कह सकता। और न्यायाधीशोंका भी खयाल है कि उनको शराबके ठेकेदारोंका ही समर्थन करना चाहिए। इतना ही नहीं, न्यायाधीशोंको यदि किसी मामलेके बारेमें पता भी होता है कि वह सरासर झूठा है, तो भी वे अपने बारेमें ऐसा सन्देह पैदा नहीं होने देना चाहते कि वे कांग्रेसका पक्ष ले रहे हैं और सरकारके राजस्वकी परवाह नहीं करते।

स्थानीय पुलिस अधिकारियोंने धरने देनेवालोंको तंग करना और धरनोंमें बाधाएँ डालना शुरू कर दिया है। वे जानते हैं कि धरनोंमें किसीके साथ जोर-जबर्दस्ती नहीं की जाती और उनसे शान्ति-भंग नहीं होती और वे धरनोंपर कोई कानूनी आपत्ति नहीं उठा सकते, इसलिए वे अब दूसरे हथकण्डे इस्तेमाल कर रहे हैं। वे पुलिसकी शक्तिका प्रदर्शन करने लगे हैं। वे स्वयंसेवकोंको अलग-अलग पकड़कर दूकानोंसे और एक-दूसरेसे भी बहुत दूर-दूरके स्थानोंपर छोड़ आते हैं और स्वयंसेवकोंसे ऐसी-ऐसी शर्तोंका पालन करनेके लिए कहते है, जिनसे धरने एक बिलकुल ही बेअसर तमाशा बनकर रह जायें। स्थानीय पुलिस अधिकारियोंको छूट दे दी गई है कि वे शहरी और ग्रामीण जनताको आतंकित करें और खुलेआम कहें कि कांग्रेस स्वयंसेवकोंको सहायता या आश्रय देना अपराधियोंको प्रोत्साहन देना समझा जायेगा। सच तो यह है कि फिरसे १९३० का वातावरण बनानेकी कोशिश की जा रही है।

सरकारी अधिकारी जो भी कदम उठा रहे हैं, उसका मैंने पूरी ईमानदारीके साथ अच्छे-से-अच्छा अर्थ लगानेकी कोशिश की है। लेकिन मुझे स्वीकार करना पड़ेगा कि मुझे इसमें असफलता ही हाथ लगी है। यदि आपको समय मिल जाये तो कृपया संलग्न कागजात देख लीजिये।

हो सकता है कि आप प्रान्तीय सरकारों द्वारा समझौतेको कार्यान्वित करने या न करनेके मामलेमें कोई दखल न दे सकते हों; या हो सकता है कि आपका हस्तक्षेप उतना कारगर न हो सके जितना कि समझौतेको देखते हुए मेरे विचारसे होना चाहिए। इसलिए अब शायद समय आ गया है कि समझौतेकी व्याख्याके प्रश्नोंपर फैसला देने और दोनों पक्षों द्वारा समझौतेकी शर्तोंपर पूरा-पूरा अमल करानेके लिए

स्थायी मध्यस्थमण्डल नियुक्त कर दिया जाये। इसलिए मैं चाहूँगा आप इस सुझाव-पर विचार करें।

हृदयसे आपका,

संलग्न : १

श्री एच० डब्ल्यु० एमर्सन
शिमला

[अंग्रेजीसे]

अ० भा० कां० क०, फाइल संख्या, १६-बी, १९३१।
सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

४८२. पत्र : प्रभावतीको

१४ जून, १९३१

चि० प्रभावती,

तेरा पत्र मिल गया है। मैं तेरी कठिनाइयाँ समझता हूँ। ईश्वर तेरी सहायता करेगा। तू निश्चिन्त होकर रहना। जब आ सके आ जाना। अभी तो बोरसद आना पड़ा है, किन्तु तू पत्र बारडोलीके पतेपर ही लिखना। क्योंकि तेरा जवाब आनेतक तो शायद मैं वहाँ पहुँच ही चुकूँगा।

विलायत जानेके बारेमें कुछ निश्चित नहीं। जाना भी हुआ तो १५ अगस्तसे पहले नहीं होगा।

इस वक्त तेरी खुराक क्या है?

पिताजी अब कैसे हैं?

राजेन्द्र बाबू बीमार थे। अब ठीक हैं। कुछ दिनोंमें यहाँ आ जायेंगे।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ३४१४)की फोटो-नकलसे

४८३. भेंट : 'एसोसिएटेड प्रेस' के प्रतिनिधिको

बोरसद
१४ जून, १९३१

महात्मा गांधीने 'एसोसिएटेड प्रेस' के एक प्रतिनिधिको भेंटके दौरान बताया कि बोरसद आनेका मेरा प्रयोजन मुख्यतः रासके उन लोगोंको सान्त्वना देना है, जो धारालाओं द्वारा किये जानेवाले छुट-पुट आक्रमणोंसे और बार-बार अपनी बाड़ें नष्ट हो जानेसे संत्रस्त हैं। मुझे सन्देह है कि एक सजा-याफ्ता धारालाको गाँवके मुखियाके पदपर लगातार बनाये रखनेसे धारालाओंको शह मिलती रही है। गांधीजी ने कहा कि मैं दिल्ली समझौतेकी शर्तोंके अनुसार दो आधारोंपर उसकी नियुक्ति रद करनेकी माँग कर चुका हूँ। एक आधार यह है कि वह व्यक्ति अवांछनीय है, दूसरा आधार यह कि दिल्ली समझौतेके अन्तर्गत उसकी नियुक्ति स्थायी रूपसे नहीं की गई है। उन्होंने रास गाँवकी गैर-धाराला जनताकी सुरक्षाकी व्यवस्था करनेकी भी माँग की है। खेड़ा जिलेके कलेक्टर महोदय इन दोनों बातोंपर विचार कर रहे हैं। कुछ और मसले भी हैं, जिनपर उनको व्यक्तिगत रूपसे ध्यान देनेकी जरूरत है। गांधीजी का विचार था कि इस अवसरपर उन अन्य मामलोंकी विस्तृत चर्चा करनेकी जरूरत नहीं है। यह पूछनेपर कि वे बोरसदमें कबतक रुकेंगे, गांधीजी ने कहा कि सरदार वल्लभभाईकी हिदायत है कि मैं अपना काम पूरा करते ही तुरन्त बारडोली चला जाऊँ; मैं ऐसा ही करूँगा।

गांधीजी से पूछा गया कि आपके पुत्र श्री देवदासने पिछली रातकी सार्वजनिक सभामें जो कहा था कि आप बहुत जल्द ही सीमा प्रान्त जानेकी सोच रहे हैं, उसमें कितनी सचाई है। गांधीजी ने बतलाया कि यह बात सोलहों आने सही है कि अब्दुल गफ्फार खाँ मुझे वहाँ बुलानेका आग्रह कर रहे हैं। मैं भी वहाँ जानेके लिए उतना ही उत्सुक हूँ क्योंकि मैं अपनी आँखोंसे देखना चाहता हूँ कि उस प्रान्तमें रहनेवाली आदिम जातियोंमें किस हदतक अहिंसाकी भावना घर कर पाई है; लेकिन मैं जहाँतक बन पड़े सन्धिकालके दौरान ऐसा कोई काम नहीं करना चाहता जिससे सरकारके परेशानीमें पड़नेकी आशंका हो। इसीलिए मैं इस सम्बन्धमें सरकारसे पत्र-व्यवहार कर रहा हूँ। यह पूछनेपर कि अब्दुल गफ्फार खाँ आपके साथ कबतक ठहरेंगे, गांधीजी ने बताया कि मेरे और सरकारके बीच चलनेवाले पत्र-व्यवहारका कोई नतीजा निकलनेतक वे मेरे साथ रहेंगे।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, १५-६-१९३१

४८४. तार : एच० एस० एल० पोलकको

बोरसद
१५ जून, १९३१

कलोफ
लन्दन

यदि मै आया तो पहुँचते ही बड़ी खुशीसे लकाशायरके मित्रोंसे तुरन्त मुलाकात करूँगा। आमन्त्रित किये जानेपर मालवीयजी आयेंगे।

गांधी

अंग्रेजी (एस० एन० १७२९१)की फोटो-नकलसे।

४८५. तार : 'स्टेट्समैन,' दिल्लीको

बोरसद
१५ जून, १९३१

'स्टेट्समैन'
दिल्ली

आपका तार। भारतीय आहतसहायकदल झुटपुटा बढ़ जाने पर कौलैन्सोके उस युद्धके ठीक बाद पहुँचा था जिसमें लैफ्टिनेंट राबर्ट्स खेत रहे थे। तम्बू खड़े करते-करते ही मुझे कर्नल गालवेका आदेश मिला कि मृत सैनिककी लाश हटाई जाय और मैंने उसके लिए सात व्यक्ति भेज दिये। आदेशके तुरन्त पालनके लिए मुझे व्यक्तिगत तौर पर धन्यवाद दिया गया था। हालाँकि दस्तेको हिदायत थी कि वह गोलीबारीके क्षेत्रके बाहर ही रहे, पर स्पिओनकोपकी पराजयके बाद जनरल बुलरको गोलीबारीके क्षेत्रमें भी हमारी सहायताकी जरूरत पड़ गई। हम मेजर बाप्टीके नेतृत्वमें खतरेके क्षेत्रसे साठ घायलोंको स्ट्रेचरों पर बाहर ले आये। उनमें जनरल बुडगेट और मेजर स्काट मान्क्रीफ और अन्य अफसर भी थे। दूसरी बार वालक्रान्जमें हमने गोली-बारीके क्षेत्रमें काम किया था। इस और अन्य कामोंके लिए जनरल

बुलरके सैनिक पत्रमें मेरा उल्लेख किया गया था। स्पष्ट है कि कर्नल गालवेकी स्मरणशक्ति उनका साथ नही दे रही है।[1]

गांधी

अंग्रेजी (एस० एन० १७२९२) की फोटो-नकलसे।

४८६. पत्र : मोहनलाल सक्सेनाको

बोरसद
१५ जून, १९३१

प्रिय मोहनलाल,

आपका पत्र आज ही मिल पाया। इसलिए मै उसके बारेमें जवाहरलालसे बात नही कर सका।

डिप्टी कमिश्नर जो भी कहें, मैं यही मानता हूँ कि किसानोंके नाम मेरा सन्देश[2] समझौतेका उल्लंघन नहीं करता।

यह मन्शा तो कभी था ही नही कि हरएक किसानका पैसा अलग-अलग जमा कराया जाये। यदि ऐसी कोई बात थी भी तो मुझे इसकी बिलकुल याद नहीं है। उद्देश्य तो यह है कि लगान अदायगीके लिए बचा रखने लायक राशिको किसान और तरहसे इस्तेमाल न कर लें।

बालकृष्णका तार मिल गया था। आपने भूल-सुधार[3] देखी होगी। काफी मर्खतापूर्ण भूल थी।

अभी ऐन इस समय तो गुजरात छोड़ना मेरे लिए कठिन है। यहाँ कोई अच्छे आसार नजर नहीं आ रहे है। आपके क्षेत्रमें तो जबतक आप किसानोंको नियन्त्रित रख सकते हैं; तबतक सब ठीक रहेगा। लेकिन अब जवाहरलालकी उपस्थितिसे स्थितिमें तनाव कुछ कम होगा। उसे किसानोंको समझाना और उनको नियन्त्रित रखना खूब आता है।

१. देखिए "भेंट: पत्र-प्रतिनिधियोंको", १५-६-१९३१, तथा खण्ड ३९, **आत्मकथा,** भाग ४, अध्याय ४० भी।

२. देखिए "संयुक्त प्रान्तके किसानोंसे" २३-५-१९३१।

३. देखिए "भूल-सुधार", ११-६-१९३१।

जैसी भी हालत हो, कृपया मुझे सूचित करना मत भूलिए।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

श्री मोहनलाल सक्सेना
३४, अमीनुद्दौला पार्क
लखनऊ

अंग्रेजी (एस० एन० १७२८९) की फोटो-नकलसे।

४८७. पत्र : डब्ल्यू० ई० लुकासको

बोरसद
बरास्ता आनन्द
१५ जून, १९३१

प्रिय मित्र,

आपका पत्र पाकर मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई। मैं इस महीनेकी २४ तारीखको बड़ी खुशीसे आपसे भेंट करूँगा। हाँ, यदि शिमलासे बुलावा आ गया तो दूसरी बात है।[1] मैं अपने साथ सरदार वल्लभभाई पटेल और एक-दो अन्य मित्रोंको भी लाऊँगा। चूँकि मैं रातमें भोजन नहीं करता, इसलिए आपके रात्रि-भोजमें शामिल न होनेके लिए मुझे क्षमा करें; पर आप चाहें तो अन्य मित्र उसमें शामिल हो सकते हैं। आप जो भी समय बतलायेंगे, मैं आ जाऊँगा।

मुझे आपकी स्पष्टवादिता अच्छी लगी। जाहिर है कि मैं आपसे यह आशा बिलकुल नहीं करता कि आप अपनी स्वतन्त्रताका आग्रह छोड़ दें या मेरे ही विचारों को स्वीकार कर लें। एक-दूसरेको समझने और बीचकी भ्रान्तियोंको दूर करनेके लिए इस प्रकारका सम्पर्क बनाये रखना अच्छा और उपयोगी भी रहता है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

श्री डब्ल्यू० ई० लुकास
एजेंटका कार्यालय, बी० बी० ऐंड सी० आई० रेलवे कम्पनी
बम्बई

अंग्रेजी (एस० एन० १७२९०)की फोटो-नकलसे।

१. "डिनर क्लब"के सम्बन्धमें गांधीजीकी टिप्पणीके लिए देखिए खण्ड ४७, "यूरोपीय युवक", २-७-१९३१।

४८८. पत्र : नारणदास गांधीको

बोरसद
मौनवार, १५ जून, १९३१

चि० नारणदास,

तुम्हारा पत्र मिल गया है। शंकरभाई बम्बई गया है। मैंने उसे कमलाको[१] मेरे पास ले आनेके लिए लिखा है।

जिस मकानमें मैं रहता था उसका और बाकी कोठरी भी अगर अबतक इस्तेमाल न की जा रही हो, तो उसका इस्तेमाल अब कर लेना। लोगोंकी संख्या कुछ बढ़ी है, अभी और बढ़ेगी। इस्तेमाल करनेसे सार-सँभाल होती रहेगी। बाके साथ बात कर ली है। वह सहमत है और उसे सुझाव पसन्द आया है। फिलहाल हमारे वहाँ आकर रहनेकी कोई बात ही नहीं है, तो फिर इतना बड़ा मकान खाली क्यों रखें?

बापूके आशीर्वाद

गुजराती एम० एम० यू०-१ से।

४८९. भेंट : एसोसिएटेड प्रेसके प्रतिनिधिको

बोरसद
१५ जून, १९३१

बोअर युद्धमें उनकी सेवाओंको लेकर चलनेवाली बहसके सम्बन्धमें 'एसोसिएटेड प्रेस'के एक प्रतिनिधि द्वारा मुलाकात करनेपर महात्मा गांधीने कहा:

ग्यारह सौसे अधिक व्यक्तियोंका भारतीय आहतसहायक दल कॉलेन्जोके निकट शीवेली शिबिरमें शामको अँधेरा बढ़ जानेपर उस युद्धके फौरन बाद पहुँचा था जिसमें लेफ्टिनेंट रॉबर्ट्स काम आये थे। मुझे कर्नल गालवेका आदेश मिला था कि लेफ्टिनेंटका शव तुरन्त हटाया जाना है। तबतक हम खेमे गाड़नेका काम भी पूरा नहीं कर पाये थे।

मैंने इसके लिए सात व्यक्ति, कुली नहीं, शिक्षित व्यक्तियोंको भेजा था, जो काफी रात गये लौटे थे और कर्नल गालवेने मुझे तुरन्त कार्रवाई करनेके लिए विशेष रूपसे धन्यवाद दिया था और अगले दिन डॉ० बूथके जरिए मुझे अपने शिविरमें मिलनेके लिए आमन्त्रित किया था।

१. शंकरलालकी कन्या।

यह बात बिलकुल सही है कि उस अवसर पर गोलीबारीके क्षेत्रका कोई प्रश्न ही नहीं था; क्योंकि घायलोंको हटानेके लिए उस समय युद्ध रोक दिया गया था। यह बात भी सही है कि गोलीबारीके क्षेत्रमें कार्रवाई करनेकी हमारी इच्छाके बावजूद हमसे कह दिया था कि हमें ऐसा नहीं करने दिया जायेगा; परन्तु स्पिओन कोपकी पराजयके बाद स्थिति गम्भीर हो गई थी।

जनरल बुलर मेरे शिविरमें आये और उन्होंने कहा कि हम स्पिओन कोपकी तलहटीसे लगभग साठ जख्मियोंको वापस लानेके लिए गोलीबारीके क्षेत्रमें प्रवेश करेंगे। मेरे साथियों और मुझको यह सौभाग्य प्राप्त करके बड़ी खुशी हुई और हमने मेजर बाप्टीके नेतृत्वमें नावोंका पुल पार करके गोलीबारीके क्षेत्रमें प्रवेश किया और वहाँसे जख्मियोंको हटाया जिनमें जनरल वुडगेट, मेजर स्कॉट मॉनक्रीफ और अन्य अफसर भी थे। हम उनको स्ट्रेचरोंपर २५ मीलतक ले गये।

कोपके तुरन्त बाद ही हमने वाल-क्रान्जमें एक बार फिर गोलीबारीके क्षेत्रमें काम किया था। इस सेवा और अन्य सामान्य सेवाओंके लिए जनरल बुलरके सैनिक पत्रमें मेरा उल्लेख किया गया था और बीस अन्य नायकों (लीडर्स)के साथ युद्ध पदक (वार मेडिल) भी प्रदान किया गया था।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, १६-६-१९३१

४९०. पत्र : च० राजगोपालाचारीको

बोरसद

१६ जून, १९३१

आपका विस्तृत पत्र मिला। संलग्न प्रतिसे आपको पता चलेगा कि मैंने उसका क्या उपयोग किया है।[1]

मुझे लग रहा है कि सभी अनिर्णीत प्रश्न किसी मध्यस्थता मण्डलको ही सौंपने पड़ेंगे और यदि केन्द्रीय सरकार सचमुच उनको हल करनेके लिए तैयार हो और मैं समझता हूँ कि वह है तो वह ऐसा एक मण्डल नियुक्त करनेके मेरे प्रस्तावको स्वीकार कर लेगी। मण्डलके स्वरूपके बारेमें कुछ परिवर्तन किये जा सकते हैं, परन्तु मेरा ख्याल है कि सरकार सिद्धान्तको तो स्वीकार कर लेगी। क्या इस दिशामें कुछ और करनेका भी आपका कोई सुझाव है? अन्तिम रूपसे उत्तर मिलने तक आप कोई बड़ा साहसपूर्ण कदम न उठायें। पर मैं आपकी इस बातसे सहमत हूँ कि यदि हमें बिलकुल ही कुछ नहीं मिलता, तो हमारी ओरसे अपनी इच्छानुसार वैसा कोई कदम उठाना सर्वथा उचित रहेगा; और अविवेकपूर्ण अधिकारियोंकी गैर-

१. देखिए "पत्र : एच० डब्ल्यू० एमर्सनको", १४-६-१९३१।

कानूनी हरकतोंका मुकाबला करनेके लिए जहाँ भी जरूरत पड़े, स्थानीय तौरपर और किसी खास मुद्देको लेकर सविनय अवज्ञा शुरू कर सकनेकी बात भी शामिल है।

मै चाहता हूँ कि आप 'यंग इंडिया' के आगामी अंकमें कार्य-समितिके प्रस्तावके बारेमें लिखे गये मेरे लेख[1] को सावधानीसे पढ़ जायें। मुझे वह प्रस्ताव पसन्द नही आया। साथ ही, कार्य-समितिके अपने दृष्टिकोणसे उसे उचित ठहराया जा सकता है। मैने जो विकल्प सुझाया था, वह कही अच्छा था और मै समझता हूँ कि बहुमत के साथ मतदान करनेवाले कुछ सदस्य मेरी बात समझ भी गये थे। पर आप मेरे लेखको आलोचककी दृष्टिसे देखिए और मुझे बतलाइए कि मेरे सुझावके बारेमें आपका क्या मत है। यह इसलिए कि यदि सम्मेलनमें हमारी माँग पूरी न हुई तो फिर उस विकल्पको ही लागू करना पड़ेगा।

आप स्वयं ही गवर्नरसे क्यों नही मिल लेते और शराबके ठेकोंपर धरनोंको लेकर स्वयं ही बात क्यों नही कर लेते?

श्री च० राजगोपालाचारी
गांधी आश्रम
तिरुचेन्गोडु (द० भारत)

अंग्रेजी (एस० एन० १७२९३)की फोटो-नकलसे।

४९१. तार: सीतलासहायको

बोरसद
१७ जून, १९३१

सीतलासहाय[2]
मारफत कांग्रेस
रायबरेली

आपका पत्र। बारडोलीसे आपको तार दिया।[3] जवाहरसे परामर्श कीजिए।

गांधी

अंग्रेजी (एस० एन० १७३०६)की माइक्रोफिल्मसे।

१. देखिए खण्ड ४७, "सार और छाया", १८-६-१९३१।

२. संयुक्त प्रान्तके एक खादी कार्यकर्ता।

३. उपलब्ध नहीं है। गांधोजीके निजी सचिवने इसी तारीखके पत्रमें लिखा था कि जहाँ किसान लोग तो हमारी शर्तें स्वीकार करने और लगान अदा करनेके लिए तैयार हैं, लेकिन जमींदार उसे स्वीकार करनेको तैयार नहीं, वहाँ हमें चाहिए कि हम रकम प्राप्त करके बैंकमें जमा करा दे।

४९२. पत्र : दुनीचन्दको

बोरसद
१७ जून, १९३१

प्रिय लाला दुनीचन्द,

सूरजभानके बारेमें आपका पत्र अब मुझे मिल गया है। मुझे शिमलामें पता चला था कि सूरजभानने गाँवोंमें काम करनेके लिए खुद ही रुपया इकट्ठा किया था। लेकिन अगर उसका दिमाग ठीक नहीं है तो स्वाभाविक ही है कि आप उसे किसी तरहकी सहायता न दें। फिर भी मैं यह जरूर महसूस करता हूँ कि अबतक जितना भी खर्च हुआ हो उतनेकी अदायगी तो कर ही देनी चाहिए और फिर उससे साफ कह देना चाहिए कि आगे से उसे रुपये-पैसे नहीं दिये जायेंगे; क्योंकि वह उसकी मिल्कियत नही है। वह सारी राशि न तो उसने अकेले ही इकट्ठी की थी और न ही उस प्रयोजनके लिए वह इकट्ठी की गई थी जिसकी बात वह कहता है। सारा मामला क्षोभजनक है। लाला सूरजभान आपके भरोसेके आदमी हैं; इसीलिए उनके बारेमें आपको लिखते हुए मुझे बड़ा संकोच हो रहा है।

जानकर प्रसन्नता हुई कि आपने उनकी पत्नीको जालन्धर भेज दिया है। आशा है वे वहाँ सुखपूर्वक रहेंगी।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

लाला दुनीचन्द
एडवोकेट, अम्बाला

अंग्रेजी (जी० एन० ५५८९)की फोटो-नकलसे।

४९३. पत्र : आनन्द टी० हिंगोरानीको

बोरसद
१७ जून, १९३१

प्रिय आनन्द,

मुझे मीराबाई नियमित रूपसे और जयरामदास जब-तब आपके बारेमें सब-कुछ बतलाते रहते हैं। मैं जानता हूँ कि आप मेरी परेशानी और न बढ़ानेके ख्यालसे ही मुझे पत्र लिखनेसे बचते रहते हैं।

पिताके पत्रको मैं निराशाजनक नहीं मानता। मैं समझता हूँ कि उन्होंने ठीक रुख अपनाया था। परन्तु जयरामदासने बतलाया कि उन्होंने बादमें अपने विचारमें

थोड़ा संशोधन कर लिया था। मेरा ख्याल है कि अच्छे खाते-पीते घरोंके लोगोंके लिए यह एक नियम बना लेना बहुत ही उचित रहेगा कि वे सार्वजनिक संस्थानोंमें रहनेवाले अपने मित्रोंके यहाँ ठहरनेके लिए तभी जायें जब वे उन संस्थानोंमें अपने निवासके दौरान कम-से-कम अपने ऊपर खर्च होनेवाली राशिके बराबर राशि तो उनको दानके रूपमें देनेके लिए तैयार हों। यह दान शोभाके साथ इस प्रकार भी किया जा सकता है कि किसीको बुरा न लगे। यदि आपके पिताजी सहज रूपमें आते या आपकी माता या आपकी बहनको भेज देते और उनसे कह देते कि वे आपकी .जेबमें सौ रुपयेका एक नोट चुपचाप डाल दें, तो और भी अच्छा रहता।

अपने शरीर या दिमागमें कमजोरीका अहसास करना ठीक नही है। ऐसा कुछ भी नहीं हुआ है जो ऐसी कमजोरी महसूस न करनेके आपके संकल्पको डिगा सके। पाँव जला ही नहीं था कि उसकी चिकित्साकी कोई जरूरत पड़ती। वह तो एक संवाददाताके अपने दिमागकी उपज ही थी।

विद्या[1]के लिए यही ठीक रहेगा कि वह दूध और फलोंकी खुराक जारी रखे और यदि दूध माफिक न आये तो तबतक सिर्फ फलोंपर रहे, जबतक उसे कसकर भूख न लगने लगे और अन्य आहारके लिए भी मन करने लगे। पर यदि वह किसी प्राकृतिक चिकित्सा विशेषज्ञकी देखरेखमें चिकित्साके लिए बम्बई जा सके तो और भी अच्छा रहेगा।

आपको अपनेको भाग्यका मारा नहीं समझना चाहिए। जरा उन करोड़ों लोगोंकी बात तो सोचिये जो उन अवसरोंसे भी वंचित रहते हैं जो ईश्वरने आपके लिए जुटा दिये हैं। अपनेको भाग्यका मारा समझना ईश्वरके प्रति घोर कृतघ्नता है। आपको जब-तब घेरनेवाली इस निराशावादितासे आप अपनेको बिलकुल मुक्त कर लीजिए।

हृदयसे आपका,

श्री आनन्द टी० हिंगोरानी
मारफत 'हिन्दू'
हैदराबाद सिन्ध

अंग्रेजी (एस० एन० १७३००)की फोटो-नकलसे।

१. आनन्द टी० हिंगोरानीकी पत्नी।

४९४. पत्र : ए० वाई० सी० वुल्फसेको

स्थायी पता, साबरमती
१७ जून, १९३१

प्रिय मित्र,

आपका पत्र मुझे मिल गया ।

मैं अंगूठी साथ ही लौटा रहा हूँ।

आशा है, मानवताके लिए हितकारी एक कलाकृतिके सृजनकी आपकी इच्छा फलीभूत होगी।

यह भी आशा है कि आपने स्वास्थ्य-लाभ कर लिया है।

दो व्यक्ति-चित्र मिले थे। उनके लिए मेरा आभार ।

हृदयसे आपका,

श्री ए० वाई० सी० वुल्फसे
अमस्टरडम, हॉलैंड

अंग्रेजी (एस० एन० १७३०१)की फोटो-नकलसे

४९५. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

बोरसद
१७ जून, १९३१

प्रिय जवाहरलाल,

सीतलासहायने मुझे रायबरेलीमें ताल्लुकेदारोंके आशंकित दमन-चक्रके बारेमें लिखा है।

विश्वविद्यालयकी इमारतके झंडेके बारेमें संलग्न सूचना तुमने देखी ही होगी। अन्य स्थानोंसे भी शिकायतें आ रही हैं। मैं चाहता हूँ कि तुम समय मिलते ही इन सभी बातोंकी छानबीन करके मुझे इनके बारेमें अपनी राय बतला दो। यदि सूरतमें कार्यसमितिकी बैठकके दौरान हमारी भेंटतक रुकनेमें कोई हर्ज न हो तो हमें उस समय इसके बारेमें अवश्य बात कर लेनी चाहिए; या फिर उससे पहले हो तुम मुझे लिख देना।

पण्डित जवाहरलाल नेहरू
आनन्द भवन, इलाहाबाद

अंग्रेजी (एस० एन० १७३०३)की फोटो-नकलसे।

४९६. पत्र : हरदेवी शर्माको

बोरसद
१७ जून, १९३१

प्रिय मित्र,

इसी महीनेकी १५ तारीखका आपका पत्र मिला। आपके पहले प्रश्नके बारेमें मेरा ख्याल है कि अहिंसाका व्रत लेनेवालोंके लिए जितने भी तरीके वैध तथा उचित हो सकते हैं उन सभी तरीकोंसे किसानोंकी मदद करनेके आप अधिकारी हैं, बल्कि यह आपका कर्तव्य है। वे तरीके कौन-से हैं — इसका फैसला तो समय समयपर परिस्थितियोंको देखकर ही किया जा सकता है। 'नवजीवन' और 'यंग इंडिया' के पृष्ठोंसे आपको आम हिदायतें मिल सकती हैं। लेकिन मेरी राय है कि आप प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीके सदस्यों और पण्डित जवाहरलाल नेहरूके साथ इसके बारेमें सलाह-मशविरा जरूर कर लें। जवाहरलाल आजकल इलाहाबादमें ही हैं।

आपके दूसरे प्रश्नका उत्तर यह है कि यदि ठाकुर मलखानसिंहपर मुकदमा चलाया गया तो मुकदमा लड़ा जा सकता है और लड़ा भी जाना चाहिए।

हृदयसे आपका,

श्री हरदेवी शर्मा
हाथरस (उ० प्र०)

अंग्रेजी (एस० एन० १७३०४)की माइक्रोफिल्मसे।

४९७. पत्र : के० एफ० नरीमानको

बोरसद
१७ जून, १९३१

प्रिय नरीमान,

पठान अब्दुल गफ्फार खाँ और उनके पुत्रके बारेमें आपके पत्र मुझे मिल गये। मैं उनके सिलसिलेमें यथाशीघ्र काम आरम्भ कर दूँगा।

राष्ट्रीय ध्वज-चलचित्रके सिलसिलेमें मैं चाहूँगा कि आप चलचित्रोंके सेंसरसे सम्बन्धित विनियमोंका अच्छी तरह अध्ययन कर लें और पहले तो 'बोर्ड ऑफ

सेंसर' के साथ लिखा-पढ़ी करके उनकी दलीलें जान लें। क्या आप नहीं मानते कि पहला कदम यही होना चाहिए?

हृदयसे आपका,

श्री के० एफ० नरीमान
कांग्रेस भवन
बम्बई

अंग्रेजी (एस० एन० १७३०५) की फोटो-नकलसे।

४९८. पत्र : एच० डब्ल्यू० एमर्सनको

बोरसद
१७ जून, १९३१

प्रिय श्री एमर्सन,

खान साहिब अब्दुल गफ्फार खाँके बारेमें तार[1] देनेके लिए धन्यवाद। मैंने तार उनको दिखा दिया है।

सीमा प्रान्त जानेकी मेरी इच्छाके बारेमें आशा है, आप मुझे यथासमय सूचित करेंगे।

हृदयसे आपका,

श्री एच० डब्ल्यू० एमर्सन
शिमला

[अंग्रेजीसे]

अ० भा० कां० क०, फाइल संख्या, १६–बी, १९३१।
सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

१. एमर्सनका तार इस प्रकार था : "तेरह जूनका आपका तार। भारत-सरकार व्यक्तिगत सम्पर्कका महत्त्व स्वीकार करती है, लेकिन अब्दुल गफ्फार खाँके लिए वह ज्यादा अच्छा यही समझती है कि वे शिमला आनेके बजाय उत्तर पश्चिमी सीमा प्रान्तके मुख्य-आयुक्तसे सम्पर्क स्थापित करें।"

परिशिष्ट

परिशिष्ट १

जे० एच० गेरेटका पत्र[1]

अहमदाबाद
२१ अप्रैल, १९३१

खेड़ा जिलेके भू-राजस्व सम्बन्धी मामलोंके सिलसिलेमें इसी महीनेकी २० तारीखका आपका पत्र मुझे मिल गया है।

२. मैं अपने १३ अप्रैल, १९३१ के पत्र द्वारा आपको पहले ही सूचित कर चुका हूँ कि हम लोगोंके बीच हुई चर्चामें उल्लिखित और उसी तारीखके आपके पत्र द्वारा मेरे पास भेजे गये मामलोंकी मैं जाँच कर रहा हूँ।

३. मैं बोरसदके मामलतदार द्वारा जारी किये गये नोटिसके अनुवादपर गौर कर चुका हूँ और समझौतेकी शर्तोंके विरुद्ध पड़नेवाले उसके पहलुओंमें अनुकूल परिवर्तन करनेके लिए आवश्यक अनुदेश जारी कर दिये गये हैं।

चौकीदारोंके खर्चके बारेमें बकाया या चालू रकमकी वसूली पहले ही रद की जा चुकी है, हालाँकि यह समझौतेकी शर्तोंके अन्तर्गत नहीं आता।

आगे क्या कार्रवाई की जायेगी — इसके बारेमें आपको मालूम ही है कि सरकारने बिलकुल निश्चित तौरपर अपना यह अधिकार सुरक्षित रखा है कि वह अदायगी न होनेके मामलोंमें आवश्यकता पड़नेपर जोर-जबरदस्तीसे भी काम ले सकती है। जाहिर है कि इसमें नोटिस देनेकी फीस वसूल करना, एक-चौथाई राशि तकका जुर्माना करना और इसके अतिरिक्त चल सम्पत्तिकी कुर्की तथा बिक्री और अचल सम्पत्तिकी जब्ती और बिक्री करनेके ज्यादा कड़े कदम उठाना भी शामिल है।

४. आपने अपने पत्रके पहले अनुच्छेदमें कांग्रेसका उल्लेख सरकार और जनताके बीच एक मध्यस्थके रूपमें किया है। जिन विषयोंपर दोनों पक्षोंका समझौता हुआ है उनमें यह शामिल नहीं है और मैं इस सुझावको स्वीकार नहीं कर सकता। जनताको पूरी स्वतन्त्रता है और लोग जब भी चाहें, अपने मामलोंके सिलसिलेमें सरकारी अधिकारियोंसे सीधे मिल सकते हैं।

५. आपके पत्रके अनुच्छेद २, ३ और ४ में उल्लिखित मुद्दोंके बारेमें मेरा उत्तर इस प्रकार है:

(१) रास तथा अन्य गाँवों द्वारा भू-राजस्वकी अदायगी।

१. यह "पत्र-व्यवहार" शीर्षकके अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था। देखिए पृष्ठ २०।

मौजूदा स्थिति यह है कि चालू वर्षका भू-राजस्व और, ए० ओ० २९ के प्रवर्त्तनके कारण अनधिकृत हो जानेवाली बकाया राशियोंको छोड़कर शेष सभी बकाया राशियाँ उनको अदा करनी हैं। चौकीदारोंके खर्चके लिए सभी जुर्माने, अर्थ-दण्ड और चालू वसूली माफ कर दिये गये हैं।

समझौतेकी शर्तोंमें आगे अनुच्छेद १६ (ख) में वे शर्तें निर्धारित कर दी गई हैं जिनके अन्तर्गत उन मामलोंमें बकाया-वसूली स्थगित कर दी जायेगी, जिनमें अदायगी न कर सकनेवाले सचमुच अदायगीके इच्छुक हैं, पर उसके लिए कुछ और समय चाहते हैं। सभी अधिकारी इस धाराका सख्तीके साथ पालन करेंगे।

(२) तकावी और पिछली अदायगीकी राशिका बकाया (भू-राजस्वकी अनधिकृत बकाया राशि)।

इन मामलोंपर जिलाधीश गौर कर रहे हैं। इन सभी मामलोंको लेकर आम किस्मका कोई आदेश जारी करना सम्भव नहीं है। सम्बन्धित व्यक्ति अपनी जिन भी कठिनाइयोंकी ओर जिलाधीशका ध्यान आकर्षित करेंगे उनपर बाकायदे विचार किया जायेगा।

(३) राखाओं (रखवालों) के खर्च और नोटिस देनेकी फीस वसूल न करनेके आदेश जारी कर ही दिये गये हैं।

चल-सम्पत्तिकी जब्तीके खर्चके मामले पर गौर किया जा रहा है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया २०-८-१९३१

परिशिष्ट २

आर० एम० मैक्सवेलका पत्र[1]

बम्बई

२४ अप्रैल, १९३१

मुझे आपका २२ अप्रैलका पत्र प्राप्त हो चुका है। आपने उसके साथ दो पत्रों की प्रतियाँ संलग्न की थी — एक प्रति आपके नाम श्री गेरेटके २१ अप्रैलके पत्रकी थी और दूसरी उसी तारीखको उसके उत्तरमें भेजे गये स्वयं आपके पत्रकी। चूंकि आपने २० तारीखके अपने उस पत्रकी प्रति संलग्न नहीं की जिसका श्री गेरेटने उत्तर दिया था, इसलिए वाइसराय महोदयको यह समझनेमें कठिनाई पड़ रही है कि गलतफहमी असलमें किस बातको लेकर पैदा हुई। वाइसराय महोदयका ख्याल है कि आपने ऐसा दावा तो कभी किया नहीं कि कांग्रेसका रूप सरकार और जनताके बीच एक ऐसे मध्यस्थका है कि जिसके बिना सरकार और जनता दोनों ही सीधे-सीधे परस्पर कोई व्यवहार नहीं रख सकते। और जबतक ऐसे किसी दावेपर आग्रह

१. यह "पत्र-व्यवहार" शीर्षकके अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था। देखिए पृष्ठ २३-४, और ४३-५।

न किया जाये तबतक, वाइसराय महोदयके ख्यालसे, ऐसा कोई कारण हो ही नहीं सकता कि श्री गेरेटने उत्तरमें जो-कुछ कहा है उसपर कोई आपत्ति की जाये। लगता है कि आपने उनके नाम २१ तारीखके अपने पत्रमें स्वीकार किया है कि जनताके प्रतिनिधिकी आपकी हैसियतको सरकार किस सीमातक मान्यता देनेके लिए तैयार है इस बातकी आपको जानकारी है; और वाइसराय महोदयको आशा थी कि समझौते के पालनसे सम्बन्धित विभिन्न समस्याओंके बारेमें आपके साथ उन्होंने विस्तारपूर्वक जो चर्चा की थी उससे आपने भली-भाँति महसूस कर लिया होगा कि सरकारका व्यवहार आपके और आप जिनका प्रतिनिधित्व करते हैं, उनके साथ कितना ईमानदाराना रहा है। और आप जानते ही हैं कि वाइसराय महोदय अपनी ओरसे पूरी तरह स्वीकार करते हैं कि समझौतेकी भावनाका निष्ठापूर्वक पालन करानेमें और जिनसे आप सहमत हुए हैं, समझौतेकी उन शर्तोंको स्वीकार करनेके लिए जनताको प्रेरित करनेमें तथा अपने समर्थकों पर अच्छा प्रभाव डालनेमें आप कितने अधिक समर्थ हैं; और वाइसराय महोदयको पूरा भरोसा है कि अपने भावी कार्यके लिए अत्यावश्यक शान्तिपूर्ण वातावरण बनानेके लिए आप उतने ही प्रयत्नशील बने रहेंगे जितने कि वाइसराय महोदय स्वयं हैं।

इसके बावजूद यदि आप कांग्रेसको एक ऐसा दर्जा दिलाना चाहते हैं जो कि कांग्रेसके प्रतिनिधिकी हैसियतसे आपके साथ इस सरकार और भारत सरकार द्वारा किये गये अबतकके व्यवहारसे स्पष्ट नहीं हुआ है, तो वाइसराय महोदयकी रायमें वह एक ऐसा प्रश्न होगा जो आपके और भारत सरकारके बीच सीधे-सीधे सम्पन्न हुए समझौतेकी व्याख्यामें आधारभूत परिवर्तनकी अपेक्षा रखता है, इसलिए उनको खेद है कि वे इसके बारेमें कोई भी राय व्यक्त करनेमें असमर्थ हैं। वे इतना ही कह सकते हैं कि समझौतेकी किसी भी एकदम नई व्याख्याको स्वीकार करना न तो श्री गेरेट और न बम्बई सरकारके लिए ही उचित होगा। वाइसराय महोदय महसूस करते हैं कि आपके लिए उचित यही होगा कि इस विषयको लेकर यदि आपने अबतक न किया हो तो अब सीधे भारत सरकारसे ही बात चलायें।

आपने अपने पत्रमें ब्यौरेसे सम्बन्धित कुछ बातोंका भी उल्लेख किया है। उनके सम्बन्धमें मुझे यही कहना है कि इनमें से अनेक मुद्दोंके बारेमें वाइसराय महोदय हाल ही में आपसे चर्चा कर चुके हैं और इनके बारेमें अधिक ब्यौरेवार ढंगसे बात करनेके लिए वे सहर्ष तैयार हैं। इस दौरान आपको इतना आश्वस्त करना ही पर्याप्त है कि बम्बई सरकार वह सारी कार्रवाई करनेके लिए बिलकुल तैयार है जिसे करना समझौतेकी शर्तोंके अनुसार जरूरी साबित किया जा सके। और बम्बई सरकार उन सभी मामलोंकी जाँच करानेको तैयार रहेगी जिनकी ओर आप विशेष तौरपर उसका ध्यान आकर्षित करेंगे और जिनमें यह माननेका समुचित कारण मौजूद हो कि आगे कार्रवाई करना उचित है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २०-८-१९३१

परिशिष्ट ३

एच० डब्ल्यू० एमर्सनका पत्र[1]

शिमला
२ मई, १९३१

मैं यह पत्र आपके २२ अप्रैलके पत्र, उससे संलग्न सह-पत्रों और पत्रमें व्यक्त किये गये आपके इस विश्वासके लिए धन्यवाद देनेके लिए लिख रहा हूँ कि समझौता भंग न होने देनेके लिए यथासम्भव पूरा-पूरा प्रयास किया जायेगा। मेरा ख्याल है कि कोई फौरी खतरा तो नहीं है, फिर भी गुजरातमें जो कठिनाइयाँ आई हैं—और जिनके बारेमें हम बम्बई सरकारसे परामर्श कर रहे हैं, उनके अलावा भी कई ऐसे मामले हैं जिनके बारेमें सरकार समझती है कि आपके साथ व्यक्तिगत तौरपर चर्चा करना लाभदायक रहेगा। उदाहरणके लिए, सर्वसाधारण परिस्थितिके कई पहलू ऐसे हैं जिनमें सुधारकी आवश्यकता है। और फिर उत्तर-पश्चिमी सीमाप्रान्तका मामला भी है जिसके बारेमें आपने कल मुझे तार दिया था। मेरी जानकारीके मुताबिक तो आपका यह ख्याल गलत है कि खान अब्दुल गफ्फार खाँके खिलाफ जो प्रचार चल रहा है उसके पीछे किसीका हाथ है, क्योंकि सरकारकी हमेशासे पूरी कोशिश रही है और अब भी है कि उत्तर-पश्चिमी सीमाप्रान्तके मामलोंमें इतना उलझाव पैदा न हो पाये कि स्थिति संकटपूर्ण बन जाये; स्थितिको और अधिक बिगड़ी हुई बतलानेका तो उसका कोई मंशा ही नहीं है। फिर भी कहना पड़ेगा कि वहाँ स्थिति सन्तोषप्रद तो कदापि नहीं है। आपने अपने तारमें पंजाबके गवर्नर महोदय के भाषणका भी उल्लेख किया है। उन्होंने जिन घटनाओं और प्रवृत्तियोंका हवाला देते हुए जो उदाहरण पेश किये थे, वे उनके प्रान्तके बारेमें ही नहीं, अन्य प्रान्तोंके बारेमें भी सही हैं। लेकिन मैं प्रसंगवश उन उदाहरणोंका विवरण प्राप्त करनेकी कोशिश कर रहा हूँ। इसलिए हमारे पास बातचीतके लिए काफी मसाला है और हालाँकि इस मौसममें आपको शिमला बुलानेमें काफी संकोच हो रहा है फिर भी मुझे भरोसा है कि यदि हम दिल खोलकर बातें कर लें तो हमारी उलझनें उतनी कठिन नहीं रह जायेंगी जितनी वे दूरसे दिखाई देती हैं। सर मॉल्कम हेलीका उत्तर अभी मुझे नहीं मिला है, परन्तु मुझे पूरी आशा है कि मैं दोनों मुलाकातोंको सम्भव बना लूँगा। यदि यह क्रम ठीक चला, तो ११ मईके आसपास आपका यहाँ आना सुविधाजनक रहेगा। मैं और पहलेकी तिथि इसलिए नहीं सुझा रहा हूँ कि अगले कुछ दिनोंका अपना कार्यक्रम शायद आप निश्चित कर चुके होंगे और फिर हमें कुछ सामग्री भी इकट्ठी करनी है। मुझे आशा है कि उस समयतक गोलमेज परिषद्से

१. यह "पत्र-व्यवहार" शीर्षकके अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था। देखिए पृष्ठ २४।

सोशलिस्ट रिपब्लिकन पार्टी'—जैसा कि उसके नामसे ही स्पष्ट है—के सदस्य देशमें एक समाजवादी गणतन्त्रकी स्थापना करना चाहते हैं, और समाजवादी गणतन्त्र किसी प्रकारका समझौता या आधी-ऊधी चीज नही है। क्रान्तिकारी तो अपने लक्ष्यकी प्राप्तितक, अपने आदर्शकी चरम परिणतितक संघर्ष जारी रखनेके लिए कृत-संकल्प हैं। परन्तु वे बदलती हुई परिस्थितियों और वातावरणोंके अनुसार अपनी कार्य-नीति परिवर्तित करनेमें बिलकुल सक्षम हैं। क्रान्तिकारी संघर्ष विभिन्न दौरोंमें विभिन्न रूप धारण करता चलता है। कभी उसका रूप बिलकुल खुला, सार्वजनिक होता है, तो कभी वह छिपा हुआ, गुप्त रहता है; किसी दौरमें वह मात्र प्रचार-आन्दोलनोंतक सीमित रहता है तो किसी दौरमें जीवन और मृत्युके बीच एक भीषण संघर्षकी शक्ल अख्तियार कर लेता है। क्रान्तिकारी अपने आन्दोलनको बन्द करनेके लिए तभी तैयार हो सकते हैं जब परिस्थितिमें कोई ऐसी विशेष बात पैदा हो जाये जिसके विचारसे आन्दोलनको बन्द करनेका औचित्य समझमें आ सके। परन्तु आपने ऐसा कोई निश्चित विचार सामने नहीं रखा है। मात्र भावुकताके आधारपर की गई अपीलोंका क्रान्तिकारी संघर्षोंमें कोई अधिक महत्व नहीं होता और न हो ही सकता है।

आपने अपने समझौतेके बाद अपना आन्दोलन वापस ले लिया है और उसके फलस्वरूप आपके सभी बन्दियोंको रिहा कर दिया गया है। पर क्रान्तिकारी बन्दियों का क्या हुआ? १९१५ से जेलोंमें बन्द गदर पार्टीके दर्जनों बन्दी अबतक वही सड़ रहे हैं, बावजूद इस बातके कि वे अपनी सजाएँ पूरी काट चुके हैं। मार्शल लॉके तहत बन्दी बनाये गये अनेक लोग अबतक जीवित दफनाये गये-से पड़े हैं। बबर अकालियोंका भी यही हाल है। देवगढ़, काकोरी, मछुआ बाजार और लाहौर षड्यन्त्र केसके बन्दी भी अन्य अनेक बन्दियोंके साथ जेलोंमें बन्द हैं। लाहौर, दिल्ली, चटगाँव, बम्बई, कलकत्ता और अन्य स्थानोंपर षड्यन्त्रके दर्जनों मुकदमे चल रहे हैं। दर्जनों क्रान्तिकारी फरार हैं; उनमें अनेक महिलाएँ भी हैं। एक दर्जनसे अधिक बन्दी सच-मुच फाँसीके फन्दोके इन्तजारमें हैं। इन सबके बारेमें क्या हुआ? लाहौर षड्यन्त्र केसके सिलसिलेमें फाँसीकी सजा पाये जिन तीन बन्दियोंको सौभाग्यसे काफी ख्याति मिल गई है और जिन्होंने जनताकी अपार सहानुभूति प्राप्त कर ली है, केवल वे ही तो 'क्रान्तिकारी दल' नहीं हैं। दलके सामने उनके भाग्यका प्रश्न ही तो एक-मात्र प्रश्न नहीं है। सच तो यह है कि उनकी सजाएँ माफ होनेके बजाय यदि उनको फाँसी लग जाये तो शायद देशका ज्यादा लाभ होगा।

लेकिन इस सबके बावजूद आप उनसे आन्दोलन बन्द करनेकी खुली अपीलें कर रहे हैं। वे उसे बन्द क्यों करें? आपने कोई निश्चित बात तो कही नही है। ऐसी परिस्थितियोंमें आपकी अपीलोंका यही अर्थ लगाया जा सकता है कि उस आन्दोलनको कुचलनेके लिए आपने नौकरशाहीके साथ गठबन्धन कर लिया है और आपका इस तरह अपील करना क्रान्तिकारियोंके बीच विश्वासघात, दलत्याग और गद्दारीका प्रचार करनेके बराबर है। यदि ऐसा न होता तो आपके लिए सबसे अच्छी बात तो यह होती कि आप कुछ प्रमुख क्रान्तिकारियोंसे सम्पर्क स्थापित करके उनसे इन सबकी

चर्चा कर लेते। आपको चाहिए था कि आप उनको आन्दोलन बन्द करनेकी बातपर पूर्णतः सहमत करनेकी कोशिश करते। मैं नही समझता कि आम दकियानूसी लोगोंकी तरह आपको भी यह विश्वास है कि क्रान्तिकारियोंमें तर्क-विवेकका नितान्त अभाव है और उनको विनाश तथा विध्वंसमें आनन्द आता है। हम आपको बतला दें कि वास्तवमें बात बिलकुल उल्टी है। क्रान्तिकारी लोग हर कदम उठानेसे पहले हमेशा उसके औचित्य तथा परिणामोंपर विचार कर लेते हैं और अपने हर कदमकी जिम्मेदारी वे पूरी तरह महसूस करते हैं और अन्य किसी भी पहलूकी अपेक्षा क्रान्तिकारी कार्यक्रमके रचनात्मक पहलूको सर्वाधिक महत्व देते हैं। हालाँकि वर्तमान परिस्थितियोंमें वे अपने कार्यक्रमके विध्वंसात्मक पक्षमें जुटे रहनेके अतिरिक्त कुछ कर ही नही सकते।

क्रान्तिकारियोंके प्रति सरकारकी वर्तमान नीति उनको जनताकी उस सहानुभूति और समर्थनसे वंचित करनेकी है जिन्हें उन्होंने अपने आन्दोलनके दौरान प्राप्त कर लिया था और इससे वंचित करके सरकार उनको कुचल देना चाहती है। जनता से विलग करनेके बाद उनको आसानीसे शिकार बनाया जा सकता है। इस तथ्यको देखते हुए उनसे भावुकताके आधारपर ऐसी अपीलें करना जिनसे उनमें पस्तहिम्मती फैले नितान्त अविवेकपूर्ण और क्रान्ति-विरोधी काम है। यह तो उनको कुचलनेमें सरकारकी सीधी सहायता करना होगा।

इसलिए हमारा अनुरोध है कि आप या तो कुछ क्रान्तिकारी नेताओंसे बात कर लें — जेलोंमें क्रान्तिकारी भरे पड़े हैं — और उनके साथ सुलह कर लें या फिर इस तरहकी अपीलें निकालना बन्द कर दें। भलाई इसीमें है कि आप इन दोनोंमें से कोई एक मार्ग अपना लें और उसपर पूरे हृदयसे अमल करना शुरू कर दें। आप यदि उनकी सहायता नहीं कर सकते तो उनपर रहम तो खा सकते हैं। उनको अपने हालपर छोड़ दीजिए। वे अपनी चिन्ता ज्यादा अच्छी तरह कर सकते हैं। वे जानते हैं कि भावी राजनीतिक संघर्षमें क्रान्तिकारी दलका अधिनायकत्व सुनिश्चित है। जनता उनके आह्वानपर खड़ी हो रही है और वह दिन दूर नहीं, जब वे जनता को अपने ध्वजके नीचे एकत्र कर उसे समाजवादी जनतन्त्रके अपने उच्च और महान आदर्शकी ओर ले जायेंगे।

और यदि आप सचमुच उनकी सहायता करना चाहते हैं, तो उनका दृष्टिकोण समझनेके लिए उनके साथ बैठकर बात कीजिए और समस्याके बारेमें ब्यौरेवार चर्चा कर लीजिए।

आशा है कि आप उक्त अनुरोधपर विचार करने और अपना मत सार्वजनिक रूपसे व्यक्त करनेकी कृपा करेंगे।

आपका,
अनेकमें से एक

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २३-४-१९३१

परिशिष्ट ५

एच० डब्ल्यू० एमर्सनका पत्र[1]

शिमला
३० अप्रैल, १९३१

प्रिय श्री गांधी,

आपको याद होगा कि बम्बईमें आपसे अपनी पिछली भेंटके दौरान मैंने वचन दिया था कि मैं गवर्नर महोदय सर मॉल्कम हेलीके साथ आपकी भेंट निश्चित कराने के लिए उनको लिखूंगा। मैंने अगले दिन ही उनको लिख दिया था। उनका पत्र अभी-अभी आया है। वे इससे पहले उत्तर नहीं दे सके क्योंकि राजस्व और लगानके लेखे-जोखेमें व्यस्त थे। वे महसूस करते हैं कि जबतक वे तथ्योंकी पूरी-पूरी जानकारी हासिल करके अपने दिमागमें ठीक-ठीक यह न समझ लें कि क्या राहत देना जरूरी है, तबतक आपके साथ चर्चा करनेका कोई लाभ नहीं होगा। दूसरे शब्दोंमें कहें तो वे बिलकुल ठीक-ठीक समझ लेना चाहते थे कि वे आपको क्या आश्वासन दें जिससे कि मामला पूरी तौरपर हल हो सके। इस समयतक सभी जिलोंसे विवरण प्राप्त नही हो सका है, लेकिन सर मॉल्कम हेलीको आशा है कि एक सप्ताहके अन्दर-अन्दर उनको स्थितिकी पूरी जानकारी प्राप्त हो जायेगी और वे आपके साथ उसपर चर्चा कर सकेंगे। उनका अगला पत्र आनेपर मैं आपको सूचित कर दूंगा।

२. समाचारपत्रोंमें यह देखकर मुझे बड़ा दुःख हुआ कि आप कुछ अस्वस्थ रहे हैं; आशा है कि वे समाचार सही नहीं होंगे या होंगे भी तो अबतक आप पुनः स्वस्थ हो चुके होंगे।

हृदयसे आपका,
एच० डब्ल्यू० एमर्सन

मो० क० गांधी
अहमदाबाद

गृह-मन्त्रालय, राजनीतिक फाइल संख्या ३३/११ और के० डब्ल्यू० १९३१।
सौजन्य: भारतीय राष्ट्रीय अभिलेखागार

१. देखिए पृष्ठ ११६।

परिशिष्ट ६

गांधीजीके साथकी अपनी भेंटका एमर्सन द्वारा विवरण[1]

गोपनीय

मैंने समझौतेसे उत्पन्न होनेवाले प्रश्नों और प्रसंगवश आम महत्वके प्रश्नोंके भी बारेमें श्री गांधीके साथ १३, १४, १५ और १६ मईको विस्तारपूर्वक चर्चा की।

२. चर्चाका सबसे पहला महत्वपूर्ण विषय था — गुजरातकी परिस्थिति। इन विशेष प्रश्नपर चर्चा हुई:

(क) श्री गांधीने कहा कि खेड़ा जिले और खासकर बोरसद ताल्लुकेमें स्वयं उनके और वहाँके जिलाधीश श्री पैरीके बीच एक तरहका सहयोग स्थापित हो जानेके कारण कुल मिलाकर सभी चीजें काफी सन्तोषप्रद ढंगसे चल रही हैं। उन्होंने कहा कि लोगोंसे जितनी जल्दी बन पड़ता है, लगानकी अदायगी करते जाते है और वे स्वयं भी अलग-अलग मामलोंकी जाँच करके अपनी तसल्ली करते रहते हैं कि लोग अपनी परिस्थितियोंके अनुसार यथाशक्ति अदायगी कर रहे हैं या नहीं। वे लगानकी अनधिकृत बकाया राशिके[2] बारेमें चिन्तित थे। उन्होंने कहा कि यह बात तो हम दोनों ही मानते हैं कि चालू लगान और बकाया लगानकी अदायगी जो भी कर सकते हैं उनको करनी चाहिए, लेकिन ऐसे भी अनेक लोग हैं जो चालू वर्षका लगान तो अदा कर सकते हैं पर बकाया राशिकी अदायगी करनेमें असमर्थ हैं। उन्होंने यह भी कहा कि मैं चाहता हूँ कि प्रान्तीय सरकार एक आम किस्मका ऐसा ऐलान कर दे कि ऐसे मामलोंमें बकाया राशिकी अदायगी अपने आप मुल्तवी मान ली जायेगी। उनकी दलील थी कि जब सविनय अवज्ञा आन्दोलनमें शामिल न होनेवाले लोगोंकी बकाया राशियाँ मुल्तवी की गई हैं और इस प्रकार वे राशियाँ अधिकृत बना दी गई हैं, तब फिर सविनय अवज्ञा आन्दोलनमें भाग लेनेवालोंपर बकाया पड़ी राशियोंको मुल्तवी करनेका और भी अधिक औचित्य मौजूद है, क्योंकि वे आन्दोलनके दौरान पहले ही बहुत काफी कष्ट भोग चुके हैं और स्पष्ट है कि अदायगीकी दृष्टिसे उनकी स्थिति और भी बुरी है। मैंने कहा कि मैं जहाँतक समझ पाया हूँ, सविनय अवज्ञा आन्दोलनमें भाग न लेनेवाले सभी लोगोंकी बकाया राशियाँ मुल्तवी करनेका कोई आम आदेश तो नहीं निकाला गया; फिर भी लगान सम्बन्धी सामान्य प्रशासनिक व्यवस्थाके अनुसार कुछ ऐसी बकाया राशियोंको जरूर मुल्तवी किया गया है जिनके बारेमें इसके यथेष्ट कारण मौजूद था। हम यह मानकर नहीं चल सकते कि

१. देखिए पृष्ठ १६१।

२. अर्थात् वे बकाया राशिया जिनको मुल्तवी नहीं किया गया है।

सविनय अवज्ञा आन्दोलनमें भाग लेनेवाले लोग उसमें शामिल होनेके कारण ही अदायगीके मामलेमें उन लोगोंसे ज्यादा बुरी स्थितिमें हैं जिन्होंने आन्दोलनमें भाग नहीं लिया था। आन्दोलनमें भाग लेनेवालोंमें से अनेक ऐसे हैं जिनको कोई भारी नुकसान नहीं उठाना पड़ा, बहुत काफी लोग ऐसे हैं जिनको कोई नुकसान ही नहीं हुआ; और फिर किसको कितना नुकसान उठाना पड़ा — यह तो कोई कसौटी नहीं हुई; कसौटी तो यह है कि अदायगीके मामलेमें उनकी मौजूदा स्थिति क्या है। इसलिए मेरी समझमें नहीं आता कि आम किस्मका कोई आदेश कैसे जारी किया जा सकता है। इसपर उन्होंने कहा कि लगान देनेवाले अनेक लोग चालू वर्षका लगान और कुछ लोग बकाया राशिका कुछ अंश भी यह सोचकर अदा कर रहे हैं कि इस समय वे इतनी ही अदायगी कर सकते हैं और इसके बाद बकाया राशिकी वसूली मुल्तवी कर दी जायेगी और सरकारी अधिकारी भी अच्छी तरह जानते हैं कि लोग क्या समझकर अदायगी कर रहे हैं और यदि बादमें बकायाकी वसूलीके लिए कोई जोर-जबर्दस्ती की गई तो एक बड़ी कठिन परिस्थिति पैदा हो जायेगी। मैंने कहा कि स्पष्ट ही सरकार यह स्थिति स्वीकार नहीं कर सकती कि सरकारको अदा की जाने-वाली बकाया राशिका कितना हिस्सा अदा किया जाये, इसका फैसला अदायगी करने-वालोंपर छोड़ दिया जाये। उन्होंने स्वीकार किया कि आम तौरपर तो यह बात ठीक है लेकिन खेड़ाकी तरह जहाँ वे स्वयं और कांग्रेसके अन्य कार्यकर्त्ता भी देख रहे हैं कि लोग समझौतेका पालन करते हुए अपनी शक्ति-भर अदायगी कर रहे हैं और काफी कुछ हदतक वे लोग भी जनतासे अदायगी कराने और उसको आश्वस्त करनेमें भागीदार बन चुके हैं, वहाँ बात कुछ दूसरी हो जाती है। इसपर मैंने उनको सुझाया कि गुजरातके सभी कांग्रेसी कार्यकर्त्ता उद्देश्यके प्रति उतने ही ईमानदार तो नहीं हैं जितने कि आप स्वयं हैं; और यही कारण है कि जिलाधीशको हर मामलेकी स्वयं छानबीन करके अपनी तसल्ली करनी पड़ती है कि वसूली मुल्तवी करनेका कोई औचित्य है या नहीं। मैंने उनको बताया कि मेरी जानकारीके अनुसार तो गुजरातके कुछ इलाकोंमें लगान अदा करनेवालोंको अनधिकृत बकाया राशिकी अदायगी न करनेके लिए उकसाया जा रहा है, हालाँकि उनमें से बहुत-से अदायगी करनेकी स्थितिमें हैं। मै यह मानकर चलता हूँ कि आम तौरपर न तो प्रान्तीय सरकारें और न स्थानीय अधिकारी लोग ही चाहते हैं कि अदायगी न कर सकनेवाले लोगोंसे भी जबरन वसूली की जाये। इसलिए सारी समस्या वास्तवमें परस्पर विश्वासकी है। यदि कांग्रेस और जनता दोनों ही ईमानदारीसे सहयोग करें और यथाशक्ति अदायगी करें, तो मैं नहीं समझता कि जोर-जबर्दस्ती की कार्रवाई करनेकी बात किसीके दिमागमें भी आयेगी। लेकिन यदि वे अपना काम ईमानदारीसे पूरा नहीं करेंगे तो मेरी समझमें नहीं आता कि जोर-जबर्दस्तीके अलावा और क्या किया जा सकता है। जो भी हो, अभी इस समय इसके बारेमें कोई निर्णय करनेकी आवश्यकता दिखाई नहीं पड़ती। जब कभी कोई कठिनाई सामने आयेगी तो उसपर उसी समय विचार कर लेना काफी होगा।

इस बातचीतके दौरान मुझे आमतौरपर कुछ ऐसा लगा कि श्री गांधी अनधिकृत बकाया राशिकी वसूलीके सिलसिलेमें कुछ कठिनाई पैदा होनेकी बातसे आशंकित हैं और बोरसदमें तो वे सभी-कुछ ठीक-ठीक चला रहे हैं लेकिन अन्य स्थानोंमें असमर्थनाकी आड़ लेकर अनधिकृत बकाया राशियोंकी अदायगी रोकनेकी कोशिशें चल रही हैं। भावी कठिनाईका स्वरूप क्या होगा, यह इस बातपर निर्भर करेगा कि इस आन्दोलनको कितनी सफलता मिलती है, पर यदि हमें परेशानीसे बचना है तो शायद जरूरी है कि स्थानीय अधिकारी उन लोगोंसे अनधिकृत बकाया राशियोंकी वसूली करनेका आग्रह न करें जो सचमुच अदायगी करनेमें कठिनाई महसूस करते हों।

(ख) ग्राम-अधिकारियोंको बहाल करनेके बारेमें भी हमने काफी विस्तारसे बातचीत की। श्री गांधीने एक मुद्दा यह रखा कि इस अर्थमें तो किसी भी नये पटेलकी नियुक्ति स्थायी तौरपर नहीं की गई है कि वह उसके जीवनपर्यन्त चलेगी। नियुक्तियाँ तो ३, ५ या १० वर्षोंकी अवधिके लिए ही की गई है, और ऐसी नियुक्तियाँ भी अगला आदेश जारी होने तककी शर्तपर की गई हैं, अर्थात् उनको अगले आदेश द्वारा रद भी किया जा सकता है। उन्होंने कहा कि ऐसी नियुक्तियाँ स्थायी नहीं मानी जा सकतीं और इसलिए वे ५ मार्चके समझौतेके १९वें परिच्छेदके अन्तर्गत सर्वथा संरक्षित नहीं मानी जा सकती। मैंने उनसे कहा कि मैं समझता हूँ कि नियुक्तियोंकी यह व्यवस्था कोई असाधारण नहीं है और गुजरातमें सामान्य परिस्थितिमें भी पटेलोंकी नियुक्तियाँ उनके द्वारा उल्लिखित अर्थमें स्थायी तौरपर नहीं की जाती रही हैं। प्रान्तीय सरकारका दृष्टिकोण यह है कि "स्थायी तौरपर"का अर्थ "काफी हदतक स्थायी तौरपर"; और मेरा ख्याल है कि यह व्याख्या कम-से-कम तर्क-संगत तो है। मैंने इसपर अपनी ओरसे आग्रह नहीं किया, क्योंकि मैं जानता था कि नई दिल्लीमें जब इस धाराको लेकर चर्चा चल रही थी तब न तो लॉर्ड इर्विनको और न श्री गांधीको ही इस तथ्यकी जानकारी थी कि ये नियुक्तियाँ इस तरहकी हैं और आम ख्याल यही था कि ये नियुक्तियाँ या तो स्थायी हैं या फिर बिलकुल ही अस्थायी किस्मकी। फिर भी धाराकी अपनी शब्द-रचनाका उस सामान्य सिद्धान्त पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता जो इस या इसी प्रकारकी अन्य व्यवस्थाओंमें निहित था। सिद्धान्त यह था कि जब नयी नियुक्ति द्वारा एक अन्य या तीसरा पक्ष भी खड़ा कर दिया गया हो तो उस तीसरे पक्षके अधिकारोंकी रक्षा करनेका दायित्व प्रान्तीय सरकारपर जा जाता है; और स्पष्ट है कि कुछ वर्षोंकी अवधिके लिए की गई नियुक्तियोंपर भी यह सिद्धान्त लागू होता है। यह दलील दी जा सकती है कि इस प्रकार उत्पन्न तीसरे पक्षके अधिकारोंको सन्तुष्ट कर देनेके पश्चात् तो समझौतेकी व्यवस्थाको अमलमें लाना चाहिए और स्थिति पूर्ववत् कर देनी चाहिए। उदाहरणके लिए तीन वर्षोंके लिए की गई नियुक्तिकी अवधि पूरी होनेपर पहले उस पदपर जो पदाधिकारी था उसे उसी जैसे अधिकार दे देने चाहिए; और यदि इस बीच उसने अपात्रताका कोई कारण न दिया हो तो उसे किसी अन्यपर वरीयता दी जानी चाहिए। लगता है कि प्रान्तीय सरकार शायद इस मामलेमें ऐसा ही रुख अपनानेके

लिए तैयार हो जाये, पर मै किसी भी तरहका कोई निश्चित वचन नही दे सकता था। श्री गांधी इससे अधिक सन्तुष्ट नही दिखाई पड़े, लेकिन मैं समझता हूँ कि उन्होंने महसूस कर लिया कि उनका तर्क एकदम अकाट्य नही था।

उन्होंने इसके बाद दूसरा रुख अपनाया और वह यह कि आमतौर पर लोग मानते है कि नये नियुक्त किये गये लोग काम नही सँभाल पा रहे हैं और उनमें से अनेक पुराने सजायाफ्ता और बदमाश लोग है; उन्होंने यह भी कहा कि वे वास्तवमें लगानकी वसूली नही कर पाते; जो काम पहले काम करनेवाला पटेल कर रहा था, और जिस गाँवमें नया पटेल नियुक्त किया गया है वहाँ तबतक शान्ति नहीं होगी जबतक कि उसे पदसे हटा नही दिया जाता। अच्छे प्रशासनके हितमें नये पटेलोंको या तो हर्जाना देकर या उनको कोई दूसरा काम देकर इस शिकायतको दूर किया जाये। मैंने कहा कि जहाँतक मै जानता हूँ प्रान्तीय अधिकारी किसी भी पटेल विशेषके खिलाफ की गई सही किस्मकी शिकायतोंकी जाँच करनेके लिए तो बिलकुल तैयार हैं, लेकिन झूठमूठकी शिकायतोंसे तो उनको बचाना ही पड़ेगा, और यह कि ऐसे मामलोंमें नया नियुक्त किया गया पदाधिकारी नियुक्ति विशेषका पूरा अधिकारी है, और वे पटेल लोग खुद भी यह माननेको तैयार नहीं होंगे कि नियुक्ति के स्थानपर उन्हें हर्जाना दे देना काफी है। हाँ, अन्य स्थान रिक्त होनेपर त्यागपत्र दे चुकनेवाले पटेलोंको उनपर नियुक्त करके स्पष्ट ही इस जटिल समस्याको थोड़ा-बहुत सुलझाया जा सकता है; लेकिन मै कह नहीं सकता कि यह उपाय व्यावहारिक होगा या नही। जाहिर है कि यह प्रश्न भी उनको काफी परेशान किये हुए है।

(ग) बिकी हुई जमीनोकी फिरसे खरीद करनेकी बातसे वे काफी प्रसन्न दिखाई पड़ते थे। कौन-सी जमीनें किस कीमतपर बेची गई थी — इसका ठीक-ठीक पता लगानेमें इतनी अधिक कठिनाइयाँ पड़ीं, इसकी उनको बड़ी शिकायत थी। लेकिन उन्होंने स्वीकार किया कि जो व्यवस्था कर दी गई है वह हर प्रकारसे समुचित है और उससे सभी अपेक्षाएँ पूरी हो जायेंगी। मौजूदा व्यवस्था यह की गई है कि ऐसे सभी सौदे गाँवोके खसरोंमें या तो दर्ज कर दिये गये है या जल्द ही दर्ज कर दिये जायेंगे और वे खसरे जनताके लिए सुलभ रहेंगे। उन्होंने बतलाया कि धाराला लोगोंसे जमीनें लौटानेमें उन्होंने जितनी समझी थी उससे कहीं ज्यादा कामयाबी उनको मिल रही है। और सच तो यह है कि दूसरे जिन लोगोंसे उनको आसानीसे निभने की उम्मीद थी, उनकी अपेक्षा धारालाओंसे उनकी कही अच्छी पटरी बैठ रही है। मैंने उनसे पूछा कि गरदा अपने सौदेसे क्यों मुकर गया है। वे यह माननेको तैयार नही थे कि गरदाको कांग्रेससे ऐसी कोई शिकायत होनेका कोई कारण हो सकता है कि कांग्रेसने अपनी तरफसे सौदेकी शर्त निभानेमें कोई चूक की है और उन्होंने बतलाया कि वे सर कावसजी जहाँगीरके साथ पत्र-व्यवहार कर रहे हैं।

उन्होंने कहा कि खेड़ा जिलेमें कुछ ऐसे भी मामले हुए हैं जिनमें बकाया लगान न भर पानेपर उनकी जमीनें जब्त कर ली गई हैं और फिर उनको सरकारी सम्पत्ति घोषित करके बेच दिया गया है और उनकी बिक्रीसे हासिल रकम भी उस खातेदार

के खातेमें जमा नहीं की गई है, और यहाँतक कि जिस बकाया राशिके लिए जमीन जब्त की गई थी; वह राशि अब भी अदा करनेको कहा जा रहा है। मैंने कहा कि मुझे इसके बारेमें शक है, हालाँकि मुझे यह तो मालूम था कि जब्तशुदा जमीनोंकी बिक्रीसे हासिल पूरी-की-पूरी रकमें सरकारी खातेमें जमा करा दी गई है, भले ही वे रकमें लगानकी बकाया राशिसे ज्यादा रही हों। मुझे पता चला कि खेड़ाके जिलाधीशने इस प्रश्नके बारेमें प्रान्तीय सरकारको लिखा था और वह इसपर विचार अवश्य करेगी और यदि श्री गांधीके बताये अनुसार ऐसे कुछ मामले सचमुच हुए हैं तो वह अवश्य देखेगी कि जमीनें जब्त कर लेनेके बाद भी लगानकी वसूली एक बेमतलबकी ज्यादती तो नहीं है।

श्री गांधी कुल मिलाकर गुजरातकी स्थितिके बारेमें पिछली भेंटकी तुलनामें अब कहीं अधिक सन्तुष्ट थे; और निःसन्देह गुजरातकी स्थितिमें सुधार तो हुआ ही है। लगता है कि उन्होंने खुद भी समस्याएँ सुलझानेके लिए काफी डटकर कोशिश की है; फिर भी लगता है कि आगे कई उलझावभरे मामले सामने आयेंगे जिनको लेकर कठिनाइयाँ पैदा हो सकती हैं, विशेषकर उन क्षेत्रोंमें जहाँ श्री गांधीने स्वयं प्रयत्न नहीं किये और जहाँ वल्लभभाईका प्रभाव हावी है।

मैं यह भी कहूँ कि कांग्रेसको सरकार और जनताके बीच एक मध्यस्थके रूपमें मान्यता दिलानेकी माँग रखनेकी बात श्री गांधीने कभी गम्भीरतापूर्वक सोची भले ही हो, कम-से-कम इस बार गुजरातके सम्बन्धमें चर्चा करते हुए और दो-एक अन्य अवसरोंपर भी उन्होंने ऐसा कोई आग्रह नहीं किया। हाँ, उन्होंने यह आग्रह अवश्य किया, और वह बिलकुल अकारण ही नही कि खेड़ाकी भाँति अन्य क्षेत्रोंमें भी जहाँ-कहीं स्थानीय अधिकारी उनके साथ तथा अन्य कार्यकर्त्ताओंके साथ सहयोग कर रहे हैं, वहाँ ऐसी कोई कार्रवाई नहीं की जानी चाहिए जो उनको तथा उनकी सहायता करनेवालोंके लिए परेशानीकी स्थिति उत्पन्न कर दे। ऐसी कोई कार्रवाई तबतक नही की जानी चाहिए जबतक यह स्पष्ट न दिखने लगे कि वे सहयोगसे हाथ खींच रहे हैं। मैंने उनसे उन बयानोंके बारेमें बात की जिनके साथ उनका नाम समाचारपत्रोंमें जोड़ा जा रहा था और जिनके अनुसार उन्होंने करदाताओंको सलाह दी थी कि वे ब्याजपर रुपये उधार लेकर लगानकी अदायगी न करें। मैंने उनको बतलाया कि सरकार तो इस सिद्धान्तको स्वीकार नहीं कर सकती और सर्वविदित है कि करदाताओंको करकी अदायगी करनेके लिए बहुधा रुपये उधार लेने पड़ते हैं और यदि किसी बैंकमें मेरा खाता खुला हो तो मेरे साहूकार केवल इस कारण तो अपने तकाजे बन्द नहीं कर देंगे कि मेरे खातेमें नकद रुपये नहीं हैं। उन्होंने स्वीकार किया कि साधारण परिस्थितियोंमें उनकी सलाहका कोई औचित्य नही, लेकिन जिस परिस्थिति विशेषमें राय दी गई थी उसे देखते हुए सलाह उचित थी और उन्होंने इसपर आगे तर्क करनेकी गुंजाइश यह कहकर खत्म कर दी कि जिस क्षेत्रके लोगोंको सलाह दी गई थी वहाँ अर्थात् खेड़ाके जिलाधीशने उसे एक काम-चलाऊ आधारके रूपमें स्वीकार कर लिया है।

(३) इसके बाद हमने नमकके बारेमें थोड़ी चर्चा की, जिसे बादमें केन्द्रीय राजस्व निकायके सिलसिलेमें फिर उठाया गया। चर्चाके दौरान मुख्य रूपसे ये मुद्दे पेश किये गये :

(क) श्री गांधी इस बातके लिए व्यग्र हैं कि सरकारको ५ मार्चके बयानके तत्सम्बन्धी अंशको विस्तारपूर्वक समझानेके लिए एक विज्ञप्ति जारी करना चाहिए जिससे कि रियायतके हकदार व्यक्तियोंको उसकी रूपरेखाकी और अधिक जानकारी हो सके। मैंने उनको केन्द्रीय राजस्व निकाय द्वारा विभिन्न क्षेत्रोंके लिए जारी की गई विस्तृत तथा ब्यौरेवार विज्ञप्तियाँ दिखाई और स्पष्ट किया कि मेरी समझमें केन्द्रीय राजस्व निकायका दृष्टिकोण यह है कि विज्ञप्तियाँ सरकारी विभागके मार्ग-दर्शनके लिए तो आवश्यक हैं, पर उनमें इतनी पेचीदगियाँ हैं कि आम जनताको बात समझनेमें उनसे कोई वास्तविक सहायता नही मिल सकती, और वास्तवमेकई खास कठिनाइयाँ तो अब भी लगातार सामने आती जा रही हैं और एक उदार तथा व्यावहारिक दृष्टिसे उनका अस्थायी तौरपर समाधान भी किया जा रहा है, लेकिन विभिन्न प्रश्नोंके बारेमें अबतक कोई अन्तिम निर्णय नहीं हो पाया है, इसलिए ब्यौरेवार विज्ञप्ति जारी करनेका उपयुक्त समय अभी नहीं आया है और फिर लम्बी-चौड़ी ब्यौरेवार विज्ञप्तिकी किस्मकी कोई भी चीज जारी करनेसे शायद अटकलबाजी के आधारपर कई प्रश्न उठाये जाने लगेंगे जिनको इस समय न उठाना ही ज्यादा अच्छा रहेगा। श्री गांधी इस सबसे सहमत हुए और उन्होंने कहा कि मैं किसी लम्बी-चौड़ी विज्ञप्तिकी अपेक्षा नहीं रखता, पर यह अवश्य महसूस करता हूँ कि मुख्य-मुख्य सिद्धान्तोंको प्रकाशित कर देना पूरी तरह वांछनीय रहेगा। मैंने उनको सुझाया कि आप एक मसविदा तैयार कर लें और सरकार विचार करेगी कि वह कुछ आवश्यक परिवर्तनोंके साथ उसे स्वीकार कर सकती है या नहीं। उन्होंने ऐसा एक मसविदा तैयार करके मुझे देनेका वचन दिया।

(ख) इसके बाद उन्होंने मत्स्य-संरक्षण उद्योगका प्रश्न उठाया। मैंने उनको बतलाया कि मेरे ख्यालसे तो केन्द्रीय राजस्व निकाय इसपर विचार कर ही रहा है और इस सम्बन्धमें वह मद्रास सरकारसे पत्रव्यवहार कर रहा है। उन्होंने जो मुद्दे रखे उनका संक्षिप्त सार यह है :

(१) पूर्वी और पश्चिमी घाटके मछुओंको निःशुल्क नमक पानेकी रियायत पहलेसे मिली हुई है।

(२) पश्चिमी घाटमें मछली जमा करके रखनेका काम ठेकेदार लोग विशेष मत्स्य-क्षेत्रोंमें करते है; वहाँ उनको सरकारसे उन्हें टिकाये रखनेके लिए नमक खरीदना पड़ता है। श्री गांधी इस बापर सहमत हुए कि यह सर्वथा उचित है कि एक बड़े पैमानेपर इस तरह मत्स्य-संरक्षणका काम करनेवाले ठेकेदारोंको नमककी रियायत देनेकी जरूरत नही।

(३) पर उन्होंने कहा कि पश्चिमी घाटमें भी कुछ मछुए हैं जो अपने-अपने घरोंमें मत्स्य-सुखानेका काम करते हैं और वह बड़े पैमानेके किसी उद्योगके रूपमें नहीं बल्कि घरेलू तौरपर होता है, इसलिए ऐसे लोगोंको रियायत देना उचित है।

तथ्योंकी पूरी जानकारी न होनेके आधारपर मैंने कोई राय व्यक्त करनेसे इनकार कर दिया, लेकिन यह वचन दे दिया कि मैं इस चर्चाका संक्षिप्त सार केन्द्रीय राजस्व बोर्डको जरूर बता दूँगा।

(ग) इसके बाद मैंने नमक राजस्वके बम्बई-स्थित जिलाधीश द्वारा भेजा हुआ एक मामला उनके सामने रखा, जिसमें कहा गया था कि शिरोडामें निजी भूमिपर स्थित कुछ कारखानोंमें कांग्रेस-कार्यकर्त्ता नमक बना रहे हैं और उन्होंने काफी बड़ी संख्यामें मजदूर कामपर लगा रखे है और वे ५०० से ६०० मनतक नमक जमा कर लेते हैं। हम इस बातपर सहमत हुए थे कि नमक सम्बन्धी रियायतका यह मतलब नहीं लगाया जायेगा कि कांग्रेस नमक बनानेवाली एक संस्थाके रूपमें सामने आये और उन्होंने स्वीकार किया कि यदि स्थानीय कांग्रेस समितियाँ समझौतेमें शामिल किये गये प्रयोजनोंके लिए भी नमकका उत्पादन करना शुरू कर देंगी तो स्थिति बड़ी कठिन हो जायेगी। उन्होंने यह भी स्वीकार किया कि यदि शिरोडामें मजूरी देकर मजदूरोंसे नमक तैयार कराया जा रहा है, तो वह भी समझौतेके क्षेत्रमें नहीं आता, लेकिन उन्होंने दावा किया कि यदि ऐसी रियायतके हकदार कुछ गाँववाले मिलकर खुद नमक तैयार कर रहे हैं, और मजूरी देकर मजदूरोंसे यह काम न करा रहे हों, तो उनका काम समझौतेके क्षेत्रमें, उसके अनुरूप माना जायेगा, बशर्ते कि वे समझौतेकी तत्सम्बन्धी व्यवस्थाओंका पालन कर रहे हों। उन्होंने यह भी दावा किया कि ५००-६०० मनतक नमक बनाकर रख लेना समझौतेका उल्लंघन ही होगा, यह जरूरी नही, क्योंकि स्वाभाविक बात है कि सम्बन्धित लोगोंको इतनी मात्रामें नमक तो बना ही लेना चाहिए कि वह उत्पादन बन्द रहनेके दिनोंमें कम न पड़े। उन्होंने कहा कि शिरोडामें नमक-उत्पादनसे सम्बन्धित तथ्योंकी जानकारी मुझे है, और शायद केन्द्रीय राजस्व निकायको भी अन्तिम रूपसे कोई निर्णय देनेसे पहले कुछ अधिक जानकारी हासिल कर लेनेकी आवश्यकता होगी। यदि तथ्योंको देखकर निर्णय यह किया जाता है कि इस प्रकारका नमक-उत्पादन नियम-विरुद्ध नहीं है तो उसका एक व्यावहारिक हल यह हो सकता है कि स्थानीय आवश्यकताओंका ठीक अनुमान लगाकर उत्पादन किये जानेवाले नमककी मात्राकी एक सीमा निश्चित कर दी जाये।

(घ) श्री गांधी इस बातपर सहमत हुए कि पैदल चलकर नमक लानेमें बहुत-से कुलियों द्वारा नमक उठवानेके कामको शामिल नहीं माना जाना चाहिए।

(४) श्री गांधीने इसके बाद बन्दियोंकी रिहाईके मामलेका जिक्र किया। हमने इसके बारेमें आम और कुछ निष्फल-सी चर्चा की। लगता है कि अब भी उनका ख्याल है कि अभी कुछ ऐसे बन्दी हैं जिनको क्षमा-दानके निर्णयके अनुसार रिहा कर दिया जाना चाहिए था, पर किया नहीं गया है। उन्होंने वचन दिया कि वे ऐसे बन्दियोंकी एक सूची बनाकर मुझे देंगे। मैंने उनको बतलाया कि पहले दी गई सभी सूचियाँ हम प्रान्तीय सरकारोंको भेज चुके हैं और उनके सम्बन्धमें प्राप्त उत्तरोंसे यह स्पष्ट दिखाई पड़ता है कि प्रान्तीय सरकारोंने इस सम्बन्धमें बड़ी ईमानदारीसे

समझौतेका पालन किया है। मैंने पंजाबकी सूचीका उल्लेख किया जिसमें ठीक-ठीक जानकारी न होनेके कारण प्रान्तीय सरकार अनेक बन्दियोंकी ठीक शिनाख्त करके उनका पता नहीं चला सकी और जिन ७५ बन्दियोंका पता उसने चला लिया था उनमें से ४७ तो सूची भेजनेके पहले ही रिहा किये जा चुके थे। इससे सिद्ध हुआ कि श्री गांधीको दी गई सूचना बिलकुल सही नहीं थी। मैंने उनको इस बातकी भी याद दिलाई कि प्रान्तीय सरकारोंने आमतौर पर प्राविधिक या औपचारिक हिंसाके मामलोंमें समझौतेकी व्याख्या काफी उदारतापूर्वक की है और हिंसा भड़कानेके जिन मामलोंमें ज्यादा सख्तीसे काम लेना पड़ा है उसके काफी उचित कारण मौजूद हैं। मैंने इस अवसरपर उनको यह भी स्मरण दिलाया कि अकेले पंजाबमें ही पिछले तीन सप्ताहोंमें आतंकवादी आन्दोलनसे सम्बद्ध तीन घटनाएँ हो चुकी हैं — शालीमार-काण्ड, सियालकोटकी घटना और जालंधर जिलेमें बिलकुल हालमें हुआ एक बम-विस्फोट। इस विस्फोटके बारेमें उनको जानकारी नहीं थी और उनको यह जानकर सदमा पहुँचा कि उससे सम्बन्धित दो व्यक्तियोंका कांग्रेससे सम्बन्ध है। वे इस बातसे सहमत थे कि हिंसा भड़कानेके बारेमें प्रान्तीय सरकारका सख्ती बरतना बिलकुल उचित है और उन्होंने भारतीय दण्ड संहिताके खण्ड १२४-क और दण्ड प्रक्रिया संहिताके खण्ड १०८ के अन्तर्गत चलाये गये मुकदमोंके प्रश्नपर चर्चा करनेकी कोशिश नहीं की, जब कि पहले एक बार इसपर काफी विवाद खड़ा होनेकी नौबत आ गई थी। वे दो मामलोंको लेकर चिन्तित थे। एक तो उस सम्पादकका[1] था, जिसको शोलापुरमें सजा सुनाई गई थी। इसके बारेमें उनका आग्रह है कि उसमें न तो हिंसा हुई और न हिंसा भड़काई ही गई थी। दूसरा मामला सूरत जिलेका था, जिसमें एक युवकको आग लगानेके अपराधमें दण्डित किया गया था। उसकी फसल जब्त कर ली गई थी, जिसके बाद उसने फसलमें आग लगा दी थी। इसपर श्री गांधीने इस प्रकार तर्क करनेकी कोशिश की कि समझौतेमें हिंसा जिस अर्थमें शामिल की गई है, उसमें व्यक्तियोंके प्रति की गई हिंसाको ही हिंसा माना गया है और इसलिए उस परिभाषाके अनुसार इस घटना-विशेषमें कोई हिंसा नहीं की गई। जाहिर है कि यह तर्क स्वीकार नहीं किया जा सकता था। मुझे पता चला कि वे इन दोनों मामलोंके बारेमें प्रान्तीय सरकारसे पत्र-व्यवहार कर रहे हैं।

वे यह जानना चाहते थे कि यदि कांग्रेस और प्रान्तीय सरकारके बीच कुछ मामलोंको लेकर गतिरोधकी स्थिति पैदा हो जाये तो फिर क्या होगा। मैंने कहा कि मंशा यही है कि अन्तिम निर्णयका अधिकार प्रान्तीय सरकारको ही रहे, लेकिन अबतक ऐसा कोई मामला सामने नहीं आया, इसलिए हम वैसी स्थिति पैदा होनेपर ही देख सकते हैं कि क्या होता है। भारत सरकारने अपने पास आये अनेक प्रार्थनापत्रोंके बारेमें प्रान्तीय सरकारों से अनुरोध किया है कि वे उन मामलोंसे सम्बन्धित तथ्य सूचित करें, और चूँकि न तो भारत सरकार और न प्रान्तीय सरकारें ही समझौतेके दायित्वका पालन करनेसे कतराना चाहती हैं, इसलिए ऐसा

१. उनको अब रिहा किया है — एच० डब्ल्यू० एमर्सन।

मानने का कोई कारण नहीं दिखता कि यदि किसी मामले में सचमुच कोई भूल हो गई हो तो उसका कोई हल निकल ही नहीं पायेगा। मैंने उनको सूचित किया कि प्रान्तीय सरकारें समझौतेके इस पक्षको अत्यधिक महत्त्व देती आई हैं और कुछ प्रान्तोंमें तो गवर्नरोंने सभी सन्दिग्ध मामलोंपर स्वयं पुनर्विचार किया है। मुझे लगता है कि इस विषयको लेकर प्रान्तोंके कांग्रेसी श्री गांधीको काफी परेशान करते रहते हैं।

(५) इसके बाद साइकिलों और एक मोटर-कारको लेकर बड़ी विनोदपूर्ण चर्चा हुई जिससे 'यंग इंडिया' के प्रेसका सवाल उठ खड़ा हुआ।

समझौतेके खण्ड १६ के अन्तर्गत सरकार सविनय अवज्ञा आन्दोलनके दौरान जब्त की गई ऐसी सारी चल सम्पत्तिको लौटानेके लिए सहमत हो गई थी जिसका स्वामित्व अवैध नहीं था और जो समझौता होनेके समय भी सरकारके स्वामित्वमें थी। खेड़ा जिलेमें एक मोटर-कार जब्त की गई थी और उसे सरकारी कामके लिए प्रयुक्त किया गया था, जो सर्वथा उचित था। मुझे पता चला है कि अब वह कुछ टूटी-फूटी हालतमें अपने मालिकके घरसे कुछ दूरीपर बेकार पड़ी है। श्री गांधीका कहना है कि उसे वहीं लौटाया जाना चाहिए, जहाँ उसे जब्त किया गया था। स्थानीय अधिकारी इसे नहीं मानते और मुझे मालूम हुआ है कि वे इसे मान भी नहीं सकते क्योंकि वे न तो उसे चालू हालतमें लाकर और न ही कबाड़के रूपमें ढोकर उसे वहाँ लौटा सकते हैं। इस चर्चाके सिलसिलेमें हम मामलेके वास्तविक लक्ष्यपर पहुँचे अर्थात् 'यंग इंडिया' प्रेसके प्रश्नपर। यह छापाखाना काफी कीमतका है और इसे प्रेस अध्यादेशके अन्तर्गत अहमदाबादमें जब्त किया गया था। उसका एक भाग अभी अहमदाबादमें ही है, पर एक हिस्सा बिक्रीके लिए बम्बई भेज दिया गया था। श्री गांधीका दावा है कि उनको अधिकार है कि वे उसे अहमदाबादमें ही वापस लें और उन्होंने इस सिलसिलेमें हाल ही में बम्बई सरकारको लिखा भी है। उन्होंने स्पष्ट कर दिया है कि यदि समझौतेके अनुसार उनको अधिकार न हो तो वे नहीं चाहते कि सरकार छापेखानेका जो हिस्सा बम्बईमें है, उसे अहमदाबादमें उन्हें देकर उनपर कृपा करे। मैंने वचन दिया है कि हम इस मामलेके वैधानिक पहलू पर विचार करेंगे और यदि आवश्यकता पड़ी तो प्रान्तीय सरकारको लिखेंगे।[1] उन्होंने अपनी ओरसे वचन दिया कि यदि निर्णय उनके ही पक्षमें हुआ, तो वे उसका उपयोग सरकारको परेशानीमें डालनेके लिए नहीं करेंगे, अर्थात् बेकार पड़ी मोटरकार लौटाने का आग्रह नहीं करेंगे।

(६) उन्होंने समझौतेके इसी खण्डका हवाला देते हुए उन शस्त्रोंको लौटानेका प्रश्न उठाया, जिनके लाइसेंस सविनय अवज्ञा आन्दोलनके सिलसिलेमें रद कर दिये गये थे। पहले भी वार्ताके दौरान वे इसका उल्लेख कर चुके थे लेकिन मैं तब यह नहीं समझा था कि वे इसी खण्डके आधारपर ऐसी माँग कर रहे हैं। मैं तो यह समझा था कि वे रद किये हुए लाइसेंसोंको फिरसे मंजूरी देनेके बारेमें समझौतेकी भावनाके अनुरूप एक अधिक उदार नीति बरतनेका अनुरोध कर रहे हैं। मैंने उनको

१. बादमें गांधीजी को एक पत्र द्वारा उनका दावा अस्वीकृत किये जानेकी सूचना दे दी गई थी।

बतला दिया कि मुझे ऐसा लगता है कि जहाँतक इस खण्डकी बात है उसके अनुसार तो लाइसेंस रद होते ही वे सभी शस्त्र गैर-कानूनी मिल्कियत बन गये थे और उनको रखना गैर-कानूनी हो गया था और उनको जब्त करना उचित था। इसलिए इस आधार पर यह प्रश्न नही उठाया जा सकता। लेकिन यदि खण्ड औपचारिक रूपमें इसपर लागू होता तो भी प्रान्तीय सरकारें स्पष्ट ही उन शस्त्रोंको लौटानेपर राजी नहीं होती जिनके बारेमें उनको शक होता कि वे आतकवादी कामोंके लिए इस्तेमाल किये जा सकते है और पंजाब तथा बंगालपर तो यह बात खास तौरपर लागू होती है। श्री गांधीने इसे तर्क-सम्मत तथा उचित मान लिया; पर कहा कि कठिनाईसे निकलने का एक तरीका यह भी हो सकता है कि सभी शस्त्रोको औपचारिक तौर पर लौटा दिया जाये और उनके नये लाइसेंस रद करके शस्त्र वापस ले लिये जायें। मैंने बतलाया कि इससे काफी झमेला खड़ा होनेकी आशंका है। मैंने इसके कानूनी पहलूपर विचार करवानेका वचन दिया।

मैंने बताया कि यदि यह विषय समझौतेके क्षेत्रमें न माना गया, तो फिर लाइसेंसोंकी दुबारा मंजूरी देनेके लिए प्रान्तीय सरकारोंको लिखनेमें कई कठिनाइयाँ हैं, और शस्त्र सम्बन्धी कानूनमें जिलाधीशोंको स्वयं उनके विवेकके आधारपर लाइ-सेंसोंकी मंजूरी देने और उनको रद करनेकी काफी व्यापक शक्तियाँ भी दी गई हैं और यह मुमकिन है कि यदि लाइसेंसधारी जिम्मेदार किस्मके व्यक्ति हों तो जिलाधीश लोग सविनय अवज्ञाके दौरान रद किये हुए लाइसेंसोंके मामलोंमें बहुत ही उचित तथा समझदारीका रुख अख्तियार करें, हाँ, लेकिन जिन व्यक्तियोंके बारेमें उनको पूरा भरोसा नही होगा, उनको लाइसेंसकी मंजूरी देनेमें उनका रवैया काफी कठोर तो होगा ही।

(७) इसके बाद उन्होंने सविनय अवज्ञा आन्दोलनके दौरान बन्द की गई पेन्शनोंको बहाल करनेका मामला उठाया। मैंने कहा कि समझौतेसे पहले इस विषयपर प्रान्तीय सरकारोंके साथ चर्चा नहीं की गई थी और चूंकि प्रान्तीय सरकारें तथा सैनिक पेन्शनोंके बारेमें सेना-विभाग भी सैनिकों तथा पुलिसवालों की पेन्शनें बहाल करने पर निश्चय ही काफी आपत्ति करेंगे, इसलिए ऐसी स्थितिमें केवल असैनिक पेन्शनोंके साथ कोई रियायत करना कठिन होगा। फिर भी प्रान्तीय सरकारें प्रार्थनापत्र मिलने पर सामान्य तौरपर विधिवत् विचार अवश्य करेंगी; परन्तु मेरी समझमें नहीं आता कि भारत सरकार इस सम्बन्धमें आम किस्मका कोई सुझाव उनको कैसे दे सकती है। श्री गांधीने सैनिकों और पुलिसके लोगोंकी पेन्शनें बहाल करनेके सिलसिलेमें हमारी कठिनाई मान ली और इस सम्बन्धमें अधिक आग्रह नहीं किया।

(८) श्री गांधीने सविनय अवज्ञा आन्दोलनमें भाग लेनेके कारण शैक्षणिक संस्थाओं से निकाले गये लड़कों और छात्रोंके मामलेका जिक्र किया। उन्होंने कहा कि अनेक प्रान्तोंमें उनको केवल इस शर्तपर दाखिला दिया जा रहा है कि वे राजनीतिमें भाग न लेनेका वादा करें। उनका ख्याल था कि यह अन्याय है। मैंने उनको सम-झाया कि पंजाबमें (और शायद अन्य प्रान्तोंमें भी) कुछ सरकारी संस्थाएँ पहली बार दाखिलेके समय ही छात्रोंसे ऐसी लिखित प्रतिज्ञा करा लेती हैं, उन छात्रोंकी

बात तो दूर जिनको एक बार निकालनेके बाद फिरसे दाखिला दिया जा रहा है। उनको अपना सौभाग्य समझना चाहिए कि उनको फिरसे दाखिला मिल तो रहा है, खास तौरपर यह जानते हुए कि प्रान्तीय सरकारें स्कूल-कालेजोंके अनुशासनको कितना अधिक महत्त्व देती हैं और यही उचित भी है। मैंने इस विषयपर प्रान्तीय सरकारोंसे अधिक चर्चा करनेमें कोई सार नहीं समझा, फिर स्वयं भारत-सरकार ही इसके बारेमें ढिलाई करनेको तैयार क्यों न हो; मैं नहीं समझता कि वह भी ऐसा करेगी।

(९) चर्चाका अगला विषय था — उत्तर-पश्चिमी सीमा-प्रान्तकी महत्त्वपूर्ण समस्या। मैं उनके साथ एक मामलेको लेकर प्रारम्भिक बातचीत कर चुका था और उनको सरकारी जानकारीके मुताबिक उसके प्रमुख तथ्य बतला चुका था। बादमें श्री हॉवेल भी चर्चामें शामिल हो गये और उन्होंने सीमा-प्रान्तकी विशेष प्रकारकी कठिनाइयोंसे उनको अवगत करा दिया। प्रारम्भिक बातचीतमें मैंने इन मुद्दोंपर खास जोर दिया था :

(१) क्षमा-दानके बादकी अब्दुल गफ्फारकी गति-विधियाँ और उनके भाषण।
(२) समझौतेको एक युद्ध-विराम माननेका उनका बराबर आग्रह और इसलिए इसे आगेकी तैयारीका एक अवसर समझना।
(३) 'लाल कुर्ती' स्वयंसेवकोंकी लगातार भर्ती, उनका संगठन, कवायद, वगैरा।
(४) अब्दुल गफ्फार द्वारा सीमा-पार अपने प्रचारके विस्तारका प्रयत्न।
(५) मुख्य आयुक्त या स्थानीय अधिकारियोंसे मिलनेसे जान-बूझकर उनका अशिष्टतापूर्वक इनकार करते जाना।
(६) उनके द्वारा लगान अदा न करनेका प्रोत्साहन दिया जाना और पेशावर जिलेके भू-राजस्व प्रशासनपर पड़ा इसका प्रभाव।
(७) वहाँ अपराधोंमें जो वृद्धि हुई है।

मैंने श्री गांधीको बतलाया कि अन्य प्रान्तोंमें जहाँ सरकार कांग्रेस स्वयंसेवकों की भर्ती सहन कर लेती है और सचमुच पहले सहन करती रही है, उन प्रान्तोंमें भी एक सीमातक ही इसको सहन किया गया है, वहाँ भी सरकार स्वयंसेवकोंकी असीमित भर्ती या प्रशिक्षित स्वयंसेवकोंकी संस्थाओंकी स्थापनाको सहन नहीं करेगी। निर्णय इस आधारपर नहीं किया जा सकता कि उनकी तात्कालिक गति-विधियाँ अपेक्षाकृत हानिरहित हैं या नहीं। हमें यह भी देखना पड़ेगा कि उनका क्या इस्तेमाल किया जा सकता है; और यदि किसी समय हम इस निष्कर्षपर पहुँचें कि वे आगे चलकर शान्तिके लिए भारी खतरा उत्पन्न कर सकती हैं, तो हमें कोई कदम उठाना ही पड़ेगा। जो भी हो, इतना तो स्पष्ट है कि हम यह दलील नहीं मान सकते कि चूँकि किसी प्रान्त-विशेषमें हम आज कांग्रेस स्वयंसेवकोंके विरुद्ध कोई कदम उठाना जरूरी नहीं समझते इसलिए हम स्वयंसेवकोंके बारेमें आम तौरपर या जिन प्रान्तोंमें हम उनको खतरनाक समझें, उन प्रान्तोंमें भी कोई कदम नहीं उठा सकते; और उत्तर-पश्चिमी सीमाप्रान्तकी परिस्थिति विशेषको देखते हुए उस कबाइली क्षेत्रमें लाल कुर्ती आन्दोलनका गलत अर्थ लगाये जानेके स्पष्ट खतरेको और अफगानिस्तानमें उसके

सम्भावित परिणामोंको समझकर भी हम हाथपर-हाथ धरकर नहीं बैठे रह सकते। श्री गांधीने इन विशेष प्रकारकी कठिनाइयोंको समझ तो लिया पर वे समाचारपत्रोंमें कुछ दिन पहले प्रकाशित हुए अब्दुल गफ्फारके अपने विवरण और उनकी दलीलोंको ज्यादा ठीक मानते हैं। स्वाभाविक है कि इस विवरणमें अब्दुल गफ्फारने सारा दोष स्थानीय प्रशासनपर ही थोपनेका प्रयत्न किया।

इस विषयसे सम्बन्धित और आगेकी चर्चा श्री हॉविलके इस विवरणमें दी गई है:

"मैं श्री एमर्सनसे तय करके कल दोपहर श्री गांधीसे भेंट करने गया। मेरे वहाँ पहुँचनेसे पहले ही श्री एमर्सन श्री गांधीको उत्तर-पश्चिमी सीमा-प्रान्त जानेकी उनकी इच्छासे विरत कर चुके थे और उनसे वचन ले चुके थे कि वे व्यक्तिगत रूपमें या पत्र द्वारा अब्दुल गफ्फार खाँसे सम्पर्क स्थापित करके उनको इसके लिए तैयार कर लेंगे कि वे यदि अस्थायी तौरपर ही अपना आन्दोलन बन्द करने पर राजी न हों तो कमसे-कम अपने तरीकोंपर एक बार पुनर्विचार तो कर लें। इसलिए मुझे तो बस इतना ही करना रह गया था कि मैं सारी समस्यापर फिर चर्चा करूँ और यही मैंने किया। इसमें मेरा विशेष अभिप्राय यही रहा कि सीमा-प्रान्तमें मै अब्दुल गफ्फार खाँके कार्यक्रमके खतरे श्री गांधीको जता दूँ। भेंटके दौरान श्री एमर्सन और मैंने श्री गांधीसे जो भी कहा, उसका संक्षिप्त सार यह है:

अब्दुल गफ्फार खाँकी ईमानदारीपर अँगुली उठानेका हमारा कोई मंशा नहीं था, फिर भी हमारा यह ख्याल तो है कि उनकी कार्यविधि ठीक है या नही उसमें सन्देह है। उदाहरणके तौरपर यह कि वे मुख्य आयुक्तसे भेंट करनेसे एकदम इनकार क्यों करते आये हैं जबकि मुख्य आयुक्तने अनुकरणीय धैर्यका परिचय दिया और उनके साथ सम्पर्क स्थापित करनेका भरसक प्रयत्न किया है। यदि यह बिलकुल निश्चित है कि आगे चलकर किसी स्थितिमें उनकी पटरी नही बैठ सकेगी, तो क्या इसी कारण उनको जबतक पटरी बैठती है तबतक भी साथ-साथ चलनेसे इनकार करना चाहिए? और क्या सीमा प्रान्तके कबाइलियों-जैसे शीघ्र भड़क उठनेवाले उन श्रोताओंके सामने ऐसा उत्तेजनापूर्ण नाटक करना बुद्धिमत्तापूर्ण माना जायेगा जो सभी शस्त्रोंसे पूरी तरह लैस थे और जिनमें से अनेक तो ऐसे मौकेकी ताकमें ही बैठे थे कि बाक्स आफिस लूटनेका मौका मिले? यदि श्री गांधी इसको बुद्धिमानी मानते हों, तो इसके बारेमें हालमें लाहौरमें व्यक्त की गई भाई परमानन्द और सीमा-प्रान्तके अन्य हिन्दुओंकी राय पर तो उनको गौर करना चाहिए, क्योंकि स्पष्ट है कि वे लोग इस विषयकी ज्यादा जानकारी रखते हैं। परिस्थितिकी बुनियादी बात यह है, जैसा सीमा-प्रान्तके इन हिन्दुओंने महसूस किया है, कि सीमा-प्रान्तमें जान-मालकी और विशेषकर हिन्दुओंके जान-मालकी सुरक्षा और समाजके स्थायित्वका सारा दारोमदार मौजूदा सरकारके प्रति सम्मानकी भावना बनाये रखनेमें ही है। और यदि सीमा-प्रान्तके कबाइली लोग — जो अपने-आपको किसीसे कम नहीं मानते बल्कि खुले-आम अपने-आपको दूसरोंसे बेहतर बताते नहीं थकते, देखें कि एक स्थानपर अब्दुल गफ्फार खाँ या

दूसरे स्थानपर कोई दूसरा या तीसरे स्थानपर कोई तीसरा नेता कामयाबीके साथ सरकारकी अवहेलना करता है तो फिर उनको भी अवहेलना करनेके लिए प्रोत्साहन मिलेगा। इसीलिए लाल कुर्ती आन्दोलनको सीमा-प्रान्तसे बाहर न फैलने देना परम आवश्यक बन गया है।

उसे यदि एक बार जड़ें जमानेका मौका मिल गया तो वह निश्चय ही एक जुझारू रूप अख्तियार करनेसे नहीं चूकेगा, जैसा कि पिछली गर्मियोंमें वजीरिस्तानमें हुआ था। यह संगठन अमीनुद्दौला-समर्थक आन्दोलनका रूप ग्रहण कर सकता है जो शाह नादिरको परेशानीमें डाल देगा।

पूरी बातचीतके दौरान जोर इस बातपर नही दिया गया कि कबाइली इलाका सविनय अवज्ञा आन्दोलनके क्षेत्रके बाहर है, क्योंकि यह आन्दोलन बन्द हो चुका है या कमसे-कम निस्पन्द तो पड़ा है, या कि वह गांधी-इर्विन समझौतेके अन्तर्गत नहीं आता, क्योंकि इससे श्री गांधीको यह संकेत मिल जाता कि आगे संघर्ष बढ़नेपर कबाइली इलाकेमें भी अपनी गति-विधियाँ फैलाना उनके लिए ज्यादा अच्छा रहेगा क्योंकि उस इलाकेमें सरकारका पक्ष कमजोर है। बल्कि जोर इस बातपर दिया गया कि सीमा-प्रान्तमें सरकारका विरोध बढ़नेसे जनता और विशेषकर हिन्दुओंके जान-मालको खतरा बढ़नेकी सम्भावना है। श्री गांधीसे पूछा गया कि क्या उनकी रायमें यह उचित है कि आज भारत-भरमें जैसा प्रयोग किया जा रहा है वैसा कठिन और अभूतपूर्व प्रयोग करनेवाला व्यक्ति अपने काम की शुरूआत ही उस बाँध की तोड़-फोड़से करे जो बाढ़के पानीको रोकता है? लगता था कि श्री गांधी इसका सार समझ गये।

हमने सर स्टुअर्ट पीयर्स द्वारा रखे गये बाकी मुद्दे श्री गांधीके सामने रखे और उनसे कहा कि वे इसपर विचार करें कि क्या १३,००० स्वयंसेवकोंकी लाल कुर्ती-जैसी एक संस्था खड़ी करनेका वास्तवमें कोई उपयोग है? सबसे हालकी हमारी सूचना यही है कि उसमें १३,००० स्वयंसेवक हैं और यह संख्या भी स्पष्ट ही अनुमान पर आधारित है। अन्तमें, हमने वित्तीय स्थिति, विशेषकर पेशावर जिलेकी वित्तीय स्थितिके बारेमें कुछ विस्तारसे चर्चा की और श्री गांधीको सूचित किया कि वहाँ अपराधोंमें इतनी वृद्धि हो गई है कि उसके आँकड़े चौंका देते हैं। उन्होंने जानना चाहा कि पेशावरमें भूमि और जलपर लगनेवाले कर आसपासके पंजाबी जिलोंकी तुलनामें कितने ज्यादा या कम हैं; और लगता है कि उनको यह जानकर आश्चर्य हुआ कि पेशावर जिलेके सिंचाईवाले क्षेत्रकी कृषीय स्थिति उत्तर भारतके किसी भी क्षेत्रकी तुलनामें आमतौरपर काफी अच्छी होनेपर भी वहाँ भूमि और जलपर लगनेवाले करोंकी दरें आसपासके पंजाबी जिलोंके मुकाबिले कहीं कम है। श्री गांधीके साथ वार्तामें भाग लेनेवाले लोगोंने इसे पठानोंकी दोनों हाथ लड्डू लेनेकी लगातार कोशिशका काफी अच्छा सबूत माना जिसमें पठान लोग सिद्धहस्त हैं और बहुधा सफल भी हो जाते हैं। श्री गांधीने इस बातको समझा और इस तथ्यको भी लगान इत्यादि में उदारतापूर्वक माफियाँ दी जाती रही हैं, दी जा रही है और आवश्यकता पड़नेपर यथास्थिति दी जाती रहेंगी। लगता था कि श्री गांधी इसपर सहमत हो गये

हैं कि भावी सरकारकी अपनी भू-राजस्व नीति जो भी बने, पर वर्तमान शासन-व्यवस्थामें लगानवसूलीके काममें अत्यधिक हस्तक्षेप करना शायद एक अच्छी कार्य-नीति नहीं होगी। श्री गांधीकी ओरसे यह वचन दिया गया कि वे यथाशीघ्र अब्दुल गफ्फारखाँको बुलायेंगे और उनके आनेसे पहले उनको तार भी भेजेंगे और पत्र भी लिखेंगे।"

(१०) हमने बहिष्कार और लंकाशायरके रुखके बारेमें भी थोड़ी बातचीत की। लंकाशायरके रुखको लेकर श्री गांधीके मनमें क्रोध इतना नहीं था जितना कि दुःख। उन्होंने दावा किया कि विदेशी वस्त्रोंके बहिष्कारसे सम्बन्धित स्थितिमें समझौतेने भारी परिवर्तन कर दिया है, धरनोंमें भी बहुत अधिक कमी हो गई है, ब्रिटिश वस्त्रोंके विरुद्ध भेदभाव बन्द कर दिया गया है और यदि अब भी कुछ शिकायतें सामने आयें तो उनपर कुल मिलाकर ही विचार करना चाहिए, उनको इस ढंगसे पेश नही करना चाहिए जैसे वे आम स्थितिकी द्योतक हों। उन्होंने दावा किया (और मेरा ख्याल है कि ठीक ही था) कि वे समझौतेका सख्तीसे पालन करानेके लिए अपनी ओरसे भरसक कोशिश कर रहे हैं और उन्होंने कहा कि जहाँ भी उसका उल्लंघन हो उसकी सूचना उनको तुरन्त दी जानी चाहिए।

मैंने स्वीकार किया कि उनके कथनमें काफी सचाई है, पर मैंने उनको आम तौरपर चलनेवाली चीजोंके अनेक उदाहरण दिये और मैंने सामाजिक दबाव पड़नेकी बात विशेष रूपसे उनके सामने रखी। मैंने बताया कि एक आम धारणा यह बन गई थी कि व्यक्तिके काम करनेकी स्वतन्त्रता हासिल नहीं की गई है और इसी धारणाके कारण लंकाशायरमें कुछ प्रतिक्रियाएँ हुई थीं, जो इंग्लैंडके लिए अत्यधिक राजनीतिक महत्त्व की हैं। मैंने जोर इस बातपर दिया कि ब्रिटिश समाचार-पत्रोंमें प्रकाशित होनेवाले समझौतेके उल्लंघनके हर समाचारसे कितनी बड़ी हानि होती है और मैंने एक उस मामलेपर काफी विस्तारसे बात की जिसकी जानकारी सरकारको मिली थी। संक्षेपमें मामला इस प्रकार है:

"अहमदाबादकी 'ब्रिटिश माल बहिष्कार-समिति'ने दिनांक ७ अप्रैल, १९३१ का एक पत्र 'कानपुर केमिकल वर्क्स', कानपुरको भेजा था, जिसमें विभिन्न प्रश्नोंके साथ ये प्रश्न भी पूछे गये थे:

(क) क्या आप निर्माणकी प्रक्रियामें कोई बिटिश सामग्री भी प्रयुक्त करते हैं?

(ख) क्या आपकी संस्थामें किसी अंग्रेज या विदेशीका कोई प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष हित है? यदि हाँ, तो कितना?

श्री गेविन जोन्सका इस व्यावसायिक संस्थासे काफी निकटका सम्बन्ध है और उन्होंने यह पत्र हमारे पास भेज दिया। हमने इसके बारेमें जाँच कराई और हमें सूचित किया गया कि समितिके सक्रिय कार्यकर्त्ता कांग्रेसके सदस्य हैं। समझौतेके बाद समितिने अपना नाम बदल दिया था, लेकिन लगता है कि उन्होंने पहलेके छपे हुए, उसी सरनामेवाले कागजोंपर ये नोटिस भेज दिये और अपने प्रश्नोंमें ऐसे विषय भी शामिल कर लिये, जो सीधे-सीधे समझौतेके विरुद्ध पड़ते हैं।"

मैंने श्री गांधीको बतलाया कि इस मामलेमें एक ऐसे अंग्रेजकी व्यावसायिक संस्थापर आक्षेप किया गया है जो गोलमेज परिषदमें भाग लेनेके लिए भेजे जानेवाले शिष्ट-मण्डलके एक सदस्य है और जिन्होंने इंग्लैंडमें भारतीय पक्षकी जोरदार हिमायत की है। और किसीको आश्चर्य नहीं होना चाहिए यदि इस प्रकारकी कार्रवाइयोंके फलस्वरूप यूरोपीयोंके दिमागमें अपने पहलेके रुखके बारेमें कुछ सन्देह पैदा हो जाये और इस मामलेको लेकर ब्रिटिश समाचारपत्रों या ब्रिटिश संसदमें चर्चा चल पड़े, तब निश्चय ही इसके परिणाम बड़े दुर्भाग्यपूर्ण निकलेंगे। श्री गांधीने यह सब स्वीकार किया और इस बातपर खेद प्रकट किया कि इस मामलेकी ओर उनका ध्यान एक बार भी आकर्षित नहीं किया गया। मैंने उनको बतलाया कि ऐसा तो हम तभी कर सकते थे जब हमें पता चल जाता कि इसका सम्बन्ध कांग्रेसके लोगोंसे भी है और यह सूचना हमें हालमें ही मिली है। मैंने उनको वचन दिया कि इससे सम्बन्धित पत्र-व्यवहारकी एक प्रति मैं उनको भेज दूंगा और उन्होंने कहा कि वे तुरन्त ही सब ठीक करा देंगे और उसके परिणाम एक पत्रके जरिए मुझे बतला देंगे और यदि सरकार ठीक समझे तो उसकी एक प्रति श्री गेविन जोन्सको भी भेज सकती है।

मैं समझता हूँ कि श्री गांधी समझौतेकी बहिष्कार-सम्बन्धी व्यवस्थाओंपर पूरी तरह अमल करानेके लिए चिन्तित हैं और यह तो सही है कि वे विदेशी वस्त्रों के स्थानपर भारतीय वस्त्रोंको लानेके लिए आज भी उतने ही उत्सुक हैं जितने पहले थे और उनको पूर्ण विश्वास है कि यह आन्दोलन अब स्थायी रूपसे चलता रहेगा, पर उन्होंने यह भी भली-भाँति समझ लिया है कि जोर-जबरदस्ती और दबावके तरीके अन्तमें सफल नहीं हो सकेंगे और यह भी कि भारत और इंग्लैंडमें समझौतेके किसी भी दुरुपयोगके जो दुष्परिणाम होंगे वे स्वयं आन्दोलनको होनेवाले लाभोंसे कहीं अधिक होंगे। फिर भी कुल मिलाकर उन्हें सभी कांग्रेस-संगठनों और कार्यकर्त्ताओंको अपने सिद्धान्तोंका पाबन्द बनानेके लिए अब भी और बहुत कुछ करना बाकी है; हालाँकि वे इस दिशामें काफी कुछ कर चुके हैं। यदि इस सम्बन्धमें समझौतेके उल्लंघनोंके बारेमें प्रान्तीय सरकारें या तो स्वयं ही प्रान्तीय कांग्रेस संगठनोंसे सीधे बात कर लें या स्पष्ट उदाहरण तुरन्त ही गृह-विभागको बतला दें जो उनको श्री गांधीके पास भेज सकें तो यह काफी सुविधाजनक रहेगा।

(११) श्री गांधीसे बातचीतके दौरान प्रसंगवश अनेक सामान्य प्रश्नोंपर भी चर्चा हुई थी और एक बैठकमें तो हमने पूरे समय बड़ी-बड़ी समस्याओंकी ही चर्चा की थी। उसके दौरान उठाये गये मुद्दोंका सारांश नीचे देनेका प्रयास किया जा रहा है।

लगता है, फिलहाल श्री गांधीको शीघ्र ही कोई साम्प्रदायिक समझौता होनेकी कोई आशा नहीं दिखती और वे जानते हैं कि दोनोंके मनमें कितनी कटुता है। और उन्होंने इस समस्याका कोई हल निकले बिना इंग्लैंड जानेमें संकोच इसलिए प्रकट किया है कि यदि भारतीय जनतामें अपने अन्दर ही फूट पड़ी हो तो उनका स्वराज्य के लिए आग्रह करना न तो शोभनीय होगा और न उसमें वह औचित्यका बल ही

पैदा हो सकेगा। और इस सम्बन्धमें जो कटाक्ष किये जा रहे हैं वे भी उनको काफी चुभ रहे हैं। मैंने उनके साथ बात करनेमें यह रुख अपनाया :

(क) यदि भारतमें साम्प्रदायिक समझौता न हो पाया तो श्री गांधीका अपना तर्क-सम्मत निष्कर्ष यही तो होगा कि जबतक समझौता नही हो जाता तबतक संवैधानिक क्षेत्रमें कोई प्रगति नही हो सकती। यदि श्री गांधीको ऐसा लगता भी हो तो सरकार इसे स्वीकार नही कर सकती। सरकारपर बहुधा कूटनीतिपूर्ण चालें चलने का आरोप लगाया जाता है और यदि वह स्वयं श्री गांधी द्वारा अपनाये गये दृष्टि-कोणको ही अपना ले तो देश-भरमें एकाएक शोर मचने लगेगा और बड़ी तीव्रतासे एक राजनीतिक प्रचार-आन्दोलन खड़ा हो जायेगा। इसलिए इस दृष्टिकोणको तो बिलकुल अलग ही रखना चाहिए और सरकारको संवैधानिक प्रगतिकी ओर कदम बढ़ाना ही चाहिए, भले ही पूर्ण सहमतिसे कोई साम्प्रदायिक समझौता न हो पाये। सरकार जब इस मामलेमें इतना आगे बढ़नेको तैयार है तो फिर श्री गांधी ही क्यों उसके मुकाबले अधिक प्रतिगामी रुख अपना रहे हैं? और फिर यदि भारतमें कोई समझौता नही हो पाता, तो इसका अनिवार्य अर्थ यह तो नहीं होता कि इंग्लैंडमें भी कोई समझौता नही हो सकेगा। कुछ मायनोंमें तो भारतकी अपेक्षा इंग्लैंडमें परिस्थितियाँ अधिक अनुकूल हैं: विभिन्न हितोंके प्रतिनिधि वहाँ लगातार एक-दूसरे के सम्पर्कमें रहेंगे; वातावरण ज्यादा ठीक होगा; ब्रिटिश नेता यथासम्भव अधिक से-अधिक सहायता देनेको तैयार हैं और पिछली बार लन्दनमें एक समझौता लगभग हो ही चुका था। और फिर लॉर्ड इर्विन निश्चय ही सहायता करनेको तत्पर रहेंगे। (इस जगह श्री गांधीने सुझाव रखा कि लॉर्ड इर्विन एक मध्यस्थके रूपमें भी काम कर सकते हैं यह एक ऐसी स्वीकारोक्ति थी जो उनकी कुछ पूर्व-घोषणाओंके एकदम खिलाफ पड़ती थी जिनमें कहा गया था कि भारतीयोंको अपने मतभेद स्वयं ही दूर करने चाहिए।) यदि परिषद्में कांग्रेसका प्रतिनिधित्व हो और उसमें श्री गांधीसे भी काफी बड़े योगदानकी आशा की जा सके, तो लन्दनमें समझौता होनेकी सम्भावना और भी बढ़ जायेगी। जो भी हो, भारतमें ही बने रहकर तो वे किसी प्रकारसे सहायता नहीं कर सकेंगे और जहाँतक साम्प्रदायिक समस्याकी बात है, स्पष्ट ही इंग्लैंड जाना श्री गांधीका एक कर्त्तव्य है।

मैंने पूछा कि उनके मित्र इस मामलेके बारेमें क्या सोचते हैं। उनके कहनेसे पता चला कि दो-तीन कांग्रेसियोंको तो शंका है, लेकिन अधिकांशका यही विचार है कि उनको जाना चाहिए। श्री गांधीने स्पष्ट नहीं बताया कि उन्होंने अपने लिए जाने या न जानेका कोई स्पष्ट निर्णय कर लिया है, पर मैं निश्चित रूपसे यही समझता हूँ कि साम्प्रदायिक समझौता न होनेसे ही उनका परिषद्में शामिल होना रुक जाये, ऐसी बात नहीं।

(ख) मैंने उनसे पूछा कि वे परिषद्के लिए कांग्रेसके प्रतिनिधि भेजनेके बारेमें क्या करने जा रहे हैं और मैंने उनको सुझाया कि यदि वे कांग्रेसके एकमात्र प्रतिनिधि की हैसियतसे जायें तो भी कुछ कांग्रेस-प्रतिनिधियोंको अपने साथ ले जाना सुविधा-

जनक रहेगा क्योंकि महात्मा होनेपर भी वे एक साथ तीन स्थानोंपर तो मौजूद नही रह सकेंगे। उन कांग्रेस-प्रतिनिधियोंको उप-समितियोंमें नियुक्त किया जा सकता है। मामलेके इस पहलूके बारेमें वे स्पष्ट रूपमे कुछ भी नही कह पाये और उन्होंने स्वीकार किया कि गुजरातके स्थानीय मामलोंमें अत्यधिक व्यस्त रहनेके कारण वे गोलमेज परिषद्के सिलसिलेमें किये जानेवाले प्रबन्धके बारेमें कुछ सोच ही नही पाये थे। उन्होंने कुछ इस तरहकी बात कही कि कांग्रेसके प्रतिनिधिके रूपमें किसी अन्य व्यक्तिको शामिल करनेमें उनको बड़ा संकोच रहेगा और यह भी कहा कि उनके विचारसे वे अकेले ही प्रतिनिधित्व कर सकते हैं और अकेले अपने ही विचारोंके सहारे वार्ताको अन्तिम चरण तक पहुँचा सकते हैं। स्पष्ट है कि उनको अनुमान नहीं है कि चर्चा कितनी ब्यौरेवार होगी और उसमें किस तरहकी, कितनी बड़ी-बड़ी कठिनाइयाँ सामने आ सकती हैं। दूसरी ओर कुछ कांग्रेसियोंको व्यक्तिगत रूपसे गोलमेज परिषद्के लिए आमन्त्रित कर लिये जानेपर उनको कोई आपत्ति नहीं है। वाइसराय महोदयसे पिछली बार मेरी भेंट होनेपर उन्होंने यह प्रश्न रखा था और इसीलिए मैंने श्री गांधीसे स्पष्टतया यही प्रश्न पूछा था। वे कहते हैं कि वास्तवमें लॉर्ड इर्विनने यह स्थिति स्वीकार भी कर ली थी इसीलिए उन्होंने श्री मालवीयको आमन्त्रित किया था और श्रीमती नायडू तथा डॉ० अन्सारीको भी बुलानेका इरादा जाहिर किया था। इस तरह श्री गांधीके दृष्टिकोणसे कांग्रेसको मुसलमानोंको, या सच तो यह है कि कांग्रेसके प्रतिनिधिकी हैसियतके सिवाय किसी भी दूसरी हैसियतमें कांग्रेसके किसी भी सदस्यको, आमन्त्रित करनेपर कोई आपत्ति नहीं होगी। ऐसा करनेसे उन कठिनाइयोंको हल करनेमें सहायता मिल सकती है जो एक तरहसे निश्चित ही है कि यदि श्री गांधीने कांग्रेसके एकमात्र प्रतिनिधि रहनेका आग्रह किया तो हमारे सामने आयेंगी।

(ग) कांग्रेस एक दूसरा संवैधानिक प्रश्न यह उठा रही है कि क्या —
(अ) उनको गोलमेज परिषद्के पूर्व गठित की गई उप-समितिमें काम करना चाहिए, और
(आ) क्या उनको ऐसी समितिके समक्ष साक्ष्य प्रस्तुत करना चाहिए।

मेरा ख्याल है कि इस प्रश्नके तूल पकड़नेका कारण उत्तर-पश्चिमी सीमा-प्रान्तकी विषय-समितिसे अहमद शाहका त्यागपत्र देना है। श्री गांधीको उनके त्यागपत्र या नियुक्तिके बारेमें कोई जानकारी नहीं थी और मैं समझता हूँ कि उन्होंने कांग्रेसके आदेशपर वह त्यागपत्र नहीं दिया था। त्यागपत्र शायद अब्दुल गफ्फारके आदेशपर दिया गया था और मुझे मालूम हुआ कि श्री गांधीका विचार था कि अहमद शाहको अपनी नियुक्तिकी स्वीकृति देने और त्यागपत्र देनेकी बात कांग्रेसके सामने रखनी चाहिए थी। वे इस बातसे सहमत हुए कि सारे मामलेके बारेमें पहलेसे एक धारणा बनाकर काम किया गया था और इसे अपने त्यागपत्रका आधार बनाना अहमद शाहके लिए गलत था; लेकिन उनका ख्याल था कि अब उस गलतीको ठीक करनेके लिए कुछ नहीं किया जा सकता था हालाँकि मैंने उनसे यह भी कहा

था कि वे चाहें तो अपने उत्तराधिकारीके रूपमें किसीका नाम सुझा सकते हैं। वे इस बातसे सहमत हो गये कि ऐसी परिस्थितियोंमें सबसे अच्छा यही रहेगा कि स्थान भरा ही न जाये।

कार्य-समिति इस प्रश्नपर सामान्यतया चर्चा करनेके लिए शीघ्र ही एक बैठक करने जा रही है। मैंने बहुत दृढ़तापूर्वक उनसे आग्रह किया कि कार्य-समितिको सदस्यता ग्रहण करने और साक्ष्य प्रस्तुत करने, दोनों ही मामलोंमें सहयोग करनेके पक्षमें अपना निर्णय करना चाहिए। और मैंने अपनी ओरसे यह भी कह दिया कि यदि सिद्धान्त स्वीकार कर लिया जाये तो जहाँ सरकारने कांग्रेसको प्रतिनिधित्व देनेका सिद्धान्त स्वीकार कर लिया है वहाँ समितियोंमें सदस्योंकी नामजदगीके लिए कांग्रेसको कहनेमें मेरे विचारसे कोई कठिनाई नही पड़ेगी। लगता था कि इसमें श्री गांधीको यह शंका है कि उन्होंने अबतक तो गोलमेज परिषद्में भाग लेने या न लेनेके बारेमें ही कोई निश्चय नहीं किया है, फिर ऐसी परिस्थितिमें परिषद्की बैठक के पहले इन समितियोंमें शामिल होना ठीक रहेगा या नहीं। मैंने उनको बतलाया कि लन्दन जानेके बारेमें वे चाहे जो भी अन्तिम निर्णय करें, पर यदि कांग्रेस संवैधानिक मामलोंमें सहयोग नहीं करती तो समझौतेका एक बहुत ही महत्त्वपूर्ण और प्रमुख उद्देश्य विफल हो जायेगा और यह भी कि बादमें किसी भी कारणसे यदि समझौता ठप्प भी हो जाये, तो इन समितियोंमें सहयोग करनेके कारण उनको प्रतिबद्ध नहीं माना जायेगा। पर मुझे कुछ डर है कि कार्य-समिति इस मामलेमें गलत ढंगका निर्णय ही करेगी।

(घ) गुजरात, संयुक्त प्रान्त और उत्तर-पश्चिमी सीमा प्रान्त-जैसे अनेक प्रसंगों को लेकर लगानका प्रश्न भी सामने आया। श्री गांधी पहले तो इस पक्षमें थे कि सरकार और लगान भरनेवालोंके बीच कांग्रेसको आम तौरपर एक मध्यस्थकी तरह काम करने देना चाहिए लेकिन इस चर्चामें उन्होंने अपने उस विचारको मनवानेका आग्रह नही किया, पर लगता है कि अब भी उनका मत है कि कांग्रेस सरकारके साथ टक्कर लिये बिना या सरकारको किसी बड़ी परेशानीमें डाले बिना ही जमींदारों या किसानोंके एक मित्रकी हैसियतसे काम कर सकती है और लगान तथा लगान सम्बन्धी मामलोंमें उनको परामर्श दे सकती है। मैंने इस सिलसिलेमें जो रुख अपनाया, उससे वे प्रभावित हुए। मैंने उनसे कहा कि संसारकी कोई भी सरकार इसके लिए तैयार नहीं होगी कि अपने और कर-दाताओंके सम्बन्धोंमें किसी भी राजनीतिक संस्थाको हस्तक्षेप करनेकी अनुमति दे, फिर जब हस्तक्षेप इस रूपमें हो कि उनको इसके बारेमें परामर्श दिया जाये कि कौन-से कर अदा किये जायें और कौन-से नहीं। ऐसी कोशिश यदि अफगानिस्तानमें की जाये तो ऐसा प्रचार करनेवालेको तुरन्त ही दीवारके सामने खड़ा करके तोपसे उड़ा दिया जायेगा और यदि भारतीय रियासतोंमें की जाये तो उसे तुरन्त निष्कासित या बन्दी बना लिया जायेगा और सबसे अधिक उन्नत यूरोपीय देशोंमें भी एक शक्तिशाली राजनीतिक दल द्वारा किये जानेवाले इस प्रकारके एक संगठित आन्दोलनके विरुद्ध सरकारके सारे साधन प्रयुक्त

किये जायेंगे। भारतमें इसकी विशेष आवश्यकता है कि इस प्रकारके प्रचारसे बचा जाये; मौजूदा आर्थिक परिस्थितियोंको देखते हुए और लगान तथा भू-राजस्वके विरुद्ध चलाये गये आन्दोलनके तुरन्त बाद तो यह आवश्यकता और भी बढ़ गई है। मैंने बड़े ही स्पष्ट शब्दोंमें जता दिया कि संयुक्त प्रान्तमें जो-कुछ किया गया है, उस तरहकी कार्रवाइयोंको मैं व्यक्तिगत तौरपर समझौतेकी समूची भावनाका गम्भीर उल्लंघन मानता हूँ। मैंने समझाया कि प्रान्तीय सरकारें आर्थिक परिस्थितिकी गम्भीरता और भू-राजस्व सम्बन्धी नीतिमें ज्यादा सख्ती न करनेकी आवश्यकताके बारेमें पूर्णतः सतर्क हैं। तब भी उनके लिए यह निर्णय कर पाना बड़ा कठिन पड़ रहा है कि कौन लोग अदायगी कर सकते हैं और कौन नहीं, और यदि इस परिस्थितिमें कांग्रेस हस्तक्षेप करेगी तो उनका काम और भी पेचीदा हो जायेगा क्योंकि उस हस्तक्षेपका एक अनिवार्य परिणाम यह निकलेगा कि अधिकारी लोग शंकाशील हो उठेंगे कि लगान अदा करनेसे इनकार करनेवाला व्यक्ति सचमुच अपनी असमर्थताके कारण इनकार कर रहा है या कांग्रेसकी सलाहने उसे अदायगीसे बच निकलनेकी प्रेरणा दी है। श्री गांधी इस विचारसे सहमत नहीं हो सके कि संकटकी स्थितिमें पड़े लोगोंको देखकर भी कांग्रेस अलग खड़ी रहे, उनकी सहायता न करे; पर मैं समझता हूँ कि हस्तक्षेपसे होनेवाली कठिनाइयोंको उन्होंने समझ लिया और जहाँतक उनकी अपनी बात है लगता है कि निष्क्रियताके कारण गाँवोंकी जनतातक पहुँचनेके एक अच्छे अवसरसे वंचित होनेके विचारसे वे इतने अधिक चिन्तित नहीं हैं जितने कि इस ख्यालसे कि वे दलित जनताके लिए कुछ भी नहीं कर पाये। इसको लेकर निश्चय ही झंझट खड़ी होनेकी बड़ी सम्भावना है। दूसरी ओर, उन्होंने जमींदारोंपर कोई भी दबाव डालने, अदायगी न करनेकी अपीलें जारी करने और कांग्रेसके नामपर लगानमें पचास प्रतिशत कटौती करानेकी झूठी आशा दिलाने और व्यक्तिकी सामर्थ्यसे कमकी अदायगी करनेकी सभी कोशिशों की खुले मनसे भर्त्सना की। आशा है कि सर मॉलकम हैलीके साथ होनेवाली उनकी चर्चाके निष्कर्षोंसे इस मामलेमें स्थिति स्पष्ट हो जायेगी।

(ङ) मैंने श्री गांधीको विभिन्न प्रान्तोंकी वर्तमान स्थितिसे अवगत करानेका प्रयत्न किया और इसमें भी खास तौर पर उत्तर-पश्चिमी सीमा-प्रान्तों, पंजाब, संयुक्त-प्रान्त, बिहार, उड़ीसा और बंगालकी स्थितिसे। मैंने इस तथ्यपर जोर दिया कि समझौतेके हाल ही बादके परिणामोंसे सन्तुष्ट कुछ प्रान्तीय सरकारें अब कांग्रेसकी कार्रवाइयोंके कारण कुछ शंकाशील होती जा रही है। मैंने उनको बतलाया कि हमारे सामने लगभग बिलकुल ही नई तरहकी कठिनाइयाँ हैं, संवैधानिक, राजनीतिक, साम्प्रदायिक, वित्तीय, कृषीय और आतंकवादी आन्दोलनसे सम्बन्धित काफी टेढ़ी किस्मकी कठिनाइयाँ हमारे सामने हैं, लेकिन यदि हम सभी लोग मिलकर प्रयास करें तो बहुत सम्भव है कि हम उनको हल कर लेंगे, और सहयोग न करें तो फिर भविष्यके लिए कोई आशा नहीं दिखाई पड़ती। मैंने कहा कि भारत सरकारकी एक सर्वथा सुनिश्चित और स्पष्ट नीति यही है कि समझौतेपर अमल किया जाये

और उसे भंग न होने देनेके लिए सभी उचित प्रयत्न किये जायें। इस दिशामें कोई भी प्रतिगामी शक्तियाँ उसे पीछे ढकेलनेके लिए सक्रिय नही है। लेकिन साथ ही यह भी अत्यन्त आवश्यक है कि सरकार लगातार सतर्कतासे काम लेती रहे और वह न तो आम तौरपर और न किसी एक क्षेत्रमे ही कोई खतरनाक स्थिति पैदा होने दे सकती है भले ही उसे रोकनेकी कार्रवाईका मतलब समझौतेका खात्मा ही हो। इस सिलसिलेमें सबसे बड़ा खतरा तो कांग्रेसकी मनोवृत्ति और इस बातसे है कि कांग्रेस एक विपरीत दिशामें लगातार ही यह प्रचार करती रहती है कि लोगोंको भावी संघर्षके लिए तैयार रहना चाहिए। स्पष्ट ही इस मनोवृत्तिका प्रभाव अन्यत्र भी पड़ रहा है। इंग्लैंडमें होनेवाली प्रतिक्रियाका कारण भी आंशिक रूपसे यह बात है और यदि हम उस प्रतिक्रियाको रोक नही पाये तो वहाँ वातावरण सर्वथा प्रतिकूल बन जायेगा। परिषद्में उठनेवाली संवैधानिक चर्चाके बारेमें, मैंने उनसे कहा कि यदि लन्दनमें उनकी मौजूदगीके दौरान भारतकी अन्दरूनी परिस्थिति इंग्लैडकी जनता को अरुचिकर लगी या इंग्लैडके लोकमतको उससे ठेस भी पहुँची तो वहाँ उनकी अपनी स्थिति बड़ी अटपटी हो जायेगी। विभिन्न प्रान्तोमें कांग्रेसकी ओरसे की जानेवाली राजद्रोहात्मक कार्रवाइयोंके अनेक उदाहरण मैंने उनके सामने रखे। मै तो समझता हूँ कि सामान्यतया इसका श्री गांधीके मनपर प्रभाव अवश्य पड़ा। इंग्लैडमें होनेवाली प्रतिक्रियाका महत्त्व तो उन्होंने महसूस कर ही लिया था और मै तो सोच रहा था कि वे उसके पीछे सक्रिय प्रतिगामी शक्तियोंकी कुछ आलोचना तो करेंगे ही, पर उन्होंने कोई भी आलोचना नहीं की। और इसी तरह उन्होंने पंजाबके गवर्नर महोदयके हालके भाषणमें अख्तियार किये गये रुखपर भी बिलकुल कोई विरोध व्यक्त नही किया। लगता था कि वे मेरे इस मतसे सहमत हो गये हैं कि उनका भाषण उन कटु तथ्यों या घटनाओंका स्वाभाविक परिणाम ही था जिसके लिए बहुत हदतक काग्रेस जिम्मेदार है। उनको एक यह शिकायत अवश्य थी कि मैंने कांग्रेसके उद्देश्यों और कार्योपर एक व्यापक रूपसे सन्देह प्रकट किया, जब कि वास्तवमें काग्रेसके उद्देश्य और कार्य सदाशयतापूर्ण है और वह सचमुच शान्तिपूर्ण समाधान चाहती है। यह उन्होंने स्वीकार किया कि कुछ खास कार्रवाइयाँ बुरी जरूर थी और उनका वे बिलकुल कोई अनुमोदन नही करते। उन्होंने यह भी महसूस किया कि समूची स्थितिको एक अधिक शान्तिपूर्ण धरातलपर ले जानेकी जरूरत है और मुझे आशा है कि वे निश्चय ही इस दिशामें अपने प्रभावका सदुपयोग करेंगे। मैंने उनको मद्रास प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी द्वारा जारी किया गया एक परिपत्र दिखाया, जिसकी एक प्रति इस विवरणसे भी संलग्न है। मैंने उनको कहा कि परिपत्रमें एक या दो चीजें ऐसी हो सकती हैं जिनको अधिक अच्छे शब्दोंमें रखना सम्भव रहा हो तथापि यदि कांग्रेस मोटे तौरपर उसमें कहे गये सिद्धान्तोंके अनुसार अमल करती रहे तो सरकारको शिकायतके लिए कोई गुंजाइश ही नहीं रह जायेगी। मैंने श्री गांधीको यह भी बतलाया कि उन्होंने अपने शिमलावाले भाषणमें जो रुख अपनाया है उससे निश्चय ही काफी सहायता मिलेगी और मैंने उनसे अनुरोध किया कि वे

उसी भावनासे काम करते रहें और अन्य नेताओंको भी वैसा ही करनेके लिए प्रेरित करें। मुझे अपने पर पूरा यकीन है कि वे इसका भरसक प्रयत्न करेंगे।

(१२) इस विवरणके अन्तमे मैं अपनी कुछ निजी धारणाएँ भी बतला दूँ। (वैसे ही यह विवरण वहुत काफी लम्बा हो गया है।)

मैं समझता हूँ कि श्री गांधी समझौतेका पूरा-पूरा पालन करानेके लिए पहलेसे अधिक चिन्तित हैं, सच्चे हृदयसे चिन्तित हैं, और वे अपनी पूरी शक्ति इसमें लगा देंगे। कांग्रेसकी ओरसे समझौतेकी बात टूटनेकी सम्भावना बड़े-बड़े प्रश्नोंको लेकर तो कम ही जान पड़ती है। अधिक सम्भावना तो यही है कि कांग्रेसकी ओरसे यदि बात टूटी तो वह अपेक्षाकृत कम महत्त्वके ब्यौरेसे सम्बन्ध रखनेवाले कुछ अरुचिकर प्रश्नोंको लेकर ही टूट सकती है। और यदि कांग्रेसकी कार्रवाइयोंका रूप विशेषकर देहाती क्षेत्रोंमें काफी कुछ संयत हो जाये, तो यह खतरा बहुत कम रह जायेगा, क्योंकि तब यह सम्भव और वाँछनीय भी हो सकता है कि स्थानीय अधिकारी लोग कांग्रेसकी कार्रवाईको देखते हुए यहाँ-वहाँ जरूरतके मुताबिक कुछ बातोंमें थोड़ी ढ़िलाई कर सकें। यदि यह हो जाये तो उससे वातावरणमें सुधार होगा।

पिछले कुछ महीनोंके दौरान श्री गांधीके अपने रुखमें निश्चय ही कुछ नरमी आई है। वे कुछ ठोस किस्मकी कठिनाइयोंसे जूझते रहे हैं और उनको रचनात्मक कार्यके बारेमें सोचना पड़ा है। इस कारण उनकी पहलेसे बनी-बनाई कुछ धारणाओं परसे उनका विश्वास थोड़ा डिग गया है और वे समस्याके दूसरे पहलूको भी समझने के लिए अब पहलेसे ज्यादा तैयार हैं, हालाँकि मैंने इस मामलेमें उनका रुख सदा ही बहुत मुनासिब पाया है। विभिन्न सरकारी अधिकारियोंके साथ उनका निजी सम्पर्क स्थापित होनेसे उनकी सहयोगकी इच्छाको बल मिला है। और यह तो मैं भली-भाँति समझता हूँ कि कांग्रेसको जबतक सरकार और अन्य दलोंका प्रभाव और उनकी साख घटाकर स्वयं अपना प्रभाव और अपनी ही साख बढ़ानेकी ही पड़ी है, तबतक कांग्रेसी नेताओंके साथ अधिक निकटका सहयोग स्थापित करनेके मार्गमें बड़ी मुश्किलें पड़ेंगी और खतरे सामने आयेंगे; लेकिन मुझे लगता है कि जिन क्षेत्रोंमें भी इन मुश्किलों और खतरोंसे बचकर चलना सम्भव है, वहाँ निजी सम्पर्क बनाये रखनेसे निश्चय ही स्थिति कुछ आसान बनाई जा सकती है। और जैसी कि मुझे आशा है, श्री गांधी संघर्षशीलताकी मनोवृत्तिमें नरमी लानेका प्रयास करेंगे, और यदि वे इसमें सफल होते हैं तो निश्चय ही स्थिति आसान हो जायेगी। यदि सरकार उनके प्रयासको देखते हुए तब अपनी ओरसे कोई सहयोग नहीं करेगी, तो हम फिरसे पुराने चक्करमें पड़ जायेंगे और स्थिति फिर बिगड़ने लगेगी।

इस समय तो श्री गांधी स्वयं ही ब्यौरेसे सम्बन्धित छोटी-मोटी चीजोंमें इतने उलझे हुए है कि बड़े-बड़े प्रश्नोंकी ओर उनको जितना ध्यान देना चाहिए वे नहीं दे पा रहे हैं। सरकारकी ओरसे समझौतेपर अमल न किये जानेके सम्बन्धमें अनेक शिकायतें उनके पास आती रहती हैं और हालाँकि उनमें से अधिकांश झूठी होती है, फिर भी शंकाओं और सन्देहोंको गुंजाइश तो हो ही जाती है। समझौतेसे उत्पन्न होनेवाले प्रश्नोंका समाधान जितने जल्द हो जाये उतना ही अच्छा रहेगा।

समझौता भंग हो जानेके परिणामोंके बारेमें श्री गांधीको कोई भ्रम नहीं है, वे उनको भली-भाँति समझते हैं। वे समझते हैं कि सविनय अवज्ञा आन्दोलनको फिर शुरू कर देनेपर सरकार तुरन्त और पूरी सख्तीके साथ कार्रवाई करनेपर विवश हो जायेगी और मैंने अनेक अवसरोंपर यह बात उनको बहुत ही स्पष्ट शब्दोंमें जता दी है। वे इसे सर्वथा उचित मानते हैं और यदि आवश्यकता पड़ी तो वे इसके परिणाम भुगतनेके लिए तैयार रहेंगे। लेकिन यदि ऐसी स्थितिसे बच सकें तो वे दूसरा संघर्ष नहीं छेड़ना चाहेंगे। यह तथ्य और लॉर्ड इर्विनको दिये गये अपने वचनोंके प्रति उनकी अपनी दायित्व-भावना ये दो चीजें इस परिस्थितिके सन्दर्भमें अत्यधिक महत्व रखती हैं।

१८ मई, १९३१ एच० डब्ल्यू० एमर्सन

अंग्रेजीकी फोटो-नकलसे : इंडिया ऑफिस रेकर्ड्स

परिशिष्ट ७

गांधीजी के साथ हुई चर्चापर सरमाल्कम हेलीकी टिप्पणी[1]

२० मई, १९३१

आज श्री गांधीके साथ मेरी चर्चा मुख्यतः कृषीय परिस्थितिके बारेमें ही रही, पर कुछ अन्य सम्बन्धित विषयोंपर भी बात हुई।

१. रिहाइयोंके बारेमें उन्होंने ज्यादा बात नहीं की। वे निश्चय ही मामलोंकी कोई सूची अपने साथ लेकर नहीं आये थे जिनके बारेमें हमारी ओरसे समझौतेका पालन न होनेकी शिकायतें आई हों। मैंने उनसे कह दिया कि यदि कुछ ऐसे मामले हों जिनको आप पेश करना चाहते हों तो मुझे उनके द्वारा उनका मुख्य सचिवके पास भेज दिया जाना उचित लगेगा। इसपर वे राजी हो गये।

२. उन्होंने उन विद्यार्थियोंके मामलोंका उल्लेख किया जिनको सविनय अवज्ञा आन्दोलनमें भाग लेनेके अपराधमें शालाओंसे निकाल दिया गया था या और दण्ड दिये गये थे। मेरे पास पूरे तथ्य तो मौजूद नहीं हैं, पर प्रान्तके शिक्षा-निदेशकने मुझे सूचित किया है कि उनको दाखिला तभी दिया जा सकता है जब वे लिखित वचन दें कि वे अपनी-अपनी शिक्षा संस्थाओंके अनुशासनात्मक नियमोंका पालन करेंगे। यह कोई बड़ा कष्टदायक दायित्व तो नहीं लगता। और कांग्रेस अन्य कोई स्पष्ट शिकायत नहीं करती, तो मै इस मामलेको यहीं तक रहने दूंगा। बात करते समय ऐसा नहीं लगा कि श्री गांधी इसे बहुत महत्त्वपूर्ण मानते हों।

१. देखिए पृष्ठ १९२।

३. उन्होंने सविनय अवज्ञा आन्दोलनमें भाग लेनेके कारण कुछ लोगोंके शस्त्र रखनेके लाइसेंस जब्त कर लिये जानेके प्रश्नको कुछ अधिक महत्त्व दिया। मेरा ख्याल है कि ऐसे कुछ मामले हुए तो थे; हालाँकि मैं नहीं जानता कि हमारे पास प्रधान कार्यालयमें उनके विषयमें कुछ जानकारी है या नहीं। उन्होंने मुझे बतलाया कि गुजरातके कमिश्नरने स्वीकार कर लिया था कि यह विषय समझौतेकी शर्तोंके क्षेत्रमें शामिल है और श्री एमर्सनने कहा था कि उनका भी यही ख्याल था; पर वे प्रान्तीय सरकारोंको कोई आदेश जारी करनेसे पहले कानूनी सलाह लेना चाहेंगे। चाहें तो मुख्य सचिव इस विषयसे सम्बन्धित जिन तथ्योंके बारेमें भी निश्चित जानकारी हासिल कर सकते हैं और साथ ही अर्द्ध-सरकारी तौरपर श्री एमर्सनसे पूछ सकते हैं जहाँ उनको केवल इसी कारण जब्त किया गया था कि उनको रखनेवाले लोगोंने सविनय अवज्ञा आन्दोलनमें भाग लिया था, वहाँ शस्त्रोंके लाइसेंसोंको बहाल करनेके बारेमें भारत सरकारकी क्या राय है।

४. मैं पहलेही कह चुका हूँ कि चर्चाका मुख्य विषय कृषीय परिस्थिति था। इसपर हमने काफी विस्तारसे बात की और मैं अपनी ओरसे किसी भी सिद्धान्तिक विषयपर चर्चा करनेसे बचा रहा, जैसे कि यह प्रश्न कि समझौतेके अन्तर्गत कांग्रेसको जनताके प्रतिनिधिकी हैसियतसे मान्यता पानेका अधिकार है या नहीं, आदि। और मैंने तुरन्त ही उन जिलोंकी परिस्थितिसे सम्बन्धित तथ्योंपर उनके साथ बात शुरू कर दी, जहाँ कांग्रेस सबसे अधिक सक्रिय रही थी। मैंने उनको बतलाया कि जैसे भी हुआ हो पर अब परिस्थिति ऐसी बन गई है जिससे यह खतरा है कि शायद किसान लोग लगानकी अदायगी करनेसे बिलकुल ही इनकार कर दें और यदि जमींदार उनको विवश करें तो वे शायद हिंसापर उतारू हो जायें। स्वाभाविक ही था कि मैंने चौरीचौराके उदाहरणकी ओर उनका ध्यान आकर्षित किया। उन्होंने तुरन्त प्रतिवाद किया और कहा कि लगानकी अदायगी न करनेके लिए आन्दोलन करनेका मेरा कोई इरादा नहीं है और जब मैंने इटावा कांग्रेस कमेटीके प्रस्तावकी एक प्रति उनके हाथमें दी तो उन्हें कुछ आश्चर्य हुआ और उन्होंने कहा कि मैं फौरन इसकी जाँच करूँगा। उन्होंने स्वीकार किया कि जिन स्थानोंमें जमींदारोंने कांग्रेसके साथ समझौता कर लिया था उन स्थानोंमें कांग्रेस किसानोंको अदायगी करने पर राजी नहीं कर पाई। उन्होंने कहा कि तहसीलों और थानोंमें कोई एक संगठन खड़ा करनेकी कांग्रेसकी कतई कोई योजना नहीं है और वह तो वास्तवमें किसी तरहका एक समानान्तर शासन-तन्त्र खड़ा करनेके विचारका विरोध करती है। इतनी बात हो चुकनेके बाद, मैंने इन जिलोंमें उत्पन्न परिस्थितिके कारण सामने आई वास्तविक कठिनाईकी ओर उनका ध्यान फिर आकर्षित किया। उन्होंने कहा कि उसका यही तो हल है कि किसानोंको लगानकी अदायगीके लिए राजी करनेमें कांग्रेसका कारगर सहयोग प्राप्त किया जाये। लेकिन वे इसका वचन नहीं दे सके और उन्होंने कहा कि जबतक किसानोंके सामने रखनेके लिए सरकार द्वारा दी गई छूटकी घोषणा-मात्रसे बेहतर कोई विकल्प कांग्रेसके हाथ नहीं आ जाता तबतक मैं किसानोंको राजी

करनेके लिए व्यक्तिगत तौरपर भी कोई प्रयत्न नहीं कर सकता। मेरे कार्यकर्त्ताओंने अनेक जिलोंकी स्थितिका बारीकीसे अध्ययन कर लिया है और मुझे पूरा यकीन हो गया है कि वर्तमान परिस्थितियोंमें किसान लोग लगानकी घटाई गई राशि भी अदा नही कर पायेंगे। उन्होंने तो यहाँतक कहा कि इस जाँच-पड़तालसे पता चला है कि लगानकी दर इतनी ऊँची है कि सामान्य स्थितिमें भी उतनी अदायगीकी सामर्थ्य किसानोंमें नही है, हालाँकि उन्होंने स्वीकार किया कि लगानकी ये दरें पुरानी हैं और बहुत दिनोंसे चली आ रही हैं तथा इस तथ्यको देखते हुए इस निष्कर्षमें शायद कुछ परिवर्त्तन करनेकी जरूरत पड़ सकती है। उनका कहना था कि नीचे दिये गये तीन विकल्पोंमें से कोई एक अपनाया जाना चाहिए:

पहला — उन्होंने सुझाव दिया (हालाँकि उन्होंने इसपर आग्रह नही किया) कि हम कांग्रेस-कार्यकर्त्ताओं द्वारा इकट्ठे किये गये आँकड़ोंको स्वीकार कर लें और उन्होंने विश्वास दिलाया कि ये आँकड़े मोटे तौरपर लगाये गये किसी अनुमानपर नही, बल्कि सचमुच जाँच-पड़ताल करके इकट्ठे किये गये हैं। मैंने उनको बतलाया कि यह मान लेना तो असम्भव है कि ये सामान्य आँकड़े किसानोंके सभी तबकों और प्रदेशोंके सभी भागोंके बारेमें सही हो सकते हैं।

दूसरा — उन्होंने सुझाया कि हमारे अधिकारी और भी ठीक-ठीक आँकड़े प्राप्त करनेके उद्देश्यसे हर जिले या डिवीजनमें कुछ चुने हुए कांग्रेसियोंके साथ मिलकर सरसरी तौरपर एक जाँच कर डालें।

तीसरा — उन्होंने कहा कि यदि सरकारको उक्त दोनों ही विकल्प स्वीकार्य न हों, तो सरकार खुद एक खुली जाँच बैठा दे जिसमें कांग्रेसके लोग किसानोंकी लगानकी अदायगीकी सामर्थ्यके बारेमें साक्ष्य प्रस्तुत कर सकें। मैंने उनको बतलाया कि इनमें से किसी भी विकल्पको अपनानेसे विलम्ब होगा और सम्भावना यह भी है कि लगान अदायगीके लिए धन मिल ही न पाये। यदि किसान इस फसलपर लगानकी बिलकुल अदायगी न करें तो यह निश्चित ही मानिए कि खरीफके लिए वे एक कौड़ी भी नही देंगे। आप समझते हैं कि तीन-चार दिनोंमें सरसरी जाँच की जा सकती है, परन्तु यह सर्वथा असम्भव है और आप जिस प्रकारकी सामान्य जाँचकी बात सोच रहे हैं — अर्थात् १९१६ में चम्पारनमें जैसा आयोग गठित किया गया था, वैसा कुछ करनेकी — उसमें तो कई महीने लग जायेंगे। हम इस समय जो भी करेंगे उसका गम्भीर प्रभाव जमींदारोंपर ही नहीं, आगामी अनेक वर्षों तक हमारी अपनी वित्तीय स्थितिपर भी पड़ सकता है। इसलिए इतना दूर-व्यापी प्रभाव डालनेवाली इस सरसरी जाँचकी प्रक्रिया अपनानेके लिए सरकारसे कहना उचित नहीं है। मैंने उनसे कहा कि मैं आपके प्रस्तावोंपर विचार करूँगा, लेकिन मुझे यह भी लगता है कि वसूलीमें विलम्ब करनेका परिणाम इतना खतरनाक हो सकता है कि उसे बरदाश्त करना कठिन होगा। मैंने यह भी बतलाया कि ऐसे अनेक जिले हैं जहाँ हमारे अधिकारी समझते हैं कि अब वसूलीका काम बिना किसी बड़ी कठिनाईके चल सकता है और मेरी रायमें तो जहाँ भी हो सके हमें इस आशासे वसूलियाँ

शुरू कर देनी चाहिए कि यदि उनमें कोई कठिनाई नहीं पड़ी तो आम किसानोंके रुखपर उसका अच्छा प्रभाव पड़ेगा। हमने बातको यहींतक रहने दिया। हो सकता है कि यह कोई बड़ा ही सन्तोषजनक निष्कर्ष न हो, क्योंकि मैं उनसे सिवा इस बातके और कोई भी बात नहीं मनवा सका कि वे लगानकी अदायगी न करने-जैसे कांग्रेसके किसी भी आन्दोलनको चलाने या उस सम्बन्धमें पंच सभाओंको गठित करनेके हर प्रयत्नको निरुत्साहित ही करेंगे। श्री एमर्सनने मुझे सावधान कर दिया था कि श्री गांधी बड़ी तीव्रतासे अनुभव करते हैं कि कांग्रेस किसानों और छोटे जमींदारोंकी हिमायतकी अपनी नीतिसे बिलकुल ही विरत नहीं हो सकती।

५. अधिक विस्तारसे न सही, पर धरनोंके प्रश्नपर भी हमने बात की। मैंने उनको आगाह किया कि धरना देनेवाले स्वयसेवक चूँकि मुसलमान दुकानदारोंको पक्षमें करनेकी कोशिश नहीं करते हैं, इसलिए खतरा है कि इसका रूप कहीं साम्प्रदायिक न बन जाये, और मैंने उनको यह भी बतलाया कि शराबकी बोतलें छीनना या जुर्माने करना समझौतेकी भावनाके बिलकुल प्रतिकूल है। वे इससे सहमत हो गये और उन्होंने कहा कि मैं इसको निरुत्साहित करनेका भरसक प्रयत्न करूँगा और जुर्माने लेनेके विरुद्ध आदेश तो जारी कर ही चुका हूँ।

एम० हेली

[अंग्रेजीसे]

गृह-विभाग, राजनीतिक, फाइल संख्या ३३/११ और के० डब्ल्यू० १९३१।
सौजन्य: भारतका राष्ट्रीय अभिलेखागार

परिशिष्ट ७ अ

एमर्सनको सर माल्कम हेलीका पत्र[1]

संयुक्त प्रान्त
२१ मई, १९३१

प्रिय एमर्सन,

आपके १६ मईके पत्रके लिए अनेक धन्यवाद। श्री गांधीके साथ मेरी चर्चामें सचमुच वह मेरे लिए बड़ा उपयोगी सिद्ध हुआ। चर्चाके परिणामके बारेमें मैं एक विवरण आपको भेज रहा हूँ। मुझे लगता है कि परिणाम कोई बहुत उल्लेखनीय नहीं रहा। परन्तु सारी चर्चा बड़े ही मैत्रीपूर्ण ढंगसे चली और मैं इस बातसे बड़ा प्रभावित हुआ कि वे रिहाइयोंके बारेमें अपनाये गये हमारे तरीकेके खिलाफ शिकायतों का कोई पुलिन्दा लेकर पूरी तैयारीके साथ आये हों ऐसा नहीं लगता था। आप

१. देखिए पृष्ठ १९२।

स्वयं देखेंगे कि कृषीय परिस्थितिसे सम्बन्धित समस्याके बारेमें उनका रुख आम तौर पर बहुत कुछ वही रहा जो उन्होंने आपके सामने रखा था।

हृदयसे आपका,
एम० हेली

श्री एच० डब्ल्यू० एमर्सन
सचिव, भारत सरकारका गृह-विभाग

पुनश्च :

मैंने अपने विवरणकी एक प्रति वाइसरायको भेज दी है।

[अंग्रेजीसे]

गृह-विभाग, राजनीतिक, फाइल संख्या ३३/११ और के० डब्ल्यू० १९३१।
सौजन्य : भारतका राष्ट्रीय अभिलेखागार

परिशिष्ट ८

सर माल्कम हेलीका पत्र[1]

२३ मई, १९३१

प्रिय श्री गांधी,

आज ही की तारीखका आपका पत्र मुझे अभी-अभी मिला। चूंकि आपने बहुत शीघ्र उत्तर चाहा है, इसलिए मैंने उसपर तुरन्त ही लेकिन बहुत ध्यानपूर्वक विचार कर लिया है और मैं इस विषयके बारेमें अपनी राय आपको तुरन्त लिख रहा हूँ।

आपके प्रस्तावित घोषणापत्रकी अनेक बातोंका मैं स्वागत करता हूँ जैसे कि किसानोंको आपकी यह राय कि वे तुरन्त लगान अदा करना शुरू कर दें और किसानों द्वारा की गई हिंसाकी निन्दा और काफी जोरदार शब्दोंमें व्यक्त की गई आपकी यह इच्छा कि उनको कोई अवांछित कार्रवाई करके अपने ही हितोंको चोट नहीं पहुँचानी चाहिए। फिर भी मुझे खेदपूर्वक कहना पड़ता है कि मैं किसी भी रूपमें कुल मिलाकर इस घोषणापत्रको अपनी सहमति नहीं दे सकता। वह तो एक तरहसे निर्णय ही बन जाता है, यह निर्णय कि प्रान्तके अनेक जिलोंमें फसली साल १३३८के दौरान लगानके मामलेमें कानूनी और गैर-मौरूसी भूमिधरोंको रुपयेमें आठ आने और मौरूसी भूमिधरोंको रुपयेमें चार आनेकी माफी देना जरूरी हो गया है। मैं मानता हूँ कि घोषणापत्रमें हालाँकि कहा गया है कि कुछ लोग अधिक अदायगी करनेमें भी शायद समर्थ होंगे, लेकिन आम तौरपर किसान इसका बस एक यही अर्थ लगायेंगे कि इस तरह उनको हिदायत दी जा रही है कि वे कुल मिलाकर

१. देखिए पृष्ठ २११-१२।

अपनी अदायगी इस स्तरतक ही सीमित रखें। मैंने स्वयं जितना देखा-सुना है, उसके आधारपर मुझे तो विश्वास नही होता कि परिस्थितियोंको देखते हुए इतनी ज्यादा छूट देनेकी कोई जरूरत है; और मेरी बिल्कुल स्पष्ट राय है कि इस राशिके बारेमें छूट देने या अन्य किसी राशिमें कटौनी करनेके सिलसिलेमें भी कोई ऐसा नियम नहीं बनाया जा सकता जो प्रान्तके विभिन्न इलाकोंमें मौजूद बड़ी ही विभिन्न परिस्थितियोंमें समान रूपसे प्रयोगमें लाया जा सके।

मुझे बतलाया गया है कि सरकार द्वारा घोषित कटौतीके आधारपर हमारे अनेक जिलोंमें इस वक्त लगानकी वसूलियोंका काम शुरू हो गया है और हालाँकि इस समय यह तो नही कहा जा सकता कि ये वसूलियाँ सभी जगह पूरी-पूरी हो जायेंगी या नही, फिर भी मैं समझता हूँ कि ठीक नीति यही होगी कि इस आधार पर वसूलियाँ होने दी जायें और सावधानीसे देखा जाये कि उसके क्या परिणाम निकलते हैं। मैंने अपनी बातचीतके दौरान आपको बतलाया था कि इस अवस्था पर किसानोंको अदायगी रोकनेके लिए प्रोत्साहित करनेवाली किसी भी कार्रवाईसे क्या खतरा पैदा हो सकता है, क्योंकि यदि तुरन्त ही वसूली नहीं की जायेगी तो बादमें कोई भी अदायगी करानेकी गुंजाइश बहुत कम रह जायेगी। और मैंने खास तौरपर इसी कारण प्रान्त-भरमें लगान वसूलियोंकी मौजूदा स्थितिके बारेमें आम किस्म-की जाँच करानेके सभी प्रस्तावोंको निरुत्साहित किया है, क्योंकि इस प्रकारकी किसी भी सरसरी जाँचके आधारपर इस अत्यन्त ही जटिल और गूढ़ प्रश्नका उचित समाधान नहीं निकाला जा सकता, एक ऐसा जटिल प्रश्न जिससे विभिन्न हित जुड़े हुए हैं और जिसके सम्बन्धमें किये जानेवाले हर निर्णयका प्रभाव सरकारके राजस्व-कोषपर ही नहीं, बल्कि किसानों और जमींदारोंके परस्पर सम्बन्धोंपर भी दीर्घकाल तक पड़ता रहेगा।

शुभ कामनाओं सहित,

हृदयसे आपका,
एम० हेली

श्री मो० क० गांधी
थाकुला, नैनीताल

गृह-विभाग, राजनीतिक, फाइल संख्या ३३/११ और के० डब्ल्यू० १९३१।
सौजन्य: भारतका राष्ट्रीय अभिलेखागार

परिशिष्ट ८ अ

एच० डब्ल्यू० एमर्सनको सर माल्कम हेलीका पत्र[1]

संयुक्त प्रान्त,
२३ मई, १९३१

प्रियवर एमर्सन,

मेरा ख्याल है कि श्री गांधीके साथ हाल ही में हुआ, इसके साथ संलग्न मेरा पत्र-व्यवहार आप तुरन्त देख जायें। उत्तर देनेके लिए मुझे बहुत ही थोड़ा समय मिल पाया था, क्योंकि मैं कोई भी ऐसा काम नहीं करना चाहता था जिससे उनको आज दोपहर बाद ३ बजेतक हम लोगोंसे फारिग हो सकनेमें कोई अड़चन पड़े। परन्तु स्पष्ट है कि किसी भी ऐसे प्रस्तावसे सहमत होना मेरे लिए असम्भव था जिसके फलस्वरूप लोगोंको यह लगे कि मेरी और उनकी ओरसे एक संयुक्त घोषणा-पत्र जारी किया गया है, विशेषकर इसलिए कि अधिकांश जनता तो उनके मसविदेको एक इस निर्णयके रूपमें ही लेती कि हमने जो छूटें दी हैं वे बिलकुल ही गलत हैं और आवश्यकता कहीं अधिक व्यापक किस्मकी छूट देनेकी है। कह नहीं सकता कि वे इस सिलसिलेमें फिरसे तर्क करेंगे या मुझसे फिर मिलना चाहेंगे या नहीं; परन्तु उनके मुख्य प्रतिनिधि गोविन्दवल्लभ पन्तको टेलीफोनपर जता दिया गया था कि मैंने जो रुख अपनाया है उसमें कोई फेर-बदल करनेके लिए मैं शायद बिलकुल तैयार नहीं हूँ। मैं बहुत सोच-विचारके बाद इसी निष्कर्षपर पहुँचा हूँ कि मेरे लिए बस यही एक मार्ग रह गया था।

हृदयसे आपका,
एम० हेली

पुनश्च :

सर जार्ज लैम्बर्ट यदि अब भी शिमलामें हों, तो कृपया उनको यह दिखला दीजिये।

श्री एच० डब्ल्यू० एमर्सन

गृह-बिभाग, राजनीतिक, फाइल संख्या ३३/११ और के० डब्ल्यू० १९३१।
सौजन्य : भारतका राष्ट्रीय अभिलेखागार

1. देखिए पृष्ठ २११-१२।

परिशिष्ट ९

आर० एम० मैक्सवेलका पत्र[1]

गवर्नमेंट हाउस
महाबलेश्वर
१३ मई, १९३१

प्रिय श्री गांधी,

गवर्नर महोदय सर फ्रेडरिक साइक्ससे १७ अप्रैलको आपकी भेंटके दौरान गवर्नर महोदयने वचन दिया था कि आपके द्वारा उल्लिखित गृह-विभागके कुछ मामलोंपर सरकार फिरसे विचार करेगी। अब मैं आपको उस पुनर्विचारके परिणामसे अवगत करा रहा हूँ।

२. मैं सबसे पहले कुछ बन्दियोंकी रिहाईके बारेमें दिये गये आपके सुझावको ले रहा हूँ।

(१) आपने कहा था कि शोलापुर मार्शल लॉके जिन बन्दियोंको अबतक रिहा नहीं किया गया है, उनको समझौतेके अनुसार रिहा कर दिया जाना चाहिए था। आपको उस समय सूचित कर दिया गया था कि ऐसे तीन बन्दी हैं।

श्री राजवाड़ेके बारेमें आपका यह अनुमान, जैसा आपने श्री कॉलिन्सके नाम पहली तारीखके अपने पत्रमें लिखा था, सही है कि 'कर्मयोगी' के उल्लिखित अंकमें छपे लेखके अतिरिक्त उनका अन्य कोई भी लेख न्यायालयके सामने पेश नहीं किया गया था। उस लेखमें कही गई अनेक बातें या तो झूठ थीं या इतनी बढ़ा-चढ़ाकर पेश की गई थीं (या कहें उन्हें बहुत मामूली मान लिया गया जैसा कि दंगेकी घटनाओंका उल्लेख करते समय) कि वे तथ्योंको देखते हुए बिलकुल ही असत्य बन गईं। लेकिन सबसे ज्यादा महत्त्व इस बातको दिया गया है कि उस समय शोलापुरमें मौजूद उन परिस्थितियोंमें उनका प्रकाशन जनतामें लाजिमी तौरपर अधिकारियोंके विरुद्ध आक्रोश भड़का सकता था और स्पष्ट ही ऐसा करना जनताको वास्तवमें और अधिक हिंसाके लिए भड़काने जैसा था। उनका प्रत्यक्ष प्रभाव यह हुआ कि शान्तिकी पुनस्र्थापनाका काम और अधिक कठिन बन गया और इसमें शककी बिलकुल भी गुंजाइश नहीं कि श्री राजवाड़े भी लेख प्रकाशित करते समय पहले ही यह सब भली-भाँति समझते थे। इसलिए सरकार पुनर्विचारके बाद भी अपनी इस रायपर कायम है कि यह ऐसा मामला नहीं है जिसमें माफी देना उचित होगा।

अन्य दोनों व्यक्तियोंको पुलिस-कर्मचारियोंकी हत्यासे सम्बन्धित एक मुकदमेके दौरान गवाहोंको रिश्वत देकर न्यायके साथ धोखाधड़ी करनेके अपराधमें सजाएँ दी

१. देखिए पृष्ठ ३५२-५४।

गई थी और सरकार उनके मामलेपर पुनर्विचार करनेके बाद भी यह समझनेमें असमर्थ है कि इस प्रकारका मामला आखिर समझौतेके क्षेत्रमें कैसे शामिल किया जा सकता है या इस प्रकारके व्यक्तियोंको कोई क्षमा कैसे कर सकता है।

(२) सरकारने भारतीय दण्ड संहिताके खण्ड १२४-क के अधीन सजा पाये व्यक्तियों के मामलोंपर पुनर्विचार कर लिया है। आपने राय व्यक्त की कि जब यह निर्णय किया गया था कि हिंसा और हिंसाके लिए भड़कानेके मामलोंपर समझौता लागू नही किया जाना चाहिए, उस समय लेख लिखने और भाषण देनेकी बात उसमें शामिल करनेका कोई ख्याल नही था। सरकार इस दृष्टिकोणको स्वीकार करने में असमर्थ है, क्योंकि यह तो बिलकुल स्पष्ट है कि ऐसे लेखों और भाषणोंसे हिंसाको उत्तेजना मिल सकती है और अक्सर मिली है और वह उत्तेजना वास्तविक होती है, मात्र शाब्दिक या औपचारिक नहीं और ऐसी उत्तेजना बहुधा हिंसा प्रेरित करनेके अन्य प्रकारोंसे कही अधिक खतरनाक और व्यापक होती है। सरकार इस निष्कर्ष पर पहुँची है कि जेलमें बन्दी व्यक्ति इस कसौटीपर पूरे उतरते हैं, और इसलिए सरकारके मनमें इस बारेमें कोई सन्देह नहीं रह गया है कि उनको माफी न देना सर्वथा उचित था। साथमें मैं यह भी कह देना चाहता हूँ कि भारतीय दण्ड संहिताके खण्ड १२४—कके अधीन दण्डित कोई भी व्यक्ति यदि समुचित क्षमायाचना करे और फिरसे वैसा अपराध न करनेका लिखित वचन दे तो सरकार उसके मामलेमें कुछ रियायत करनेके लिए सदैव तत्पर है, जैसा कि पहले कई मामलोंमें वह कर भी चुकी है, लेकिन इस मुद्देका समझौतेसे कोई ताल्लुक नहीं, क्योंकि समझौतेमें सशर्त रिहाईकी कोई व्यवस्था नही की गई है।

(३) आपने बारडोली ताल्लुकेके रतनजी दयारामके मामलेका उल्लेख किया था। आपने कहा था कि उसे अपनी फसलमें आग लगानेके अपराधमें दण्डित किया गया था और इसलिए उसे रिहा कर दिया जाना चाहिए था।

सरकारको इस मामलेकी छानबीन करनेपर मालूम हुआ कि उसे सजा इसलिए दी गई कि उसने अपने काश्तकारकी फसल जान-बूझकर जला दी थी ताकि उस जमीन का बकाया सरकारी लगान अदा न किया जाये। उसने अपने काश्तकारकी कोई क्षति-पूर्ति नहीं की, जो यदि की गई होती तो शायद सदयताके आधारपर उसके मामलेपर फिरसे विचार किया जा सकता था। और वह भी समझौतेकी शर्तोंसे बिलकुल अलग एक बात होती, क्योंकि मै बतला ही चुका हूँ कि समझौतेमें सशर्त रिहाई के लिए कोई व्यवस्था नही है। इस बातके अलावा, सरकारका यह भी विचार है कि इस प्रकारकी हिंसापूर्ण शरारतके लिए माफीका कोई आधार नही है।

(४) गवर्नर महोदयका ख्याल है कि आपने कहा है कि नमक सत्याग्रहसे सम्बन्धित अपराधोंके लिए दण्डित कुछ ऐसे बन्दी हैं जिनको रिहा नही किया गया है। गृह-विभागको खोजबीनके बाद भी ऐसे किसी मामलेका पता नहीं चला।

(५) आपने कहा है कि सविनय अवज्ञाके दौरान किये गये कुछ अपराधोंके सिलसिलेमें अबतक कुछ मुकदमे चल रहे हैं ऐसा करना समझौतेकी शर्तोंके विरुद्ध

हैं और आपने इस सिलसिलेमें बेलगाँवके एक मुकदमेका उल्लेख विशेष तौरपर किया।

आपको उस समय बतला दिया गया था कि आपने जिस मामलेका विशेष उल्लेख किया है वह उस जिलेके निपानी गाँवका है। उस मामलेके तथ्य इस प्रकार हैं — १९३० के अप्रैल महीनेमें दो स्थानीय नेताओंको सजाएँ सुनाई जानेके बाद हड़ताल करानेकी गरजसे एक भीड़ इकट्ठी हो गई और उसने सरकारी तथा कुछ निजी सम्पत्तिको हानि पहुँचाने तथा स्कूलमें लगे राज परिवारके चित्रोंको नष्ट करनेके बाद पुलिससे टक्कर ली और उसपर पथराव किया जिसके फलस्वरूप तीन पुलिस कर्मचारी और कुछ ग्राम-सेवक जख्मी हो गये थे। इस प्रकार वहाँ सचमुच एक हिंसा-काण्ड हुआ था और सरकार समझती है कि मुकदमा चलानेके फैसलेमें कोई रद्दोबदल नही की जा सकती।

गवर्नर महोदयसे आपकी बातचीतके समय अन्य विचाराधीन मुकदमे इन लोगोंके थे — (क) महादेव कुवेरजी और हीरा वल्लभ, (ख) विष्णु सालि, (ग) शिव मत्तुर। ये सभी लोग सूरत जिलेके थे, जिनपर क्रमशः जब्तशुदा फसलोंमें आग लगाने, एक पुलिस सिपाहीके साथ बुरी तरह मारपीट करने और एक प्रभारी ग्राम-सेवकको पीटनेके बाद एक जब्तशुदा फसलमें आग लगा देनेके आरोप हैं। यह स्पष्ट ही हिंसा है और ऐसे मामलों पर पुनर्विचार नहीं किया जा सकता।

(३) विदेशी व्यक्ति अधिनियमके अन्तर्गत जारी किये गये निष्कासनके आदेशोंके सम्बन्धमें सरकारने पुनर्विचार करनेके बाद सभी मामलोंमें आदेश वापस ले लिये हैं। ऐसे छः मामले थे और आदेशका पालन न करनेके अपराधमें बन्दी बनाये गये उन सभी व्यक्तियोंको रिहा कर दिया गया है। आपने इस सिलसिलेमें कहा था कि कर्नाटकमें ऐसे ३० मामले हैं और आपको तब सूचित कर दिया गया था कि सरकारको उनकी कोई जानकारी नहीं। इसपर आपने गृह-विभागके सचिवको उनका विवरण भेजना स्वीकार किया था। चूँकि आपने विवरण नही दिया है, इसलिए गवर्नर महोदयने मान लिया है कि उनके बारेमें आपको गलत सूचना दी गई थी।

(४) आपने कहा था कि जब्त की गई कुछ चल और अचल सम्पत्ति भी लौटाई नहीं गई है। गवर्नर महोदयने पता कर लिया है कि अध्यादेश ११ के अन्तर्गत जब्त की गई सभी इमारतें वापस कर दी गई हैं। कुछ मामलोंमें विलम्बका कारण यह था कि कब्जा लेनेके वास्तविक अधिकारी व्यक्तियोंका ठीक-ठीक पता लगाने और सम्पत्ति उन्हें लौटानेका प्रबन्ध करनेमें समय लगना तो जरूरी था।

चल सम्पत्ति लौटानेके बारेमें आजकी ही तारीखके मेरे एक दूसरे पत्रमें स्थिति बतलाई गई है। वह आपके ७ मईके पत्रके उत्तरमें लिखा गया है।

(५) और चिरनरवाले मुकदमेके बारेमें आपने कहा था कि उसे वापस ले लिया जाना चाहिए। आपको उस समय सूचित कर दिया गया था कि सम्बन्धित व्यक्तियोंपर दंगा करने, घातक हथियार रखने, डाकेजनी और डाकेजनीके लिए षड्यन्त्र करने और सरकारी कर्मचारियोंको उनके कर्त्तव्य-पालनके दौरान गम्भीर

चोटें पहुँचानेके आरोप हैं और चूँकि उनमें से छः पर हत्याका सीधा, स्पष्ट आरोप है, इसलिए स्पष्ट है कि मुकदमेकी सामान्य प्रक्रियामें कोई हस्तक्षेप नहीं किया जाना चाहिए।

हृदयसे आपका,
आर० एम० मैक्सवेल

श्री मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

अ० भा० कां० क० फाइल संख्या ४/१९३१, भाग १।
सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

परिशिष्ट १०

राय: नवजीवन प्रेसके सवालपर[1]

१३ जून, १९३१

१. (१) सरकार और 'नवजीवन प्रेस' के बीच बहस इस सवालपर है:

"अहमदाबादमें नवजीवन प्रेसकी इमारतसे जब्त किये गये छापाखानेको लौटानेके सिलसिलेमें सरकारके क्या दायित्व हैं?" यह पूरा सवाल बुनियादी तौरपर कानून [प्रेस अध्यादेशमें] प्रयुक्त शब्दावलीपर निर्भर करता है, जिसमें कहा गया है: "चल सम्पत्ति . . . लौटा दी जायेगी।" वैब्स्टरके अंग्रेजी शब्द-कोषमें "लौटाना" शब्दका अर्थ दिया गया है—"लाना, ले जाना, रखना, या वापस भेजना, बहाल करना। मरेके 'ऑक्सफोर्ड शब्द-कोष' में "लौटाना" शब्दके अनेक अर्थोमें एक यह अर्थ भी दिया गया है:

"किसी स्थान या व्यक्तिके पास लाना या ले जाना; फिर वापस भेजना; वापस देना या दिलवाना"। इससे स्पष्ट है कि किसी चीजपर काबिज कोई पक्ष (इस मामलेमें सरकार) यदि किसी चल सम्पत्तिको लौटानेके लिए राजी हो जाता है, तो उसका यह दायित्व तभी पूरा हुआ माना जा सकता है जब काबिज पक्ष उस चीजको उसी स्थानपर ले आये या वापस ले जाये जहाँ उसे कब्जेमें लिया गया था और वहीं उस व्यक्तिको सौंप दे जिससे उसे लिया गया था। इसलिए हमारी राय है कि समझौतेकी शर्तोंसे सौंपनेके स्थानके बारेमें कुछ स्पष्ट न होता हो ऐसी बात नहीं, बल्कि उसमें तो बिलकुल स्पष्ट बतलाया गया है कि सौंपनेका स्थान वही हो सकता है जहाँसे उसे लिया या कब्जेमें किया गया था।

२. एक भारतीय संविधिमें भी "लौटाना" शब्दको इस अर्थमें प्रयुक्त किया गया है कि चीजको उसी स्थानपर वापस ले जाया जाये, जहाँसे उसे लाया गया था। भारतीय वस्तु-विक्रय अधिनियमके खण्ड ४३में कहा गया है:

१. देखिए पृष्ठ ४०३-६।

"खरीदारके पास वस्तुएँ पहुँचनेपर यदि खरीदार, अपने अधिकारके मुताबिक उनको स्वीकार करनेसे इन्कार करता है और यदि अन्यथा कोई करार न हुआ हो, तो खरीदार उनको विक्रेताको लौटानेके लिए बाध्य नहीं है, उसके लिए इतना ही पर्याप्त है कि वह विक्रेताको सूचित कर दे कि वह उनको स्वीकार करनेसे इन्कार करता है"।

यह बिल्कुल स्पष्ट है कि "लौटाना" शब्दका अर्थ यही होना चाहिए कि वस्तुओंको उसी स्थानपर वापस किया जाये, जहाँसे वे ली गई थी, और यह शब्द "वापस करनेका प्रस्ताव" या "जिससे वस्तुएँ ली गई थीं उसको वापस करनेके लिए तैयार होना" के अर्थसे भिन्न अर्थमें, उसके विभेदको ध्यानमें रखते हुए प्रयुक्त किया गया है। इस मामलेमें सरकारने जो कार्रवाई की है वह "वापस करनेका प्रस्ताव" या "पहलेके मालिकको वापस करनेके लिए तैयार होना" ही कही जा सकती है, उसे लौटानेका दायित्व पूरा करना तो नही माना जा सकता है। जैसा कि ऊपर बतलाया गया है, वापस करनेके दायित्वकी अपेक्षा है कि वस्तु उसी स्थान पर उसी व्यक्तितक पहुँचाई जाये जहाँसे और जिससे उसे लिया गया था।

३. हमारी रायमें विक्रेता और खरीदारके बीच वस्तुओंके सम्प्रदानके विषयसे सम्बन्धित खण्डका हमारे सामने पेश इस सवालसे कोई सरोकार नहीं, क्योंकि इस मामलेमें लौटानेका कोई प्रश्न पैदा ही नही होता।

४. हम इस दृष्टिकोणसे तो बिलकुल भी सहमत नही कि उल्लिखित समझौतेमें "लौटाने"के स्थानके बारेमें कुछ भी नही कहा गया; साथ ही हमारी राय है कि इस दृष्टिकोणके अनुरूप भी इस प्रकारके समझौतेमें दायित्वके निर्वाहका स्थान वही हो सकता है, जहाँ वस्तुको लिया या कब्जेमें किया गया था। ऐसे मामलेमें समझौतेके उद्देश्यको दृष्टिगत रखकर ही स्थान सुनिश्चित करना पड़ेगा और इतना तो स्पष्ट है कि समझौतेका उद्देश्य पूर्ववत् स्थिति बहाल करना है।

५. हम माननेसे इन्कार करते हैं, पर यदि किसी तरह यह मान भी लिया जाये कि इस मामलेके सिलसिलेमें समझौतेमें "लौटाने"के स्थानके बारेमें कुछ नहीं कहा गया है तो भी भारतीय संविदा अधिनियमके खण्ड ४९की व्यवस्थाओंके अनुसार प्रतिज्ञातीको अधिकार प्राप्त है कि दायित्व-निर्वाहका स्थान सुनिश्चित न होनेपर वह स्थान निर्धारित कर सकता है और प्रतिज्ञाता उस प्रतिज्ञा या उसी वचनका उसी स्थानपर निर्वाह करनेके लिए बाध्य होगा (इस मामलेमें प्रतिज्ञा छापाखाना लौटानेकी है), शर्त यह है कि स्थान उचित हो। इस मामलेमें, प्रतिज्ञातीको अधिकार है कि वह दायित्व-निर्वाहका कोई उचित स्थान निर्धारित कर दे और बिलकुल स्पष्ट दिखता है कि जहाँसे वस्तु ली या कब्जेमें की गई थी, वही स्थान उचित और संगत हो सकता है, क्योंकि यह बात आसानीसे समझमें आ जाती है कि कब्जा करनेके बाद अनेक कारणोंसे वस्तुको दूरके किसी स्थानपर हटा देना जरूरी हो सकता है और प्रतिज्ञातीके लिए सर्वथा उचित होगा कि वह उस वस्तुको उसी स्थानपर लौटानेकी माँग करे, जहाँ उसे कब्जेमें किया गया था।

६. इसलिए 'नवजीवन प्रेस' के मामलेमें सरकार द्वारा अपनाये गये रुखको किसी भी दृष्टिसे उचित सिद्ध नहीं किया जा सकता। उसकी ओरसे समझौतेसे सम्बन्धित दायित्वका निर्वाह तभी पूरा हुआ माना जायेगा, जब वह छापाखाना अहमदाबाद (जहाँ उसे कब्जेमें लिया गया था) पहुँचा दे और उसी व्यक्तिको लौटानेके लिए प्रस्तुत हो, जिससे वह लिया गया था।

भूलाभाई देसाई
डी० एन० बहादुरजी
के० एम० मुन्शी

[अंग्रेजीसे]

अ० भा० कां० क० फाइल संख्या २/१९३१।
सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

तारीखवार जीवन-वृत्तान्त

(१६ अप्रैल, १९३१से १७ जून, १९३१ तक)

१६ अप्रैल: अहमदाबादसे बम्बई पहुँचे; लॉर्ड इर्विनको अलविदा; गुजरातमें जब्त-शुदा जमीनोंकी वापसीके सम्बन्धमें कांग्रेस-कार्यकर्त्ताओंके समक्ष भाषण दिया; और सर एन० वाडिया, एच० पी० मोदी तथा अम्बालाल साराभाई मिल-मालिकोंके साथ विदेशी वस्त्रोंके पुर्नानिर्यातकी योजनापर चर्चा की।

१७ अप्रैल: लगानके और गुजरातके किसानोंकी जब्त की गई सम्पत्तिको लौटानेके बारेमें बम्बईके गवर्नरसे मिले। भारतसे विदेशी वस्त्रोंके पुर्नानिर्यातके सम्बन्ध में भारत सरकार (वाइसरायकी कार्यकारिणी परिषद्)के वाणिज्य सदस्य, सर ज्यॉफ्री कॉर्बर्ससे बात की।

१८ अप्रैल: बम्बई निगम द्वारा दिये गये मानपत्रके उत्तरमें भाषण दिया।
लॉर्ड विलिंगडनने भारतके वाइसराय पदकी शपथ ली।

१९ अप्रैल: अहमदाबाद पहुँचे।

२० अप्रैल: विद्यापीठमें; सत्याग्रह आश्रम गये।

२१ अप्रैल: अहमदाबादमें एक खादी-कार्यकर्त्ताकी सुपुत्री लक्ष्मीका विवाह स्वयं सम्पन्न कराया; बारडोलीके लिए प्रस्थान किया।

२२ अप्रैलसे २६ अप्रैल: बारडोली ताल्लुकेमें।

२३ अप्रैल: 'डेली हेरॉल्ड' को तार दिया कि धर्म-प्रचारकोंको धर्म-परिवर्तनके लिए अपनाये अपने वर्तमान तरीके त्याग देने चाहिए।

२४ अप्रैल: उन किसानोंके साथ चर्चा की जिनकी जब्त-शुदा जमीनें सरकारने अन्य व्यक्तियोंको बेच दी थीं।

२५ अप्रैल: बारडोली पहुँचे; जब्त की गई सम्पत्ति लौटानेके बारेमें सर कावसजी जहांगीर, नरीमान और सरदार गरदा गांधीजीसे मिले। बाबला गाँव गये।

२६ अप्रैल: अकोटी गाँव गये।

२७ अप्रैल: बारडोलीमें; बोरसदके लिए रवाना हुए।

२८ अप्रैलसे १० मई: बोरसदमें।

२९ अप्रैल: खेड़ा जिलेके खातेदारोंको सलाह दी कि यदि सत्याग्रह-आन्दोलनके कारण किसीने भारी नुकसान उठाया हो तो उसे कर्ज लेकर लगान-अदायगी करनेकी जरूरत नहीं।

३० अप्रैल: 'फॉक्स मूवीटोन न्यूज' को भेंट दी।
बारडोलीके किसानोंसे मिले।

१ मई: भूटानके महाराजाके भाई गांधीजी से मिले। एच० डब्ल्यू० एमर्सन, गृह-सचिव को तार दिया कि खान अब्दुल गफ्फार खाँको गिरफ्तार न किया जाये।

२ मई: समाचार पत्र-प्रतिनिधियोंके साथ भेंटके दौरान कहा कि कांग्रेस-कार्यकर्त्ता गांधी-इर्विन समझौतेका सच्चे हृदयसे पालन कर रहे हैं।

६ मई: बोचासनमें वल्लभ विद्यालयकी नीव रखी; 'एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडिया' को भेंट दी।

८ मई: कांग्रेसी कार्यकर्त्ताओं द्वारा शराब तथा विदेशी वस्त्रोंकी दूकानोंपर दिये जानेवाले धरनेके बारेमें समाचार-पत्रोंको वक्तव्य दिया।

९ मई: खेड़ा जिलेके कांग्रेसी कार्यकर्त्ताओंसे मिले।

१० मई: खेड़ाके कलेक्टरसे मिले।

११ मई: खेड़ाके कलेक्टर गांधीजी से मिले; बोरसदसे शिमलाके लिए प्रस्थान।

१३ मईसे १७ मई: शिमलामें।

१३ मई: गांधी-इर्विन समझौतेसे उत्पन्न समस्याओंके बारेमें लॉर्ड विलिंग्डन और एच० डब्ल्यू० एमर्सनसे बातचीत की।

१४ मई: सार्वजनिक सभामें भाषण दिया और एच० डब्ल्यू० एमर्सनसे बातचीत की।

१५ से १६ मई: वाइसराय और गृह-सचिवके साथ बातचीत जारी रखी।

१६ मई: सर जी० शुस्टरसे मिले।

१७ मई: मालवीयजी और मुंजेने गांधीजीसे बातचीत की; गांधीजी ने एच० डब्ल्यू० एमर्सनसे बात की; पत्रकारोंके एक दलके साथ भेंट की और नैनीतालके लिए प्रस्थान।

१८ मई: नैनीताल पहुँचे और कृषीय समस्याकी चर्चाके लिए संयुक्त प्रान्तके गवर्नर सर माल्कम हैलीसे मिले।

१९ मई: नैनीतालमें गवर्नरके साथ बात की और सार्वजनिक सभामें भाषण दिया।

२० मई: नैनीतालमें, गवर्नरसे मुलाकात की।

२१ मई: कुमाऊँमें, राजनीतिक पीड़ितोंकी सभामें भाषण दिया।

२२ मई: नैनीतालमें; समाचारपत्र-प्रतिनिधियोंसे एक भेंटके दौरान घोषणा की कि वे लन्दन जानेकी अपनी योजनाओंके सम्बन्धमें कोई भी वक्तव्य देनेमें असमर्थ हैं।

२३ मई: एच० एस० एल० पोलक, श्रीनिवास शास्त्री और सी० एफ० एन्ड्रयूजको तार दिये कि साम्प्रदायिक समस्याका हल न निकल पाने और कुछ प्रान्तीय सरकारों द्वारा अपनाये गये रुखके कारण उनका भारतसे बाहर जाना कठिन बन गया है; लगानकी माफीके बारेमें जमीदारोंसे एक समझौता किया; नैनीतालसे बारडोलीके लिए ४ बजे शामको प्रस्थान किया।

२५ मई; स्वराज्य आश्रम, बारडोली पहुँचे।

२५ मईसे ८ जून: बारडोलीमें।

२७ मई: सुभाषचन्द्र बोसके साथ विस्तारसे विचार-विमर्श किया।

३० मई: कानपुरके साम्प्रदायिक दंगोंमें पुलिस द्वारा गोलीबारी।

५ जून: सूरत गये।

६ जून: बारडोलीमें। अब्दुल गफ्फारखाँ गांधीजी से मिले।

८ जून : जवाहरलाल नेहरू गांधीजी से मिले। शामको जवाहरलाल नेहरू और अब्दुल गफ्फारखाँके साथ बम्बईके लिए प्रस्थान।

९ जून : कांग्रेस कार्यकारिणी समितिकी बैठकमें शामिल होने बम्बई पहुँचे जिसमें प्रस्ताव पास किया गया कि गोलमेज परिषद्में गांधीजी अकेले कांग्रेसका प्रतिनिधित्व करें।

१० जून : बम्बईमें अपने निवास 'मणि भुवन' तक प्रभातफेरीके लिए आये हुए दलके समक्ष भाषण दिया।

११ जून : बम्बईमें; 'देश-सेविकाओ' और 'हिन्दुस्तानी सेवा दल'के सदस्योंकी सभामें भाषण दिया।

१२ जून : बम्बईमें; यूरोपीयोंके एक शिष्टमण्डलके सामने अंग्रेजोंके प्रति कांग्रेसके रुखका स्पष्टीकरण किया; बोरसदके लिए प्रस्थान।

बोरसद जाते हुए, रास्तेमें मरोलीमें मीठूबहन पेटिट द्वारा चलाये जा रहे कस्तूरबा बुनाई स्कूलका शिलान्यास किया।

१३ जूनसे १७ जून : बोरसदमें।

शीर्षक-सांकेतिका

विविध

· सांकेतिका

ओ

क

ख

ग

घ

च

छ

ज

झ

ट

ठ

न

प

भ

म

य

र

स

ह